ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण कथा

H
398.8709542
GUP-PO

डॉ. शालिग्राम गुप्त

संगीत नाटक अकादेमी
ग्रंथालय

Sangeet Natak Akademi
Library

Acc. 21409

SANGEET NATAK AKADEMI
NEW DELHI
110001
LIBRARY

398.8709542
GUP-PO

विषय-सूची

प्रथम खण्ड

अध्याय	विषय		पृष्ठ
१.	**लोकगीतों के विविध रूप और कृष्ण-कथा**		१—३३
	१—संस्कारों के गीत	२	
	२—मंगल गीत या विवाह गीत	१०	
	३—व्रतों के गीत	१५	
	४—ऋतु या मास-सम्बन्धी गीत	१६	
	५—जातियों के गीत	२६	
	६—सामयिक या विविध गीत	२६	
२.	**ब्रज-लोकगीतों में कृष्ण-कथा**		३४—७६
३.	**बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण-कथा**		८०—१२०
४.	**श्रीमद्भागवत्, सूरसागर तथा लोकगीतों की कृष्ण-कथा का तुलनात्मक स्वरूप**		१२१—१४७
५.	**कृष्ण-कथापरक लोकगीत तथा हिन्दी कृष्ण-भक्ति साहित्य का पारस्परिक सम्बन्ध**		१४८—१५८
६.	**लोकगीतों में काव्य-पक्ष एवं सांस्कृतिक तत्त्व**		१५९—२०९
	(अ) **काव्य-पक्ष :**	१५९	
	१—चरित्रों की उद्भावना	१६०	
	२—भावात्मक स्तर	१७५	
	३—रूप-सौन्दर्य चित्रण	१८२	
	४—प्रकृति-परिकल्पना	१८४	
	५—आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना	१९०	
	६—काव्य-शिल्प : अलंकार और छन्द	१९२	

(आ) सांस्कृति   त्त्व : १९३
१—लो धर्म और विश्वास १९४
२—भक्ति-भावना १९७
३—लोक जीवन
(अ) सामान्य जीवन-चित्रण १९९
(आ) पारिवारिक जीवन-चर्या २०१
(इ) सामाजिक जीवन-चित्रण २०४
७. लोक-तात्त्विक दृष्टि और कृष्ण-कथा २१०—२२१
८. अभिप्रायों का अध्ययन और उनकी परम्परा की स्थापना २२२—२२९
उपसंहार २३०—२३१

द्वितीय खण्ड

लोकगीतों का वर्गीकरण २३५—२३६
१—ब्रज के लोकगीत (कथा क्रम से प्रस्तुत गीत संग्रह) २३७—३०४
२—बुन्देली लोकगीत (कथा क्रम से प्रस्तुत गीत संग्रह) ३०५—३५३

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों लोक गीत साहित्य सम्बन्धी की सूची ३५७—३६६

प्रथम खण्ड

विषय विवेचन

ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण-कथा

ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण-कथा

लेखक
डा. शालिग्राम गुप्त
एम. ए., डी. फिल्.
लेक्चरर, हिन्दी विभाग
विश्वभारती विश्वविद्यालय
शान्तिनिकेतन

नवभारत प्रकाशन, जोधपुर

H
398.8709542
GUP-PD

नवभारत प्रकाशन
प्रकाशक एवं वितरक
44/6, पी. डब्ल्यू. डी. कॉलोनी,
जोधपुर - 342 001 (राज.)

© लेखक

प्रथम संस्करण : वर्ष 2000

मूल्य : तीन सौ पचास रुपये मात्र

प्रकाशक : विनोद पुस्तक मन्दिर के लिए हिन्दी प्रिन्टिङ्ग प्रेस, आगरा द्वारा मुद्रित

भूमिका

शताब्दियों से कृष्ण-कथा के प्रचार एवं प्रसार के कारण कृष्ण की लीला-कथाएँ उत्तर भारत के लोक-जीवन में ऐसी एक रस हो गई है कि वे आज उनके अपने अनुभव के प्रतीक हो गए हैं। अतः लोक में व्याप्त इस समस्त कृष्ण-कथा पर खोज-कार्य कर उसके परिणाम उपस्थित करना अपने में एक अत्यंत आवश्यक विषय होते हुए भी एक शोधकर्त्ता के लिये प्रायः असंभव हो जाता है। इसीलिए प्रस्तुत लेखक ने केवल ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों के लोकगीतों के आधार पर कृष्ण की उस कथा का अध्ययन करने की चेष्टा की है।

इन कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों का हिन्दी कृष्ण-भक्ति साहित्य पर पाये जाने वाले प्रभावों को स्पष्टतः लक्षित किया जाना भी आवश्यक था; क्योंकि यह प्रायः कहा जाता रहा है कि सूर पूर्व लोक-साहित्य, लोकगीत और लोक-कथाओं में कृष्ण के असंख्य आख्यान चलते रहे होंगे जिनकी प्रेरणा से ही जयदेव ने 'गीत गोविन्द' और विद्यापति ने अपनी 'पदावली' द्वारा राधा-कृष्ण की प्रेम लीलाओं को प्रथम एवं व्यवस्थित रूप में लोक-साहित्य से उठाकर जनभाषा के शिष्ट साहित्य के पद पर प्रतिष्ठित किया था और यही नहीं, सूर जैसे महाकवियों ने अपनी भावना की पोषक सामग्री लेने में पुराणों की अपेक्षा लोक-साहित्य से कहीं अधिक स्वच्छंदता पूर्वक सामग्री ग्रहण की है, अतः प्रस्तुत लेखक ने इस लोक-साहित्य और कृष्ण-भक्ति साहित्य के पारस्परिक सम्बन्ध को प्रकाश में लाने का प्रयास किया है।

विषय का विवेचन करते समय यह सदैव ध्यान में रखा गया है कि लोक-भावना को व्यक्त करने वाले इन गीतों पर लोक की भावना को दृष्टि में रखकर ही विचार किया जाये। यही कारण है कि प्रथम अध्याय में ही विविध लोकगीतों की भाव-धारा को ध्यान में रखकर यह देखने का प्रयास किया गया है कि लोकगीतों की—संस्कार, व्रत, ऋतु या मास, आदि—भावनाओं के ...र्गत कृष्ण-कथा का स्वरूप किस प्रकार, किस दृष्टि और किस भावना से ...आ है।

ब्रज और बुन्देली भाषी क्षेत्र अपनी सीमा में काफी विशाल और व्यापक हैं। फलतः इतने विशाल क्षेत्र से लोकगीतों का संकलन और उसमें भी केवल कृष्ण-कथा सम्बन्धी गीतों को एकत्र करना स्वयं में ही एक बहुत बड़ा कार्य था। फिर लोकगीतों के संकलन कार्य में संग्रह कर्त्ता को कितनी कठिनाई और परेशानी उठानी पड़ती है, यह सर्वविदित है। ऐसी दशा में यह आवश्यक हो गया था कि ब्रज और बुन्देली के विस्तृत क्षेत्र में से कुछ भाग को ही इस अध्ययन के लिए प्रमुख रूप से लिया जाये। इसी कारण ब्रजभाषी क्षेत्र के मुख्यतः दो जिले—आगरा और मथुरा तथा बुन्देली क्षेत्र में बांदा, हमीरपुर, झाँसी जिलों के साथ-साथ ओरछा, टीकमगढ़, छतरपुर और चरखारी राज्य के अंतर्गत आने वाले भागों से कृष्ण-कथा विषयक गीतों को संकलित करने का यत्न प्रमुख रूप से किया गया है।

सामग्री के संकलन में सबसे बड़ी और मुख्य कठिनाई यह रही है कि प्रस्तुत लेखक को इस मौखिक साहित्य मे से केवल कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों को ही संकलित करना था। अतः होता यह था कि लोक-गायक या गायिका से एक विशेष प्रकार के गीतों की माँग करने पर (जो कि विभिन्न विषयों के समस्त गीतों में अनुमान है कि ब्रज मे १६-१७ प्रतिशत और बुन्देली में लगभग १२ प्रतिशत ही हैं) प्रायः निराश होना पड़ता था क्योंकि लोक-गायक या गायिका के लिये यह असम्भव हो जाता था कि वह कृष्ण-कथा सम्बन्धी गीतों को ही स्मरण करके लेखक को सुनाये और लिपिबद्ध कराने का प्रयास करे। अतः इस कठिनाई को कुछ सीमा तक हल करने के लिये लोक-गायक द्वारा गाये जाने वाले उन गीतों को भी लिखना पड़ता था जो प्रस्तुत विषय की सीमा के बाहर होते थे जिससे कि गायक निरुत्साहित न होकर लेखक की आवश्यकताओं के प्रति कुछ न कुछ रुचि लेता हुआ दस पाँच गीत सुना ही जाये। इन सब कठिनाइयों के होते हुए भी प्रस्तुत लेखक ने लोगों के पास जा-जाकर कभी कुछ उनके द्वारा संकलित गीतों के संग्रह से तो कभी उनसे स्वयं सुनकर और लिपिबद्ध करके कृष्ण सम्बन्धी लगभग ३२५ गीतों का संकलन किया था। इन संकलित एवं अप्रकाशित गीतों के अतिरिक्त १८२ गीत ब्रज और बुन्देली के प्रकाशित गीत-संग्रहों तथा विविध पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों से प्राप्त किये हैं।

ब्रज लोकगीतों के संकलन में सबसे अधिक योग श्री मोहन स्वरूप भाटिया और ब्रज-साहित्य मंडल, मथुरा के कार्यालय का है जिनके संग्रहों से प्रस्तुत लेखक को क्रमशः ५६ और २१ गीत प्राप्त हुए हैं। इनके अ[illegible] श्री महेश चन्द्र गर्ग, अध्यापक गवर्नमेंट इण्टर कॉलेज, इलाहाबाद [illegible]

मुद्रित

'उत्तर ब्रज के लोकगीत' पर खोज-कार्य कर रहे हैं, १२ गीत; सुश्री सरोज गुप्त, सादाबाद, मथुरा से १० गीत; श्री बाल मुकुन्द शर्मा, छाता, मथुरा से १० गीत; भाई गोपाल जी, वृन्दावन द्वारा ११ गीत; श्री तोताराम शर्मा, आगरा द्वारा ६ गीत; और डा० सत्येन्द्र द्वारा उनके अप्रकाशित संग्रह से ५ गीत प्राप्त हुए हैं। इसी प्रकार बुन्देली लोकगीतों के संग्रह में सबसे अधिक योगदान लेखक की धर्मपत्नी सुश्री शीला गुप्त ने अपने २६ गीतों के द्वारा दिया। इनके अतिरिक्त श्री ब्रजेशजी, बम्हौरी, छतरपुर द्वारा २४ गीत; श्री हरप्रसाद शर्मा, अतर्रा, बाँदा द्वारा २१ गीत; कुमारी मीरा भट्ट, भटीपुरा, महोबा द्वारा १० गीत; सुश्री गेंदाबाई, महोबा द्वारा १५ गीत; श्री गौरीशंकर द्विवेदी, झाँसी द्वारा ३ गीत; श्री भगवत प्रसाद गुप्त, सरसैड़ा, राठ द्वारा ३ गीत; श्री भुजबल सिंह, मत्तीपुरा महोबा द्वारा २ गीत; श्री चिन्ताहरण तिवारी, तिवारीपुरा, महोबा द्वारा २ गीत; श्री भगवानदीन मिश्र, परसौंडा, बाँदा द्वारा ६ गीत; और श्री सेवक नाना, अतर्रा, बाँदा एवं श्रीमती लुम्री बुआ, महोबा द्वारा १-१ गीत प्राप्त हुए।

इस प्रकार प्रकाशित और अप्रकाशित (संकलित) साहित्य द्वारा संग्रहीत गीतों में से ४८६ गीतों का (ब्रज गीत २६४ तथा बुन्देली गीत १८२) उपयोग प्रस्तुत प्रबन्ध के निर्माण में किया गया है। इस विशाल और एक ही धारा के गीतों में प्रायः ब्रज और बुन्देली लोकगीतों की वे सभी कोटियाँ या प्रकार आ गये हैं जो उन क्षेत्रों में प्रचलित होने के साथ-साथ, समय-समय पर गाये जाते हैं। गीत-संग्रह में गीतों के साथ-साथ यथासम्भव उनकी कोटियाँ भी निर्दिष्ट कर दी गई हैं।

प्रस्तुत प्रबन्ध दो खण्डों में विभक्त है। पहला खण्ड 'विवेचन' का है और दूसरा 'गीत-संग्रह' का। पहला खण्ड आठ अध्यायों में विभक्त है जिसका आभास विषय-सूची पर दृष्टिपात करने से हो सकता है। इस विभाजन से सम्बन्धित दृष्टिकोण को संक्षेप में यहाँ स्पष्ट कर देना आवश्यक है—

प्रथम अध्याय में विविध प्रकार के लोकगीतों में आई हुई कृष्ण-कथा का गीतों के प्रकार से क्या सम्बन्ध है, इस विषय पर विचार किया गया है।

दूसरे और तीसरे अध्यायों में क्रमशः ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों के गीतों में प्राप्त कृष्ण-कथा को सूरसागर (नागरी प्रचारिणी सभा, संस्करण) की कृष्ण-कथा के क्रम के अनुसार विभिन्न शीर्षकों में विभाजित कर कथात्मक शृङ्खला में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। साथ ही जिन नवीन कथा-प्रसंगों की उद्भावना लोक-मानस ने की है, उन्हें भी कथा-विस्तार की दृष्टि से बीच-बीच

१

लोकगीतों के विविध रूप और कृष्ण-कथा

लोक-साहित्य के अंतर्गत लोकगीतों का प्रमुख स्थान है, क्योंकि इसके माध्यम से लोक जीवन अपनी अनेक भावात्मक स्थितियों को विभिन्न संस्कारों, ऋतुओं, मासों, क्रियाओं और व्रतों के अनुसार अभिव्यक्त करता है। इस अध्ययन के अंतर्गत सम्मिलित लोकगीत यद्यपि कृष्ण-कथा की दृष्टि से संकलित, विभाजित और कथात्मक शृंखला में प्रस्तुत किये गये हैं। परन्तु जहाँ तक इन गीतों की लोक-जीवन में स्थिति का सम्बन्ध है, वहाँ इनका संदर्भ मुक्त रूप से उसके जीवन की विविध परिस्थितियों से है; साथ ही वहाँ कृष्ण-कथा का यह रूप अप्रमुख और अप्रत्यक्ष भी है। यही कारण है कि इनमें कृष्ण-कथा का जो रूप उपस्थित हुआ है उसमें लोक-गाथा या लोक कहानी की कथात्मक संघटना, प्रवाह या सुसम्बद्धता नहीं है।

ये लोकगीत लोक-भावना के स्वच्छंद प्रवाह के साथ प्रस्तुत हुए हैं और कृष्ण-कथा के अनेकानेक संदर्भ इसी भावात्मक स्तर पर ग्रहण कर लिये गये हैं। इन गीतों में प्रमुख भावना 'जीवन की अभिव्यक्ति' की है, और इसी के आधार पर कृष्ण-कथा को स्वीकार भी किया है। अपने जीवन की विविध परिस्थितियों में लोक जिस प्रकार सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, मिलन-विछोह, उल्लास-आवेग से उद्वेलित हुआ है उसी सीमा तक कृष्ण-कथा अपने भावात्मक परिवेश में उसके गीतों में प्रस्तुत हो सकी है। कृष्ण-कथा का ऐसा कोई अंश इनमें नहीं व्यक्त हो सका है जो लोक की इस व्यापक भावना के साथ प्रवाहित नहीं हो सकता। कृष्ण-कथा सम्बन्धी प्रस्तुत अध्ययन की यही सीमा है और विशेषता भी।

कृष्ण-कथा विवेच्य क्षेत्रों के लोक-जीवन में प्राण-तत्त्व के रूप में परिव्याप्त हैं। वैसे भी कृष्ण-भक्ति और साहित्य का बहुत व्यापक और सघन प्रभाव भारतीय जीवन और संकृति पर देखा जा सकता है। परन्तु ब्रज और बुन्देली का यह क्षेत्र तो कृष्ण-कथा का केन्द्र ही है। अतः इन क्षेत्रों के लोक-मानस ने कृष्ण-कथा को इस प्रकार आत्मसात् कर लिया हैं कि वह उसके जीवन प्रवाह का अभिन्न अंग बन गई है। लोक अपनी प्रवृत्ति के अनुसार सारे इतिहास और पुराण को अपने वर्तमान में पाता है। उसके लिये इतिहास और पुराण की, धर्म और दर्शन की समस्त स्थिति और मर्यादा धारावाहिक परम्परा के रूप में वर्तमान जीवन में ही समाहित हो जाती है। कृष्ण और उनकी कथा के अन्य समस्त पात्र लोक जीवन की भावना के प्रत्यक्ष आलम्बन और आश्रय हैं। उसके लिये कृष्ण न ईश्वर हैं और न लीलामय। उनका यह रूप इन गीतों की भावभूमि में परम्परा के रूप में संकेत करते तो बात भिन्न है अन्यथा उनके संस्कारों की भावना के साथ कृष्ण जन्म लेते हैं, इस उपलक्ष पर बधाई बजती है, बधावा आता है, उनकी छठी, अन्नप्राशन और नामकरण संस्कार होता है। इसी प्रकार लोक-जीवन के यौवन के उद्दाम आवेग और उल्लास के साथ एक रूप होकर कृष्ण 'युवक' और राधा 'युवती' बन जाती हैं। लोक की माताएँ यशोदा से तादात्म्य स्थापित कर अपनी शिशु लीलाओं का अनुभव कृष्ण के माध्यम से करती हैं। यहाँ कृष्ण श्याम नहीं वरन् प्रत्येक माँ के शिशु हैं। इसी तरह यह सारी कथा इसी स्तर और भाव भूमि पर संवेदित हुई है।

यहाँ इसी दृष्टि से विचार करना है कि लोक-गीतों की संस्कार, ऋतु, मास, व्रत-क्रिया आदि भावनाओं के अन्तर्गत कृष्ण-कथा का स्वरूप किस प्रकार, किस दृष्टि और भावना से प्रस्तुत हुआ है।

१. संस्कारों के गीत

शास्त्र विहित सोलह संस्कारों में––जन्म, विवाह और मृत्यु संस्कार ही सर्व प्रधान हैं। वस्तुतः यही तीन संस्कार सूर्य के उदय, मध्यान और अस्त की भाँति जीवन की अवतारणा से प्रकृत सम्बन्ध रखते हैं। ये प्रकृति के अपने चक्र के अंग हैं। इनमें मे प्रथम दो साधारणतः 'आनन्द' और 'प्रसन्नता' के अवसर हैं और अन्तिम 'शोक' का। फलतः मानव चाहे वह भारतीय हो अथवा अभारतीय, इन तीन प्रमुख घटनाओं की ओर विशेष आकर्षित और उनसे प्रभावित होगा। यही कारण है कि हमें विविध संस्कारों में से प्रायः जन्म, नामकरण, अन्नप्राशन और विवाह पर ही विशेषकर गीत प्राप्त हैं। मृत्यु पर भी गीतों का अभाव नहीं, पर वे बहुत कम हैं और वैसे भी महत्त्वहीन होने के साथ-साथ हमारे अध्ययन की सीमा से परे हैं।

शास्त्र विहित उक्त संस्कारों की भाँति ही इनसे मिलते-जुलते कुछ और कृत्य भारतीय परिवारों में अत्यंत निष्ठा से किये जाते हैं जिन्हें 'कुलाचार' या 'लोकाचार' कह सकते हैं। उदाहरणार्थ—छठी और वर्षगांठ को संस्कारों के रूप में तो मान्यता नहीं प्रदान की गई, फिर भी ये उत्सव संस्कारों की भाँति ही अत्यन्त उत्साह से मनाये जाते हैं। लोक में इस प्रकार के परम्परागत लोकाचारों की मान्यता शास्त्र सम्पादित आचारों से कम नहीं होती। अतएव विषय की स्पष्टता और क्रमबद्धता के लिये उक्त संस्कारों के वर्णन के साथ छठी और वर्षगांठ को भी सम्मिलित कर लिया गया है।

(अ) जन्म संस्कार के गीत—नारी में मातृत्व की भावना अपना एक विशेष स्थान या महत्त्व रखती है। यह उसके जीवन की सार्थकता का परम लक्ष्य है। इसीलिये हमारे यहाँ नारी का मातृ रूप ही सबसे भव्य, पवित्र और कल्याणकारी माना गया है। मनुष्य जीवन की एक सबसे बड़ी लालसा संतान प्राप्त करना भी है। उसे कितना ही धन, वैभव, अधिकार, सम्मान और सब प्रकार के सुख-साधन उपलब्ध क्यों न हों, परन्तु वह एक संतान के अभाव में नगण्य और दीन-दुखी ही अनुभव करता है।

शिशु का जन्म नव दम्पति के लिये ईश्वर की एक अमूल्य भेंट है। उसके जन्म के उपरान्त तो परिवार में प्रसन्नता का पारावार ही नहीं रहता। यही नहीं, सद्यः प्रसूता तो उसके आने के आनन्द में अपनी प्रसूत पीड़ा को भी भूल जाती है और यही आनन्द जन्म समय या जन्म संस्कारों के गीतों की मूल प्रेरणा है।

हिन्दू संस्कृति में 'राम' और 'कृष्ण' ये दो नाम आदर्श माने जाते हैं। वे हमारे प्रत्येक रीति-रिवाज में इस तरह घुल-मिल गये हैं कि हम प्रत्येक अवसर पर उन्हीं से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। इस तरह राम केवल अयोध्या के राम न रहकर और कृष्ण केवल गोकुल या मथुरा के कृष्ण न रहकर सम्पूर्ण भारत के बन गये हैं, जिससे उनका चरित्र लोक में सम्पूर्ण जीवन के प्रतीक के रूप में व्यवहृत होने लगा है। क्योंकि शताब्दियों से कृष्ण कथा के प्रचार एवं प्रसार के कारण कृष्ण एवं उनकी लीला कथायें लोक जीवन में ऐसी एक-रस हो गई हैं कि कृष्ण वहाँ उनके अपने अनुभव के प्रतीक हो जाते हैं कृष्ण उनके लिये जीवित हैं उनकी गाथायें उनके लिये सदैव वर्तमान में उनके चतुर्दिक घटित हो रही अपनी ही लीलायें हैं और इसी कारण कृष्ण की कथा उनके जीवन की सम्पूर्ण व्यापकता को ग्रहण किये हुए है। यही कारण है कि लोक-मानस अपने सुख-दुःख, हर्ष-विषाद को कृष्ण और कृष्ण-लीला के माध्यम से व्यक्त करता

है क्योंकि लोक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को कृष्ण-कथा आधार प्रस्तुत कर देती है। यही बात शिशु के जन्म एवं विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में भी लक्षित होती है। यद्यपि इन गीतों में राम और कृष्ण के ही नामों का उल्लेख होता है परन्तु उसमें चित्रण होता है—सामान्य परिवार की जीवन-गाथा का, क्योंकि लोक-मानस के स्तर पर राम तथा कृष्ण का व्यक्तित्व सामान्य हो गया है। लोक से उसकी इतनी अभिन्न आत्मीयता स्थापित हो चुकी है कि उसके लिये उसकी अपनी शिशु कल्पनाओं के वे प्रतीक बन गये हैं। इन गीतों में इस कारण कृष्ण-जन्म की सारी कल्पना लोक में शिशु-जन्म की स्थिति में पर्यवसित हो जाती है। अतः जब किसी के घर पुत्र उत्पन्न होता है तो स्त्रियाँ रन्त गाने लगती हैं—

आली ब्रज में महराज भये, सखि ब्रज में गोपाल भये।

—(बुन्देली : ५)

उनके लिये देश और काल का अन्तर महत्त्वहीन है। वे उसी संदर्भ में अपने हर्षोल्लास का अनुभव करती हैं और इसी कारण वे अपने बच्चे को पालने में सुलाते समय अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति कृष्ण की शिशु-लीला के माध्यम से करती हैं। कृष्ण की यह शिशु-लीला लोक-मानस पर व्यापक तादात्म्य स्थापित कर चुकी है। अतः लोक मानस पर हर शिशु का साधारणीकरण उससे हो जाना सहज हो जाता है। कहने का तात्पर्य यह कि राम और कृष्ण का लोक-समाज में ऐसा साधारणीकरण हो गया है कि वे सबके लिये अपने ही बालक हो गये हैं। भावना के इसी स्तर पर लोक की अपनी गृहस्थी राजा दशरथ और बाबा नन्द की गृहस्थी से एक रूप होकर प्रस्तुत हुई है। वस्तुतः अपने गीतों में कृष्ण-जन्म और कृष्ण परिवार के हर्षोल्लास आदि के माध्यम से लोक अपने शिशु-जन्म की भावनाओं तथा अपने पारिवारिक हर्षोल्लास का अनुभव करता हैं।

ब्रज और बुन्देलखंड में पुत्र जन्म के आचारों का लम्बा अनुष्ठान होता है। यद्यपि शास्त्रानुमोदित प्रथम संस्कार गर्भाधान और पुंसवन हैं, परन्तु कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोक गीतों में इनका उल्लेख नहीं मिलता। क्योंकि कृष्ण-कथा में देवकी या यशोदा के बंधत्व की कथा का अभाव होने के साथ-साथ कृष्ण का जन्म भी कंस के कारागार में हुआ था। अतः कृष्ण-कथा में सर्वप्रथम संस्कार जन्म संस्कार ही है, जिस पर गाये जाने वाले गीतों में सोहर और बधावा गीत सबसे प्रमुख हैं। पुत्र के जन्मते ही यह सोहर अथवा सोहिले होने लगते हैं, जिनमें सामान्यतः निम्न उल्लिखित भावनाओं का समावेश हुआ करता है : पुत्र-

जन्म की सम्भावना को ध्यान में रखकर ननद और भावज की 'बदन', पुत्र जन्म पर धाय का बुलाया जाना, नवजात शिशु का रोना, माता का आनन्द, सास-ससुर तथा ननद का उछाह, एवं पिता का हर्षित हो दान आदि करना।

वास्तविक जगत का सजीव चित्रण करने वाले लोकगीतों में एक ओर जहाँ पुत्र के जन्म के हर्ष पर द्वार पर बाजे बजने का उल्लेख मिलता है वहीं दूसरी ओर उसके नाल-छेदन के लिये दाई बुलाने की शीघ्रता भी व्याप्त रहती है। ठीक यही भाव ब्रज के गीत ३, ५ में तथा बुन्देली सरिया गीत ५ में सविस्तार मिलता है जिसमें कृष्ण के जन्म लेने पर नन्द के घर उछाह और कृष्ण के नाल-छेदन आदि का वर्णन है। लेकिन प्रश्न तो यह हैं कि हमारी ग्रामीण नारियों ने अपने घर में पुत्र जन्म के अवसर पर कृष्ण जन्म का चित्रण करने वाले गीतों को क्यों गाया ? कारण स्पष्ट है और जैसा कि पहले भी लिखा जा चुका है कि लोक-नारी के लिये कृष्ण और राम उसके अपने पुत्र हैं। साथ ही लोक जीवन के यथार्थ में या यों कहें कि इस जीवन की सहज परिणति में ही कृष्ण-कथा घटित हो जाती है। इसी साधारणीकरण के स्तर पर उसके लिये अपने पुत्र और यशोदा के या देवकी पुत्र कृष्ण में कोई अन्तर नहीं रह जाता। इसके अतिरिक्त इन संस्कार गीतों की मूल भावना के अनुसार उन्हें कृष्ण-कथा में वे सभी तत्त्व एवं संभावनायें मिल जाती हैं जो जन्ति के गीतों की मूल भावधारा है। इसी कारण इन गीतों में कृष्ण-कथा को स्थान मिल गया है। यह दूसरी बात है कि ग्रामीण वर्ग निर्धन होने के कारण लोक गीतों में वर्णित नन्द महर की भाँति पुत्र जन्म पर वैभवपूर्ण हर्षोल्लास तो नहीं मना सकता लेकिन उसके हृदय में भावनायें तो वही हैं, उछाह का वेग तो वही है, और इसी उल्लसित वातावरण से प्रभावित हो वह पुत्र जन्म के सुअवसर पर कृष्ण जन्म का चित्रण करने वाले गीतों के माध्यम से परोक्ष रूप में अपनी ही समस्त भावनाओं एवं परिस्थितियों को व्यक्त करता है।

लोक में पुत्र जन्मते देर नहीं होती कि उसके साँवले और गोरे होने के कारणों पर विचार-वितर्क होने का उल्लेख मिलता है। यदि कहीं गौर वर्णा जच्चा ने साँवला पुत्र जना तब तो वह शर्म के मारे अपने बच्चे को जल्दी किसी की गोद में देना भी नहीं चाहती, और यही भावना कृष्ण जन्म पर माता यशोदा के मनोभावों को व्यक्त करने वाले इस जन्म-गीत में व्यंजित हुई है—

यशोदा ने कारी अंधेरी में जायौ,
अरी वो तो कारोई कृस्न कहायौ।

दाई आवें नार छिवावें,

जसोदा ने ब्वाक भी न गहायौ ।

इधर पुत्र हुआ दाई ने प्रारम्भिक कार्य कर अपने नेग प्राप्त किये कि उधर नाई द्वारा बालक के जन्म की सूचना उसके नाना, मामा तथा अन्य सगे सम्बन्धियों के यहाँ भेजने के लिये रोचन भेजने की व्यवस्था की जाती है। इन्हीं बातों का उल्लेख चरुआ गीतों की मूल भावना होती है। इस मूल भावना के अनुसार लोक-मानस को वे सब तत्त्व और सम्भावनायें रुक्मिणी पुत्र-जन्म की कथा में मिल गये। इस कारण वह पुत्र जन्म पर रोचन भिजाते समय अपनी हृदयगत भावनाओं एवं वातावरण का साम्य उस कथा-गीत से स्थापित कर लेता है।

लाऔ रे हरद देउ बहुत चहचही, बेगि कुंदनपुर जाव।

रुक्मिनी के बाप के।

बैठे बाके पाँचों भइया, नाऊ नै करौ है जुहार,

रुचन कहाँ पाइये।—(ब्रज : २२१)

यहाँ ऐसा लगता है मानों वास्तव में रुक्मिणी को पुत्र हुआ हो और उसकी सूचना नाई द्वारा पुत्र के नाना के पास कुंदनपुर भेजी जा रही हो। पर लोक-मानस के स्तर पर यह उसके अपने जीवन में घटित है।

जच्चा की सास ने बच्चे के ननिहाल उसके जन्म की सूचना भेजी नहीं कि शीघ्र ही बहू के लिये चरुआ तैयार करने में संलग्न हो जाती है। चरुआ रखा गया कि ननद ने उस घड़े पर सातिया रखा। इस शुभ कार्य को करने के बदले ननद अपनी भाभी से नेगों की माँग करती है। अतः इस अवसर पर कभी-कभी नेग के पीछे ननद और भावज में झगड़ा भी हो जाता है, क्योंकि ननद जिस वस्तु को चाहती है वह उसकी भाभी उसे देने से प्रायः नाहीं कर जाती है लेकिन घर के बड़े-बूढ़ों के बीच-बचाव करने पर अंत में भावज को अपनी ननद की अभिलाषा पूरी ही करनी पड़ती है। सातिया गीत की इस भावभूमि या मूल भावना के आधार पर ब्रज का यह गीत—

धरहू सुभद्रा सातिये आने बिरन दरबार, बधाई बाजी नंद के।

—(ब्रज : २२३)

प्रतिष्ठित है, जिसमें रानी रुक्मिणी के पुत्र होने पर सुभद्रा सातिये रखती है और फिर उसके बदले अपनी भाभी से अपना मन चाहा नेग माँगती है। परन्तु रुक्मिणी उसे देने से मुकर जाती हैं। अतः सुभद्रा उसे प्राप्त करने के लिये हठ पकड़ लेती है। यहाँ भी स्थिति वही है। इन गीतों में लोक-मानस

अनेकानेक जच्चाओं की नन्द, सास और उनके मायके के लोगों की भावनाओं का तादात्म्य कृष्ण-कथा के रुक्मिणी पुत्र जन्म की भावनाओं तथा परिस्थितियों से कर लेता है और इस प्रकार इस कथा के प्रसंगों के माध्यम से लोक की व्यापक भावस्थिति की व्यंजना उसी स्तर हो जाती हैं।

प्रसव और उसके साथ विविध आचारों के समाप्त होते ही नेगों का प्रश्न उठता है। पर नेगों से पहले ही बदन आती है। आरम्भ में ही ननद और भावज में बातें हुई हैं। ननद ने यह भविष्यवाणी भी की है कि तुम्हें लड़का होगा। अतः भाभी प्रसन्न होकर अपनी ननद को कोई वस्तु या आभूषण देने का वचन देती है। समय पर पुत्र ही होता है और ननद भावज से बदी हुई वस्तु माँगती है तो अब भावज स्पष्ट शब्दों में कह देती है कि वह उस वस्तु को उसको न देगी। कभी-कभी तो पुत्रोत्पत्ति के पश्चात् भावज इस बात का प्रयत्न भी करती है कि उसकी ननद को उसके पुत्र होने की बात ज्ञात ही न हो, जिसके फलस्वरूप नेग या बदन के गीतों में ननद और भावज की स्वार्थ-परता की भावना प्रमुख रूप से देखने को मिलती है। बदन के गीतों की यह मूल भावाभिव्यक्ति ब्रज के निम्नलिखित 'जगमोहन लुगरा' नामक गीत में देखी जा सकती हैं—

राजे ननद भवज दोनों बैठिये,
राजे रुकिमिनि नौ-दस माँस गरभ ते,
राजे ननदुलि बात चलाइए,
राजे जौ तिहारे होंइ नंदलाल,
जगमोहन लुगरा दीजिए।

—(ब्रज : २२४)

जिसमें रुक्मिणी के पुत्र जन्म पर सुभद्रा बिना बुलाये ही अपने पूर्व बदन के अनुसार नेग रूप में रुक्मिणी के मायके से आये हुए जगमोहन लुगरा को लेने के लिये आती है।

इन नेग आदि गीतों के अतिरिक्त नित्य प्रति जच्चा के घर उसके आस-पास की चिर परिचित स्त्रियाँ आ आकर बधाई गीत गाती हैं, जिनमें जच्चा और बच्चा को वधाई देने आने वाली स्त्रियों के साथ-साथ परिजनों के आने का भी उल्लेख होता है। जो अपने साथ माँगलिक वस्तुएँ लाते हैं ; जैसे—मालिन आम के पत्ते का बन्दनवार बनाकर लाती है तो तमोलिन जच्चा के लिये पान का बीड़ा। ये अपनी-अपनी भेंट के बदले में अपना मनचाहा उपहार भी प्राप्त करना चाहती हैं। इनकी इच्छित वस्तुयें इन्हें प्राप्त हो जाने पर ये जच्चा और

बच्चा को शुभाशीष देती हुई अपने-अपने घर लौट जाती हैं। बधाई गीतों में पाई जाने वाली यह मूल भावना ब्रज के इस सोहिल गीत में भी लोक-गायक द्वारा व्यंजित किया गया है।

भये जसुवा घर लाल बधाई लाई मालिनियाँ।—(ब्रज : ७)

जिसमें यशोदा के कृष्ण जन्म पर तमोलिन, पटविन आदि जच्चा-बच्चा को भेंट देने के लिये अपने साथ मांगलिक वस्तुएँ लाती हैं और उसे देने के पश्चात् अपना मनचाहा उपहार प्राप्त कर उन्हें शुभाशीष देती हुई अपने-अपने घर लौट जाती हैं।

इसके अतिरिक्त बधाव गीतों में यह भी मिलता है कि नेगों के रूप में कहीं नवजात शिशु के पितामह या पितामही अपनी स्थिति के अनुकूल वस्त्रदान कर रहे हैं तो कहीं आभूषणों का दान। अतः कोई नेग माँगने वाला खाली हाथ नहीं लौट पाता। इसी वातावरण की कल्पना निम्न ब्रज के बधाव गीत में की गई है, जिसमें रानी देवकी के सास-ससुर अपने पौत्र के जन्म पर सोना-चाँदी ही लुटा रहे हैं—

रानी देवकी के भये नन्दलाल।
बधावा लाई ग्वालिनिया।
वाके बाबा लुटायें सोना-धन, चाँदी-धन,
दादी मुतियन के थार।—(ब्रज : ४)

यद्यपि कहीं भी देवकी के पुत्र होने पर उनके सास या ससुर द्वारा हर्ष मनाने या द्रव्य दान करने का उल्लेख नहीं मिलता, लेकिन लोकगीतों का संसार कुछ भिन्न है। वह देश, काल के साथ-साथ ऐतिहासिकता या स्वाभाविकता की ओर इतना ध्यान नहीं देता जितना कि भावनाओं की ओर वह झुकता है। वह अपने सास-ससुर की भाँति अन्य के भी सास-ससुर की कल्पना करता है। अतः यह सम्भव था कि यदि रानी देवकी के कृष्ण जैसे पुत्र होने की सूचना उनके सास-ससुर को मिलती तो वे सोना-चाँदी और मोती ही गरीबों को लुटाते। सम्भवतः इसी भावना से अपने हृदगत भावों की व्यंजना कर वे ऐसे गीत गा उठती हैं।

इसी हर्षोल्लास के सुखद वातावरण में दिन-पर-दिन बीतते जाते हैं। छठा दिन लगता है कि लोक-प्रथा के अनुसार वह दिन विशेषकर गृहशुचि और जच्चा-बच्चा के स्नान का दिन निर्धारित किया जाता है। इस छठी के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में प्रायः लोक-प्रथाओं के अनुसार आज जो भी चौक

पूजन आदि की तैयारियाँ होती हैं उनका विधिवत् उल्लेख मिलता है। उदाहरण के लिये बुन्देली का यह गीत प्रस्तुत किया जा सकता है—

आज दिन सोने कौ महराज।
सुरहन गऊ के गोबर मंगाओं, ढिग धर अंगन लिपाओ महराज।
—(बुन्देली : ६)

जन्ति के गीतों का एक अलग समूह ही छठी के गीतों के नाम से होता है। पुत्र उत्पन्न होने के छठे दिन बाद या उससे पूर्व जैसा लोकाचार हो या शुभ महूर्त निकले, गृहशुचि आदि के साथ ही सोभर समाप्त हो जाती है। इस दिन अनेक प्रकार के गीत गाये जाते हैं जिन्हें पालना, झुझुना, चकई आदि नामों से अभिहित करते हैं। इन गीतों में नवजात शिशु और उसकी माता के लिये प्रायः जो कार्य किये जाते हैं, उनका विवरण रहता है। साथ ही इन गीतों में मनोरंजन के साथ-साथ तत्सम्बन्धी क्रियाओं का स्मरण और सम्पादन तथा किसी में टोने-टोटके का भाव भी छिपा रहता है। उदाहरण के लिये ब्रज का यह झुझुना गीत देखा जा सकता है—

नन्दलाल झुझना न लेइ, नजर जाने किनकी लगी।
दादी पं खेले लल्ला, दाबा पं खेले,
बाहिर कौ कोई न लेइ ॥ नजर जाने०॥ —(ब्रज : ११)

जिसमें बालकृष्ण नजर लगने के कारण झुझना नहीं ले रहे हैं। परन्तु वह अपने दादा-दादी की गोद में हर्षित हो खेल रहे हैं। इस प्रकार छठी के अधिकांश गीत यथा नाम तथा गुण होते हैं। जन्म के सातवें दिन अथवा छठी के पश्चात् ननद जब अपने भतीजे के लिये कुर्ता-टोपी लाती है तो ब्रज में जगमोहन लुगरा नाम का एक सुन्दर गीत गाया जाता है जो जन्ति के उन गीतों जैसा है जिसमें ननद-भौजाई की बदन का उल्लेख मिलता हैं। इसका पीछे उल्लेख भी हो चुका है।

(आ) **नामकरण संस्कार के गीत**—छठी समाप्त हो जाने के बाद जन्म के आचारों में नामकरण संस्कार का दिन अन्तिम होता है जिसे साधारण भाषा में 'दष्ठौन' कहते हैं। पुनः गृहशुचि आदि के साथ-साथ इसी दिन पुरोहित यज्ञ आदि करता है और ग्रह-नक्षत्र शोधकर बालक का नाम रखता है। पुरोहित के नाम रखने का उल्लेख तो अब परम्परा से चले आते हुए गीतों में ही मिलता है। वैसे अब बच्चों का नाम प्रायः घर के बड़े-बूढ़े स्वयं ही रख देते हैं। इन्हीं बातों का उल्लेख दष्ठौन गीत में प्रमुख रूप से रहता है। इस अवसर पर

गाया जाने वाला ब्रज का यह गीत भी देखा जा सकता है, जिसमें कृष्ण रूप में मान्य किसी बालक का नामकरण संस्कार पौरोहित्य नियमों के अनुसार पुरोहित द्वारा रखाये जाने की कल्पना करती हुई ग्रामीण नारियाँ गा रही हैं।

मथुरा नगर से पंडित बुलायौ,
धरा रही लाला कौ नाम।—(ब्रज : २०)

२. मंगल गीत या विवाह गीत

जन्म के उपरान्त विवाह का संस्कार ही सबसे महत्त्वपूर्ण संस्कार होता है, जो जीवन की अवतारणा से प्रकृत सम्बन्ध रखता है। विवाह के द्वारा ही समस्त सांसारिक सम्बन्धों की सृष्टि होती है और यही कारण है कि हिन्दू-संस्कृति में विवाह संस्कार बहुत ही महत्त्वपूर्ण और प्रधान संस्कार बन गया है। फिर इस विवाह को जो धार्मिक कृत्य मानते हैं वे तो हर्ष प्रकट करने के लिये गीत गाते ही हैं, परन्तु जिनका विवाह के लिये धार्मिक दृष्टिकोण नहीं है, वे भी इसे सामाजिक समझौता मानकर गीतों द्वारा अपने आनन्द की अभिव्यक्ति करते हैं।

जन्म संस्कार के अनुरूप ही विवाह संस्कार में भी कुछ आचार तो वैदिक अथवा शास्त्रोक्त प्रणाली से पुरोहित और पंडित द्वारा सम्पन्न कराये जाते हैं और कुछ लौकिक होते हैं जो संख्या में अधिक हैं। इन्हीं लोकाचारों के सम्पादन के अवसर पर लोकवार्ता और लोक गीत के दर्शन होते हैं। ये विवाह के गीत दो प्रकार के पाये जाते हैं : (१) बधू-पक्ष, और (२) वर-पक्ष के यहाँ गाये जाने वाले। सामान्य रूप से बधू-पक्ष के गीतों में करुणा का प्रवाह, बिछुड़न की पीड़ा तथा माता-पिता के घर भावी अभाव की भावना स्पष्ट रूप से झलकती रहती है, जब कि वर-पक्ष के गीतों में वर की शोभा, सजावट और उसके घर सम्पन्न होने वाले सतत उत्साह का वर्णन विशेष रहता है।

विवाह के गीत सदा स्त्रियों ने ही गाये हैं, अतः उन्हीं की बुद्धि और कोमल भावनाओं ने उनमें अपना रस निचोड़ा है। इसीलिये इन गीतों में करुणा, उत्साह, शृंगार और हास्यपूर्ण भावाभिव्यक्तियों का निश्छल परिपाक हुआ है।

यद्यपि विवाह संस्कार का बीजारोपण 'पक्की' से होता है, परन्तु यदि सूक्ष्म रूप से देखा जाये तो विवाह की तैयारी सर्वप्रथम कन्या-पक्ष की ओर से ही होती है। कन्या का पिता अपनी ही बराबरी का वर खोजने का प्रयत्न करता है। अतः विवाह सम्बन्धी गीतों का गायन वर खोजने के समय से ही प्रारम्भ हो जाता है। कन्या ज्यों ही सयानी होने के लक्षण अपने मूक भावों द्वारा प्रदर्शित करने लगती है, त्यों ही उसके माता-पिता को उसके योग्य वर

ढूँढ़ने आदि की चिन्ता सवार हो जाती है और यही चिन्ता का भाव पक्की या फलदान के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में पाया जाता है। यही मूल-भाव या तत्त्व रुक्मिणी विवाह के इस निम्न गीत में भी प्रतिष्ठित है, जिसे अपने भाव-साम्य के कारण ग्रामीण नारियाँ सांकेतिक अर्थ में अपने यहाँ विवाह के अवसर पर गाती हैं—

सब गामैं सहेलरियाँ कैं रुकमनि हो हो कैं,
रुकमिन लाड़लड़ी। —(ब्रज : २१८)

सयानी पुत्री के विवाह की चिन्ता आज के वर्तमान युग की ही समस्या नहीं। सम्भवतः यह हमारी भारतीय सभ्यता के साथ ही प्रत्येक पुत्री वाले पिता के सम्मुख उठती रही है, और यही कारण है कि इस तरह की चिन्ताओं को इन गीतों में स्थान मिल गया है। फिर लोकगीतों में कृष्ण-रुक्मिणी के विवाह की कथा के आने का एक कारण यह भी हो सकता है कि जब लोक में एक सामान्य पुत्र को भी कृष्ण और राम के रूप में मानते हुए जन्ति के गीत गाती हैं तो ठीक उसी प्रकार वे अपनी पुत्री—जो कि लोक में सीता और रुक्मिणी की तरह मान्य है, के विवाह के लिये राम और कृष्ण सरीखे वर भी खोजती हैं। अतः कन्या के फलदान के अवसर पर ग्राम बधुयें एवं वृद्धायें परम्परा से अंकित अपने हृदय-पटल की कृष्ण-कथा में वे सभी तत्त्व और सम्भावनायें खोज लेती हैं जो उनके गीतों की मूल भावना के अनुरूप होती है। और फिर उसी के माध्यम से वे अपनी भावनाओं एवं सम्भावनाओं को साधारणीकृत करती हुई कृष्ण विवाह से सम्बन्धित गीतों को गा उठती हैं। यही विचारधारा प्रायः विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले समस्त गीतों के पीछे छिपी हुई देखी जा सकती हैं।

लगुन पत्रिका के अनुसार तेल आदि चढ़ने के बाद रतजगे में रात भर गीत गाये जाते हैं। साधारणतः इस अवसर के गीतों को तीन भागों में बाँटा जा सकता है : प्रथम कोटि के गीतों में साधारणतः वे गीत आते हैं जो विवाह में भाँवर पड़ने से पूर्व कभी भी गाये जा सकते हैं, जिनमे विवाह के समस्त संस्कार एक भाव में बँध जाते हैं। इस कोटि के गीतों में बरना-बरनी, घोड़ी और खेल के गीत आते हैं।

बरना या बनरा गीतों में दूल्हा के रूप, स्वभाव, नखरे आदि का वर्णन प्रधान होता है तो बरनी या बनरी के गीतों में कन्या को पाणिग्रहण संस्कार के दिन मण्डप में लाने के पूर्व पहिनाये जाने वाले वस्त्रों और आभूषणों का वर्णन तथा उससे बढ़ने वाली कन्या की रूप-शोभा की व्यंजना रहती हैं।

उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित बरना ही देखा जा सकता है जिसमें लोक-नायक के रूप में वर कृष्ण के रूप-श्रृंगार की कल्पना है—

नन्द को दुलारो मेरो बन्ना।
सिर सोहै जाली को चीरा,
कलगी लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।

—(ब्रज : २२६)

यह बरना तो वर के घर की स्त्रियाँ वर के श्रृंगार की प्रशंसा में गाती हैं, पर जब यही वर बधू के द्वार पर पहुँचता है तो वहाँ की नारियां वर को अपने आँगन के मण्डप में बैठा देखकर उसके गुणों के साथ उसके अवगुणों का भी ध्यान कर गा उठती हैं—

मेरो लागे की बढ़नी बेल,
कन्हैया हरे-हरे साँवरे छोटे से।
एक सखी तो यों उठ बोली,
किस बिध काना छोटे ?
दूजी सखी तो यों उठ बोली,
अम्मा ने खैंच न बढ़ाये ॥ कन्हैया० ॥

रतजगे के गीतों में कुछ तो अनुष्ठान सम्बन्धी गीत होते हैं, जिनमें इनके गाये जाने के समय सम्पन्न किये जा रहे अनुष्ठानों का उल्लेख रहता है, तथा दूसरे वे गीत हैं जो विशेष विषयों के नाम से अभिहित किये जाते हैं तथा जिनके गाये जाने का समय भी निश्चित होता हैं। इस श्रेणी के गीतों सें प्रायः सूर्योदय के समय गाये जाने वाले दतौन तथा तुलसी-गीत मुख्य हैं।

दतौन गीत वर को प्रतिदिन प्रातःकाल दातुन कराते समय गाया जाता है। जिसमें बर की माता का वर के लिये नवबधू से दातौन माँगने, बधू का अनसुनी कर देने, सास के रूठने और फिर वर द्वारा वधू को उसके मायके भेज आने का उल्लेख मुख्य रूप सें रहता है। गीत की इसी मूल भावना को लेकर ब्रज की तरह बुन्देली क्षेत्र में भी एक 'दातुन' गीत मिलता है जिसमें यशोदा नवबधू राधा से दातुन माँगती है। राधा सास की बात अनसुनी कर जाती हैं। अतः कृष्ण माँ की सम्मान रक्षा के हेतु न चाहते हुए भी राधा को उसके मायके भेज आते हैं परन्तु अपने वायदे के अनुसार एक वर्ष बीत जाने पर भी वह राधा को वापस नहीं लिवा आते।—(बुन्देली गीत : १७७)

विवाह के अवसर पर सास के कठोर स्वभाव की व्यंजना करने वाला यह गीत सम्भवतः नवबधू पर उसके कठोर शासन के प्रारम्भ होने की सूचना

मात्र देता है कि यदि कहीं वधू ने मास की आज्ञा अनसुनी की तो उसे अपने मायके का मुख ही देखना पड़ेगा। वस्तुतः इस प्रकार के प्रसंगों का कृष्ण-कथा में संयोग लोक भावना का अपने स्तर पर ही सारी कथा को ग्रहण करने का प्रमाण है। अपने जीवन के स्तर पर लोक मानस इन कथाओं में मौलिक कल्पनायें तथा उद्‌भावनायें कर लेता है। जैसे उसने कृष्ण के साथ राधा और रुक्मिणी को एक सामान्य नायक और नायिका के रूप में ग्रहण कर लिया उसी प्रकार लगता है किसी अन्य कथा-प्रसंग को उसने कृष्ण-कथा के अन्तर्गत लाकर डाल दिया हो।

तुलसी के गीतों में तुलसी के बिरवा को आदर देने और उसके फलस्वरूप हरि (प्रिय या विष्णु) के मिलने का उल्लेख हुआ है—(ब्रज गीत : २०६)। क्योंकि तुलसी विष्णु-प्रिया है, अतः उनके प्रसन्न होने पर विष्णु के दर्शन होने की सम्भावना सदैव बनी रहती है। वस्तुतः तुलसी ने अपनी अनन्य भावना तथा साधना के बल पर अपने प्रिय विष्णु को पति के रूप में प्राप्त किया था और हर कन्या के लिए यह एक आदर्श है जो विवाह के अवसर पर स्मरण किया जाता है।

बारात 'ऊबनी' या 'बरौठी' के लिए जैसे ही आती हुई दिखाई देती है, लड़की वाले के घर खलबली मच जाती है। गाँव भर के निवासी दूल्हा तथा उसकी बारात के आने की प्रतीक्षा में खड़े रहते हैं। इतने में ही बाजे-गाजे और धूम-धड़ाके के साथ दूल्हा धरती को धमकाता हुआ बारात सहित द्वार पर आ पहुँचता है। वर का टीका किया जाने लगा कि वधू-पक्ष की स्त्रियाँ उसकी प्रशंसा और मार्ग में घटित हुए शुभ-शकुनों का स्मरण कर द्वारचार के गीत गाने लगती हैं—

जब किसन हरि घर से निकले,
भले भले सगुन विचारे,
रंग बरसेगो हाँ-हाँ राम रंग बरसेगो।

—(ब्रज : २३१)

स्त्रियों की तात्त्विक दृष्टि सर्वत्र 'सियाराम मैं सब जग जानी' का पूर्ण अनुसरण करती है। अतः वह गाँव भर की लड़कियों में राधा या रुक्मिणी का, तो लड़कों में कृष्ण के व्यक्तित्व का साधारणीकरण कर लेती हैं। फलतः जब दूल्हा के रूप में कृष्ण सरीखा उनका दामाद ही चला आ रहा हो तो उनका प्रभाव ही ऐसा होगा कि वह जहाँ से निकलेगा वहां का सारा वातावरण ही बदलता जायेगा। इस प्रभाव की व्यंजना उपर्युक्त 'ऊबनी' गीत में देखी जा सकती है।

पाणिग्रहण संस्कार के बाद उसी दिन जब बारातियों को पंगति या ज्यौनार कराया जाता है तो उस अवसर पर बधू-पक्ष की स्त्रियाँ अपने सुमधुर कण्ठ से ज्यौनार गीत गाती हैं जिसमें वर के सम्बन्धियों को प्रायः विविध प्रकार की गाली दी जाती है। ये गालियाँ व्यंग्यपूर्ण भी होती हैं और अर्थ-गम्भीर, सुरुचिपूर्ण तथा अश्लील भी। कभी-कभी यह अश्लीलता इतनी अधिक होती हैं कि उसके आगे अश्लील कही जाने वाली रीतिकालीन कविता भी अत्यन्त शिष्ट और संयत प्रतीत होती है। अतः बिना कुछ विचार किये ये नारियाँ भावावेश में गा उठती हैं—

तुम्हें दैहें कौन विधि गारी हो
जसुदा जी के लला।—(बुन्देली : १६८)

यहाँ भी स्त्रियों की वही तात्त्विक दृष्टि कार्य कर रही है। अतः वे अपने घर आये हुए बारातियों को बनारस या लखनऊ का न समझ कर उन्हें मथुरा-वासी कृष्ण और उनके सगे-सम्बन्धी ही समझ लेती हैं। क्योंकि कृष्ण तथा मथुरावासी उनके अपने स्वजनों से अभिन्न हो जाते हैं, अतः वे अपनी भावनाओं को कृष्ण-कथा के माध्यम से व्यक्त करती हैं।

विवाह के गीतों में गालियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि इन गीतों का विवाह से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है, परन्तु ऐसा जान पड़ता है कि मनोरंजन की दृष्टि से ही गाली-गीतों को विवाह के गीतों में स्थान दिया गया है। विवाह के पश्चात् लड़की की विदा का समय उसके माता-पिता के लिए बड़ा ही हृदय-द्रावक होता है, साथ ही दो अनजानों के सुखद मिलन का समय भी होता है। अतः इस हर्षमिश्रित वियोगपूर्ण वातावरण को व्यक्त करने वाले विदाई गीत भी बड़े मार्मिक होते हैं। जिसमें कहीं पुत्री के माता-पिता एवं भाई से विछोह होने का उल्लेख रहता है तो कहीं पुत्री का पिता अपने समधी से कहता है—'मेरी लाडली को कष्ट न दीजियेगा, मैंने उसे बड़े लाड़-प्यार से पाला है। अब उसे आपको अर्पित कर रहा हूँ।'

विदाई गीत की यही मूल भावना कृष्ण-कथा सम्बन्धी इस निम्न गीत में भी पाई जाती है। जिसके कारण आज भी यह गीत ग्रामीण नारियाँ अपनी कन्या की विदाई के अवसर पर अपनी बिछोह पीड़ा को कुछ हल्का करने का प्रयास करती हुई गा उठती हैं—

सात बरस की राधिका, समधी जी पाली दूध पिवाइ।
सरन तिहारी दै दई, जाय मन कर लीजो,
दुख मत दीजो बारी जी। —(ब्रज : २३८)

३. व्रतों के गीत

व्रत के उन गीतों को जिनमें कृष्ण-कथा को भी स्थान मिल गया है, हम अपनी सुविधा के अनुसार इस प्रकार विभाजित कर सकते है—

(क) देवी के गीत,

(ख) सुअटा अथवा नौरता के गीत, और

(ग) कातिक के गीत ।

संस्कार गीतों के उपरान्त व्रत के गीतों का स्थान है । यद्यपि ऐसे व्रत जिन पर ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों में अनुष्ठान-सम्बन्धी गीत गाये जाते हों, कम हैं और जो हैं वे भी हमारे विषय-क्षेत्र के बाहर आते हैं ।

(क) देवी के गीत—चैत और आश्विन मास की नौरात्रि में नवदुर्गा विशेषतया आराध्यणीया हैं । लोगों का ऐसा विश्वास है कि इनकी उपासना करने से मनुष्य सम्पूर्ण भौतिक एवं अभौतिक बाधाओं से मुक्त रहता है । इसी कारण इनके गीत अधिक गाये जाते हैं ।

ब्रज में देवी के गीतों के साथ 'लंगुरिया' अवश्य गाया जाता है । जो देवी के लांगुर या लंगुरिया नामक पुत्र से सम्बन्ध रखता है ।[1] लेकिन बुन्देलखण्ड में यद्यपि लांगुर से सम्बन्धित लंगुरिया गीत स्वतन्त्र रूप से नहीं मिलता, फिर भी देवी (शारदा) के गीतों में इस लांगुर का अनेक बार उल्लेख हुआ है, जिसमें वह देवी के भाई के रूप में आया है ।[2] अतः देवी के गीतों में इस 'लांगुर' का इन्हीं दोनों भावों से वर्णन किया जाता है । ब्राह्मण का बालक लांगुर तुलसी के पौधे से उत्पन्न होकर देवी माँ को बड़ा प्रिय, उनका सहायक और आज्ञाकारी पुत्र है ।[3] देवी का विशेष कृपापात्र होने के कारण यह उनके भक्तों की सेवा का भी अधिकारी हो गया है । अतः स्त्रियाँ भक्ति और श्रद्धा-पूर्वक देवी-यात्रा के अवसर पर लांगुर का नाम लेकर गीत गाती हैं । उनका विश्वास है कि इसका नाम लेकर गीत गाने से देवी प्रसन्न होती हैं । फिर लंगुरिया नाम के ब्रज के गीतों में लंगुरा को रसिक और हँसोड़ा बताया गया है । वह जाती (यात्रा करने वाली) स्त्रियों से स्वयं छेड़-छाड़ करता है । यदि किसी से नहीं करता तो वह स्त्री उसकी रसीली छेड़-छाड़ के लिए लालायित

---

१. **ब्रज के उत्सवों और त्यौहारों के लोकगीत**—श्री प्रभुदयाल मीतल : सम्मेलन पत्रिका (लोक-संस्कृति अंक), पृ० १५२ ।

२. **बुन्देलखण्डी लोकगीत**—श्री हरप्रसाद शर्मा, पृ० ९८, १०० ।

३. **हिन्दी साहित्य कोष**—डा० धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य, पृ० ६८२ ।

रहती है सम्भवतः इसी कारण निम्नलिखित गीत में गोपियाँ लांगुरिया को साथ ले, वृन्दावन में राधा-कृष्ण की रास-क्रीड़ा देख आने के लिए उत्कण्ठित दिखाई पड़ती हैं—

रच्यौ रच्यौ है वृन्दावन रास,
लांगुरिया चलौ तो दरसन करि आवें ।

—(ब्रज : १२४)

(ख) **सुअटा अथवा नौरता के गीत**—ब्रज और बुन्देलखण्ड की किशोरी बालिकायें क्वार की नौरात्रि (क्वार शुक्ल प्रतिपदा से नवमी तक) के समय सुअटा नामक एक अत्यन्त बाल-सुलभ एवं धार्मिक भावनाओं से पूर्ण खेल खेलती हैं। खेल के ही अन्तर्गत वे एक दीवार पर चिकनी मिट्टी से आदिशक्ति 'देवी जगदम्बा भवानी' की मूर्ति बनाती हैं। उस मूर्ति के आगे नौ दिन तक गीत गाते हुए वे उसकी पूजा भी करती हैं, जिससे देवी प्रसन्न होकर सुअटा दैत्य का वधकर उसके अपहरण से उन्हें बचायें। देवी-पूजा के पश्चात् बालिकायें सुअटा की मूर्ति के पास बैठकर अनेक भावपूर्ण गीत भी गाती हैं, जिनमें कहीं उनका बाल-सुलभ हास-परिहास, अपने भाई के प्रति प्रेम, भाभी के प्रति मंगल भावना, मायके का सुख और ससुराल की कठिनाइयों का चित्रण होता है—तो कहीं भाई का बहिन की ससुराल जाकर उसको बुला लाने का मार्मिक उल्लेख और कहीं माता की पुत्री के प्रति वात्सल्य भाव की अनुपम छटा दिखाई देती है।

सुअटा गीतों की इस भाव-भूमि और वातावरण के विपरीत, ब्रज से प्राप्त होने वाले सुअटा गीत मे कृष्ण की कथा को किस प्रकार स्थान मिल गया, इसके विषय में कुछ कहा नहीं जा सकता। सम्भव है राधा को जगत-जननी दुर्गा का प्रतीक मानकर ही ये गीत गाये जाते हों। जिसके कारण राधा-कृष्ण की मान-लीला एवं यशोदा का कृष्ण को प्रातः जगाने (ब्रज गीत : ३३) की लीला का समावेश नौ-रात्रि के गीतों में हो गया हो। यह भी सम्भव है कि देवी-दर्शन के लिये मानसरोवर जाते समय गोपियाँ मार्ग में पड़ने वाली वृन्दावन नगरी में राधा-कृष्ण की मान-लीला का प्रसंग वश उल्लेख करती हुई आगे बढ़ती जा रही हों। गीत इस प्रकार है—

मानसरोवर कैसे जाऊं,
बीच परै बृन्दावन नगरी ।
अरी सुन प्यारी मान गहे वहां बैठी राधिका,
चरण दबा रहे श्री भगवान ।

(ग) **कार्तिक गीत**—कार्तिक या पुरुषोत्तम मास का महीना भगवान् विष्णु (कृष्ण) को अत्यधिक प्रिय है। अतः ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों की धार्मिक प्रवृत्ति की कही जाने वाली नारियों के लिये यह मास समान रूप से महत्त्व रखता है। इस मास में कृत्तिका अस्त होने से पूर्व अरुणोदय काल में सरोवर स्नान एवं राई-दामोदर (राधा-कृष्ण) की पूजा एवं उनके नामों तथा लीला-कथाओं के गायन का माहात्म्य है। क्योंकि इस मास में कृष्ण-राधा का व्रत एवं पूजन करती हुई जो स्त्रियाँ सात्विक जीवन व्यतीत करती हैं, वे पौराणिक कथाओं के मतानुसार मृत्यु के उपरांत वैकुण्ठ लोक जाकर भगवान् के समीप रहने का सौभाग्य प्राप्त करती हैं। अतः जीवन-मुक्ति लाभ के लिये वे नित्य नियम ब्रह्म बेला में उठती हैं और किसी पनघट या जलाशय को स्नानार्थ आते-जाते समय सामूहिक रूप में राधा-कृष्ण की लीला कथाओं को बड़े मधुर स्वर में गाती जाती हैं। इन गीतों में भक्त स्त्रियाँ स्वयं को गोपी या राधा-भाव से कृष्ण को प्रेमी या प्रियतम के रूप में देखने और पाने की अभिलाषा मुख्य रूप से व्यक्त करती हैं। यह भाव निम्नलिखित कुछ गीतों की प्रथम पंक्तियों से भी उदाहरण स्वरूप जाना जा सकता है—

(१) **नेंक पठै दे मोहन जी को मैया।**—(ब्रज : ५५)

(२) **कान्हा बरसाने में आइ जइयो, बुलाइ गई राधा प्यारी।**
—(ब्रज : ५८)

(३) **मोय पनघट पै नंदलाल छेड़ लियो री।**—(बुन्देली : ६१)

(४) **लागी तुमसे आरी, किसन मुरारी।**—(बुन्देली : ९०)

(५) **सखी री चलौ तो दरसन करि आमें,**
रोप्यौ-रोप्यौ ऐ नंद के नें रासु।—(ब्रज : १२५)

(६) **कब मिलिहो गोपाल लाल अब।** —(बुन्देली : १३२)

(७) **एरी कुबिजा ने जादू डारा, जिन मोह्या स्याम हमारा।**
—(ब्रज : २०५)

(८) **ऊधौ कारे रंग भजमाये।**—(बुन्देली : १४७)

(९) **ऊधौ जी तुम जाय स्याम को समझाना।**—(ब्रज : २१२)

इस मास में नियमित रूप से जो गीत और चन्दसखी के भजन प्रातःकाल सुनने को मिलते हैं, उनमें गोपी या राधा-विरह सम्बन्धी गीत सर्व प्रधान हैं। इसके बाद गोचारण एवं गोदोहन, बंशीवादन एवं उसका प्रभाव, कालीय-दमन, पनघट लीला, गोवर्धन धारण, दधि-दान लीला और छद्म लीला सम्बन्धी

गीतों को क्रमशः स्थान मिला है। इसी के साथ तुलसी विवाह और प्रातः कृष्ण को जगाये जाने के लिये गाये जाने वाले जागरण गीतों का भी महत्त्व-पूर्ण स्थान है। यथा—

जागिये ब्रजराज कुँवर भोर भयो गना,
बाट के बटोही चले, पंछी चले चुगना।
हम भी चले श्री जमुना।।—(ब्रज : ३२)

कार्तिक मास में पड़ने वाले कृष्ण-लीला सम्बन्धी विविध पर्व; यथा—गोवर्धन उत्सव (कृष्ण पक्ष की तृयोदशी को), गोपाष्टमी (शुक्ल पक्ष की अष्टमी को), देव-प्रबोधनी एकादशी (शुक्ल पक्ष की एकादशी को), और तुलसी विवाह या बैकुण्ठ चतुर्दशी (शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी को) मुख्य हैं। अतः इन पर्वों पर इनकी कथा से सम्बन्धित गीत भी इसी कारण इस मास में गाये जाते हैं। गोवर्धनोत्सव पर गाये जाने वाले गीतों में कृष्ण के गोवर्धन धारण लीला का, देव-प्रबोधिनी एकादशी को विष्णु के अवतार कृष्ण (हरि) के जागरण तथा वैकुण्ठ चतुर्दशी को हरि (कृष्ण) और तुलसी विवाह से सम्बन्धित लोकगीतों का गायन ग्रामीण नारियाँ इसी कारण करती हैं।

१. गोवर्धनोत्सव के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों के लिये देखें—(बुन्देली गीत : ६३, ६४; ब्रज गीत : ८४)

२. देव प्रबोधनी एकादशी के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों के लिये देखें—(ब्रज गीत : ३२), और

३. बैकुण्ठ चतुर्दशी के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों के लिये देखें—(बुन्देली गीत : १७७)

कार्तिक व्रत के महात्म्य को स्पष्ट करने के लिये पद्मपुराण एवं स्कंद-पुराण में सत्यभामा के पूर्वजन्म और फिर दूसरे जन्म में कार्तिक व्रत के प्रभाव के कारण कृष्ण को प्राप्त करने से सम्बन्धित एक कथा दी गई है। सम्भवतः अन्य कथाओं के साथ-साथ इस कथा के श्रवण से प्रभावित हो स्त्रियाँ कार्तिक-व्रत का पालन करती हुई कृष्ण की विविध लीलाओं का मास पर्यन्त गायन करती हैं। उक्त पुराणों में मिलने वाली कथा संक्षेप में इस प्रकार हैं—

एक समय सत्यभामा ने भगवान् कृष्ण से पूछा—भगवान् ! मैंने अपने पूर्वजन्म में ऐसा कौनसा पुण्य कर्म किया था—जिससे मर्त्य लोक में भी जन्म लेकर मैं आपकी अर्धाङ्गिनी हुई। तो कृष्ण ने बताया—"प्रिय सत्यभामे ! सतयुग के अन्त में मायापुरी (हरिद्वार) में देव शर्मा नामक एक श्रेष्ठ ब्राह्मण के घर में उत्पन्न एवं कालान्तर में देवयोग से विधवा हुई पुत्री गुणवती कार्तिक-

व्रत का भली प्रकार पालन करने से मृत्यु के पश्चात् वैकुण्ठ लोक को चली गई। वहाँ वह कार्तिक व्रत के पुण्य प्रभाव से मेरे समीप रहने लगी थी। तदनंतर ब्रह्मा आदि देवताओं की प्रार्थना से जब मैं इस पृथ्वी पर आया तो मेरे साथ मेरे पार्षद भी यहाँ आये। भामिनी—ये सब यदुवंशी मेरे पार्षद गण हैं। पूर्व जन्म के देवशर्मा ही इस जन्म में तुम्हारे पिता सत्राजित हुए और वे चन्द्रशर्मा नामक पूर्व जन्म के तुम्हारे पति ही इस समय अक्रूर हुए हैं तथा तुम वही कल्याणमयी गुणवती हो। कार्तिक व्रत के पुण्य से तुम मेरे लिये अधिक प्रसन्नता देवे वाली बन गई हो। पूर्व जन्म में जो तुमने मेरे मन्दिर के द्वार पर तुलसी की वाटिका लगा रखी थी—उसी का फल है कि इस समय तुम्हारे आँगन में यह कल्पवृक्ष शोभा पा रहा है। फिर पूर्वकाल में तुमने जो कार्तिक में दीपदान किया था, उसी के प्रभाव से तुम्हारे घर में यह स्थिर लक्ष्मी प्राप्त हुई है तथा जो तुमने अपने व्रत आदि सब कार्यों को पति स्वरूप श्री विष्णु की सेवा में निवेदित किया था, इसीलिये तुम मेरी पत्नी हुई हो। तुमने मृत्यु पर्यन्त कार्तिक-व्रत का अनुष्ठान किया था, अतः उसके प्रभाव से तुम्हारा मुझसे कभी भी वियोग न होगा। इसलिये हे प्रिये—कार्तिक मास में जो मनुष्य व्रत परायण होते हैं वे मेरे समीप रहते हैं।" —(स्कन्द पुराण, पृ० ३२८ : गीता प्रेस, संस्करण)

४. ऋतु या मास-सम्बन्धी गीत

विविध ऋतुओं या मासों में गाये जाने वाले गीतों को सुविधानुसार निम्नलिखित शीर्षकों में बाँटा जा सकता है—

वर्षा ऋतु—(अ) सावन मास के गीत : हिंडोला या कजली, बारहमासा और सैरा।

(आ) भादों मास के गीत : नाग नाथन लीला।

शरद ऋतु—कार्तिक मास के गीत : दिवारी और हीरो।

बसंत ऋतु—फागुन मास के गीत : होली और रसिया।

अपने इस विभाजन में पहले हम सावन मास के सरस गीतों और उसमें आई हुई कृष्ण-कथा पर विचार करेंगे।

(अ) सावन गीत—सावन मास बड़ा ही मनोरम होता है। इस समय मानो प्रकृति स्वयं ही सर्वोत्तम परिधान को धारण कर जगती पर अठखेलियाँ करने निकल पड़ती हैं। फलस्वरूप मानव मन भी बीतते हुए ग्रीष्म ऋतु की कठोरता भुला देने के उद्देश्य से नये ऋतु का स्वागत करते हुए प्रकृति की इस अनुपम छटा में रंग अपनी सुधबुध खो बैठता है। वह सावन की मनोमुग्धकारी शोभा से उद्वेलित हो इस मास के गीत-कजली, बारहमासा, मल्हार, राछरे,

सैरे, चौमासा—गा उठता है। प्रकृति शोभा की पृष्ठ-भूमि के साथ इन अधिकांश गीतों में कहीं राधा-कृष्ण का यमुना तट के कदम्ब वृक्ष पर चंदन पटली और रेशमी डोर का झूला डालकर झूलने का चित्रण मिलता है तो कहीं इनके साथ गोपियों के भी झूलने या गीत गाने का उल्लेख मिलता है। इस कोटि के गीत 'मल्हार' नाम के लोकराग में गाये जाने के कारण 'मल्हार' कहे जाते हैं। मल्हार गाते समय स्त्रियाँ (ब्रज में) 'ऐजी कोई' और 'हम्बै कोई' का पुट अवश्य लगाती जाती हैं। कुछ मल्हार गीतों में राधा और कृष्ण का पारस्परिक प्रेम और उनकी वेशभूषा तथा रूपरंग का वर्णन किया जाता है। ऐसे मल्हारों का मुख्य रस 'श्रृंगार' होता है। यथा—

देखौ री मुकुट झोका लै रह्यौ,
एजी लै रह्यौ जमुना के तीर। —(ब्रज : १४२)

'हिंडोला' गीतों में प्रायः सहेलियों सहित राधा को कृष्ण हिंडोले पर झुलाते हैं—इसी बात का चित्रण रहता है। इस प्रकार सावन के अधिकांश गीतों में झूला झूलने का ही उल्लेख होता है, और यही कारण है कि एक सामान्य नायक-नायिका के रूप में राधा-कृष्ण के झूलने की कल्पना इन लोक-गीतों में की गई है।

सावन के कुछ गीत प्रबन्धात्मक कहे जा सकते हैं जिनमें स्त्री-पुरुष से सम्बन्धित कोई छोटी या बड़ी कथा होती है, जिनकी मूल भावना में कहीं सौत की ईर्ष्या का वर्णन रहता है तो कहीं नायिका परदेशी नायक के चोरी चोरी आकर मिलने की कल्पना करती दिखाई पड़ती है। इसी भावना से प्रभावित कृष्ण-कथा सम्बन्धी एक सावन गीत यह है—

तनक मनक राधे पूछैं हैं बतियाँ,
सबरी रैन कहाँ गमाई महाराज।—(बुन्देली : १७९)

जिसमें राधा अपनी सौत तुलसा के प्रति ईर्ष्यालु चित्रित की गई है तो एक अन्य गीत में कृष्ण मनिहारी का छद्म वेश धारण कर बरसाने राधा को चूड़िया पहिना जाते हैं। (बुंदेली गीत : ८१, ८३) सावन के प्रेम-कथा सम्बन्धी इन प्रबन्धात्मक गीतों की एक विशेषता और भी है, और वह है—इन रोमांसों के अधिकांश नायक सामान्यतः निम्न वर्ग के सेवक, धोबी, नाई, सुनार, बनजारे आदि होते हैं। सम्भवतः इसी कारण प्रबन्धात्मक गीतों में कृष्ण-कथा को विशेष स्थान नहीं मिल सका है। फिर भी एकाध प्रसंग आ ही गये हैं जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है।

कजली या हिंडोला के गीतों में ऋतु-शोभा के वर्णन के साथ-साथ

राधा-कृष्ण का अपनी सहेलियों के साथ हिंडोला झूलने का उल्लेख तो मिलता ही है। साथ ही इन गीतों की मूल भावना के अनुकूल कृष्ण-कथा सम्बन्धी गीतों में शृङ्गार के उभय पक्षों की झाँकी भी मिलती है। यदि करुणा की भावना से उद्वेलित कहीं गोपी या राधा-कृष्ण के विछोह-दुःख से दुखी हैं तो कहीं वही बीते संयोग सुख की सुखद स्मृतियों का स्मरण कर व्याकुल भी। (बुन्देली : १३७, १३८) सावन के गीतों में कृष्ण-कथा के इन प्रसंगों को स्थान मिलने का कारण जैसा कि ऊपर भी लिखा जा चुका है, सावन गीतों की मूल प्रकृति के कारण ही हो सका है। जिसमें यदि कहीं नायिका पति-विछोह से दुखी दिखाई देती है तो कहीं उसको ससुराल से मिलने वाले कष्टों और मायके की सुखद स्मृतियों का उल्लेख भी रहता है।

बारहमासा—इन्हीं भावात्मक गीतों के अन्तर्गत वियोग या विप्रलम्ब शृङ्गार सम्बन्धी कहे जाने वाले वे गीत भी आते हैं जिन्हें 'बारहमासा' कहा जाता है। जिसमें अधिकतर सामान्य विरहिणी की भावना के साथ-साथ विभिन्न मासों का प्रत्यावर्तन भी अंकित होता है। पर कुछ में विरहिणी की उक्ति परदेशी प्रियतम के प्रति होती है तो कुछ में सखी से या स्वतः ही अपनी वेदनाओं का वर्णन किया गया होता है। इसी भावना को लेकर गोपियों या राधा का भी बारहमासा है जिसमें वे सामान्य विरहिणी नायिका के रूप अपने पति या प्रेमी कृष्ण को लक्ष्य करके अपनी विछोह पीड़ा व्यक्त करती हैं। यथा —

कन्हैया बिन कौन हरे मोरी पीरा।
असाढ़ मास घन गर्जन लागे, साहुन गगन गम्भीरा।
भादौं मास नभ बिजुरी चमकें, मो तन धरत न धीरा।
—(बुन्देली : १४१)

राधा या गोपियों की विरह भावना को व्यक्त करने वाला एक और बुन्देली बारहमासा है—

चैत चितै चहुँ ओर चित्त मैं हारी।
बैसाख न लागी आँख बिना गिरधारी।
—(बुन्देली : १३८)

ये उपर्युक्ति दोनों ही बारहमासे, बारहमासों की परम्परा के अनुसार आसाढ़ तथा चैत मास के वर्णन से आरम्भ होते हैं क्योंकि इस प्रदेश में वर्षा और बसंत—दोनों ही उल्लास की ऋतुयें हैं। दोनों में प्रकृति शृङ्गार करती है और इसी कारण मानवीय भावों को उद्दीप्त करने में इनका अधिक सहयोग

भी है। यद्यपि लोक गायक बारहमासों में यथार्थ रूप से सभी महीनों की कोई विशेषता इतनी प्रबलता से नहीं प्रकट कर पाया है कि उनकी पारस्परिक भिन्नता स्पष्ट हो सके, परन्तु कहीं-कहीं वह ऐसा करने में सफल भी हो सका है। उदाहरण स्वरूप उपर्युक्त दोनों ही बारहमासे देखे जा सकते हैं।

सावन का सैरा—बुन्देली क्षेत्र में सावन शुक्ल तृतीया से लेकर भादों शुक्ल तृतीया तक सम्पूर्ण मास में तथा विशेषकर कजली (सावन शुक्ल नवमी से पूर्णिमा तक) के अवसर पर चाँदनी रात में सैरा गाने वाला सैरा गा-गाकर कृष्ण की रास-लीला का अनुकरण करता हुआ जो नृत्य करता है, वह ब्रज के गोपी-कृष्ण रास-लीला की बरबस स्मृति दिलाता हैं।

यद्यपि इस अवसर पर गाया जाने वाला गीत भी रास-लीला से ही सम्बन्धित होना चाहिये, परन्तु बुन्देली क्षेत्र से जो सैरा गीत कृष्ण-कथा के अन्तर्गत प्राप्त हुआ है, उसमें राधा के हार टूटने के बहाने कृष्ण से उनके घर जाकर मिलने का उल्लेख हुआ है। गीत की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है—

कृष्ण जू तुम्हारे द्वारे हमारो खेलत मोती गिर गओ।

—(बुन्देली : ३०)

सैरा गीत में इस कथा-प्रसंग को कैसे स्थान मिल गया, इसके विषय में स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता।

(आ) भादों मास के गीत—सावन के इन सरस गीतों के बाद बुन्देलखण्ड के सागर जिले के आस-पास गाये जाने वाले भादों कृष्ण पंचमी के वे गीत आते हैं जिनमें कृष्ण के कालिय नाग नाथने की लीला का भी उल्लेख मिलता हैं। 'नारद पुराण' के अनुसार परिवार के सभी सदस्यों को सर्प के दंशन से बचने के लिये इन दिनों नागों को दूध पिलाना चाहिये। सम्भवतः इसी भादों मास में कृष्ण ने कालिय नाग का दमन भी किया था, उसी की स्मृति में इस मास में आज भी कृष्ण नाग-नाथन लीला से सम्बन्धित गीत गाये जाते हैं। यद्यपि इस लीला से सम्बन्धित जो गीत बांदा, हमीरपुर और झाँसी जिलों से प्राप्त हुए हैं वे यहाँ भादों मास में न गाये जाकर कार्तिक मास में नाग व्रत (कार्तिक शुक्ल चतुर्थी) के अवसर पर गाये जाते हैं। कहते हैं इसी दिन नाग व्रत के रहने से साँप के डसने का भय नहीं रहता।

इन अवसरों के गीतों में से एक गीत की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है—

कन्हैया प्यारे जमुना में कूद परे।—(बुन्देली : ४३)

सावन-भादों के रसीले रंगीले गीतों के बाद क्वार में उतने गीत नहीं रह जाते। हाँ, नौरात्रि के अवसर पर देवी के गीतों के साथ लांगुरिया तथा

बालिकाओं के खेल सुअटा अथवा नौरता में न्यौरता गीत अवश्य गाये जाते हैं, जिसमें कृष्ण-कथा के एकाध अंश आ गये हैं, जिनका उल्लेख भी व्रत के गीतों के अन्तर्गत किया जा चुका है।

(इ) **कार्तिक मास के गीत**—इस मास में राधा-कृष्ण सम्बन्धी भक्ति-रस से पूर्ण गीत एवं भजन तो गाये ही जाते हैं—जिनका उल्लेख आगे हो चुका हैं, साथ ही बुन्देली क्षेत्र में 'दिवारी' और ब्रज में 'हीरो' भी गाये जाने की प्रथा है। अतः इन पर भी विचार कर लेना उचित होगा।

दिवारी और हीरो—ब्रज और बुन्देली क्षेत्र में दीपावली की पूजा में तो गीतों का विधान नहीं, परन्तु ब्रज में स्याहू या स्याही पूजा एवं गोवर्धन रखते समय गीत अवश्य गाये जाते हैं। लेकिन इन गीतों में कृष्ण-कथा नहीं मिलती। हाँ, बुन्देली क्षेत्र में दिवारी विशेषकर अहीरों द्वारा धनतेरस से लेकर भ्रातृ-द्वितीया तक खूब गाई जाती है जो बिहारी के दोहों की भाँति देखने में तो बहुत छोटे लगते हैं, पर होते भावपूर्ण हैं। फिर अहीरों द्वारा गाये जाने के कारण ही सम्भवतः इन गीतों का विषय भी मुख्यतः उनके जीवन और जीविका आदि से ही सम्बन्ध रखता है। उदाहरण के लिये एक दो दिवारी ली जा सकती है—

(क) बिन्द्राबन की कुंज गलिन में ग्वालिन बे रई टेर,
हरे कन्हैया नंद के कऊं गैयां ले जा फेर।

(ख) राधा कहैं कृष्ण से महूं चलूं आप के साथ,
गाइन साथ निबइहै ना धावा चढ़ पहार।

—(बुन्देली : १८७।१)

इन मुक्तक दिवारी गीतों के अतिरिक्त कुछ और भी दिवारी गीत हैं, जो बड़े रोचक होने के साथ-साथ प्रबन्धात्मक और उल्लेखनीय भी हैं। इनमें से किसी में कृष्ण के गोवर्धन धारण और इन्द्र के कोप की कथा है–(बुन्देली : ६५) तो किसी में दधिदान लीला—(बुन्देली : ६७) और किसी में गोचारण प्रसंग के अन्तर्गत कृष्ण का बृषभानु के घर राधा के विरुद्ध उराहना लेकर जाने और जिसके फलस्वरूप माता कीरति का राधा को गोकुल दधि बेचने जाने से रोकने का उल्लेख हुआ है।—(बुन्देली : ११२) इन प्रबन्धात्मक गीतों के अतिरिक्त एक अन्य गीत में कृष्ण-राधा के सुखद पारिवारिक जीवन के हास-परिहास का उल्लेख हैं।—(बुन्देली : १७३)

बुन्देली 'दिवारी' गीतों की तरह ब्रज में भादों कृष्ण-अष्टमी से लेकर कातिक सुदी पड़िवा तक पुरुषों द्वारा 'हीरो' नामक दो पंक्तियों वाला मुक्तक

गीत गाया जाता है जिसका मुख्य विषय मूल रूप से अहीरों के गोचारण आदि से सम्बन्धित न होकर स्वतन्त्र होता है। अतः इनमें कृष्ण-कथा के किसी भी अंश का समावेश हो सकता है और हुआ भी है। जैसे निम्नांकित हीरा में माता यशोदा कृष्ण को बरसाने जाने से रोक रही हैं, क्योंकि वहा उनकी ससुराल है।

नंद बाबा के रे सामरे, रे मति बरसाने रे जाइ।
माता जसोदा रे न्यों कहें, छोरा वहाँ पं तेरी ससुरारि ॥

—(ब्रज : २४६।४)

तो कहीं कृष्ण के विरह में वृन्दावन को निरालो ही दशा है।

बृन्दाबन के बिरछ को, मर्म न जाने कोय।
डार-डार और पात-पात पं, राधे-ई-राधे होय ॥

—(ब्रज : २४६।३)

कार्तिक में गोबर्धन-पूजा के साथ ही हीरो का गाना बंद हो जाता है। कुछ हीरो गोवर्धन-पूजा के अवसर पर ही विशेषकर गाये जाते हैं जिनमें गिरि गोवर्धन की पूजा का उल्लेख रहता है; जैसे—(ब्रज गीत : २४५।५, २४६।३)

बुन्देल खंड के अहीरों के दिवारी गीत की मूल भावना प्रायः उनके सामान्य जीवन और जीविका अर्थात् गोचारण एवं गोदोहन आदि से ही सम्बन्धित होती है। सम्भवतः इसी भावधारा के अनुरूप होने के कारण कृष्ण के गोदोहन और गोचारण के अंतर्गत वंशी-वादन आदि प्रसंगों को भी दिवारी गीतों में स्थान मिल गया है।

क्वार और कार्तिक के इन गीतों के बाद अगहन में कोई विशेष त्योहार न पड़ने से गीतों का प्रायः अभाव सा पाया जाता है। फिर पूस और माघ में तो जैसे शीत की उग्रता के कारण गीतों की ध्वनि भी मंद पड़ जाती है। वैसे इस मास में स्नानार्थ नदी या सरोवर आते-जाते नारियां निर्गुन या भजन गाती जाती हैं। परन्तु माघ की बसंत पंचमी से गीतों की जो लहर फिर से उठती है; वह फागुन में महाशिवरात्रि के बाद तो अपने चरम पर ही पहुँच जाती है। इन गाये जाने वाले गीतों में होली, रसिया और फाग धमार ही विशेष हैं। अतः इन गीतों पर भी विचार कर लेना न्याय संगत होगा।

(ई) फागुन मास के गीत (होली और रसिया)—शीतकाल की जड़ता त्याग कर प्रकृति देवी जब नये रंग रूप और साज-शृंगार से शोभित हो प्रति वर्ष आविर्भूत होती है तो चिरकाल से भारत के निवासी उसकी अगवानी करते आये हैं। जिस प्रकार सावन के सरस गीतों मे स्त्रियों के कंठ से स्वर-लहरी प्रवाहित होकर वातावरण को और भी आर्द्र बना देती है उसी प्रकार फागुन में

होली और रसिया गीत विशेषकर पुरुष कंठ से निःसृत होकर बसंत के उन्माद को और भी द्विगुणित कर देता है। फाग का प्रधान विषय-परम्परा से राधा या गोपी-कृष्ण का या देवर-भाभी का होली खेलना ही रहा है जिसमें अबीर-गुलाल और रंग भरी पिचकारी का विशेष रूप से उल्लेख होता है ; जैसा कि ब्रज के इस फाग में व्यक्त है।

उड़त गुलाल लाल भए बादल,
रंग की पड़त फुहार आज हरि बरसन लागे हैं।

—(ब्रज : १६०)

ब्रज में होली के अवसर पर 'होली' और 'रसिया' गीतों का चोली-दामन का साथ होता है। सम्भवतः ध्रुपद की शैली का लोक-प्रचलित रूप 'रसिया' ग्रामीण मुक्तक होने के साथ ही मूलतः संयोग-शृंगार का गीत है जिसके कारण इनमें प्रबन्ध-कल्पना का नितान्त अभाव भी नहीं है। फलस्वरूप कृष्ण-कथा के अनेक छोटे-छोटे खंड विशेषकर नखशिख वर्णन और राधा-कृष्ण की सुख-विलास की लीलाएँ रस सिक्त होकर मनोरम हो गई हैं; जैसे—कृष्ण-जन्म पर गोपी का बधाई देने आना, कृष्ण का मिट्टी खाना, माखन चोरी पर गोपी की खीझ, राधा का कृष्ण को बरसान आमंत्रित करना, राधा-छवि देखकर कृष्ण का आत्मोत्सर्ग, विरहिणी राधा का स्वप्न में प्रिय-दर्शन, गोपी-विरह, राधा का उद्धव द्वारा कृष्ण के पास संदेश भेजना—आदि अनेक प्रसंग देखे जा सकते हैं।—(देखें—ब्रज गीत : १२, २४, २७, ४३, ४४, ४५, ४७, ५०, ६३, ८३, ८८, ९५, ९६, १०६, ११६, १२४, १५०, २००, २०८ और २१२)

होली वस्तुतः फसल का त्योहार होने के कारण उत्साह, उल्लास और उमंग का पर्व है। अतः इस अवसर पर गाये जाने वाले गीतों में एक विशेष प्रकार की मादकता रहती है। परन्तु जैसा कि ऊपर भी कहा जा चुका है परम्परा से होली-विशेष के अवसर पर गाये जाने के कारण एक ओर जहां इसका मुख्य विषय—राधा और कृष्ण का या गोपी-कृष्ण के होली खेलने का होता है तथा जिसके साथ प्रेम और यौवन की उमंगों का भी स्थल-स्थल पर उल्लेख रहता है, वहीं दूसरी ओर होलिकोत्सव पर प्रिय के विछोह में प्रिया की विरह-वेदना को व्यंजित करने वाले चित्र भी मिलते हैं। उदाहरण स्वरूप यही भाव इस बुन्देली फाग में देखा जा सकता है जिसमें राधा रूप में एक सामान्य नायिका प्रिय की अनुपस्थिति में होली कैसे और किसके साथ खेले—

इतनी कोई कहियो हमारी, मनमोहन
ब्रजराज सांवरे से ए हो नारी,

फागुन आयो झाँझ डफ बाजें, भोर-भई अति भारी,
मोहे तो आस तिहारे मिलन की, भूल गई सुध सारी,
पिय तलफत हूं न्यारी ।

—(बुन्देली : १४२)

फिर फागुन के रसिया गीतों की तरह होली गीतों में यह आवश्यक नहीं कि इनमें कृष्ण और राधा या गोपियों के होली खेलने का ही उल्लेख हो। बहुत से गीत ऐसे हैं जो कि होली के अवसर पर भी गाये जाते हैं फिर भी उनमें से किसी में ब्रज में नंद के घर कृष्ण और बलदाऊ के जन्म एवं जन्म के उछाह का वर्णन है (बुन्देली : ४) तो किसी में चंचल कृष्ण गोपियों द्वारा पकड़ लिये जाने पर उनके द्वारा कराये गये समस्त स्त्री-सुलभ कार्यों का ब्यौरा माता यशोदा को सुना रहे हैं—

हमको ब्रज नारि सताउति हैं ।
गली-गली के कुआं बावली, रेशम डोर डरउती हैं ।
सब सोने के बने घैलना, हमसे पकरि भरउती हैं ।।

—(बुन्देली : ६२)

इस प्रकार होली, फाग और रसिया गीतों का कोई भी विषय हो सकता है। क्योंकि आज इनमें गीत और वस्तु का तादात्म्य विशेष न रहकर इनका यही नाम हो गया है और यही कारण है कि कृष्ण-कथा के अनेक छोटे-छोटे भावोद्वेलित कथा-खंड भी होली और रसिया के रस में सिक्त होकर मनोरम हो गये हैं।

५. जातियों के गीत

सामान्यतया तो सभी गीत सभी जातियों द्वारा गाये जाते हैं परन्तु कुछ ऐसे भी गीत हैं जिन पर कुछ विशेष जातियों का जैसे एकाधिकार होता है। इसी कारण इन गीतों का वर्गीकरण करते समय इन्हें 'जाति-गीत' शीर्षक के अन्तर्गत रखा गया है।

(अ) बेड़नियों का गीत (राई)—बुन्देलखण्ड के ग्रामीण वर्ग में 'राई' बड़ा ही लोकप्रिय गीत है, जिसे बेड़नियाँ नृत्य करते समय गाती हैं। इस गीत के गाने का कोई विशेष समय नहीं है। अवकाश के समय कभी भी गाया जा सकता है, और यही हाल इस गीत के विषय-वस्तु का है। कोई भी विषय इस गीत का हो सकता है, परन्तु गीत अधिकतर शृङ्गार एवं विराग रस से ही सिक्त होते हैं। सम्भवतः इसी मूल प्रकृति के कारण इन गीतों में कृष्ण-कथा के उस अंश को स्थान मिल गया है जिसमें गोपियाँ मुरली को अपनी सौत

बनाकर यदि उसे बुरा भला कहती हैं (बुन्देली : ९५), तो किसी में श्याम के वंशीवादन से विकल होकर वे अपने हृदय की पीड़ा को व्यक्त करने के लिये अधीर हो उठती हैं (बुन्देली : १११), या फिर किसी में वह उद्धव द्वारा कृष्ण के पास अपना विरहपूर्ण संदेश भेजती हैं कि—

बुर लागे असाढ़, खबर नैं लई हरि मोरी।
ऊधौ जाइयो मथुरा हरि सों कहियो समझाय,
खाके जहर विष मरिहों पीछू परे पछताय,
खबर नैं लई हरि मोरी।

—(बुन्देली : १५४)

(आ) पिछड़ी जातियों के गीत—अछूतों या पिछड़ी जातियों आदि में विवाहादि के अवसर पर स्वांग मण्डला आती है। जो राम लीला, रास-लीला या लोकप्रिय नाटक आदि का स्वांग करके समाज के मनोरंजन का प्रयत्न करता है। इस स्वांग में प्रायः पौराणिक लीलाओं या कथाओं या उनके कथांशों को भी स्थान मिल जाता है। सम्भवतः इसी प्रवृत्ति और परम्परा के कारण ब्रज के अछूतों के एक गीत में 'रुक्मिणी मंगल' के इस कथांश को भी स्थान मिल गया है—जिसमें द्वारकावासी कृष्ण को रुक्मिणी विवाह का संदेश देकर फिर उन्हीं के साथ वापस लौटता हुआ ब्राह्मण मार्ग में बड़े सुन्दर ढंग से कृष्ण के देवत्व की परीक्षा लेता है। यह कथा बड़ रोचक ढंग से प्रारम्भ होती है—

दूर देस कढ़ि गये किशन मेरी कछनी रहि गई द्वारिका,
रथ को देउ बगदाइ,
नहिं मेरे प्राण अजायें जाय।—(ब्रज : २१७)

(इ) कहारों के गीत (कहरवा, दादरा और लहचारी)—कहार जिन्हें बुन्देलखण्ड में 'धीमर' कहते हैं, जीवन संस्कार के विविध अवसरों पर विविध प्रकार के गीत गाते हैं। पर कहरवा एवं दादरा इनका सर्वप्रिय गीत है जो मुख्यतया श्रृङ्गार रस से सिक्त होने के साथ ही अपनी मधुर लय या छन्द द्वारा बहुत लोकप्रिय होने के कारण समाज के अन्य वर्गों द्वारा भी समय-समय पर गाया जाता है। सम्भवतः इसी छन्द या लय की लोकप्रियता के कारण कृष्ण-कथा के अनेक छोटे-छोटे अंश इस गीत-शैली में चित्रित हुए हैं। उदाहरण के लिये बुन्देली गीत : ७२, ८९, १३९, १४६ और १५८ देखे जा सकते हैं। कहरवा और दादरा गीतों की भाँति धीमर 'लहचारी' भी गाते हैं, जिसमें लाचारी या विवशता की भावना मूल रूप मे व्याप्त रहती है। उदाहरण के

लिये यह बुन्देली लहचारी गीत लिया जा सकता है, जिसमें कृष्ण के विविध चीजो के लिये मचलने पर माता यशोदा की विवशता व्यंजित हुई है—

अंगना में खेलें कृष्ण कन्हैया,
खाने को मांगे माखन मिसिरी।
घूंटन को मांगे मलैया,
मलैया दइया कहां पाऊं। —(बुन्देली : २७)

(ई) अहीरों का गीत (साखी अथवा विरहा)—लोकगीतों में अहीरों की साखियां अपना एक अनूठा स्थान बनाये हुए हैं। यद्यपि ये सखियाँ अधिकांश में अत्यन्त शृंगारिक होती हैं, तथापि इनसे इतर सखियों की भी कमी नहीं, जिसे ये अपने पशुधन चराते समय या गोचारण को जाते या लौटते समय अथवा विवाह के अवसरों पर गाया करते हैं। गोचारण के समय प्रायः वे बंशी भी बजाते हैं। सम्भव है इसी वातावरण के साम्य के फलस्वरूप इनकी कुछ साखियों में कृष्ण के गोचारण एवं बंशीवादन के प्रसंगों की बड़ी ही सुन्दर कल्पना हुई है। उदाहरण के लिये इस साखी को ही लिया जा सकता है, जिसमें केवल कृष्ण के वंशीवादन के लोकव्यापी प्रभाव की व्यंजना हुई है—

कालिंदी के तीर पै, ठाड़े हते दोऊ बीर।
कान्ह बजाई बाँसुरी जमुना के थकित भये नीर।
सुने से मोहन जू की बाँसुरी।—(बुन्देली : ६६)

इसी प्रकार मल्हार नृत्य के साथ गाये जाने वाले एक गीत में कृष्ण की दधिदान लीला की कथा को स्थान मिल गया हैं। मंगलाचरण के पश्चात् गीत की प्रथम कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

राधा डगरी निग चली, गई सखियन के दोर।
आज चलो गढ़ गोकुले जां माँगे दही बिकाय।
—(बुन्देली : ६६)

(उ) किसानों का गीत (दोहा)—ब्रज में किसान पैर लेने के समय मौज में आकर कभी-कभी कुछ दोहे भी गाया करते हैं। इन दोहों में अनेक ज्ञात और अज्ञात कवियों के प्रचलित दोहे भी पाये जाते हैं। जैसे निम्नलिखित दोहा है जो किसी कवि की रचना प्रतीत होती है—

बिन्द्रावन बानिक बन्यौ, भंवर करें गुंजार।
दुलहिन प्यारी राधिका. दूल्है नंद कुमार॥
—(ब्रज : २४५। १)

(ऊ) धोबियों का गीत (धुबियाऊ)—कहारों, अहीरों, और किसानों की भाँति इनके भी कुछ जातीय गीत होते हैं जो इन्हीं के एक विशेष राग 'धुबियाऊ राग' में गाये जाते हैं। इनके गीतों में प्रायः इनके कौटुम्बिक जीवन का ही वर्णन मिलता है, जिसमें कहीं धोबी-धोबिन से हास-परिहास करता है तो कहीं अपने कार्य की कठिनता बतलाता है। लेकिन इनके गीतों की भावधारा के विपरीत बुन्देली गीत : ५० और १०२ में कृष्ण-राधा की रति-क्रीड़ा की कथा को कैसे स्थान मिल गया, इस विषय पर कुछ स्पष्ट रूप से कहा नहीं जा सकता। सम्भव है इनकी शृंगारिक भावना के फलस्वरूप ऐसा हो गया हो। एक गीत की प्रथम कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार हैं—

कीने मचाई लौलैला, घोरैया में कीने मचाई लौलैया।
राधा स्याम संग कानन में हते चरावत गैया।

—(बुन्देली : ५१)

६. सामयिक या विविध गीत

विशेष अवसर और अभिप्राय के गीतों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। यहा अब ब्रज और बुन्देली के शेष उन गीतों के अटूट भंडार का संक्षेप में अध्ययन करेंगे जो कृष्ण-कथा से सम्बन्धित होने के कारण हमारे मुख्य विभाजन के अनुसार सामयिक या विविध गीतों के अन्तर्गत आते हैं। इन्हें भी सुविधा की दृष्टि से इस प्रकार बाँट सकते हैं—(क) बालकों के गीत, (ख) कलेवा गीत, (ग) नृत्य गीत, (घ) क्रिया गीत, (ङ) गारी गीत, और (च) भजन गीत।

(क) बालकों के गीत—बालकों या बालिकाओं के गीतों में खेल के गीत प्रधान होते हैं और इन्हीं के अन्तर्गत कन्याओं द्वारा गाया जाने वाला बुन्देली का वह 'हरि जू' का गीत आता है जिसमें हरि (कृष्ण जी) को प्रातः जगाने और उनके दैनिक कार्यक्रमों का उल्लेख हुआ है। गीत इस प्रकार प्रारम्भ होता है—

उठौ मोरे हरि जू भये भुनसारे।
गौअन के बंद खोलो सकारे।—(बुन्देली : १६६)

खेल के गीतों में ही ब्रज का एक गीत (६३) कृष्ण के गूजरी रूप धारण कर चन्द्रावलि को छलने की कथा से सम्बन्धित है। खेल के इस गीत में कृष्ण की छद्म लीला को कैसे और क्यों स्थान मिल गया, इस विषय पर स्पष्ट रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। सम्भव हैं खेल में छिपकर एक-दूसरे को छकाने की बाल-मनोवृत्ति की भावना के अनुकूल इस कथा गीत की भावभूमि पड़ने के कारण ही बालकों के खेल-गीतों में इसे भी स्थान मिल गया हो।

(ख) कलेवा गीत—इन गीतों को प्रायः मातायें बालकों को कलेऊ करने के लिये बुलाते समय या करते समय गाती हैं। स्वयं बालक इन्हें नहीं गाते, फिर भी बालकों से सम्बन्धित होने के कारण इन्हें इस श्रेणी के अन्तर्गत रखा गया है। ब्रज के निम्नलिखित गीत में यशोदा कृष्ण को दूध पिलाने के लिये बुला रही हैं—

लाई दूध जसोदा मैया,
तातौ दूध सकल गउअन को,
ऊपर सरस मलैया, मिश्री दूध डलैया।—(ब्रज : ३५)

इस गीत में कृष्ण या कृष्ण के दूध पीने के प्रसंग के आने का कारण स्पष्ट है। कृष्ण लोक के अपने पुत्र हैं, जिन्हें लोक की सामान्य माता यशोदा कलेऊ करने के लिये बुला रही हैं। गीत की यह भावना ही कलेवा गीतों की मूल भावधारा होती है।

(ग) नृत्य गीत—ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों में किसी विशेष हर्षोल्लास के अवसर पर, जैसे पुत्र जन्म तथा विवाह पर प्रायः भाड़ या हिंजड़े और कभी-कभी पास पड़ोस की स्त्रियाँ हर्षित हो बिना किसी वाद्य के एकाकी नृत्य करते हुए एक विशेष प्रकार के गीत गाती हैं जिसमें अंग संचालन का भावाभि-व्यक्ति से कोई सम्बन्ध नहीं होता। ब्रज के ऐसे नृत्य गीतों में प्रायः कृष्ण की पनघट लीला के एक विशेष अंश का ही उल्लेख मिलता है जिसमें कहीं गोपियाँ श्याम से सिर पर जल भरी गगरी उठाने का आग्रह करती हैं तो कहीं उसे उतारने का। परन्तु बुन्देली नृत्य-गीतों में पनघट लीला के स्थान पर राधा के दधि-बेचन लीला का ही उल्लेख हुआ है, जिसमें राधा विविध प्रकार से अपने दही की बड़ाई कर कृष्ण से उसे मोल लेने का आग्रह करती हैं—

लै लौ बिहारी नंदलाला रे,
दहिया मोरा लै लो। —(बुन्देली : ८७)

यह तो इन गीतों से ही स्पष्ट है कि इनमें पनघट या राधा-दधि-बेचन लीला को स्थान मिला है। लेकिन मूल प्रश्न बना ही रह जाता है कि—हिंजड़े या भाड़ तथा पास-पड़ोस की महिलायें पुत्र जन्म तथा विवाह आदि के सुअवसरों पर कृष्ण की इन दो लीलाओं से सम्बन्धित गीतों को ही अन्य कोटि के गीतों के साथ क्यों गाती हैं ?

(घ) क्रिया गीत—ग्रामीण जीवन गीतमय है और इसी कारण ग्रामीण कृषक-वर्ग भी कृषि कार्य करता हुआ अपने हृदय के कोमल भावों को गीतों के

माध्यम से गुनगुना उठता है। कृषक के कृषि-कार्यों में जुताई, बुआई, निराई, कटाई और मड़ाई करने की क्रियायें ही मुख्य होती है; और इन्हीं अवसरों पर वह अपने श्रम के परिहार एवं मनोरंजन के लाभार्थ विविध प्रकार के गीतों का आश्रय लेता है। फिर इन क्रियाओं का काल-विस्तार लम्बा होने के कारण ही सम्भवतः इस अवसर के गीत भी अपेक्षाकृत बड़े होते हैं। पुनः लम्बे गीत होने के कारण इनमें एक संक्षिप्त कथानक भी होता है जिसके फलस्वरूप यदि किसी निराई गीत में कृष्ण के वंशीवादन का मनोरम प्रभाव व्यंजित हुआ है। (बुन्देली : ९७) तो किसी दूसरे कटाई गीत में वंशी के प्रभाव का ही चित्रण है, जिसके कारण कृष्ण और राधा में तकरार भी हो जाती है। गीत का प्रारम्भ इस प्रकार होता है—

मुरली में सुनाय-सुनाय म्हें कोऊ टेरत है राधा कँह कँ।
राधा हेरे झरोकन बाट, हम्हैं कोऊ टेरत है राधा कँह कँ।

—(बुन्देली : १११)

स्त्रियों द्वारा गाये जाने वाले क्रिया गीतों में उनके ग्रार्हस्थ्य जीवन की उन विषमताओं का चित्रण ही प्रमुख रूप से रहता है जो हर समय उनके जीवन को सामाजिक कठोरता के बंधन से घेरे रहती हैं। साथ ही किन्हीं गीतों में पति-पत्नी का एक-दूसरे के प्रति अटूट एवं विशुद्ध प्रेम भी देखने को मिलता है। सम्भवतः इसी भावभूमि के अनुकूल बुन्देली के ये दोनों उपर्युक्त निराई और कटाई गीत हैं जिनमें से एक में तो नायक नायिका के गुप्त एवं विशुद्ध प्रेम की परोक्ष रूप में व्यंजना हैं तो दूसरे में कृषक या पिछड़ी जातियों में घटित होने वाली उस दैनिक घटना का उल्लेख है जिसमें जरा-जरा सी बात पर तकरार, उलाहना और फिर मार-पीट तक की नौबत आ जाती है।

इन खेती सम्बन्धी क्रिया गीतों के पश्चात् बुन्देली क्षेत्र का एक चक्की गीत 'बिलवारी' भी है जिसमें फागुन की उड़ती हुई गुलाल देखकर राधा श्याम को होली खेलने के लिये बरसाने आमंत्रित करने का विचार करती हैं। घनश्याम मिलते हैं और फिर राधा उल्लसित होकर होली खेलने लगती हैं।

—(बुन्देली : ११४)

यद्यपि चक्की गीतों की मूलभावधारा में प्रायः करुण रस का सागर हिलोरें लेता हुआ दिखाई देता है, फिर भी यह देखा जाता है कि सुखी जीवन व्यतीत करने वाली स्त्रियों के गीतों में प्रेम की प्रधानता रहती है तो दुखी स्त्रियों के गीतों में करुण का प्रवाह बहता रहता है। सम्भवतः इसी कारण बुन्देली विलवारी गीत ११४ में संयोग-सुख का चित्रण हो गया है। या फिर

कभी-कभी वियोग पक्ष के गीतों में शृंगार की भावना आ जाने की प्रवृत्ति के कारण ऐसा हो गया हो।

(ङ) **गारी गीत**—ब्रज के रसिया गीतों की भाँति बुन्देली क्षेत्र में गारी-गीतों का विशिष्ट स्थान है। जिसके अन्तर्गत कृष्ण-कथा के अनेक छोटे-छोटे प्रसंग लोक गायक की कोमल कल्पना के सहारे बड़े ही भावपूर्ण हो चले हैं। यद्यपि गारी-गीत विवाह गीतों की श्रेणी में आता है परन्तु इस गीत की अपनी एक विशेष लय या छंद होने के कारण इस शैली का उपयोग लोक गायक विवाह के अतिरिक्त अन्य अवसरों पर भी अपनी विविध भावनाओं की व्यंजना के लिये करता है। यही कारण है कि कृष्ण-कथा के अनेकानेक प्रसंग गारी-गीतों में स्थान पा गये हैं। जिनमें से कुछ ये हैं :—

कृष्ण जन्म पर ललिता एवं विशाखा आदि का यशोदा गृह आगमन, कृष्ण का पूतना स्तनपान, दधि-चोरी लीला, कृष्ण का मनचाही वस्तुओं के लिये रोना, मचलना, गोवत्सहरण लीला, राधा-कृष्ण प्रथम मिलन, राधा-रूपासक्ति, पनघट पर कृष्ण का गोपियों को छेड़ना, गोपी उलाहना, चन्द्रावलि छलन लीला, कृष्ण-विरहिणी राधा को पूर्व स्मृतियों का उदय, राधा एवं गोपियों का उद्धव द्वारा मथुरावासी कृष्ण के पास संदेश भेजना और कृष्ण ब्रज-स्मरण आदि।—(बुन्देली गीत : ११, १८, २०, ३१, ३२, ३४, ३८, ५८, ६०, ८०, १४०, १५२, १५३, १६५)

(च) **भजन गीत**—सामयिक गीतों में भजन को लें तो इनमें एक तो साधारण कोटि के वे भजन आते हैं जो हर महीने की मावस (अमावस्या), पूरनमासी (पूर्णमासी) और एकादशियों को स्त्रियाँ गाती हैं। इनमें भी विशेष रूप से निर्जला एकादशी (जेष्ठ शुक्ल ११), देवउठानी एकादशी (कार्तिक-शुक्ल ११), तिला एकादशी (माघ शुक्ल ११), और रंग-भरनी एकादशी (फाल्गुन शुक्ल ११) को स्त्रियाँ व्रत रखती हैं और भजन गाती हैं; और दूसरे वे भजन जो किसी भी यात्रा विशेष के अवसर पर गाये जा सकते हैं। दूसरी कोटि के गीतों की संख्या अधिक है। साधारणतः कोई भी भक्ति-सम्बन्धी गीत इन अवसरों पर गाया जा सकता है। इन्हीं गीतों में कुछ ऐसे भी गीत हैं जिनमें कृष्ण-कथा के विविध अंशों का समावेश हो गया है तथा उनमें भी अधिकांश गीत ऐसे हैं जिनकी मूल भावना में व्यंजित है—विरहिणी गोपियों द्वारा एकमात्र कृष्ण के दर्शन की लालसा, उनके संयोग सुख की कामना और इस संयोग सुख को प्राप्त करने के लिये कभी वे अपने प्रेम की तीव्रता को व्यक्त करती हैं तो कभी निराश और उदासमना हो संसार के समस्त माया-मोह को त्याग कर वैरागिन हो जाने की कल्पना करती हैं—

खोल अटरिया मैं तो होऊँगी बैरागन ।
जब से गये मोरी सुधि नहीं लीन्हीं, ऐसे कठोर भये ।
गोकुल ढूंढ़ा, मधुबन ढूंढ़ा, न पाये वो तो नंदलाल ।

—(ब्रज : १९८)

इस सामान्य भक्ति-रस से सिक्त भजनों के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी भजन हैं जिनमें से किसी में तो कृष्ण के प्रति कुमारी रुक्मिणी के प्रेमानुराग का उल्लेख मिलता है तो किसी में सुदामा दारिद्रय भंजन की कथा का ।

—(ब्रज : २१५, २२५)

इन कथा प्रसंगों का भजन गीत में आने का कारण यह हैं कि भगवान की भक्ति या आराधना के अन्तर्गत उनके गुणों का गान, उनकी कृपा और ऐश्वर्य का श्रवण, स्मरण और कथन भी महत्त्व रखते हैं । इसी कारण भजन-गीतों में कृष्ण को पति या प्रेमी के रूप में स्मरण करने के साथ-साथ उनके ऐश्वर्य की कल्पना वे रुक्मिणी विवाह के माध्यम से तथा उनकी भक्तों पर कृपा या दान-शीलता की कल्पना सुदामा दारिद्रय भंजन की कथा द्वारा करती हैं ।

२

ब्रज-लोकगीतों में कृष्ण-कथा

प्रस्तुत अध्याय के साथ ही अध्याय ३ के अन्तर्गत भी क्रमशः ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों से कृष्ण-कथा की दृष्टि से संकलित विविध प्रकार के गीतों को सूरसागर (ना० प्र० सभा, संस्करण) की कृष्ण-कथा के अनुसार विभिन्न शीर्षकों में विभाजित कर कथात्मक शृंखला में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। साथ ही जिन नवीन कथा प्रसंगों की उद्भावना लोक-मानस ने की है उन्हें भी कथा विकास की दृष्टि से बीच-बीच में रख दिया गया है। परन्तु जैसा अन्यत्र कहा गया है कि इन लोकगीतों का संदर्भ मुक्त रूप से लोक जीवन की विविध भावात्मक स्थितियों एवं परिस्थितियों से सम्बन्धित है, इसी कारण इन गीतों द्वारा कृष्ण-कथा का जो कृत्रिम रूप गठित हुआ है उसमें लोक-गाथा या लोक-कहानी जैसी कथात्मक संघटना, प्रवाह या सुसम्बद्धता नहीं है। फिर भी यह उल्लेखनीय है कि प्रस्तुत कथा लोक-मानस में स्फुट रूप से प्रचलित कृष्ण-कथा पर एक नवीन प्रकाश डालने में समर्थ है।

लोकगीतों में द्वारिकावासी कृष्ण से सम्बन्धित केवल निम्न कथा-प्रसंगों की ही उद्भावना हुई है। यथा—

१—रुक्मिणी हरण एवं कृष्ण-रुक्मिणी विवाह
२—रुक्मिणी पुत्र (प्रद्युम्न) का जन्म, तथा
३—सुदामा दारिद्रय भंजन।

पुनः एक ओर जहाँ ब्रज के लोकगीतों में कृष्ण-रुक्मिणी सम्बन्धी कथा-प्रसंगों का बाहुल्य है, वहीं बुन्देली क्षेत्र में इनका नितान्त अभाव होने पर एक बात उल्लेखनीय है, और वह है—वहाँ पर कृष्ण-तुलसा सम्बन्धी गीतों का प्रचलन, जिसकी कथा पर अध्याय ३ के अन्तर्गत प्रकाश डाला गया है।

ब्रज-लोकगीतों में कृष्ण-कथा

कृष्ण-जन्म और जन्मोत्सव—कंस के भय से नवजात शिशु कृष्ण को लेकर वसुदेव गोकुल जा रहे थे कि मार्ग में भयंकर रूप में बढ़ती यमुना को देखकर वह विचार-मग्न हो गये कि अब तो घर ही लौट चलना ठीक है। लेकिन भय यह है कि यदि कहीं कंस ने पुत्र जन्म का होना सुन लिया तो चैन न लेने देगा। इस भय का विचार कर वह हिम्मत बाँध नदी की ओर बढ़ चले। उमड़ी हुई यमुना का जल वसुदेव के होंठ छू रहा था। कृष्ण ने पिता वसुदेव की ऐसी स्थिति देख अपने चरण नीचे लटका दिये। यमुना कृष्ण के चरण स्पर्श कर घट चलीं। अब तो जल वसुदेव के टकुने के बराबर ही रह गया। रात्रि में जिस समय वसुदेव ने यमुना पार कर गोकुल की भूमि पर पग रखा, वहाँ के लोग शान्ति पूर्वक सो रहे थे। तीनों 'तापों' का शमन करने वाली शीतल-मन्द पवन बह रही थी। नन्द बाबा के भवन के द्वार खुले पड़े थे। और वसुदेव के शीश पर राधारमण भगवान् कृष्ण लेटे थे। ऐसे ही समय यशोदा की कन्या बिलख-बिलख कर रो रही थी। वसुदेव ने रोती हुई कन्या को गोद में उठा लिया और उसके स्थान पर दुष्ट-दलन कृष्ण को लिटा दिया।

प्रातः हुआ। नन्द महर के घर बालक के जन्म लेने की सूचना पाकर ब्रज में आनन्द छा गया। जिस गोपी ने भी सुना वही नन्द बाबा के घर बालक देखने चल पड़ी और कहती—मैंने सुना है कि यशोदा ने एक होनहार पुत्र को जन्म दिया है।—(१, २)

द्वार पर पुत्र जन्मोत्सव की प्रसन्नता में बाजे बज रहे हैं। मगल-गीत गाये जा रहे हैं। घर के लोग दाई को बुलवा रहे हैं कि वह आकर शीघ्र ही कृष्ण का नाल छेदन करे।—(३) चतुर्दिक हर्षोल्लास व्याप्त है। गोपियाँ यशोदा को बधाई देने चली आ रही हैं। एक ओर नन्द बाबा प्रसन्न हो आभूषणों का दान कर रहे हैं तो दूसरी ओर कृष्ण की दादी मोतियों से भरा थाल ही लुटा रही हैं।—(४)

इधर तो हर्षोल्लास में आभूषण दान हो रहे हैं और उधर घर के भीतर गोपियाँ आपस में कृष्ण के साँवले रंग पर तर्क-वितर्क कर रही हैं। कोई कहती

है कि यशोदा से अन्धकार पूर्ण काली रात में इन्हें जना है, इसीलिये ये काले हुए है। और इसी स्याम रंग के कारण यशोदा ने नाल छेदन करने आई हुई दाई को भी कृष्ण को गोद में नहीं लेने दिया।—(५)

नन्द जी की प्रसन्नता का तो अन्त ही नहीं दिखता। बधावा बज रहा है। वह बजाजे में खड़े होकर वस्त्रों का दान कर रहे हैं। जो जिसको भा रहा है वही पा रहा हैं। इसके पश्चात् उन्होंने खिरक में खड़े होकर गउओं का दान किया। अतः सबने अपना मनचाहा पाया।—(६) ब्रजवासी तो हर्षातिरेक में जैसे पागल से हो रहे हैं। पुरजनों के साथ-साथ परिजन भी बधाइयां देने चले आ रहे हैं। मालिन, तमोलिन, पटविन—कोई बाकी नहीं है। छठी-पूजन की तैयारियाँ हो रही हैं। मालिन से कहा जा रहा है कि वह गोबर मंगाकर आँगन लिपा ले। मोतियों और मुक्ताओं से चौक पूरा गया। कलश में अमृत भरकर रखा गया। चौक के मध्य में पटा रखकर नन्द और यशोदा को बैठाया गया। उन पर अच्छत डालकर कृष्ण की फूआ और बहिन उनकी आरती उतारने लगीं तथा अपने नेंग पाने के लिये भागरने लगीं। अतः मालिन ने सुभद्रा का पक्ष लेकर कहा कि—बेटी सुभद्रा को मोतियों का हार दिया जाये। इस प्रकार छठी-पूजन का कार्य सम्पन्न हुआ। मालिन आदि अपने वन्दनवार, ताम्बूल, तथा गदका-पौंची लाने के उपलक्ष में मनचाहा उपहार प्राप्त कर कृष्ण को चिरंजीवी होने का आशीर्वाद देती हुई अपने-अपने घर लौट गई।—(७, ८) जिन गोपियों ने विलम्ब में कृष्ण जन्म का समाचार सुना वे भी गोकुल जाकर नन्दरानी से भेंट प्राप्त करने के लिये उत्कण्ठित हो तरह-तरह की कामना करती हुई वहाँ जाने लगीं।—(९)

पालना—बालकृष्ण को चन्दन के पालने में झूलता देखकर गोप बधुयें प्रसन्न होती हैं और नन्दरानी एवं नन्द बाबा को धन्य मानते हुए उन्हें बधाई दे रहीं हैं। यशोदा बाल कृष्ण को बैठी झुला रहीं थीं कि इसी बीच किसी गोपी ने आकर कृष्ण को नजर लगा दी। वह आँख बन्दकर रो पड़े। यशोदा घबरा गई। उन्होंने तत्काल राई-नोन लेकर नजर उतारी। कृष्ण विहँस उठे। अतः हर्षित हो नन्द बाबा उनके मंगल के लिये गायों का दान करने लगे।

—(१०, ११, १२)

नामकरण—आज कृष्ण के नामकरण संस्कार का दिन है। माता यशोदा हर्षित हो गोबर से समस्त घर को लिपा रही हैं। आंगन में मोतियों से चौक पूरा गया। कलश में अमृत भरकर रखा गया। उसके पास ही दीपक जला दिये गये। रानी यशोदा पलग पर बैठी गोकुलवासियों को हर्षित हो दान

दे रही हैं, तथा मथुरा से पण्डित बुलाकर बालकृष्ण का नामकरण संस्कार करा रही हैं—(१३)

महादेव आगमन—एक दिन भगवान् महादेव बाल योगी का वेश धारण कर बैल पर चढ़े, मृगछाला ओढ़े, अंग में भभूति लगाये एवं मस्तक पर तिलक सदृश चन्द्रमा को धारण किये, बड़ी-बड़ी जटाओं को बढ़ाये, कानों में कुंडल पहने व शेषनाग को बदन में लिपटाये हुए तथा हाथ में डमरू और त्रिशूल धारण किये महरि यशोदा के द्वार पर अपनी सिंगी से स्वर निकाल कर गोपाल कृष्ण का नाम ले-लेकर अलख जगाने लगे। यशोदा योगी का आगमन सुनकर उन्हें भिक्षा देने के लिये मोतियों से भरा एक थाल लेकर बाहर निकलीं और कहने लगीं, कि हे योगी—तुम भिक्षा लेकर अपनी कुटिया को लौट जाओ। तुमने मेरे गोपाल को डरा दिया है। यह सुनकर योगी शंकर ने कहा—हे माता, मुझे तुम्हारी भिक्षा के रूप में यह माया नहीं चाहिये। मैं तो तुम्हारे गोपाल का दर्शन करने आया हूँ। तुम मुझे उसी का दर्शन करा दो। लेकिन माता यशोदा ने उन्हें एक सामान्य योगी समझकर कृष्ण को न दिखाया। इससे शंकर जी वहाँ से चले गये। लेकिन कुछ ही दूर वह गये थे कि बाल कृष्ण जोर-जोर से रोने लगे। माता यशोदा ने उनकी नजर उतारी पर वह चुप न हुए और न दूध पीकर सोये ही। अतः अब उन्हें विश्वास हो गया कि उसी बालयोगी ने कृष्ण को नजर लगाई है, जो अभी-अभी मेरी गली में आकर अलख-अलख कहकर बोल रहा था। यशोदा चिन्तित हो बार-बार कृष्ण का मुख देखतीं और गोदी में लेकर घर-घर उनका हाथ दिखाने जातीं कि इसे हो क्या गया है? और सबसे वह उस योगी की बात भी बतातीं।

इसी बीच एक गोपी शीघ्रता से दौड़ी-दौड़ी योगी के पास गयी और उनसे कहने लगी—हे योगी! तुम्हें माता यशोदा नन्द भवन में बुला रही हैं, शीघ्र ही चलिये। उनके पुत्र को नजर लग गयी है, वह तुमसे नजर उतरवायेंगी। शंकर जी झूमते-झूमते नन्द भवन आये और हाथ में राई-नोन लेकर कृष्ण जी के सिर पर फेरकर अपना हाथ उनके ऊपर रख दिया। कृष्ण जी की सारी व्यथा दूर हो गयी। वह किलक कर हँस पड़े। यशोदा प्रसन्न हो उठीं। वह तत्काल ही शंकर जी को एक मोतियों की माला भेंट करते हुए कहने लगीं—हे योगी! तुम यहीं नन्द भवन में या ब्रज में ठहर जाओ। जब-जब मेरा पुत्र रोया करे, तुम आकर दर्शन दे जाया करो। फिर योगी तुम तो बड़े सुन्दर हो। वेद और पुराण तुम्हारी प्रशंसा किया करते हैं। शंकर जी ने कहा—हाँ, मुझे सब बूढ़े बाबा के नाम से जानते हैं।—(१४, १५, १६)

पूतना आगमन—एक दिन बालकृष्ण श्रृंगार किये हुए पालने में पड़े झूल रहे थे कि वहाँ पर पूतना साज-श्रृंगार कर आई और कृष्ण को अपनी गोद में उठा लिया।—(१७)

दौज पूजन—कातिक लगा। सब बहनें दौज पूजन कर अपने भाइयों की मंगल कामना करनें लगीं। सुभद्रा भी दौज पूजन करते हुए मन में हर्षित हो कल्पना करने लगीं कि जब मेरा भैया बड़ा होगा तो वह भूरे हाथी पर चढ़कर जिस पर जरी का झूल पड़ा होगा, मेरे पास आयेगा।........हे भैया कृष्ण ! तुम सो रहे हो या जग रहे हो ? तुम्हें सुख की नींद सोता देखकर मुझे बड़ा सुख मिल रहा है।—(१८)

अन्नप्राशन—कृष्ण का अन्नप्राशन मनाया जा रहा है। मालिन ने द्वार पर वन्दनवार बाँध दिये हैं। नाइन घर-घर बुलावा देती हुई कह रही है कि जिसकी ऊँची पौरी है, उनके यहाँ सब कोई चलो। अतः सब गोपियाँ शीघ्र ही अपने-अपने घर से निकल पड़ीं और नन्द बाबा के घर पहुँचकर वे सब कुँवर कन्हैया को खीर चटाने के लिये आतुर हो उठीं।

मंगल चौक पूरा गया। गोपियाँ हर्षित हो एक-दूसरे पर अबीर-गुलाल डालने लगीं। पटा पर चाँदी की थाली में खीर और सोने की झारी में जल रखा गया। समस्त तैयारियाँ हो चुकने पर पण्डित जी से मन्त्रोच्चारण करने के लिये कहा गया। पण्डित जी ने मन्त्र पढ़ना प्रारम्भ किया कि गोपियों ने बधाई गीत गाते हुए ढोल, मुरज और मंजीर बजा-बजाकर अपने हर्षोल्लास को प्रकट किया।—(१९, २०)

हिंडोला—सावन आया। समस्त ब्रज में हिंडोले पड़ गये। एक हिंडोला बालकृष्ण के लिये भी कदम्ब वृक्ष की डार पर डाला गया। वह उसी पर बैठे झूल रहे हैं। यमुना मैया बड़े प्यार से झोंटा दे रही हैं। सुकुमार ब्रज वनितायें मल्हार गा रही हैं। मंद-मंद सुगन्धित समीर बह रही हैं।

—(२१, २२)

मृत्तिका भक्षण—एक दिन किसी ने यशोदा से आकर उराहना दिया कि माँ यशोदा, तुम्हारे पुत्र ने मिट्टी खाई है। वह अपने सखाओं के साथ खेल रहे थे कि इसी बीच उन्होंने मिट्टी का एक छोटा-सा टुकड़ा मुख में डाल लिया और उसे निगल गये। श्याम जैसे ही घर के अन्दर आये कि यशोदा हाथ में सांटी ले कृष्ण को डराती हुई पूछ बैठीं—क्यों लाला, तूने मिट्टी खाई है ? मैंने तुझे माखन खाने से कभी नहीं रोका, फिर मिट्टी क्यों खाई ? जल्दी उगल, नहीं तो मारती हूँ एक सांटी। अब तक तो तुमने सबको झूठा ठहराया कि मैं मिट्टी

नहीं खाता लेकिन आज मुझसे क्या कहेगा ? क्या मिट्टी नहीं खाई ! कृष्ण ने उत्तर में कुछ भी न कहकर अपना मुख खोलकर दिखा दिया। माता यशोदा कृष्ण का मुख देखकर आश्चर्य में पड़ गयीं। यह क्या, यहाँ तो मिट्टी की जगह तीनों लोक स्थित हैं।—(२३, २४)

पैरों चलना—कृष्ण अब पैरों चलना सीख रहे हैं। माता यशोदा उन्हें हाथ पकड़ कर चलना सिखा रही हैं। उनके पैरों में बँधी पैजनी उनके चलने से रुमझुम रुमझुम कर बज उठती है। उनके शीश पर टोपी, गले में माला और बदन पर पीतवर्ण की झंगुलिया बड़ी प्यारी लग रही है। माता यशोदा चलाते चलाते कभी उन्हें नचाने लगती हैं, जिससे उनके पैरों का नूपुर बज उठता है। और जब मन में आता है तो कृष्ण स्वयं ही कभी नाचने और कभी चलने लगते हैं।

परन्तु यह क्या, कुछ देर बाद खेलते ही खेलते वह मचल उठे। जो कुछ शाल-दुशाला ओढ़ रखा था, उसे भी उतार कर फेंक दिया। खेल खेलना बंद कर खिलौने की जगह चन्द्र खिलौना पाने के लिए जिद करने लगे। माता यशोदा कृष्ण का इस प्रकार मचलना देखकर मन ही मन प्रसन्न हो, उन्हें बार-बार हृदय से लगाने लगीं।—(२५, २६)

माखन चोरी—कृष्ण कुछ और बड़े हुए तो अपने साथियों को साथ ले ग्वालिनों के घर चुपके से घुसकर माखन की चोरी करने लगे। पहले कुछ दिनों तक तो गोपियों ने खेल समझ कर ध्यान न दिया। लेकिन एक दिन परेशान हो उन्होंने कृष्ण को चोरी करते हुए पकड़ ही तो लिया और कहने लगी श्याम यदि तुम फिर किसी दिन मेरे हाथ आये तो तुम्हें अवश्य मारूँगी। नित्य ही तुम प्रातः होते अपने संग ग्वाल-बालों को लेकर जब मेरा घर सूना देखते हो तो दरवाजा खोलकर भीतर घुस आते हो तथा समस्त दूध दही बिखेर देते हो। अतः कृष्ण मेरा कहना मान लो, अब तुम ऐसा न किया करो, नहीं तो राजा कंस से ही जाकर तुम्हारी शिकायत करूँगी।—(२७)

इस प्रकार डाँट-डपट कर वह गोपी कृष्ण को पकड़कर यशोदा के पास ले आई और कहने लगी—यशोदा ! ले अपने कृष्ण को। तू नित्य ही मुझसे, जब मैं उराहना देने आती तो कहा करती थी कि क्या नित्य ही झूठा उराहना देने आती है। उसने तुम्हारा क्या चोरी की है ? लेकिन आज उसी उराहने को प्रमाणित करने के लिये मैं स्वयं कृष्ण को ही पकड़ कर ले आई हूं। यशोदा जैसे ही कृष्ण को देखने चली वैसे ही उन्होंने अपना रूप बदल लिया और लड़की बन बैठे। यशोदा कृष्ण की जगह पराई लड़की को देखकर गुस्से में उस गोपी

को डाटती हुई बोली—क्या तेरे नेत्र नहीं, बुद्धि नहीं ? देख इसे, पहचान इसे यह कौन है ? बिना प्रयोजन जो तू इस लड़की के कान ऐंठ रही है।—(२८)

गोपी सिर झुकाये लौट गई। तब यशोदा ने कृष्ण को समझाते हुए कहा—यह चोरी की आदत छोड़ क्यों नहीं देते। मैंने तुम्हें कितनी बार समझाया कि ऐसे कार्य न किया करो। क्या तुम्हें लज्जा या शर्म नहीं लगती ? तुझे माखन की कहीं कमी है ? तुम्हारे नन्द बाबा के तो वैसे ही नौ लाख गायें हैं। जहाँ नित्य ताजा माखन तैयार होता है। फिर तुम्हारी इस चोरी की आये दिन सभी घरों में चर्चा होती रहती है, और लोग हमारी हँसी उड़ाया करते हैं। तुम्हारे नन्द बाबा का कितना बड़ा नाम है। पुनः वृषभानु के घर राधा के साथ तेरी सगाई की बात भी चलाई हैं। अतः अब तो चोरी की आदत छोड़ दे। नित्य प्रति तेरे घर आकर एक न एक गोपी लड़ जाया करती है। इसीलिये आज तेरी सौगन्ध खाकर तुझे बता रही हूँ कि वृषभानु के घर से आये हुए ब्राह्मण और नाई भी लौट गए। माता यशोदा की बातें सुनकर कृष्ण ने कहा—माँ, मेरी यह चोरी की आदत तो नहीं छूट सकती, चाहे जो हो। इतना कहकर श्याम के नेत्र अश्रु से बोझिल हो उठे, और फिर वह रो पड़े।—(२९, ३०, ३१)

दैनिक लीला—प्रातःकाल उठने में विलम्ब देखकर यशोदा कृष्ण को प्रभाती गा-गाकर जगा रही हैं। कहती हैं—हे ब्रजराज कभी का भोर हो गया, अब तो उठ जाओ। रात भर के ठहरे हुए पथ के पथिक भी जा चुके हैं। पक्षी अपने घोंसलों को छोड़कर यमुना तट की ओर निकल गये हैं-(३२), अतः अब तो उठो। यमुना के नहाने वाले एवं तुम्हें खिलाने वाले गोपी ग्वाल भी देखो जग गये। और तुम हो कि सो रहे हो।—(३३) उठो, चिड़ियाँ चहक रही हैं, मोर नृत्य कर रहे हैं। आज क्या तुम्हें उठना नहीं ? बड़े आलसी हो गये हो। देखो, तुम्हारे दादा भैया तथा सभी साथी तुम्हें पुकार-पुकार कर शोर कर रहे हैं। ग्वालिनें पूछ रहीं हैं कि तुम अभी जगे कि नहीं। फिर देखो तो तुम्हारी प्रतीक्षा में गायें भी द्वार पर खड़ी रभां रहीं हैं।—(३४)

कृष्ण उठे। कलवा के रूप में यशोदा उनके लिये मलाईदार दूध गर्म करके ले आईं और बलैया लेती हुई उन्हें दूध पीने के लिये कहने लगीं—मेरे ग्वाल बालकृष्ण लो तुम दूध पियो, मैं तुम पर वारी जाऊँ।—(३५) कुछ ही देर बाद यशोदा ने पुनः कृष्ण को छाछ पीने के लिये पुकारा तो उन्होंने दूर से ही पूछा—माँ, तेरी मथानी और दोना किस चीज के बने हुए हैं ? यशोदा ने सुना तो उत्तर में बोलीं—गोपाल, रूपे की मेरी मथानी तथा कदम्ब पात का दोना बना है, अतः मेरे श्याम सलोने आकर तुम दधि खा जाओ।—(३६)

चन्द्र खिलौना और चकई के लिये मचलना—कृष्ण एक दिन खेलते-खेलते चन्द्र खिलौना लेने के लिये मचल उठे। दादी ने मनाना चाहा तो उनसे समस्त तारों की माँग कर बैठे और दादा ने मनाना चाहा तो उनसे चन्द्र खिलौना पाने के लिये रो पड़े। यशोदा बड़ी उलझन में पड़ गईं, लेकिन तत्काल ही उन्हें एक युक्ति सूझी। उन्होंने कहा—कृष्ण चलो, यमुना किनारे तुम्हें पानी में 'चन्द्र' दिखा लाऊँ। यह सुनकर कृष्ण चुप तो हो गये लेकिन तुरन्त ही अपनी बाँसुरी फेंक कर चकई के लिये मचल उठे। अतः यशोदा ने कृष्ण के दादा से कहा कि—गोकुल के बाजार में चकई बिक रही है, वह उसे जाकर ले आयें नहीं तो कृष्ण बहुत रोयेगा।—(३७, ३८)

खेल-कूद—चन्द्र खिलौना की जिद छोड़कर कृष्ण ने माता यशोदा से कहा—माँ, पहले मुझे तुम माखन-रोटी दे दो, फिर मैं तुझे दधि मथने दूँगा। और हाँ, आज तो गेंद का खेल होगा अतः मुझे दाऊ के संग वहाँ भेज दे। मैं अभी गोचारण को नहीं जाऊंगा।—(३९)

कृष्ण कुंज वन में खेल रहे हैं। केसरिया बागा और झालरदार पटके के साथ नीची-नीची धोती पहने, हंस की सी चाल से चलते हुए बड़े ही आकर्षक लग रहे हैं। उनके कानों में कुंडल, गले में मोतियों की माला तथा घूँघरदार बालों पर मुकुट की शोभा अवर्णनीय हो रही है।—(४०)

आज तो बालकृष्ण वृषभानु के द्वार पर उनके पाँचों पुत्रों के साथ गेंद-बल्ला खेल रहे हैं। उनकी आंकुरी हरे बांस की तथा गेंद रेशमी कपड़े की बनी हुई हैं। सांवरे सलोने कृष्ण को वहाँ खेलता देखकर किसी (राधा) ने पूछा सांवरे तुम किस माँ के पुत्र तथा किस बहिन के भाई हो ? तो कृष्ण ने तपाक से उत्तर दिया कि माता यशोदा ने मुझे हृदय से लगाया तथा मैं बहन सुभद्रा का भाई हूँ। (४१)

राधा-कृष्ण प्रथम मिलन—कृष्ण को वहाँ से वापस आते समय राधा ने अपना व अपनी सखियों का सविस्तार परिचय दिया तथा उन्हें पुनः बरसाने आने के लिये आमंत्रित करते हुए कहा—कृष्ण, तुम यहाँ आकर एक बार बंशी-वादन अवश्य करना। और जब तुम वहाँ आओगे तो मैं मल मलकर तुम्हें स्नान कराऊँगी, घिस-घिसकर चन्दन लगाऊँगी। प्रातः-सायं तुम्हारी पूजा करूँगी। और खस खस का एक बँगला बनवाऊँगी, उसी में फूलों की एक सेज रचकर तुम्हें लिटाऊँगी तथा धीरे-धीरे तुम्हारे पाँव दाबूँगी। यदि यह न अच्छा लगे तो हे कृष्ण ! तुम मेरा मक्खन खाने और अपना स्नेह दान करने ही चले आना।—(४२, ४३)

राधा के इस आग्रह और उसकी अनुपम रूपराशि को देखकर कृष्ण उस पर अपना हृदय खो बैठे। और स्नेह के वशीभूत हो अपने प्रेम का आश्वासन देते हुए राधा से कहने लगे हे राधे !

हंस मुसकाय प्रेम रस चाखूं; तोइ नैनन बिच ऐसा राखूं।
यों काजर की रेख परेंगी तोते भामरियां।
मैं राधा तेरे घर आऊं, अंगना में बाँसुरी बजाऊं
नृत्य करूं दृग खोल कमल पर पामरिया।
अपनी सब सखियां बुलवाले, हिलमिल के मोय नाच नचाले,
गड़े प्रेम की मेख, ठुमक चलें पामरिया।—(४४)

कालिय-दमन लीला—यमुना का विषाक्त जल निर्मल करने एवं कालिय नाग को नाथने के बहाने कृष्ण ने एक दिन अपने समस्त साथी ग्वाल-बालों को बुलाकर यमुना तट पर गेंद बल्ले का खेल खेलना प्रारम्भ किया। खेल ही खेल में कृष्ण ने श्रीदामा की गेंद में घुमाकर एक बल्ला मार कि वह उचट कर यमुना में जा गिरी। श्रीदामा रिसा गये। उन्होंने कृष्ण से अपनी गेंद माँगी तो कृष्ण ने कहा—श्रीदामा यह न समझो कि मैं तुम्हारी गेंद दिये बिना ही घर को भाग जाऊँगा। और इतना कहकर कृष्ण यमुना में कूद पड़े। वह जब नाग लोक पहुचे तो नागिन ने साश्चर्य पूछा—हे बालक, तू यहाँ कैसे आ गया ? क्या अपने घर का मार्ग भूल गया है या तुझे किसी शत्रु ने या तेरी माता ने ही तुझे बहका कर यहाँ भेज दिया है ?

नाग नाथ कर एवं उसके फण पर नृत्य करते हुए कृष्ण यमुना जल के ऊपर आ गये। रोती हुई माता यशोदा सबके साथ मिलकर उनकी बलैया लेते हुए आरती उतारने लगीं।—(४५, ४७)

गोचारण एवं गोपी रूपासक्ति—कृष्ण पाँव में खड़ाऊँ पहने बड़ी मतवाली चाल से गोचारण को जा रहे हैं। उनके कानों में कुण्डल एवं गले में मोतियों की माला सुशोभित हो रही है। गुलाब सदृश उनके सुकोमल कपोल और उस पर से मस्तक पर तिलक उनकी सौन्दर्य राशि में चार चाँद लगा रहा है। कृष्ण को इस प्रकार शृङ्गार करके गोचारण को जाते हुए देखकर गोपियाँ उनसे पूछती हैं—हे कृष्ण, अब कब घर वापस आओगे ?—(४६) लेकिन कृष्ण अनसुनी कर चल दिये। अतः गोपियाँ उनकी रूप-माधुरी के वशीभूत हो आपस में कहने लगीं—हे सखी, मेरा मन तो बाँसुरी वाला नन्दलाल चुरा ले गया। उसका शृंगार मुझे बड़ा प्रिय लगता है। उनके चंचल-चपल अनियारे नेत्र, रसीले बैन एवं उनकी मन्द-मन्द मुस्कान के ऊपर हृदय में आता है मैं बलिहारी हो जाऊं। उनकी छवि मेरे हृदय में समा गई है।—(४६) वह तो मेरे मन में

बस गये हैं। मैं जिधर भी और जहाँ भी देखती हूँ, सर्वत्र ही वह मोर मुकुट धारण किये हुए मुझे दिखाई पड़ते हैं। उनके प्रत्येक अंग में कामदेव का निवास है। फिर वह तो बड़े ही चतुर चितचोर हैं। मैने उनके ऊपर अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया है। मैं तो अब उन्हीं के साथ रहूँगी—जैसे जंगल के बीच मोर, चन्दा के साथ चकोर, और जल के मध्य मीन निवास करती है।—(५०, ५१)

संध्या हुई। कृष्ण के लौटने में विदेरम्ब होने के कारण यशोदा चिंतित हो कहती हैं—अब मेरी गैया कौन दुहेगा ? और वह फिर कृष्ण को ढूँढने निकल पड़ीं। आवाज दे-देकर वह उन्हें बुलाने लगीं। इतने में ही किसी गोपी ने यशोदा को कृष्ण की दधि-चोरी का उलाहना देते हुए कहा—यशोदा, तुम्हारा माखन प्रेमी, गेंद का खिलाड़ी और वंशी वादक कृष्ण चोरी-चोरी मेरा सब दही खा गया। यह सुनते ही यशोदा ने कहा—क्या मेरा गोपाल भूखा-नंगा है ? उसके पास सैकड़ों गायें हैं। वह तुम्हारे घर भला क्यों आयेगा ? मेरे घर में कुँवरि राधिका रहती है—तथा तुम जैसी ग्वालिनें तो मेरे यहाँ गोबर उठाती और कूड़ा फेंकती हैं।—(५२)

इसी समय कृष्ण गाते हुए वन से वापस लौटते दिखाई पड़े। उनके श्याम मुख पर लिपटी हुई गोरज—उनके सौन्दर्य को और भी उद्दीप्त कर रही थी। उनकी वंशी की मधुर ध्वनि जैसे ही गोपियों को सुनाई पड़ी वे उनका दर्शन करने के लिये दौड़ पड़ीं।—(५३) गोप-गोपालों के साथ गाते-गाते कृष्ण घर के द्वार तक आ पहुचे। घर का द्वार बन्द था अतः उनके किसी साथी ने आवाज दी—यशोदा मैया द्वार खोलो, कृष्ण गायें चराकर वापस आ गये हैं। द्वार खुला। यशोदा थाल में आरती सजा कर बाहर आईं और प्रसन्न हो बलैया लेती हुई श्याम की आरती उतारने लगीं। गउओं को कृष्ण ने खरिक खोल कर अन्दर कर दिया और बछड़ों को बाँध दिया। इतना करने के पश्चात् वह माता यशोदा के पास आकर खाने के लिये ताजा माखन माँगने लगे। यशोदा ने कहा—कृष्ण अभी तो तू खूब अघाकर दूध पी ले, फिर प्रातः तुझे माखन दूँगी।—(५४)

राधा का यशोदा गृह आगमन—कृष्ण गोचारण से लौटकर अभी जल-पान ही कर रहे थे कि राधा उन्हें खोजते-खोजते वहाँ आ पहुँची और यशोदा से कहने लगीं—माँ, तनिक कृष्ण को मेरे साथ भेज दो। इनके बिना मेरी गाय खड़ी रंभा रही है. दूध ही नहीं देती। मैं तो इन्हें संग लिवाकर ही जाऊँगी। राधा की बातें सुनकर नन्द और यशोदा हँस पड़े और कृष्ण से कहने लगे—

जाओ गोपाल, राधा की गाय दुह आओ। कृष्ण ने कहा—राधा, क्या हमीं एक ब्रज में दूध दुहने वाले हैं और कोई नहीं ? तो राधा ने उत्तर दिया—हे कृष्ण, सभी ग्वाल-बाल उसे दुहने का प्रयत्न करके हार गये। कौन कहे, यहाँ तक कि बलदाऊ भी उसे न दुह सके। यह सुनकर कृष्ण ने कहा—अच्छा, जल्दी चलकर बछड़ा छोड़ो और मुझे दूध दुहने का बर्तन दो मैं तुम्हारी गाय दुह दूँ।—(५४, ५५)

जब कृष्ण ने राधा की गाय ठीक से न दुही तो राधा ने कहा—हे श्याम, तुमसे मैं अब कभी गाय न दुहाऊँगी। एक तो तुम वैसे ही साँवले हो और उस पर से जब तुम काली कमरिया ओढ़ लेते हो तो तुम्हें देखकर मेरी गाय बिचक जाती है, फिर जब दूध भी दुहने लगते हो तो न जाने किधर तुम्हारा ध्यान रहता है। जिससे कि सारा दूध भूमि पर ही जा गिरता है। दूध दुहते समय तो तुम्हारा ध्यान अन्यत्र रहता है, परन्तु जब वृन्दावन की गलियों में होते हो तो वहाँ भले सब को चोरों की तरह घूर-घूरकर देखते हो।—(५६)

वंशी के बहाने राधा का यशोदा गृह आगमन—कृष्ण से दूध न दुहाने की प्रतिज्ञा तो राधा ने कर ली, लेकिन दूसरे ही दिन जब उन्हें कृष्ण का दर्शन न हुआ तो वह वंशी देने के बहाने प्रातः ही उनके घर जा पहुँची। कृष्ण सो रहे थे और घर का द्वार बंद था। राधा ने पुकार लगाई। माँ यशोदा उठो, द्वार खोलो। मैंने वन में स्याम की वंशी पाई है जिसे देने आई हूँ। यशोदा ने उठकर द्वार खोला और राधा से कह ही रही थीं कि कृष्ण कई दिनों के जगे हैं उन्हें तनिक सो लेने दे कि राधा की आवाज सुनकर कृष्ण बाहर निकल आये और कहने लगे—राधा, तुमने वंशी के साथ मेरी पोथी भी चुरा ली है। राधा ने उत्तर दिया—मैंने न तुम्हारी पोथी देखी है और न सुनी है कि वह कैसी थी लेकिन इतना बता सकती हूँ कि वह कहाँ है।········इस बहाने दोनों नटनागर घर से बाहर निकल पड़े।—(५७)

कुछ समय साथ रहने के पश्चात् जब राधा अपने घर जाने लगीं तो वह कृष्ण को बरसाने आने के लिये आमंत्रित करती हुई कहती गईं कि कृष्ण तुम्हारे लिये मैं विधिवत् भोजन का प्रबन्ध किये रहूँगी, यदि इच्छा हो तो आकर के खा जाना और मुझे भी खिला जाना। और हाँ, मैं रंग भी घोलकर रखे रहूँगी, आकर होली भी खेल लेना।—(५८, ५९)

कृष्ण को आमंत्रित कर जब राधा घर पहुचीं तो उनकी माँ ने पूछा—राधा, कहाँ गई थी तू ? तेरे इन बालों को गूँथकर मोतियों से माँग किसने

भर दी है और तुझे साड़ी उढ़ाकर तेरे अँचल में तिल और चावल किसने डाल दिये हैं ? राधा ने बताया—माँ, मैं नन्द के घर खेलने गई कि यशोदा ने हँसते हुए मुझे बुलाकर अपनी गोद में बैठा लिया। फिर उन्होंने ही मेरे बाल गूँथ कर मोतियों से मेरी माँग भरी, साडी सें मेरा सिर ढका और अंचल में चावल तथा तिल भर दिये। इसके बाद उन्होंने मेंरा नाम पूछा, बाबा का नाम पूछा और तुम्हारा नाम पूछकर तुझे हँसकर गारी दी।—(६०) पर माँ कृष्ण बडे अच्छे हैं, उन्होंने मेरी बाँह पकड कर मुझे यमुना में गिरते से बचा लिया। नहीं तो मैं उसी में गिर गई होती। इस प्रसन्नता के उपलक्ष में मैंने उन्हें अपने यहाँ भोजन करने के लिये आमन्त्रित किया है।······कृष्ण ने राधा के यहाँ आकर भोजन किया। तदुपरान्त चन्दा की चाँदनी में चौपड़ बिछाई गई और फिर दोनों ने मिलकर उसे खेला। खेल के बाद कृष्ण पुष्पशैया पर मोतियों का झालरदार तकिया लगाकर वहीं सो गये।—(६१)

चीर हरण—एक दिन सब गोपियाँ एकत्र होकर यमुना स्नान करने गईं और अपने-अपने वस्त्रों को उतार कर यमुना तट पर रख दिया तथा निर्वस्त्र होकर स्नानार्थ जल में प्रवेश कर डुबकियाँ लेने लगीं। ऐसा करते समय वे मन में डरती भी जा रही थीं कि कहीं कृष्ण न आ जायँ। लेकिन इसी बीच कृष्ण वहाँ से सब के वस्त्र उठा ले गये। और उन्हें साथ ले एक कदम्ब वृक्ष पर जा बैठे। कुछ देर बाद जब गोपियों ने यमुना तट की ओर देखा तो उनके सब वस्त्र गायब। उन्होंने अपने चारों ओर देखा परन्तु कहीं कोई नहीं। अतः सब यमुना जल में नग्न खड़ी होकर विचार करने लगीं कि यहाँ पर न कोई मनुष्य है और न कोई बंदर ही, फिर हमारे कपड़ों को कौन उठा ले गया ? वे इसी चिन्ता में डूबी थीं कि कदम्ब वृक्ष पर बैठे एवं मुस्कराते हुए कृष्ण ने अपनी वंशी बजा दी। जिसकी ध्वनि सुनते ही गोपियाँ चौंक पड़ीं और उन्हें वस्त्रों के साथ कदम्ब वृक्ष पर बैठा देखकर उनसे प्रार्थना करने लगीं—कन्हैया, हम सब के वस्त्र हम सब को वापस कर दो। देखो, हम जल के भीतर नग्न खड़ी हैं। इससे तुम्हें देखकर हमें लज्जा आ रही है। बताओ अब हम जल से बाहर कैसे निकलें ? क्योंकि तुम पुरुष हो और हम सब नारियाँ हैं। फिर लो हम यह भी माने लेती हैं कि तुम जीत गये और हम सब तुमसे हार गईं। इस प्रकार विनय करने पर भी कृष्ण ने उनके वस्त्रों को उन्हें वापस न किया और कहा—गोपियो, बिना जल के बाहर निकले हम तुम्हें तुम्हारे वस्त्र वापस न करेंगे—चाहे तुम लाख यत्न करो। अतः लज्जा में डूबी—वे अपने हाथों से अपना अंग छिपाने का यत्न करती हुई जल के बाहर निकलीं, तो कृष्ण ने कहा कि अब बिना हाथ जोडे मैं तुम्हें तुम्हारे वस्त्रों को न दूँगा। अतः विवश एकाकी

गोपियों ने हाथ भी जोड़े, तब कहीं उन्हें उनके वस्त्र मिले और फिर वे प्रसन्न हुईं।—(६२, ६३)

पनघट लीला—बरसाने की एक गूजरी हाथ में और सिर पर गागर ले यमुना तट जल भरने निकल पड़ी। लेकिन यमुना के गहरी होने से वह सोच में पड़ गई कि अब जल कैसे भरूँ। यदि झुक कर भरती हूँ तो पीछे बैठे कृष्ण जी देखने लगते हैं, और यदि बैठकर भरती हूँ तो चूनर भींजने लगती है। फिर यदि किसी प्रकार पानी भरकर धीरे-धीरे घर जाती हूँ तो विलम्ब होने के कारण सास लड़ने लगेगी और यदि शीघ्र जाती हूँ तो सिर से घड़े के गिर कर फूट जाने का डर है। अतः गहरी यमुना में मैं जल कैसे भरूँ ?—(६४) इन्हीं विचारों में उलझी वह गोपी कृष्ण से विनय करने लगी—हे मोहन, मैं यमुना जल भरने जा रही हूँ। वहाँ जल भरकर मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। तुम आकर तनिक मेरी गागर उठा जाना, क्योंकि मैं तुम्हारे पनघट की ग्वालिन हूँ। फिर रत्नों से जटित मेरी इंडुरी है तथा सोने का घड़ा है। उस पर एक तो मेरी कमर बड़ी पतली है; दूसरे सिर पर इतना वड़ा बोझ और तीसरे यमुना तट की मिट्टी इतनी चिकनी है कि यदि मैंने कहीं स्वयं ही घड़ा उठाया तो मेरे पाँव फिसल जायेंगे और फिर मैं उस रूप में जब घर पहुँचूगी तो मेरी सास और ननद मुझे गालियाँ देंगी तथा भाई मुझे धिक्कारेंगी। अतः हे नन्दलाल, तुम तनिक आकर मेरी गगरी उठा जाना।—(६५, ६६, ६७)

गोपी की बातें सुनते ही कृष्ण ने कहा—हे गूजरि, तुम्हारी गागर मैं तभी उठाऊँगा जब तुम घूंघट हटाकर मुझे अपना मुख दिखाओगी। चतुरा गोपी ने यह सुनते ही कहा—हे सांवरे, घूँघट में क्या रखा है जो लोगे ? यदि कुछ लेना ही है तो हमारे घर आ जाना। कोरी-कोरी मटकी में दही जमा रखा है, आकर उसे खा जाना। लेकिन हाँ, पहले मेरी गागर तो उठा दो। इतने में ही राधा अपने सिर पर जल से भरा घड़ा लेकर कृष्ण के पास आईं और कहने लगीं—बनवारी, ओ बनवारी, मेरे सिर पर से जरा घड़ा उतार दो, बहुत भारी है। क्या तुम मुझे पहचान नहीं रहे हो ? मैं बरसाने की दधि बेचने वाली, बृषभानु की दुलारी राधा हूँ। लेकिन कृष्ण मैं तो तुम्हें भली प्रकार पहचान रही हूँ। तुम नन्दगाँव के रहने वाले, नन्दबाबा के पुत्र, माखन के चुराने वाले, बंशी के बजाने वाले तथा काली कमरिया ओढकर गायों को चराने वाले कृष्ण हो न।—(६८, ६९, ७०)

इसी समय एक अन्य गोपी राधा की ओर देखती हुई बोली—श्याम देखो, तुम्हारा पानी हम से भरा नहीं जाता। एक तो तुम्हारा घर बहुत दूर है,

दूसरे इतने गहरे कुँए से और इतने बड़े डोल से जब मैं जल भरने लगती हूँ तो मेरी पतली कमर बल खाने लगती है। फिर इतना बड़ा घड़ा सिर पर रखकर तुम्हारे महल की ऊँची-नीची सीढ़ियाँ भी तो मुझ से नहीं चढ़ी जाती और उस पर से तुम्हारे घर में यह राधा बड़ी नखरे वाली है, इसका नित्य का नखरा मुझ से नहीं सहा जाता। अतः हे कृष्ण, मैं तुम्हारा पानी नहीं भर सकती।—(७१)

इस प्रकार गोपी कृष्ण से जल भरने में अपनी असमर्थता प्रकट कर ही रही थी कि राधा गागर लेकर अपने घर जाने लगीं। कृष्ण ने देखा तो वह उसकी गागर को कंकड़ मारकर फोड़ने का प्रयत्न करने लगे। अतः राधा ने कृष्ण से निवेदन किया—कान्हा, मेरी गागर मत फोड़ो। मेरी बूढ़ी सास बड़ी दुष्टा है। वह गालियाँ देकर मुझ से लड़ेगी और ऊपर से खाना भी न देगी। फिर झूठी-मूठी चुगली करके मेरे पति को उल्टा-सीधा सिखायेगी। ननद है, वह तो और भी छलछन्दी है। न जाने वह क्या-क्या सोच डालेगी और मेरे पति को बहका कर मुझे पिटवायेगी। फिर पास-पड़ोस की जो रहने वाली हैं, उनकी तो बात ही न्यारी है। वे तो सब की सब जैसे विष की घोली हुई हैं। वे सब मेरी भींगी हुई चूनर और चोली देखकर तरह-तरह के ताने मारेंगी और मुझे खिझायेंगी। अतः हे गोपाल, तुम मेरी जल से भरी गागर मत फोड़ो। लेकिन कृष्ण कहाँ उसकी मानने लगे। उन्होंने राधा की गागर फोड़ दी और साथ ही ईंडुरी भी फेंक दी। अतः राधा ने श्याम को ईंडुरी की चोरी लगाकर डराते-धमकाते पूछा—बताओ मेरी ईंडुरी किसने चुराई ? यह न समझना मैं यहाँ अकेली दुकेली हूँ। मेरे साथ यहाँ सात सहेलियाँ हैं। तुम हमसे बचकर कहीं नहीं जा सकते। फिर यह भी न सोचना कि तुम चुरा लोगे और मैं चुप बैठी रहूँगी। मैं तुम्हें सारे ब्रज में बदनाम कर दूँगी। तुमने क्या समझ रखा है कि वह कोई घास-फूँस की है ? वह ईंडुरी ऐसी नहीं, उसमें करोडों हीरे जडे हुए हैं।—(७२, ७३)

और जब राधा घर पहुँची तो उसने अपनी सखियों को बताया कि उस नन्द के अनाड़ी कृष्ण ने मेरी गागर फोड़ दी। वह नित्य प्रति पनघट पर मुझसे रार मचाता है तथा गालियाँ देता है। कितना भी उसे मना करती हूँ, वह मानता ही नहीं। वह तो घर-घर माखन चुराता है। मैं तो अब माता यशोदा से जाकर कहूँगी कि तुम्हारी बड़ी हँसी हो रही है। कहाँ एक ओर तो कृष्ण के विवाह की बात चल रही है और कहाँ दूसरी ओर ब्रजनारियाँ उनकी यह अनोखी चाल देखकर न जाने क्या-क्या कहती हैं।—(७४)

गोपियों ने यशोदा के पास जाकर शिकायत की कि यशोदा तुम्हारा बालक बड़ा ही शैतान है। हम यमुना तट जल भरने गई थीं कि कृष्ण भी वहाँ अपने साथियों को साथ ले आ मिले। उन्होंने हमारी गागर फोड़ दी और रास्ता रोककर सामने हो उन्होंने मेरी साड़ी और चोली पकड़ कर मुझे किच-किचा कर खूब झकझोर तथा मेरे गले से लटक गये।—(७५, ७६) गोपी की उलाहनापूर्ण बातें सुनकर यशोदा ने खीझकर कहा—तू बड़ी चुगलखोर और लड़ाकू है। तू ही मोहन से झगड़ती है। मेरा कन्हैया यह सब कुछ नहीं जानता। तू इतनी बड़ी हो गई है, फिर भी बच्चों के पीछे पड़ी रहती है। कहीं ओस के चाटने से प्यास बुझती है? इस प्रकार माँ को अपना पक्ष लेते देखकर पास आकर खड़े हुए कृष्ण ने कहा—चलो माँ, मैं तुम्हें उस स्त्री को दिखाऊँ जो मुझसे झगड़ती थी। यशोदा ने रंगबिरंगी साड़ी ओढ़े उस गोपी पर खीझते हुए कहा—औरों के भी तो दस पाँच लड़के हैं जो खेलते रहते हैं लेकिन तू इसी एक के पीछे क्यों पड़ी रहती है? यशोदा के इस प्रकार कहने पर उस गोपी ने भी रोष में कहा—औरों के दस-पांच लड़के अच्छे हैं, लेकिन यही एक दुष्ट है, इसी पर आग बरसै।—(७७)

इतना कहकर गोपी अपनी सखियों के पास लौट आई। तो वहीं पास खड़ी विचार मग्ना राधा ने कहा—अब बताओ, पानी भरने कैसे जाऊँ? सांवला कृष्ण वंशी में मेरा नाम ले-लेकर गालियाँ गाता फिरता है और मार्ग में मुझे रोक कर मेरी ओर घूरता है। जब कभी कुंज पर मिल जाता है तो गागर भर कर मुझे उठाते समय मेरे अंग से लिपट जाता है।—(७८) यह सुन कर एक दूसरी गोपी ने अपनी बीती भी बतानी प्रारम्भ की—हे सखि, मैं तो यमुना नहाने भी नहीं जा सकती। वह मार्ग में ही मुझसे आ मिलता है, और आँखें चला-चलाकर रस भरी बातें किया करता है। फिर यकायक बाँह छुड़ाकर और घूंघट हटाकर प्रेम से मेरा मुख देखने लगता है। क्या कोई ब्रज में ऐसा है जो उसे डाटे या मना करे, जो पराई स्त्रियों को देख-देखकर मटकने लगता है। लेकिन इतना नटखट होने पर भी हे सखि, उसकी मोहिनी छवि मेरे हृदय में तो बस गई है। उसे सदैव देखने के लिये मेरा मन भटकता रहता है।—(७९) राधा ने यह सुनकर कहा—हे सखि, चाहे कुछ भी हो लेकिन नन्द का यह नन्दगाँव अजीबो गरीब है। यहाँ के लोग बड़े ही चपल और चुगल-खोर हैं। कहाँ तक कहूँ, एक दिन मैं अपनी सखियों के साथ मान सरोवर गई थी कि वहाँ निडर निर्लज्ज कृष्ण ने हँस-हँसकर मुझसे आँख मिलाई। यद्यपि वह सिवा परेशान करने के किसी की कुछ भी भलाई नहीं करता, फिर भी सारे

गांव का वह प्रेमी है। उसकी घनश्याम मूर्ति सबके हृदय में निवास करती है।—(८०)

गोपी छेड़छाड़ एवं गेंद चोरी लीला—एक दिन कृष्ण मार्ग में चकडोरि खेल रहे थे कि उसी मार्ग से जाती हुई एक गोपी के कंगन से उसकी डोर उरझ गई। वह वहीं बैठ गांठ सुलझाने लगी। इसपर निपट, निडर कृष्ण ने उस गोपी की ठोड़ी पकड़कर कहा—"पीति के बान लगैं रछमाछी"। गोपी रूठ गई। उसने कहा—"कन्हैया, मुझे मत छेड़ो। मुझे जाने दो। मैं तेरे पाँव पड़ती हूँ। देखो, तुम्हारी छेड़खानी के भय से ही मेरे गले का हार टूट गया, अंचल का छोर छूट गया और यहाँ तक कि मेरी चोली भी पसीने से भींग गई। देखो, अब मार्ग में मुझ से बरजोरी न करो। गोकुल के लोग बड़े चुगलखोर हैं। यदि कहीं किसी ने देख लिया तो न जाने क्या होगा? तुम्हारा यह खेल और तुम ऐसे खेलने वाले धन्य हैं।

एक दिन राधा ने पनघट पर कृष्ण को परेशान करने के लिये उन्हें इंडुरी की चोरी लगाई थी तो अब उन्होंने (कृष्ण ने) भी राधा से बदला लेने के विचार से उन्हें गेंद की चोरी लगाकर परेशान करने की ठानी। हुआ ऐसा कि एक दिन कृष्ण अपने साथियों के साथ इकट्ठे हो यमुना तट पर गेंद खेल रहे थे। खेल ही खेल में जैसे ही गेंद यमुना में गिरी कि राधा उधर से आ निकलीं। कृष्ण ने राधा को छेड़ने का अच्छा सुअवसर देखा तो कह ही दिया—राधा तुमने मेरी गेंद चुराई है। राधा ने गेंद यमुना में गिरते देख लिया था अतः उसने कहा गेंद तो तुम्हारी यमुना में गिरी है और हमसे कहते हो कि तुमने मेरी गेंद चुराई है। राधा यह कह ही रही थीं कि कृष्ण ने अपनी गेंद खोजने के बहाने राधा की अंगिया में हाथ डाल ही तो दिया। कृष्ण के ऐसा करते ही राधा—पकड़ो कृष्ण को, पकड़ो कृष्ण को, कहती हुई उनके पीछे दौड़ीं और उन्हें पकड़ कर उनकी मुरली और पीताम्बर छीन ली तथा उनके सिर पर अपनी चूनर उढ़ाकर कहने लगीं—कृष्ण, कहाँ गये तेरे संग के साथी और तुम्हारे भाई बलदेव तथा माता यशोदा? बुलाओ उनको। आकर वह तुम्हें छुड़ा लें।—(८३)

गोवर्धन धारण लीला—कृष्ण के अनुरोध पर इन्द्र-पूजा का तिरस्कार कर जब समस्त ब्रजवासी थाल में विविध प्रकार के भोज्य पदार्थ सजाकर गिरि-गोवर्धन की पूजा करने निकल पड़े तो इन्द्र ने इस प्रकार अपनी मानहानि होते देख, क्रोधित हो ब्रज को बहा देने के विचार से मेघ-समूह को आदेश दिया कि

वे ब्रज पर मूसलाधार वर्षा करे। ब्रज को घेर कर घनघोर घटायें वर्षा करने लगीं। ब्रजवासी घबरा उठे। अतः उनकी रक्षा के लिये कृष्ण ने गिरि गोवर्धन को अपने नख पर उठा लिया। जिससे समस्त ब्रजवासी उसके नीचे आ गये और इन्द्र द्वारा सात दिनों तक लगातार की गई अति वृष्टि के प्रकोप से बच गये। इस प्रकार गोवर्धन धारण के कारण कृष्ण गिरधारी कहलाये और उनके इस कृत्य के कारण ब्रज में जल की एक भी बूँद न पड़ी।—(८४ : ८४ ए)

दधि-दान लीला—भोर हुआ। पौ फटने के साथ ही कृष्ण की बंशी बज उठी, जिसकी टेर सुन ग्वालिनें जग पड़ीं। सब सोलहों सिगार कर वृन्दावन दधि बेचने निकलीं ही थीं कि गाय चराते हुए मार्ग में कृष्ण से उनकी भेंट हो गई। कृष्ण ने अपने साथियों के साथ उनका मार्ग घेर लिया और जबरन उनकी दधि की मटकी छीन ली। कदम्ब वृक्ष के नीचे अपने सखाओं को बुलाकर कृष्ण ने सब को दही बाँट दिया और जब ग्वालिनों ने कृष्ण को मना करना चाहा तो उन्होंने छीना-झपटी में उनकी नथ और हार-हमेल छीन लिये तथा कहा कि यदि तुम सब ज्यादा बोलोगी तो दही खाकर मटकी तो फोड़ूँगा ही, साथ ही तुम्हें भी वृन्दावन में एक रात रखकर समस्त ज्ञान-गूदरी सिखा दूँगा।—(८५ से ८७)

गूजरी ने घर लौटकर अपनी सखियों को बताया कि कृष्ण ने मार्ग में मेरा दही लूट लिया और ग्वाल-बालों सहित उसे खाकर मेरी मटकी फोड़ दी। तथा मेरा समस्त श्रृंगार भी नष्ट कर लिया। मैंने उससे कहा कि—तू पत्ता तोड़ ला, तुझे मैं दही पिला दूँ।—(८८ से ९०) तो वह कदम्ब वृक्ष का पत्ता तोड़ लाये और कहने लगे—"ओ बरसाने वाली गूजरी तू मुझे दधि दान दिये जा। तू मटकी भरकर दही लाई है अतः मुझे दोना भरकर दही चखा और हाँ! नित्य ब्रज आती है परन्तु किस लिये आती है, यह कभी नहीं बतलाती? तू किसकी सुन्दर पत्नी है? मैं तेरी सौन्दर्य-राशि पर मुग्ध हो गया हूँ।" हे सखि! उसके इतना कहने पर भी मैं कुछ न बोली तो उसने पुनः कहा—"क्यों इठला रही है गूजरी! यौवन का ही दान दे जा। नित्य मुझसे तरह-तरह के बहाने बनाया करती है और मैं प्रतिदिन तेरी खोज किया करता हूँ लेकिन आज तू मुझे बहुत परेशान करने पर मिली है अतः अधिक देर न कर, नहीं तो मैं तेरी दधि की मटकी उतार लूँगा और फिर तुझे तंग करूँगा। अब तो तू यहाँ से भाग भी नहीं सकती, क्योंकि मैंने तुझे पहचान लिया है। यदि इतने पर भी तू आना-कानी करेगी तो देख मन्सुखा आगे खड़ा है, तबियत ठीक कर दूँगा। अतः अच्छा यही है कि तू स्वयं ही मुझे मेरी इच्छानुसार दधि-दान दिये जा।"

—(९१, ९२)

398.8709542
Gup-Po

इसके पश्चात् गोपी यशोदा को उलाहना देने उनके घर गई और कहने लगी—यशोदा, तुम्हारा गोपाल वृन्दावन के मार्ग में अपना अजीब रूप बनाये और साथ में अपने साथियों को लिये बैठा था। मैं जैसे ही दधि की मटकी लिये उधर से निकली, उसने अचानक मेरी मटकी शीश पर से उतार कर दोने में दही भर लिया और मटकी पटक कर फोड़ दी। इसी छीना-झपटी में उन्होंने मेरी बाँह भी मरोर दी।—(६३) अतः यशोदा मैं प्रार्थना करती हूँ कि तुम अपने गोपाल को समझा दो, रोक दो। वह ऐसा न किया करे। मेरा नित्य प्रति वृन्दावन आना-जाना होता है और वह नित्य मार्ग में आ अड़ता है। फिर तो उससे पीछा छुड़ाना भी कठिन हो जाता है। वह अपने सखाओं की टोली साथ लिये प्रतिदिन घूमा करता है और जब मिल जाता है तो पहले तो बड़ी मीठी-मीठी बातें करता है और फिर बरजोरी कर चोली मसक देता है। कहता है—तू अपने बिछुओं को बजा-बजाकर मेरे आगे नृत्य कर। इस प्रकार ताता-थेई करते हुए उसने मेरे दोनों हाथों को पकड़कर ताली बजाई। आखिर ऐसी बेशर्मई क्यों उसने ओढ़ रखी है? मुझे तो अधिक बताते हुए भी लज्जा आती है। अब तो मैं तेरे ब्रज में न रहूँगी। कहीं अन्यत्र छोटे से गाँव में चली जाऊँगी, क्योंकि यहाँ न्याय की ओर से सबने जैसे मुख ही मोड़ लिया है।—(६४, ६५)

इधर तो गोपी ने यशोदा से कृष्ण की इस प्रकार शिकायत की, और उधर अपनी माता के पूछने पर अपनी सफाई पेश करते हुए कहा—मैया री, मैंने गोपाल से कुछ नहीं कहा। मैं दधि बेचने वृन्दावन जा रही थी कि उन्होंने मेरा मार्ग घेर लिया और मुझे गालियाँ दीं।—(६६)

चन्द्रावलि छलन लीला—एक दिन चन्द्रावलि को दधि बेचने जाने से उसकी सास ने बहुत रोका लेकिन वह हठीली गूजरी शीश पर दधि से भरी गागर रख उसे बेचने निकल पड़ी। उसने घूम-घूमकर गोकुल, महावन और मथुरा में दही बेचा। वहाँ से लौटते समय मार्ग में गायें चराते हुए कृष्ण से उसकी भेंट हो गई, अतः उन्होंने दही के लिये उसकी बाँह पकड़ ली। चन्द्रावलि ने कहा—कृष्ण, पत्ता तोड़ लाओ और दोना बना लो तो मैं तुम्हें अपना मीठा दही चखा दूं। कृष्ण ने पेड़ छान डाले परन्तु पत्ते न मिले, अन्त में एक पत्ता तोड़ लाये और दोना बनाया, तब चन्द्रावलि ने उन्हें दही चखा दिया।

सन्ध्या हुई, दिन बीतने को आया। कृष्ण ने गायें घर हाँक दीं और घर पहुँचकर उन सबको खिरक में कर दिया, तथा स्वयं अनमने होकर टूटी हुई खाट पर पीताम्बर ओढ़कर लेट गये। माता यशोदा ने कृष्ण को न देखा तो कहने लगीं कि मेरा गोपाल आज कहाँ रह गया? और जब वह ढूँढ़ती-ढूँढ़ती

खिरक में गईं तो वहाँ कृष्ण को सोता हुआ पाया। अतः माता यशोदा ने पूछा– "बेटा कृष्ण ! क्या तुम्हें ठण्ड देकर ज्वर आया है या पिंडुरी में दर्द हो रहा है ?" कृष्ण ने कहा—"माँ ! न मुझे ज्वर है और न कमर में दर्द ही। मेरे हृदय में चन्द्रावलि बस गई है, उसी के पास हमें जाना है।" यह सुनकर यशोदा ने कहा—"कृष्ण ! मैं तुम्हारी एक-दो नहीं, चार-चार शादियाँ करूँगी, वह भी दो गोरी और दो काली से, लेकिन तुम वहाँ न जाओ।" इस पर कृष्ण ने कहा— "माँ ! तुम उन चारों को कुँआ में काटकर डाल दो, मेरा मन तो वह चन्द्रावलि गूजरी चुराकर ले गई है।"

कृष्ण पूछते-पूछते उसके घर जा पहुँचे और वहाँ किसी अन्य गूजरी द्वारा चन्द्रावलि के पास संदेश भेजते हुए उससे कहा कि तुम जाकर मेरी बहिन चन्द्रावलि से कहना कि द्वार पर तुम्हारी बेंदुली खड़ी है। चन्द्रावलि ने यह संदेश सुना तो विचार में डूब गई कि न मेरे ममेरी बहिन है और न फुफेरी फिर यह कहाँ से आ गई। खैर चलो, हम दोनों मिल तो लें।

चन्द्रावलि को अपनी इस बहिन को देखकर एवं उसके साथ दिन भर विभिन्न प्रकार के दैनिक कार्यों को करके यह संदेह दृढ़ हो चला कि वह स्त्री नहीं, नारी वेश में कोई और है। फिर भी वह प्रकट रूप में उससे कुछ न कह सकी। आधी रात बीतने पर कृष्ण ने अपना वास्तविक रूप प्रकट किया। अब चन्द्रावलि ने कृष्ण को अपने पास पाकर उनसे प्रार्थना की कि अब तुम मुझ से विलग न हो और न यह रात ही शीघ्र बीते।—(९७)

चंद्रावलि को छलने के बाद एक रात कृष्ण किसी अन्य गोपी के घर में घुस गये और उसकी बाँह पकड़ कर उसे जगाकर बिठा दिया। कृष्ण को रात में अपने आंगन में देखकर गोपी ने पूछा—कृष्ण ! तुम मेरे आंगन में कैसे आ गये ? मैं अपने घर में सोई हुई थी और तुमने मुझे जगाकर विठा दिया। क्या तुम्हें लज्जा नहीं आती ? मैं बड़े घर की स्त्री हूँ। तुम्हारी तरह कोई ओछी जाति की डरपोक नहीं हूँ। यदि कहीं मेरे ससुर तुम्हारा इस प्रकार यहाँ आना सुन लें तो तुम्हें पकड़वा कर बँधवा दें। और यदि कहीं मेरे पति इस समय यहाँ आ जायें तो तुम से गुत्थम-गुत्था कर बैठें।—(९८)

इसके बाद गोपी यशोदा के पास श्याम की शिकायत लेकर गई और कहने लगी—यशोदा ! तुम्हारा प्यारा कृष्ण, वह जो काली कमरिया ओढ़े फिरता है, आज अपने साथियों के साथ मेरी बाखर में घुस आया था। उसे तुम रोकती क्यों नहीं ? जहाँ देखो वहीं वह मुझे परेशान किया करता है।
—(९९)

छद्म लीलाएँ

वैद्य लीला—चन्द्रावलि को छलने के बाद एक दिन कृष्ण ने राधा को छलने के निमित्त अपना वैद्य का रूप बनाया। जंगल की जड़ी-बूटी मँगाकर झोली में भरा और वृन्दावन की गलियों एवं कुंजों में घूम-घूमकर मधुर स्वर में आवाज देने लगे कि—"क्या कोई सखी इस गली में बीमार है? हम उसका रोग दवा की एक गोली में ही ठीक कर सकते हैं।" इस प्रकार वह घूम-घूमकर रोगी स्त्रियों को देखने लगे। इतने में ही ललिता ने वैद्य जी को बुलाया और कुमारी राधिका ने घूँघट हटाकर वैद्य से अपना हाथ देखने के लिये कहा। कृष्ण ने नाड़ी देखकर बताया—तुम्हें और तो कोई बीमारी नहीं परन्तु सर्दी, गर्मी अवश्य लग गई है। तुम अपने साथ की सहेली को बाहर कर द्वार बन्द कर लो, मैं तुम्हें एक ऐसी दवा दूँगा कि तुम्हारी सारी तकलीफ दूर हो जायेगी। अतः ललिता को बाहर निकाल राधा ने वैद्य कृष्ण से आग्रह किया कि आज तुम यहीं रहो। मैं तुम्हारी विविध प्रकार से सेवा-सत्कार करूँगी।

—(१०० से १०२)

मोहनी लीला—एक दिन राधा से पुनः छद्म वेश में मिलने के लिये कृष्ण ने विविध प्रकार से अपना शृङ्गार कर एक सुन्दर नारी का रूप बनाया और माता यशोदा के पूछने पर बताया कि मैं वृषभानु की लड़की जिसने मुझे छला है, छलने के लिये बरसाने जा रहा हूँ। इस प्रकार अपने मन की बात बता कर वह मतवाले से हो, बरसाने के वनों एवं बीथियों में राधा का घर खोजने लगे और फिर अन्त में वृषभानु की पौरि ज्ञात कर उन्होंने राधा से जाकर बातचीत की।—(१०३)

योगिनी लीला—कृष्ण ने छद्म वेश में राधा से मिलने के लिये एक दिन अपनी कछनी गेरुये रंग में रंग डाली और कम्बल ओढ़कर योगिनी का वेश बनाकर बरसाने की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँच कर वह अलख निरंजन, अलख निरंजन की रट लगाने लगे। बरसाने के नर-नारी योगिनी को आया देखकर उनकी हाथ जोड़कर पूजा करने लगे। यह देख, राधा ने योगिनी से पूछते हुए कि हे योगिनी, तुम्हारी कुटिया कहाँ है? आग्रह किया कि चलो आज हमारे ही घर चलो। हम वहाँ तुम्हारी सेवा-सत्कार करेंगे। लेकिन तत्काल ही राधा को योगिनी की वास्तविकता पर संदेह हो गया। अतः उसने कहा—हे बहिन, तू तो योगिनी जैसी नहीं लगती क्योंकि तेरे नेत्र तो चारों ओर पुरुषों जैसे चल रहे हैं।—(१०४)

नट-लीला—कृष्ण की नट-लीला देखकर गोपियाँ आपस में एक-दूसरे से बताने लगीं कि नट-वेशधारी कृष्ण कछोटा मारकर गंगाजी (मानसी गंगा)

की रेत में गड़े हुए बाँस पर चढ़ गये और उस पर अधर के बल कला खा-खाकर उन्होंने बंशी द्वारा नई-नई तानें छेड़ीं। यही नहीं, उसी पर भुक-भुककर उन्होंने अपना नाच दिखाकर हम सबका हृदय चुरा लिया। जिसके कारण अब हम अपनी सुध-बुध खोकर पागल की भाँति इधर-उधर घूम रही हैं।—(१०६)

राधा दधि-बेचन लीला—कृष्ण के कई दिनों से दर्शन न होने के कारण एक दिन राधा स्वयं ही कृष्ण से मिलने के लिये दही बेचने के बहाने उनके गाँव की ओर गईं और वहाँ पहुँचते ही आवाज देने लगीं—बिहारी, ओ नन्दलाल, मेरा दही ले लो। मैंने कोरी-कोरी मटुकिया में दही जमाया है तथा उसमें एक बूँद भी पानी नहीं डाला है। यह सुनते ही कृष्ण ने दधि वाली को दही लेकर अपने पास बुलाया और पूछा—तुम कौन हो और कहाँ रहती हो? मैं तुम्हारे दही का मोल-भाव न कर, तुम्हारी सुरति का मोल करना चाहता हूँ। बताओ उसकी क्या कीमत होगी? राधा ने अपना परिचय देते हुए कहा—कृष्ण! मेरो सुरति का मोल न करो, क्योंकि मेरा बालम बड़ा लठमार है।

इस प्रकार राधा कृष्ण के दर्शन आदि कर अपने घर जाती हुई कृष्ण को बरसाना आने के लिये आमन्त्रित करती गई तथा यह भी कहती गई कि तुम बरसाने आकर नन्दगाँव में गाय भी चराना और भानौखरि में नहा भी लेना। और पुनः यदि इच्छा हो तो बरसाने की गोपियों को बुलाकर गहबर वन में रास-नृत्य का आयोजन भी कर लेना।—(१०७ से ११०)

बंशी वादन—कृष्ण ने एक दिन यमुना तट पर बड़ी ही मधुर बंशी की तान छेड़ दी। जिसे सुनते ही समस्त ब्रजवासियों के सहित ब्रह्मा जी भी मोहित हो वेद का पढ़ना छोड़ बैठे। समस्त देवगण तो ऐसे प्रभावित हुए कि वे ईश्वर का ध्यान करना भी भूल गये। और फिर ब्रज-बालाओं एवं गोपी-ग्वालों की क्या, वे तो बंशी-वादन सुनते ही जहाँ के तहाँ ठगे से रह गए। वे आपस में कहने लगे कि श्याम ने कौन-सा मन्त्र पढ़कर ऐसी मधुर तान छेड़ी कि जिसे सुनते ही हम सब अपनी सुधि-बुधि खो बैठे। यहाँ तक कि हमें अब ब्रज को जाने वाला मार्ग भी नहीं सूझ रहा है। फिर अब तो बंशी की मधुर तान हृदय में ऐसी प्रवेश कर गई है कि कुछ करते-धरते भी नहीं बन रहा है।

—(१११ से ११३)

कहीं गोपियाँ आपस में कहती हैं कि कृष्ण ने तो ऐसी मनमोहनी बंशी बजाई कि उसने हम ब्रज नारियों को अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। उसकी मधुर ध्वनि हृदय में ऐसी समा गई है कि जैसे बिना फन के कोई सर्प डस ले या कोई जादू कर दे और पता तक न चले। हे सखि! मुझे तो सोते हुए

से श्याम की बंशी ने जगा दिया। मैं उसकी माधुरी के वशीभूत हो, अपनी सुध-बुध भूलकर अपने सोते हुए पति एवं घरबार को छोड़ किसी प्रकार उलटे-पुलटे साज-शृङ्गार बना यमुना तट चल पड़ी जहाँ कि कृष्ण बंशी में मल्हार गा रहे थे।—(११४, ११५) फिर हे सखि, कहाँ तक कहूँ—एक दिन मैं यमुना जल भरने गई थी कि उसी समय श्याम ने बंशी बजा दी। जिसके प्रभाव के कारण मैं अपनी सम्पूर्ण मनःस्थिति ऐसी खो बैठी कि मुझे कहीं कुछ भी नहीं दीख रहा था। यहाँ तक कि न कोई मानव, पक्षी तथा वृक्ष ही मुझे दीखा।—(११७)

गोपी की बात सुनकर एक अन्य गोपी ने कहा—हाँ बहिन, कल आधी रात को भी श्याम ने बंशी बजाई थी। उसकी मधुर ध्वनि जैसे ही कानों में पड़ी कि मुझे ऐसी लगी कि जैसे उस छलिया कृष्ण ने मेरा हृदय ही मुझ से छीन लिया हो। उसकी माधुरी मेरे हृदय में समा गई। मेरा अग-प्रत्यंग फरक उठा और फिर उसी के वशीभूत हो, प्रातः उनसे मिलने की प्रतीक्षा में रात तड़पते-तड़पते बीती। हे सखि! कृष्ण की उस छोटी-सी बांसुरी का तीनों लोकों में कितना यश है, कितना प्रभाव है कि कहते नहीं बनता।—(११७)

कोई गोपी मन ही मन अपनी विवशता पर दुःखी हो कह रही है—हे श्याम, तेरी बंशी ने मुझे तुझ से मिलने के लिये विकल कर दिया है। लेकिन मैं विवश हूँ कि तेरे पास आ नहीं सकती। रिमझिम-रिमझिम वर्षा हो रही है। घन में बिजली रह-रहकर कौंध जाती है। ऐसी दशा में तुम्हीं बताओ, मैं तुम्हारे पास कैसे आऊँ? और यदि आती भी हूँ तो मेरी चूनर भींग उठती है। घर में यद्यपि सास-सुसर सो रहे हैं। लेकिन ननद के जागने एवं पायल के बजने के डर से तुम्हारे पास चाहते हुए भी आ सकने में असमर्थ हूँ।—(११८)

दूसरी गोपी अपनी ही विवशता लिये रो रही है। कहती है—हे बहिन, आधी रात को जैसे ही पपीहे ने पुकार लगाई कि श्याम की बंशी भी उसी के साथ बज उठी। मैं सोते से जग पड़ी। फिर एक तो बरसात की रात और उस पर से श्याम-मिलन की विकलता होने के कारण मुझे घर-आँगन कुछ भी नहीं अच्छा लग रहा था। सास भी ऐसी कि यदि किसी प्रकार जाना भी चाहूँ तो वह जाने नहीं दे रही थी। अतः श्याम से मिलने का कोई भी अवसर हाथ न लगा। क्या कहूँ, व्रज में तो यह नन्द का अनोखा लाड़ला नित्य नये-नये उत्पात मचाकर हम सब को तंग दिया करता है।—(११९)

हे सखि—देखो न, फिर वह कृष्ण की बंशी मधुवन की ओर बज उठी। अब तो यही जी में आता है कि वृन्दावन के समस्त बाँसों को कटवा दूँ जिससे फिर न यह बाँस उपजे और न कृष्ण की बंशी ही बज सके।—(१२०) जिसे

सुनते ही मेरा चित्त उसकी ओर आकृष्ट हो जाता है। मेरी ही कौन कहे, उस बंशी की तान सुनकर वन में मोर भी नृत्य करने लगते हैं। कृष्ण के बंशी-वादन के प्रति अपनी सखी की ईर्ष्यापूर्ण उक्ति सुनकर राधा ने कृष्ण को ही सम्बोधित करते हुए कहा—श्याम ! जी में आता हैं कि तनिक मैं भी तुम्हारी बंशी को बजाऊँ। जिन-जिन स्वरों को तुम मुरली में भरा करते हो, उन्हीं को भर कर मैं तुम्हें सुनाऊँ तथा अपने समस्त आभूषण तुम्हें पहरा कर मैं तुम्हारा रूप धारण करूँ और फिर तुम राधा बनो और मैं नन्दलाल कहाऊँ।—(१२२)

रास लीला—शरद पूर्णिमा की आधी रात को कृष्ण ने बंशी बजाई कि उसकी टेर सुनते ही समस्त गोप बधुयें घरबार छोड़ तथा बच्चों को भूखे रोते त्याग उसी ओर दोड़ पड़ीं।—(१२३) लेकिन कुछ ऐसी भी थीं जो वहाँ तत्काल न जा सकीं। अतः वे लांगुरिया से कहती हैं कि हे लांगुर ! तुम मेरे साथ चलो तो हम भी राधा-कृष्ण की होने वाली रास-क्रीड़ा को देख आवें, जिसमें व्रज बालाओं के साथ वे अद्‌भुत नृत्य कर रहे हैं। फिर घनश्याम सुन्दर श्याम तो हमें प्राणों से भी प्यारे हैं, वे हमारे जीवन हैं, सर्वस्व हैं।—(१२४ से १२६) इन्हीं भावों में डूबी वे गोपियाँ रास स्थल के निकट पहुँचीं तो रास-नृत्य के मध्य गौर वर्णा राधा और श्यामल कृष्ण की रूप-शोभा देखते ही कह उठीं—कन्हैया तो जैसे गुलाब के फूल हों और राधा जैसे उस फूल में रंग की तरह समाई हों। वह पान से भी अधिक क्षीण, हरद से भी अधिक पीत-वर्णा हैं। उनकी पतली भौंहे—मानों झुकी हुई कोमल डालें हैं। वह रेशमी लंहगा, चोली और दुपट्टा पहरे हुए हैं। उनकी नाक में नथ, माथे पर बिंदिया और मांग में मोतियाँ सुशोभित हैं।—(१२७)

मान लीला—रास के अनन्तर राधा मान ठान बैठीं। कृष्ण के लिये उनकी जीवन सदृश राधा का रूठना बड़ा ही कष्टप्रद सिद्ध हुआ। अतः दुखित हो वे राधा की सखियों से कहते—राधा तो मेरी जीवन है, उसके दर्शन बिना मुझे शान्ति कहाँ ? ना जाने मुझ से ऐसी कौन-सी भूल हो गई कि वह सुखदात्री माम कर बैठी। अब तो उसे देखे बिना मुझे चैन नहीं। अतः ललिता और विशाखा मैं तुम्हारे चरणों पड़ता हूँ—तुम जाकर मेरी राधा को ले आओ।
—(१२८)

जब सखियों के मनाने पर भी राधा ने अपना मान न त्यागा तो कृष्ण स्वयं ही माननी राधा को मनाने के लिये उनका चरण दबाने लगे।—(१२९)

सावन या हिंडोला सुख—मन भावन सावन आया। वर्षा की रिमझिम-रिमझिम फुहार और शीतल पवन के झकोर के साथ फूलों-फलों के

बाहुल्य से ब्रज की शोभा अवर्णनीय हो उठी। ऐसे ही अवसर पर राधा अपनी सखियों से बाग में झूला डालने को कहती हैं। साथ ही यह भी सलाह देती हैं कि सब नन्द भवन होती चलो, सम्भव है मार्ग में कृष्ण भी मिल जायें तो उन्हें भी साथ ले लें। नहीं तो सम्भव है वह कुँज गली में ही बैठे हों।—(१३०)

यमुना तट पर चंदन की पटुली और रेशमी डोर का झूला डाला गया। कृष्ण राधा को झुलाने लगे। ललिता ने मल्हार छेड़ा कि इतने में ही नदिया किनारे के काले कजरारे मेघ उमड़ आये।—(१३१) फिर जब उमड़ आये तो बरस क्यों नहीं जाते? यही तो अवसर है। अतः वे भी रस-सिक्त हो झर पड़े। राधा की चंपा चूनरी भींगी तो कृष्ण की पचरंगी पाग।—(१३२) लेकिन कृष्ण-राधा का झूला झूलना बंद थोड़े ही हुआ। वह तो वृन्दावन में झूल रहे हैं। गोपियाँ उनकी अपूर्व शोभा ही निरखती रह जाती हैं। कभी वह उनका मोर मुकट देखती हैं तो कभी राधा के पाँव मे पड़ी नूपुर की रुनझुन में खो जाती हैं।—(१३३) फिर वे अपनी अन्य सखियों से बताती हैं—हे सखि, कृष्ण का हिंडोला पड़ गया। जिस पर राधा के साथ कृष्ण झूल रहे हैं और संग की सहेलियाँ झोटा देते हुए मल्हारें गा रहीं हैं। ऐसे सुखद अवसर पर वन और उपवन की शोभा भी अवर्णनीय हो उठा है। कहीं मोर कूज रहे हैं तो कहीं पपीहे ने शोर मचा रखा है। फिर वर्षा की नन्हीं-नन्हीं फुहार के साथ सोंधी-सोंधी शीतल बयार भी बह रही है।—(१३४ से १३६)

आज श्याम का हिंडोला कुँजवन में ही पड़ गया। केले के दो खंभों के सहारे पचरंगी रेशमी डोर का झूला डाला गया, जिस पर कृष्ण राधा को जोर से पेंग मार कर झुला रहे हैं। अतः राधा डर कर श्याम से कहती हैं—श्याम! तनिक धीरे-धीरे झुलाओ। मुझे डर लग रहा है।—(१३७, १३८) और जब डर से आस्वस्थ करने के बहाने झूला झुलाते हुए कृष्ण राधा के निकट आ उन्हें अपनी भुजाओं में लेने लगते हैं तो फिर वह कहतीं हैं—हे श्याम! नेंक धीरे-धीरे झुलाओ न। क्यों ऐसी रार मचा रखी है, मना करती हूं फिर भी नहीं मानते।—(१३९)

इतने में ही बादल घिर आये। मूसलाधार वर्षा होने लगी। राधा और भी भयभीत हो चलीं।—(१४०) शीतल पुरवाई के झोंके के साथ वन में दादुर, मोर और पपीहे अपना-अपना राग अलापने लगे। ऐसे मनमोहक वातावरण में श्याम के पीताम्बर की शोभा और फिर उस पर से उनका वंशी-वादन ऐसा प्रिय लग रहा था—जैसे प्रिया को उसका प्रियतम और चकोर को चंदा प्यारा प्रतीत हो। वंशी की ऐसी सुमधुर ध्वनि सुनकर गोपियाँ मतवाली हो गा उठीं।

उनका हृदय धैर्य खो, चंचल हो उठा। वे कहने लगीं—मनमोहन चितचोर की वंशी ने तो हम सबको अपने बस में कर लिया है।—(१४१)

आज तो कृष्ण और राधा के अलग-अलग झूले पड़ गये हैं। नीलम फरिया पहिरे राधा रानी अपनी सखियों के साथ एक ओर कुँजों के मध्य झूल रही हैं तो पीताम्बरधारी कृष्ण अपने सखाओं के साथ बागों में झूल रहे हैं। झूला झूलते हुए नभ में कभी गौर वर्णा राधा बिजुरी सी तो कभी श्यामल कृष्ण वारिध से चमक उठते हैं।—(१४२) कृष्ण-राधा की ऐसी अनुपम शोभा-राशि एवं उनके साथ हिंडोला झूलने का सुख जो गोपियाँ न पा सकीं, वे अपनी सहेलियों से वहाँ की सब बातें ज्ञात कर एक बार उस शोभा का दर्शन करने के निमित्त ही कुँज वनों में जाने के लिये उत्सुक हो उठती हैं।—(१४३, १४४)

गोचारण एवं वंशी-वादन—कोई गोपी कृष्ण के गोचारण का उल्लेख करती हुई कहती है—हे सखि! कृष्ण यमुना तट स्थित सोरों जी के खेत में गाय चराते हुए वंशी भी बजा रहे हैं। उनके हाथ में बांस की एक लकुटिया हैं। वे टसरी धोती पहने, कंधे पर काली कमरी डाले और मस्तक पर तिलक लगाये हुए हैं। उन्होंने मेरा मन हर लिया है। लेकिन उनकी उस वैरिन वंशी के प्रति जी में आता हैं कि मैं उसे और उनके म्मौंहचंग—दोनों को तोड़-मरोड़ कर फेंक दूँ।—(१४६) उनकी वंशी जाने क्यों गुमान में भरी रहती है, जबकि वह वन में ही काटी और छाँटी गई है, तथा वहीं उसमें छेद किये गये हैं। पुनः वह न सोने की है और न चाँदी की, केवल वन की एक सामान्य लकड़ी है, फिर भी वह न जाने क्यों अहंकार में डूबी रहती हैं?—(१४६)

हे सखि! गोचारण के समय कृष्ण कदम्ब वृक्ष के तले बैठे एक-एककर वंशी बजा रहे थे कि मैं शृंगार किये उधर से वृन्दावन जाने को निकली ही थी कि उन्होंने मेरा मार्ग रोक कर मेरी बाँह पकड़ ली। जिसके कारण वहीं मेरा बाया पैर बिध जाने से हाथ टूट गया।—(१४७) फिर भी उन्होंने मेरा मार्ग रोक कर मुझे बहुत सताया, तथा घूंघट खोलकर मेरे बहुत मना करने पर भी खूब ऊधम मचाया और मुझे विवश कर दिया।—(१४८) वह मुझसे कहने लगे ओ—बरसाने की गुजरी, तुम कदम्ब वृक्ष के नीचे मेरे पास आ जाना। यदि तुम्हारी सास और ननद तुम्हें रोकें भी तो भी तुम उन्हें ठेंग दिखाकर मेरे पास चली आना।—(१५०)

वसन्तोत्सव—राजा बलि के द्वार पर होली की धूम मची हुई है। एक ओर कृष्ण हाथ में मंजीरा लिये राधा के साथ होली खेल रहे हैं तो दूसरी ओर बलदाऊ ढपली लिये दूर अलग खड़े सब देख रहे हैं।

आज गोकुल की कुंज गली में ही कृष्ण ने अपने साथियों को साथ ले होली मचा दी और जब गोपियों ने कृष्ण के किसी साथी को पकड़ लिया तो वह रंग भरी पिचकारी लेकर उसे बचाने के लिये दौड़ पड़े। परन्तु जब गोपियों ने कृष्ण को ही पकड़ लिया तो उनके अन्य साथी मिट्टी लेकर गोपियों के ऊपर झपट पड़े। सायंकाल हुआ। कृष्ण घर लौटे तो उन्होंने माता से कहा—माँ ! हमें गोकुल की गलियों में गोपियाँ छेड़ा करती हैं। इधर श्याम ने अपनी माता से बहाने बनाये तो उधर गोपियों ने घर आकर यशोदा से उराहना दिया—यशोदा ! तुम्हारे पुत्र ने हम पर जबरन रंग डाल दिया। विशाखा की चूनर फाड़ डाली और जब मैं उन्हें पकड़ने को गई तो उन्होंने मेरी बाँह मरोड़ दी तथा मेरे गले का हार भी तोड़ दिया। अतः यदि तुमने मेरी शिकायत पर ध्यान न दिया तो मैं कंस के पास जाकर सब बातें कहूँगी। वह उन्हें पकड़ मँगवायेगा और फिर पिटवायेगा तो उनकी सब शेखी मिट जायगी।

—(१५१ से १५५)

आज नन्दगाँव के ग्वालों और बरसाने की गोपियों के बीच होली की धूम मचने वाली है। अतः सब एकत्र होकर जोर-जोर से गा रहे हैं :—

आज बिरज में होरी रें रसिया,
होरी रे रसिया, बरजोरी रे रसिया।
नंद गांव के ग्वाल बाल सब,
बरसाने की सब गोरी रे रसिया।
जो होरी खेलन नाय आवै,
उनते चलेगी बरजोरी रे रसिया।

वृन्दावन में होली के झाँझ और ढप बजने लगे। कृष्ण हर्षित हो नाच उठे। उड़ते हुए गुलाल लाल-लाल बादल के सदृश हो चले। फिर रंग की ऐसी धूम मची कि जैसे रंग की ही वर्षा हुई हो। हाथ में पिचकारी और कमर में गुलाल लिये जैसे ही गोपी (राधा) कृष्ण की ओर बढ़ी कि वह डर कर भाग निकले। लेकिन इतने में ही चन्द्रबदनी राधा अपनी रूप-राशि पर कृष्ण का अनुराग देखकर उसे छिपाने के लिये व्याकुल हो उठीं। और अपनी सखी से कहने लगी—हे सखि ! तू ही बता, मैं अपनी सुन्दर रूपराशि किस प्रकार छिपाऊं ? मेरे गोरे बदन की कान्ति तो घूँघट की ओट में भी नहीं छिप रही हैं। न जाने यह कैसा संयोग हो गया है कि मैं कृष्ण को कितना भी मना करती हूँ, वह मानते ही नहीं। वह मेरे पीछे-पीछे लगे अपना अनुराग प्रकट करते फिर रहे हैं। हे सखि ! मुझ तरुणी के पीछे तो जैसे ब्रज के लोग बावरे हो उठे हैं।—(१५७ से १६१)

नंदगाँव और गोकुल की होली खेलकर अब कृष्ण अपनी ससुराल बरसाने होली खेलने जा पहुँचे। राधा ने अपनी सखियों के साथ हाथ में पिचकारी लेकर और कृष्ण ने अपने सखाओं के साथ हाथ में गुलाल लेकर एक-दूसरे से जी भर कर होली खेली। लेकिन होली की इस अति से खीझ कर किसी गोपी ने श्याम से विनय किया—श्याम ! होली में आँखों पर रंग और गुलाल क्यों डालते है ? मैं बड़े घर की लज्जालु नारी हूं, तुम्हारी तरह खोटे विचार की नहीं। इस बार तो मैं घूँघट की ओट से तुम्हारा की हुई चोट बचा गई, लेकिन अब तुम मेरे साथ न खेलकर जहां तुम्हारी बराबरी के लोग हों, वहाँ जाकर उनसे होली खेलो।—(१६२, १६३)

कृष्ण के द्वार पर फाग मची हुई हैं। परन्तु कृष्ण, वह तो वृन्दावन की गलियों में होली खेल रहे हैं। किसी गोपी को अकेला देखा तो कुंज में जाकर उसे घेर लिया, उसकी गागर पटक दी और चूनर झटक कर उसे अच्छी तरह रंग से भिगो दिया। इतने में ही उसकी अनेक सखियाँ चटकते-मटकते, नाचते-गाते, रंग से भीगीं उधर आ निकलीं। अपनी इन सखियों को पास देखकर उस गोपी ने कहा—हे सखि ! वृन्दावन की कुंज गली में फाग खेलते हुए होली के खिलाड़ी श्याम ने सामने से रंग भरी पिचकारी मारकर मेरी साड़ी भिगो दी और मुझे रंग में रंग डाला। यह सुनकर उसकी सखियों को भी कृष्ण के साथ होली खेलने की अभिलाषा जाग उठी। वे कहने लगीं—हे सखि ! मैं भी होली खेलने बृन्दावन चलूंगी—जहां श्याम सुन्दर हाथ में पिचकारी लिये राधा के साथ फाग खेल रहे हैं। वहीं उनके साथ मैं भी रंगीली फाग रचूँगी और अबीर-गुलाल उड़ा-उड़ाकर चारों दिशाओं को रंग से भर दूँगी। यही नहीं, मैं यमुना का बसंती जल रंग बरसा-बरसा कर पीला बना दूँगी और फिर मैं स्वयं श्याम के रंग में रंग जाऊँगी।—(१६४, से १६६)

इधर गोपियाँ वृन्दावन जाकर कृष्ण एवं उनके सखाओं के साथ होली खेलने के लिये उत्सुक हो रहीं हैं तो उधर कृष्ण भी अपने सखाओं के साथ बरसाने जाकर होली खेलने को लालायित हो रहे हैं। अतः वे अपने साथियों से कहते हैं कि चलो बरसाने चलकर होली खेली जाय, वहाँ की होली बड़ी प्रसिद्ध है। ऐसा निश्चय कर वे बरसाने होली खेलने जा पहुँचे। कृष्ण को फाग खेलने के लिये आया हुआ देखकर राधा ने भी धूम-धूमकर अपनी सब सखियों को होली खेलने के लिए एकत्र किया। इस प्रकार पाँच वर्षीय श्यामल कृष्ण और सात वर्षीया गौर वर्णा राधा ने अपने-अपने सखाओं एवं सहेलियों के साथ हाथ में ढाल और लठा लेकर एक-दूसरे से होली खेली। इस खेल मे जब गोपियाँ अपने लठ से गोपों के ऊपर चोट करतीं तो वे अपनी

ढाल से उसे रोक कर स्वयं को बचा जाते। इसी बीच कृष्ण ने रंग से भरी कमोरी लेकर राधा को रंग में डुबो दिया। फिर राधा को ही क्यों, उन्होंने ऐसी अपूर्व होली अपनी ससुराल बरसाने में खेली कि रंग से समस्त अटा-अटारी, चौपारि और कोट-कंगूरे के साथ-साथ समस्त घर नारियों को भी रंग में रंग दिया। यमुना की आधी धारा के साथ-साथ आकाश के बादल भी लाल हो गये। ऐसी अपूर्व होली खेलकर जब श्याम ब्रज वापस लौटने लगे तो गोपियों ने कहा—गोपाल ! अब तो नेत्रों द्वारा चोट न करो। चाहे फिर होली खेलने अपने साथियों को साथ ले यहाँ चले आना।—(१६७ से १७४)

इधर एक ओर हर्षोल्लास में डूबी राधा एवं उनकी सखियाँ कृष्ण से ही होली खेल उन्हीं के रंग में रंग जाने के लिये इच्छुक हो रही हैं तो दूसरी ओर एक अभागिन गोपी कृष्ण के साथ होली खेलने के लिये व्यग्र हो अपनी ननद से वहाँ जाने की अनुमति माँगती हुई बड़ी नम्रता से कहती है—हे मेरी अच्छी ननद, मुझे कृष्ण से होली खेलने के लिये जाने दे। मैं बार-बार तेरे पाँव पड़ती हूँ। तू मेरी इतनी सी विनती सुन ले। तू तो मेरी परम हितू है। अतः मुझे वहाँ जाने से मत रोक, प्राण-दान के सदृश मुझे नंद नन्दन से होली खेलने से मना न कर। और जब किसी प्रकार वह गोपी कृष्ण के पास होली खेलने पहुँची तो कृष्ण ने उसकी बाँह मरोड़ कर उससे उसकी रंग से भरी गागर छीन ली और उसके माँगने पर उसे पटक दी। और जब उसका रंग बिखेर कर कृष्ण ने उसके साथ होली खेलनी आरम्भ की तो वह घबड़ा कर उनसे प्रार्थना करने लगी कि—हे कृष्ण ! मैं हाथ जोड़कर तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ, तुम मुझसे होली न खेलो। मेरे ऊपर चाहे अबीर डाल लो परन्तु मेरा अंचल छोड़ दो। तुम्हारी सौगन्ध अभी मैं बहुत थोड़ी उमर की हूँ। अतः इस बार रुक जाओ। जब मैं तुम्हारे योग्य हो जाऊँ, तब तुम मुझसे होली खेल लेना। अभी तो हे प्रिय चलो सेज पर चलकर मेरे चाँद से मुख और तारों सदृश नेत्रों को देखो। अब तो तुमने मेरी सारी चूनर भी रंग में भिगो दी है अतः अब मेरी कहा मानों। क्या ब्रज में और स्त्रियाँ नहीं जो मुझसे इस तरह फाग मचा दी है ? फिर भी यदि तुम मुझसे होली खेलना चाहते हो तो आओ मैं तुम्हारे साथ होली ही खेलूँगी, तुमसे हारूँगी नहीं। मैं रंग से गड़ुआ भर-भरकर तुम्हारे ऊपर डालूँगी और तुम्हारी पगड़ी तथा झगुलिया फाड़कर तुम्हें होरी में गोरी बनाऊँगी। फिर जो तुम अचानक मेरी छाती पर हाथ लगा देते हो, उसे बाँधकर तुम्हारे मुख पर गुलाल मल दूँगी। इस प्रकार हे कृष्ण, तुम्हें आज अपना दास बनाकर मैं तुम पर अपना तन-मन समर्पित कर दूँगी।

—(१७५ से १७८)

एक ओर गोपी कृष्ण के साथ होली खेलकर उन्हीं के रंग में रंग जाना चाहती है। स्वयं को उन पर न्यौछावर कर देना चाहती है तो दूसरी ओर राधा पुनः सोच में पड़ी है कि श्याम से पुनः होली कैसे खेली जाये। एक बार तो उन्होंने मुँह पर रंग भरी पिचकारी मार कर चोली तक तंग कर दी थी और.........। वह इन्हीं विचारों में डूबी खड़ी थी कि उसकी एक सखी ने आकर बताया कि कृष्ण कुछ अन्य गोपियों के साथ होली खेल रहे हैं। मैं वहीं शीश पर दधि की मटकी रखे खड़ी उनका फाग खेलना देख रही थी कि उन्होंने मेरी मटकी फोड़ दी। फिर मटकी की मटकी फोरी और ऊपर से उन्होंने मेरे साथ बरजोरी करके मेरे मुख पर गुलाल भी मल दिया तथा मेरा हाथ मरोड़ कर उन्होंने मेरे गले का हार तोड़ दिया। इस प्रकार हे सखि, उन्होंने मेरे साथ बड़ी कुचालें की हैं।—(१७९, १८०)

गोपी द्वारा कृष्ण की कुचालें सुनकर राधा ने निर्णय किया कि अच्छा है, जब कल वह होली खेलने आयेंगे तो हम सब मिलकर उनको अच्छी तरह बनायेंगे। अतः दूसरे दिन जब श्याम फाग खेलने आये तो गोपियों ने मिलकर तय किया कि चलो आज प्रत्येक मटके में रंग-बिरंगे केसर के रंग घोल डालें और कृष्ण को आंगन के बीच घेरकर खूब झकझोर-झकझोर कर रंग से रंग दें। उनका पीताम्बर छीनकर उसकी जगह उन्हें साड़ी पिन्हा दें। फिर जब वह हाथ जोड़कर विनती करने लगें तब उन्हें छोड़ें; क्योंकि जब हम दधि बेचने वृन्दावन जाती थीं तो यही कृष्ण अपने साथियों को इकट्ठे कर जबरदस्ती हमारा मार्ग रोक लेते थे। अतः आज तो हम इनकी हरे बांस की बाँसुरी भी तोड़-मरोड़ कर फेंक देंगी। इस प्रकार गोपियाँ आपस में कृष्ण को सम्बोधित करके कह ही रही थीं कि किसी गोपी ने बीच में ही टोकते हुए कहा—देखो तो वह कृष्ण अब कैसे भोले-भाले बने बैठे हैं—जैसे कुछ जानते ही न हों। इस पर अन्य गोपियों ने कहा—कृष्ण कुछ जानते हों चाहे न हों परन्तु फागुन तो बड़े भाग्य से आया है अतः श्याम के साथ होली खेली ही जाये। यह निश्चय कर सब गोपियों ने दौड़कर कृष्ण को घेर लिया और उनकी बाँह पकड़ कर उन्हें केसर रंग से ऊपर से नीचे तक रंग दिया। साथ ही व्यंग कसते हुए सबने कहा—अब बुलाओ अपने नंदबाबा और यशोदा को तथा अपने दाऊ को, आकर तुम्हें छुड़ा लें। जिनकी तुम सदैव हमें ठसक दिखाया करते थे।

—(१८१, १८२)

कृष्ण को रंग-बिरंगे रंग में रंग, गोपियों ने अब राधा को बनाने की सोची। अतः वे एक-दूसरे से राधा की ओर संकेत करती हुई कहने लगीं—हे सखि, राधा ! के ऊपर किसने रंग भरी पिचकारी मार दी ? खैर जिसने भी मारी

हो, उसका नाम मुझे न बताना—नहीं तो गालियाँ दूँगी। यह सुनते ही दूसरी सखी ने कहा—यशोदा के पुत्र कृष्ण ने राधा के ऊपर पिचकारी चलाई है। इतने में ही तीसरी गोपी राधा को और भी चिढ़ाने के लिये कह उठी—राधा! आज तो हमारी ही रंग है। आज मैं बड़ी सौभाग्यवती हूँ कि कृष्ण ने मेरे यहाँ भोजन किया। अतः इस प्रसन्नता में बताओ, मैं किसके नाम पर हरी-पीली चूड़ियाँ पहनूँ तथा किसके नाम पर नथ-दुलरी व रंगीली चुनरी पहनूँ? अच्छा तो लो, मैं श्याम के नाम पर चूड़ियाँ तथा तुम्हारे नाम पर नथ-दुलरी व रंगीली चूनरी पहने लेती हूँ।—(१८३ से १८५)

इस प्रकार आपस में हँसी-ठठोली कर होली का अन्त मनाने के लिये राधा एवं उनकी सहेलियों ने एक बार पुनः कृष्ण एवं उनके सखाओं से मिलकर खूब होली खेली और होली के रंग में रंग वे सब एक-दूसरे का रूप धारण कर नाचते-गाते, हर्ष मनाते नन्द भवन गये। राधा को माधव और माधव को राधा रूप में देख यशोदा आश्चर्य चकित हो उठीं! और फिर उन्होंने हर्षित हो तत्काल स्वर्ण कंकण मँगा कर राधा को होली के उपहार स्वरूप भेंट किया।
—(१८६)

कृष्ण मथुरा गमन—कृष्ण जब गोकुल वासियों को छोड़कर मथुरा जाने लगे तो वहाँ के नर-नारी उनके प्रेम के वशीभूत हो, भावी वियोग-वेदना का विचार कर विह्वल हो उठे। गोपियाँ कहने लगीं—हे कृष्ण! तुम मथुरा न जाओ। अपना रथ वापस कर लो। तुम्हारे विलग होने से हम सब तड़प रहे हैं। हम सब की कौन, तुम्हारे विछोह से तुम्हारी ये गायें और बछड़े भी दुःखी हो रहे हैं। बताओ प्रभु, अब पुनः कब तुम्हारे दर्शन होंगे? गोपियों के इतना विनय करने पर भी जब कृष्ण का रथ उन्हें पीछे छोड़कर दूर—बहुत दूर निकल गया तो वे आपस में कहने लगीं—हे सखि! अब तो श्याम का रथ बहुत दूर निकल गया। बताओ, हम सब क्या करें? यदि हमें उनके मथुरा जाने की तनिक भी खबर पहले मिली होती तो हम उनके रथ के आगे ही आकर पड़ रहतीं। चाहे फिर हमें अपने जीवन से हाथ ही क्यों न धोना पड़ता, लेकिन उन्हें एक बार मथुरा जाने से रोक अवश्य लेतीं। परन्तु अब हम कर ही क्या सकती हैं? अब तो साँवरिया का रथ बहुत दूर पहुँच मया।—(१८७, १८८)

कुब्जा पर कृपा, कंस बध और उग्रसेन को राज्य—गोपियाँ आपस में कहती हैं कि कृष्ण मथुरा पहुँचे तो पहली घटना यही घटित हुई कि असुर कंस की दासी कुबरी कुब्जा उन्हें भा गई। जो सदैव यमुना तट पर चंदन लगाये बैठी रहती थी तथा जिसे देखते ही हँसी आती थी। हे सखि—उसी

को श्याम ने एक दिन उचक कर ऐसी लात मारी कि उसका कुबड़ापन दूर हो गया और वह एक सुन्दर नारी बन गई।—(१८९) इसके बाद गोपाल ने असुर कंस का बधकर उग्रसेन को मथुरा का राजा बनाकर उनका राजतिलक कर दिया, जिससे उनके वंश की श्रीवृद्धि हो सके।—(१९०)

गोपी विरह—कृष्ण के मथुरा जाते ही गोपियों के साथ राधा भी उनके विरह सागर में डूबने लगीं। वे कहतीं—हे कृष्ण, तुम तो हम सब को छोड़कर मथुरा नगरी जा बसे, लेकिन यहाँ तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करते-करते हम सब की सारी उम्र ही बीत चली। हे प्रभु, तनिक गोकुल नगरी भी आओ। दिन-रात तुम्हीं में हम सब का ध्यान लगा रहता है। तुमने यहाँ से जाते समय वादा किया था कि हम शीघ्र ही मथुरा से वापस आ जायेंगे, लेकिन प्रतीक्षा करते-करते तो वर्षों बीत गये और तुम अब भी न आये। यह हमारा यौवन चार दिनों का है, क्षणिक है। इस समय आम, सरसों और टेसू फूल गये हैं, अतः अब तो तुम आओ। नहीं तो इस बहार के बीत जाने पर तुम आकर के ही क्या करोगे? हे प्रिय—अब तो सावन भी आ गया। बाग में काली कोयल उड़-उड़कर कूज रही है। पपीहा भी डाल-डाल पर बोल कर शोर मचा रहा है। लेकिन मुझे तुम्हारे बिना वृन्दावन में चैन नहीं। एक बार ही तुम यहाँ आ जाते और हमें अपनी मधुर बंशी बजाकर सुना जाते, जैसे कि पहले बजा-बजाकर सुनाया करते थे।

हे प्रियतम! तुम मुझ अपनी प्यारी राधा को भी, जिसके गोरे-गोरे हाथ और लम्बे-लम्बे केश तुम्हें इतने प्रिय थे, यहीं छोड़कर कुबरी कुब्जा के देश जा बसे। बताओ, तुम्हारी राधा ऐसी कहाँ नीम पर चढ़कर कड़ुई हो गई थी जो उसे इस प्रकार निराश्रित छोड़कर मथुरा चले गये? अतः हे श्याम, अब तो घर आओ। वर्षा ऋतु आ गई। काले-कजरारे मेघ उमड़-उमड़ कर बिजली चमका रहे हैं। दादुर, मोर और पपीहे मतवाले होकर कूज रहे हैं। इन्हीं के साथ काली कोयल भी अपना राग छेड़ रही है। ऐसे में ही नन्ही-नन्ही बूँदें पड़ने लगीं। देखो तो मेरी पंचरंगी साड़ी भी भींग गई। तुम्हीं बताओ, ऐसी उमड़ती यमुना को पारकर यदि तुम्हारे पास मैं आना भी चाहूँ तो कैसे आऊँ? तुम तो वहाँ जाकर हमारी सुधि भी लेना भूल गये। हे प्रिय, तुम्हारे दर्शन न पाने से मेरे ये दोनों नेत्र पागल से हो रहे हैं। इनमें सावन की घटा सदृश अश्रु उमड़ आये हैं, जो बंद होने का नाम ही नहीं लेते। तुम्हीं बताओ—मैं हृदय को किस प्रकार धीरज बँधाऊँ? यहाँ तो कोई यह भी नहीं बताता कि तुम कब आ रहे हो। सावन के बादलों की उमड़ती हुई घनघोर घटा देखकर नारियाँ हिंडोल गा

रही हैं। वन और बागों में पपीहे एवं मोर कूज-कूजकर एक निराला ही वातावरण प्रस्तुत कर रहे हैं। लेकिन तुम्हारी यह अभागिन राधा, वह तो घर में बैठी तुम्हारे बिना रो रही है। उसे कौन समझाये, कौन धैर्य बँधाये ? व्याकुलता बढ़ती जा रही है और मैं विवश हो, मन मसोस कर रह जाती हूँ। अतः हे कृष्ण, अब तो मैं घर छोड़कर वैरागिन होने जा रही हूँ। बार-बार बिजली के कड़कने और मूसलाधार वृष्टि होने से मुझे भय लग रहा है (राधा अब बिजली को ही सम्बोधित करके कहती है)। अतः हे बिजली—जा, तू उस मधुवन में चमक जहाँ मेरे प्रियतम नंदलाल सो रहे हैं। अब तो वह ऐसे कठोर हो गये हैं कि जब से मथुरा गये—उन्होंने मुझे स्मरण तक न किया। और एक मैं हूँ कि मैंने उन्हें सर्वत्र ढूँढ़ डाला परन्तु वह कहीं न मिले। —(१९०–१९७)

हे सखि ललिता ! तू ही मेरे प्यारे प्रियतम कृष्ण को ढूँढ़ ला। इन विरहपूर्ण शब्दों को सुनकर ललिता ने विक्षिप्ता राधा को धैर्य बँधाने के लिये कहा—राधा ! मैं तो जब भी देखती हूँ कृष्ण कभी मुझे यमुना तट पर गायें चराते हुए दिखाई पड़ते हैं तो कभी कदम्ब वृक्ष की छाया तले बैठे मुरली बजाते हुए दिखाई देते हैं। तो कभी……। इतना सुनते ही राधा ने कहा—हाँ सखि, वही तो मेरा साँवला-सलोना श्याम है। राधा की ऐसी दयनीय दशा देखकर ललिता ने अपनी अन्य कृष्ण विरहिणी सखियों को बताया कि राधा तो श्याम के विरह में सूखकर काँटा हो गई है। और जब कभी वह महल पर चढ़ती है तो अटारी से सिर फोड़ते हुए ही नीचे उतरती है। कहती है—हे सखि ! मुझे तो श्याम के बिना कहीं भी चैन नहीं। आज रात स्वप्न में उनसे मेरा मिलन हुआ परन्तु हे सखि, स्वप्न में मिले मन-मोहन की बातें तुमको बताते हुए भी लज्जा आ रही है। कैसे कहूँ कि आज नंदलाल श्रृंगार किये हुए मुझसे स्वप्न में मिले। उन्होंने मुझे अपने गले लगाकर हँस-हँसकर बातें कीं और जब मैं रात्रि में पलंग पर उनके संग सोई तो उनकी वैरन वंशी ने बजकर मेरी नींद खराब कर दी। आँखे खुली तो उस छलिया ने फिर मुझे दर्शन न दिये। अतः अब तो एक-एक पल उनके बिना एक-एक वर्ष के बराबर मेरे लिये हो रहा हैं।—(१९९, २००, २०१)

राधा की श्याम बिन कैसी अवस्था है, यह तो ललिता ने सबको बता दिया परन्तु विरहिणी गोपियों की कौन कहे और कौन सुने। वे तो श्याम विरह में उदास, पीतवर्णा हो नित्य यही कहा करती हैं—हे श्याम ! तुम्हारे बिना तुम्हारे ब्रज की हम गोपियाँ व्याकुल हैं। एक बार तो हमारे घर आकर तुम बंशी बजा जाते, फिर ऐसा नहीं कि हम ही तुम्हारे लिए व्याकुल हों। वृन्दावन

के गोप-ग्वाल भी यही चाहते हैं कि तुम यहाँ आकर उनके संग एक बार गोचारण को चलते। कहाँ तक कहूँ मेरे गोपाल—मधुवन, बंशीवट और यहाँ तक कि समस्त ब्रज की गोपियाँ यही कहती हैं कि एक बार तुम आकर हम सबके माखन चुराकर खाते, कदम्ब वृक्ष पर चीर चुराकर भागते और शरद पूणिमा को यमुना तट पर एक बार पुनः रास रचा जाते। हम सब के चितचोर कन्हैया, हमें तो केवल तुम्हारी ही आशा है। हमारे साथ तुम्हारे ये साथी ग्वाल-बाल भी तुम्हें बुलाते हुए कहते हैं कि मेरे कन्हैया, तुम जल्दी से आकर हम सब के साथ धेनु चराने चलो।—(२०२, २०३, २०४) लेकिन गोपाल, तुम हमारी प्रार्थना को सुनोगे ही क्यों? इससे अच्छा तो यही था कि हम वन के मोर ही हो गई होतीं। यमुना तट पर रहतीं, वन-कुंजों में बिना किसी चिन्ता के कल्लोल करतीं और मतवाली हो, जंगल के बीच नृत्य तो करतीं। फिर हमारे उड़ने से जो पंख भूमि पर गिरते, उन्हें ब्रज के लोग बीनते और उनका मुकुट बनाकर तुम्हें पहिनाते। हे कृष्ण, इस प्रकार हम तुम्हारा संयोग सुख पाने से वंचित तो न रहतीं। लेकिन हे सखि, मथुरा जाकर श्याम हमें भूल गये तो इसमें उन्हीं का दोष नहीं। कुबरी कुब्जा ने ही जादू-टोना आदि करके उन्हें अपने वश में कर लिया है। जिसके कारण हम कुलवंती स्त्रियों को छोड़कर वे उसकी ओर आकृष्ट हो गये हैं। लेकिन कुछ भी हो, अंत में श्याम हमारे ही हैं। यदि वह प्रत्यक्ष रूप में हमारे सामने नहीं आते तो क्या····। स्वप्न में तो हमारे पास वह आते ही हैं। आज के ही स्वप्न की बात मैं तुम्हें बताऊँ, रात गोपाल मेरे घर आये। मैंने उन्हें विधिवत् भोजन परसा और कहा—तुम भोजन करो, मै तुम्हें अपने अंचल से हवा करती हूँ। उन्होंने भोजन किया और फिर सोने के लिये ऊपर अटारी की ओर चले गये। मैं भी भोजन कर उन्हीं के पास उनके गले में हाथ डालकर सो गई। सोने को तो साथ ही सो गई लेकिन जब प्रातः उठी तो उन्हें अपने पास न पाया। तब मन में विचार उठा कि हे प्रभु यदि मैं तुम्हें ऐसा धोखेबाज जानती होती तो अपने आंगन में खजूर का एक वृक्ष लगाती और फिर उसी पर चढ़कर तुम्हें खोजती कि तुम कहाँ चले गये।

—(२०५, २०६, २०७)

गोपी-उद्धव संवाद—गोपियों को कृष्ण की विरहाग्नि से बचाने के लिये उद्धव मथुरा से कृष्ण का संदेश लेकर ब्रज आये। परन्तु उन्हें गोपियों को धैर्य बँधाने की कौन कहे, वह स्वयं ही उनकी विरह-व्यथा सुनकर अपना धैर्य खो बैठे। गोपियाँ उन्हें अपने पास पाकर अपना समस्त दुःख-दर्द उन्हें सुनाते हुए कहने लगीं—हे उद्धव! हम सब मे ऐसी कौन-सी कमी थी कि कृष्ण ने मथुरा पहुँचते ही हम सब को विस्मृति के गर्त में डाल दिया? इन्हीं गलियों

में कभी हम उन्हीं गोपाल के साथ खेले थे, और आज हम यहाँ उनके दर्शन बिना अकेले फिर रहे हैं। क्या हमारे लिये अब यही उचित था कि वह तो वहाँ कुब्जा के साथ भोग-विलास में लिप्त रहें और हमें योग-साधन करने के लिये पत्र लिख-लिखकर भेजें ? तुम्हीं बताओ, क्या यह उचित है कि अपने जिन बालों में हमने सुगन्धित तेल आदि डाले थे—आज उन्हें रूखे-सूखे रखकर जटा-जूट की तरह बढ़ायें ? फिर हम गोपियों से ऐसी कौन सी चूक हो गई थी जो कृष्ण हमें छोड़कर चले गये ? यदि आज मैं गोपी न होकर कहीं मानिक-मोती होती तो उनके मुकुट में जड़ी रहती और इस तरह सदैव उनके पास तो रहती। या फिर यदि मैं कहीं मोर का पंख या हरे बाँस की बाँसुरी होतीतो कृष्ण मुझे शीश पर धारण करते अथवा वह मुझे अपने अधर पर रखकर दिन-रात बजाते तो। फलस्वरूप मैं उनका संयोग सुख प्राप्त करती। लेकिन अब हम गोपी होकर क्या करें ? ठीक भी है। काले रंग वालों का भरोसा ही क्या ? ये सब अपने-अपने मतलब के साथी होते हैं। हमने इन काले रंग वालों को खूब देखा है। कोयल, कौआ और भ्रमर—तीनों ही अति काले होने पर भी देखने में तो भले प्रतीत होते हैं, पर वास्तव में होते हैं पूरे खुदगर्ज। अपना मतलब सधा कि फिर जाकर लौटने का नाम नहीं लेते। और यही दशा कृष्ण की है। उन्हें अनजाने में कागा के सुत की तरह हम सबने पाला, बड़ा किया और जब वह कुछ समझने लगे, हमारे कुछ काम आने लायक हुए तो कोयल निकले। हम सब को छोड़कर मथुरा जा बसे। अतः हे उद्धव, अब हमारी जीवन रूपी नौका को कौन पार लगायेगा ?—(२०८, २०९, २१०)

गोपियों की विरह-व्यथा सुनकर उद्धव पुनः जब उन्हें ज्ञानोपदेश देने लगे तो बीच में ही उन्हें टोकते हुए गोपियों ने कहा—हे उद्धव, जो कुछ भी तुमने अभी कहा है—उसे पुनः मत कहो, उसे दुहराओ मत। जब हम अपने शरीर को उनकी विरहाग्नि में जलाकर भस्म कर देगीं, तब तुम आकर उस मसान को जगाना, उद्बोधित करना। और यदि कृष्ण हमें जीवित देखना चाहें तो तुम अब बिल्कुल चुप रहना हम गोपियाँ अब गोपाल के बिना अपने प्राणों को त्यागने जा रही हैं। अतः इसके लिये तुम हमें दोषी मत ठहराना। वरन् हरि से ही जाकर कहना कि उन्होंने हमसे जी भरकर वैर ठाना है। आप तो स्वयं कुब्जा के साथ रास-क्रीड़ा करते है, और हमें संदेश भेजते हैं योग धारण करने के लिए। अतः अब तो एक ही उपाय है—या तो तुम हमको कृष्ण के पास ले चलो, उनसे हमें मिला दो, और नहीं तो हम गोपियाँ काशी जाकर करवट ले लेगीं। लेकिन इतने पर भी तुम कहते हो कि हम गोपाल को पत्र लिखें कि वह यहाँ चले आएँ। हे उद्धव ! हम उन्हें पत्र भी लिखें तो कैसे

लिखें ? जब हम पत्र लिखने लगती हैं तो दुःखित हृदय के कारण हाथों के कंपने और नेत्रों से अश्रु प्रवाहित होने से जो कुछ लिखा भी रहता है वह भी सिमट जाता है। इस विवशता के कारण हृदय फट जाता है। और फिर यही भावना मन में उठती है कि जब हम सबके समस्त हाड-मांस और रक्त सूख जायेंगे तभी कृष्ण सम्भवतः यहाँ आकर हमें दर्शन देंगे या खोजेंगे।

अतः हे उद्धव ! अब तुम्हीं कृष्ण के पास जाकर उन्हें समझाना कि वह हमें तो जोग की पाती लिख-लिखकर भेजते हैं और आप स्वयं वहाँ मेरी सवतों में बैठे मौज उड़ाते हैं। क्या उन्हें तुम्हारे द्वारा सन्देश भेजते समय शर्म न आई ? यह न सोचा कि उनके (कृष्ण सरीखे पति) रहते हुए हम कैसे शरीर में भस्म लगाएँगी ? हे उद्धव ! हृदय में बड़ी घबराहट हो रही है। अतः तुम शीघ्र ही जाकर उन्हें लिवा लाओ। उनके बिना सब कुछ फीका है। यहाँ तक कि यमुना के जल में भी अब कोई स्वाद नहीं रहा और ब्रज-मण्डल, वह तो देखा भी नहीं जाता। फिर कुछ खाने-पीने की कौन कहे। तुम उनसे जाकर मेरी ओर से यही प्रार्थना करते हुए कहना कि राधा कह रही थी कि गोपाल तुम शीघ्र ही आकर हम सबको दर्शन दो और हमारी सुधि लो।—(२११, २१२, २१३)

कृष्ण द्वारिका गमन—कृष्ण के द्वारिका गमन करने पर समस्त ब्रज-मण्डल वासी उनके विरह सागर में डूब गये। उनकी दशा अवर्णनीय हो चली। वे केवल कृष्ण का दर्शन मात्र पाने के लिये व्यग्र हो उठे। गायें और बछड़े उनके (कृष्ण के) बिना प्यासी तड़पने लगीं। गोपियाँ रास-लीला का स्मरण कर यत्र-तत्र विलपती डोलने लगीं। आये दिन ब्रज में नित्य ही अकाल पड़ने लगा। अतः वहाँ के निवासी कृष्ण से एक बार ब्रज आकर दर्शन दे जाने की प्रार्थना करने लगे।—(२१४)

कृष्ण प्रिया वियोगिनी राधा कहतीं—हे गोपाल ! तुम्हारी यह राधा अब तो योगिन होने जा रही है। तुम्हारी स्नेह रूपी गहरी नदी के विरह भँवर में पड़ी मेरी जीर्ण-शीर्ण जीवन नौका अब फँस गई है। तुम्हीं ने एक बार खेकर जैसे इस नदी में इसे उतारा था वैसे ही अब इसे पार भी लगाओ। नहीं तो यह बहकर न जाने कहाँ चली जायेगी। हे कृष्ण—देखो, तुम्हारी राधा कदम्ब वृक्ष के नीचे खड़ी-खड़ी रो रही है। उसके केश चिकट गये हैं। उसने अपने समस्त अंग में भभूत लगाकर मृगछाला और हाथ में माला धारण कर ली है। क्या इतने पर भी तुम अपनी राधा को दर्शन न दोगे ? हे प्रिय, हमारा स्नेह बन्धन तोड़कर तुमने अब जो कुब्जा से प्रीति डोर बाँध ली है, वह कब तक निबह सकेगी ?—(२१५)

रुक्मिणी परिणय—रुक्मिणी ने कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिये अनेक व्रत और पूजा-पाठ किये। वह हृदय में कृष्ण का निवास होने के कारण उमड़ी हुई काली घटा को श्याम के अनुरूप समझकर नित्य-प्रति प्रातः उठकर प्रणाम करती तो कभी स्वयं ही श्याम की तरह अपना शृंगार कर शिव की पूजा करती। उसने कृष्ण को प्राप्त करने के लिये अनेक मन्दिर बनाये तथा तुलसी स्थान स्थापित किया। वह अन्न और जल को त्याग कर केवल तुलसीदल और गंगाजल के ऊपर निर्वाह करते हुए भूमि पर शयन करती।—(२१६)

जब रुक्मिणी के माता-पिता ने उसे विवाह के योग्य देखा तो अपने बड़े पुत्र रुक्मी को बुलाकर कहा—कुँवर! रुक्मिणी अब विवाह के योग्य हो गई है, अतः उसका विवाह कर देना चाहिए। राजा ने पण्डित बुलाकर लगुन शोध कराई और लग्न पत्रिका लिखाकर द्वारिकावासी कृष्ण के पास भेज दी। यह समाचार जब रुक्मी को ज्ञात हुआ तो वह लाल-पीली आँखें किये पिता के पास आ पहुँचा और कहने लगा—"पिताजी! आपकी बुद्धि किसने हर ली? समस्त संसार जानता है कि वह द्वारिकावासी कृष्ण ग्वाला और गंवार है। उसे किसी प्रकार की लज्जा या शर्म नहीं और न उसका कोई कुल है। वह तो काली कमरी ओढ़े यत्र-तत्र घूमता रहता है। उसे आपने कैसे लग्न-पत्रिका भेज दी? चेदिरी नरेश शिशुपाल को संसार भली प्रकार जानता है। अतः आप फिर से लग्न-पत्रिका लिखाकर शिशुपाल को भेजें, जिससे संसार में हमारी कीर्ति हो। यह बात हमने भली प्रकार विचार ली है।"

पण्डित के द्वारा पुनः लगुन लिखाकर नाई के हाथों शिशुपाल के पास भेजी गई। जब वह उसे लेकर शिशुपाल के सम्मुख पहुँचा तो लग्न-पत्रिका देते समय उसका हाथ कांप उठा, तथा उसके सिर की पगड़ी भूमि पर गिर पड़ी। रुक्मिणी से अपने वैवाहिक सम्बन्ध के स्थापित होने की सूचना पाकर शिशुपाल ने अपने समस्त सम्बन्धियों को आमन्त्रित किया। ज्यौनार हुआ और फिर घर से बारात लेकर निकलते समय शिशुपाल ने हर्षित हो सबको मुहरें बटवाईं। बारात कुन्दनपुर की ओर चल पड़ी। हृदय से सभी बाराती यह चाहते थे कि शिशुपाल कृष्ण के विरुद्ध अपनी बारात लेकर न चले। अतः प्रकट रूप में सबने मिलकर शिशुपाल से कहा—"शिशुपाल! तुम बारात लेकर कुंदनपुर न चलो। यदि कहीं यादव राज कृष्ण ने सुन लिया तो वह उसी समय वहाँ आकर तुम्हारा ब्याह न होने देगा।"……लेकिन शिशुपाल न माने और बड़े साज-बाज के साथ विदर्भ राज्य की ओर चल पड़े।—(२१९)

कृष्ण को पति रूप में वरण करने के लिये त्याग, तपस्या, व्रत और पूजा का अवलम्बन लेने वाली रुक्मिणी को जब यह ज्ञात हुआ कि शिशुपाल मुझसे

विवाह करने के लिये, मेरे भाई के आमन्त्रण पर सदल चला आ रहा है तो उसने पैजमिश्र ब्राह्मण द्वारा कृष्ण के पास सन्देश भेजा कि —"हे रंगीली घोड़ा वाले कृष्ण, तुम शीघ्र ही कुन्दनपुर आ जाओ। मेरे बाबा ने तुम्हें बुलाया है। लेकिन शिशुपाल भी दलबल सहित यहाँ आ पहुँचा है।"—(२१०)

रुक्मिणी का सन्देश पाकर कृष्ण उस ब्राह्मण के साथ रथ पर बैठ कुन्दनपुर चल पड़े। द्वारिका से बहुत दूर निकल आने पर ब्राह्मण ने कृष्ण की अनन्त शक्ति का आभास पाने के लिये द्वारिका में छूटी अपनी धोती को प्राप्त करने के बहाने कृष्ण से कहा—कृष्ण ! हम लोग बहुत दूर आ गये लेकिन मेरी धोती तो द्वारिका में ही रह गई है अतः या तो तुम रथ को वहाँ वापस ले चलो या फिर किसी से मेरा उस धोती को मँगवा दो। नहीं तो मेरे प्राण निकल जायेंगे। यह सुनकर कृष्ण ने कहा—हे ब्राह्मण ! चलो तुम्हें दूसरी नई ले देगें। वह तो तुम्हारी फटी-पुरानी थी। क्योंकि यदि एक बार द्वारिका लौटकर फिर कुंदनपुर चलेंगे तो आते-जाते ही बहुत देर हो जायेगी और तब तक असुर शिशुपाल रुक्मिणी को विवाह कर चला भी जायेगा। यह सुनकर पैंजमिश्र ने जिद ठान ली और कहा—हे कृष्ण ! मुझे तुम्हारा धन-दौलत या पीताम्बर नहीं चाहिए और न पक्की किनारी या लम्बे पाट की धोती ही। मुझे तो वही फटी धोती चाहिए। उसे तुम या तो मँगवा दो या फिर अपना रथ ही द्वारिका लौटा कर ले चलो। ब्राह्मण की ऐसी हठ देखकर अनन्त शक्ति वाले कृष्ण ने अपनी भुजा बढ़ा दी। जिस पर ब्राह्मण ने अपनी सूखती हुई धोती देखी तो वह कृष्ण की असीम शक्ति का आभास पाकर हर्षित हो उठा।—(२१८)

कुन्दनपुर पहुँचने पर जैसे ही कृष्ण ने शिशुपाल की बारात के आने और बाजों के बजने की आहट पाई, वह उसके दल पर बाणों की वर्षा करने लगे। इधर दुःखित रुक्मिणी देवी के मन्दिर में आकर आराधना करने लगी। देवी ने जब देखा कि रुक्मिणी अपने प्राण तजने वाली है तो उन्होंने उसका हाथ पकड़ कर कहा—रुक्मिणी ! तू क्यों अपने प्राण तज रही है ? कृष्ण ने जब रुक्मिणी के देवी मन्दिर तक आने की बात सुनी तो उन्होंने अपना रथ उसी तरफ घुमा दिया। वहाँ पहुचकर उन्होंने रुक्मिणी की बाँह पकड़कर उसे अपने रथ में बैठा लिया और द्वारिका की ओर चल पड़े। रुक्मी को जब यह सब ज्ञात हुआ तो वह शिशुपाल के पास जाकर प्रार्थना करने लगा—हे शिशुपाल ! यह यादव पति तो यहाँ आकर हमारी और तुम्हारी—दोनों की नाक काट गया। अब तो हम दोनों के कुल की हानि हुई।—(२१९)

इधर कृष्ण रुक्मिणी को लेकर द्वारिका जा पहुँचे। वहाँ की स्त्रियां रानी रुक्मिणी को देखने उमड़ पड़ीं। वह उनकी अनुपम रूप-राशि को देखकर चकित

हो रुक्मिणी से पूछतीं—रानी रुक्मिणी ! तुम्हें ये लम्बे-लम्बे केश, बड़े-बड़े नेत्र, यह तोते जैसी नाक, पान जैसे पतले ओष्ठ और यह सुन्दर गौरवर्ण का लचलचा शरीर कैसे प्राप्त हुए ? यह प्रश्न सुनकर सुहागिन रुक्मिणी ने बताया कि मेरी माँ ने मेरे बालों को दूध से पखारा है, आँखों में काजल आँजे हैं, और शरीर में उबटन लगाये हैं—इसी कारण मेरे लम्बे-लम्बे केश हैं, बड़ी-बड़ी आँखे हैं तथा सुन्दर गोरा रंग है । फिर मेरी माँ ने सुआ पाले थे, पान खाये थे और केले के पेड़ सींचे थे—इसी कारण मेरी सुआ सारी नाक है, पान जैसे पतले-पतले होठ हैं और लचलचा शरीर है ।—(२२०)

रुक्मिणी-पारिवारिक जीवन—परिवार में रहते हुए रुक्मिणी का समय हर्षोल्लास में बीतने लगा । इसी बीच संयोग वश एक दिन प्रातःकाल यशोदा ने कृष्ण के लिये रुक्मिणी से दातुन माँगी । एक बार माँगा, दो बार माँगा, तीन बार माँगा परन्तु गर्वीली रुक्मिणी ने कोई उत्तर न दिया । तो यशोदा ने कृष्ण से कहा—हे बेटा कृष्ण ! मैं गंगाजल भरकर चोखेजार की दातुन ले आऊं, तुम दातुन कर लो, मेरा तो दातुन करने का समय बीत चला । यह सुनकर कृष्ण ने कहा—हे माँ ! यदि तुम कहो तो मैं रुक्मिणी को घर से निकाल दूँ या कहो तो इसे इसके मायके भेज आऊं । बह सुनकर यशोदा ने उत्तर दिया—हे बेटा ! तुम इसे क्यों निकालते हो या मायके भेजते हो । यह तो पुत्र को जन्म देगी, जिससे तुम्हारे पिता का नाम चलेगा या पुत्री जनेगी, जिससे किसी गाँव से हमारा सम्बन्ध जुड़ेगा । माता यशोदा की इस प्रकार व्यंगपूर्ण बातें सुनते ही कृष्ण ने रुक्मिणी से कहा—रुक्मिणी ! तुम सोलहों श्रृंगार क्यों नहीं करतीं ? तुम्हारे भाई तुम्हें लिवाने के लिये आये हैं । यह सुनकर रुक्मिणी ने पूछा कि हे हरि जी ! कौन हमें लिवाने के लिये आया है और कौन छेता रख गया हैं ? फिर हे कृष्ण, मैं पीहर जाकर क्या करूँगी ? न वहाँ पर किसी का ब्याह है, और न सगाई ही ? यह सुनते ही कृष्ण ने कहा—हे रुक्मिणी ! तुम्हारे पीछे जो पुत्र हुआ था उसी का विवाह हो रहा है । इतना कहकर कृष्ण ने कहारों को आदेश दिया कि वे डोली लेकर तैयार हो जायें, रानी रुक्मिणी अपने पिता के घर जायेंगी ।

इस प्रकार रुक्मणी डोली चढ़ अपने पिता के घर जा पहुँची । इधर द्वारिका में संध्या हुई, अन्धकार छाने लगा । कृष्ण रुक्मिणी की स्मृति में विकल हो देहरी पर आ बैठे और माता यशोदा से पूछने लगे—हे माँ ! किस कारण प्रातः अन्धकारपूर्ण और बालक उदासमना रहते हैं ? माता ने बताया—हे बेटा कृष्ण ! पुत्र या पुत्री के बिना जीवन रूपी प्रभात अन्धकारपूर्ण लगता है

तथा बिना माँ के बच्चे दुःखी रहा करते हैं। यशोदा ने कृष्ण की ऐसी मनः स्थिति देखकर कहारों को आदेश दिया कि वे पालकी तैयार करें, कृष्ण रुक्मिणी को बुलाने जा रहे हैं। कृष्ण जी पचासों कोस जाने के बाद रुक्मिणी के पिता के घर जा पहुँचे। रुक्मिणी इस समय अपनी ताई और चाची के बीच बैठी थीं। अतः कृष्ण ने अपने आगमन का संदेश भेजा तो रुक्मिणी की ताई, चाची ने कहा—रुक्मिणी उठकर शृंगार क्यों नहीं करतीं ? तुम्हारे लिवैया हरि जी आये हुए हैं। यह सुनकर दुःखिता रुक्मिणी ने कहा—हे चाची ! उनके रूठने पर मैं शृंगार करके क्या करूँ ? और फिर मुझ नौकरानी को कौन बुलाने आयेगा ? इन हृदय विदारक शब्दों को सुनकर कृष्ण ने कहा—हे रुक्मिणी ! हम दोनों की आत्मा एक है। हमने तो केवल माता यशोदा का मान रखा है।

—(२२१)

कृष्ण पुनः रुक्मिणी को विदा कराकर अपने घर लौटे। समय धीरे-धीरे बीतता रहा। इसी बीच एक दिन गर्भिणी रुक्मिणी अपनी ननद सुभद्रा के पास बैठी थीं कि सुभद्रा ने कहा—भाभी, यदि तुम्हारे पुत्र हो तो मुझे जगमोहन लुगरा देना। रानी रुक्मिणी ने सहर्ष अपनी ननद की बात मान ली। कुछ समय बाद सुभद्रा अपनी ससुराल चली गई। इसी बीच रुक्मिणी को पुत्र हुआ। बाजे-गाजे बजने लगे। लेकिन रानी रुक्मिणी कुछ चिन्ता में पड़ गई कि वह अपनी ननद से पुत्रजन्म की बात कैसे छिपायें—नहीं तो वह जगमोहन लुगरा माँगने लगेगी।

यशोदा ने पौत्र होते ही हरदी और चावल देकर नाई को शीघ्र ही कुन्दनपुर जाने के लिये कहा तो उसको जाते समय रुक्मिणी ने भी बुलाकर कहा—हे नाई ! तुम मेरे मायके जाकर मेरी माता से समझा कर कहना कि रुक्मिणी के पुत्र हुआ है। नाई रुचन लेकर द्वारिका से चल पड़ा। कुन्दनपुर पहुँचकर उसने देखा कि दरबार लगा हुआ है। राजा के पास उसके पुत्र बैठे हुए हैं। अतः उसने रुक्मिणी के पाँचों भाइयों का अभिवादन किया और लाये हुए रुचन को उन्हें तथा राजा को दिखाया, जिसे देखकर सब हर्ष से फूले न समाये। यह सुसमाचार रुक्मिणी के छोटे भाई ने सुना तो उसने पिता से आग्रह किया कि वह नाई को यह समाचार लाने के उपलक्ष में हाथी और घोड़े भेंट में दें। राजा अपने छोटे पुत्र के साथ भरे दरबार को छोड़कर महल के भीतर गये, जहाँ राजकुमार ने माता को बताया कि बहिन रुक्मिणी को पुत्र हुआ है और नाई रुचन लेकर आया है। अतः षट्रस भोजन बनाकर उसको भोजन कराओ और विविध वस्त्राभूषण उसे भेंट में दो। नाई को विदा करते समय राजा ने जगमोहन लुगरा लाकर उसे दिया और कहा कि तुम इसे

अपनी बगल में दबाकर ले जाना जिससे कोई देख न ले। यहाँ तक कि द्वारिका जाते समय मार्ग में सुभद्रा को भी न दिखाना। लेकिन नाई वहाँ से चलकर मार्ग में पड़ने वाले सुभद्रा के घर आकर रुका। सुभद्रा ने नाई से अपने पीहर का हाल चाल पूछा और बँधी गठरी को देकर उत्सुकता वश जानना चाहा कि वह क्या है ? नाई ने बताया कि तुम्हारे पीहर में सोहिले हो रहे हैं; बाजे बज रहे हैं। और मैं तो रुचन लेकर रुक्मिणी के पिता के घर गया था। रुक्मिणी के पुत्र-जन्म की बात ज्ञात कर सुभद्रा ने नाई का आदर स्वागत किया और उसकी गट्ठर में बँधी वस्तु को ज्ञात करने के लिये पुनः उत्सुकता प्रकट की, तो नाई ने कहा कि इसमें नहन्नी और उस्तरा बंधा है। अतः इसे देखकर क्या करोगी ? यह सुनकर सुभद्रा ने कहा—नाई हमसे झूठ क्यों बोलते हो। तुम्हारी बगल में तो जगमोहन लुगरा है। इसे हमसे क्यों छिपा रहे हो। दिखाते क्यों नहीं ? अब मैं तुम्हारे ही साथ द्वारिका चलूँगी। नाई ने समझाया कि तुम्हें लिवाने के लिये कृष्ण स्वयं ही आयेंगे। अतः तुम मेरे साथ न चलो, क्योंकि बिना बुलाये कहीं जाने पर आदर नहीं होता।

लेकिन सुभद्रा न मानीं और नाई के साथ ही द्वारिका जा पहुंची। चटसार में बैठे कृष्ण ने बहिन सुभद्रा को देखा तो हँसकर कहा—बहिन, भतीजे का सोहिल होता सुनकर तुम दौड़ी चली आईं। रुक्मिणी ने जब सुभद्रा के आगमन की बात सुनी तो जगमोहन लुगरा न देने के विचार से उन्होंने सुभद्रा को विविध वस्तुओं का प्रलोभन देकर और साथ ही बहाने बनाकर चाहा कि यह मायके की बहुमूल्य वस्तु उन्हें भेंट में न देनी पड़े। लेकिन सुभद्रा ने अपनी बदन के अनुसार अपनी भाभी से नेग के रूप में उनके मायके का जगमोहन-लुगरा ही माँगा। इस पर ननद-भावज में कहा-सुनी हो गई। और फिर नौबत यहाँ तक आई कि सुभद्रा को रो तक देना पड़ा। कृष्ण ने भी बहुत मनाना चाहा कि सुभद्रा कुछ और लेकर मान जाये परन्तु जब देखा कि सुभद्रा अब नहीं मानती तो उन्होंने रुक्मिणी को जगमोहन लुगरा दे देने के लिये विवश कर दिया। इस प्रकार अपना मनचाहा बहुमूल्य उपहार प्राप्त कर सुभद्रा हर्ष से फूली न समाई और भाभी तथा भतीजे को शुभाशीष देकर अपने घर लौट गई।—(२२५)

(एक अन्य लोकगीत में सुभद्रा रुक्मणी के पुत्रजन्म के अवसर पर ही वहाँ उपस्थित दिखाई गई हैं। यहाँ रुक्मिणी के मायके रुचन भेजने के बाद मालिन सुभद्रा से कहती है—सुभद्रा ! सातिये रखो, तुम्हारी भाभी के पुत्र हुआ है। सुभद्रा अपने भतीजे के होने और भाभी के चरुआ पर सातिये रखने के उपलब्ध में अपनी भाभी से नेग रूप में उनका कंगन माँगती हैं। लेकिन रुक्मिणी

अपने मायके का कंगन होने के कारण, प्रथम तो उसे न देकर अपने अन्य आभूषणों को देकर उन्हें प्रसन्न करना चाहती हैं। लेकिन सुभद्रा के उसी के लिये जिद ठान लेने पर रुक्मिणी अपने हाथ का कंगन उन्हें उतार कर दे देती हैं।—(२२४)

सुदामा दारिद्रय-भंजन—दारिद्रयपूर्ण जीवन यापन करते हुए एक दिन जब सुदामा द्वारा ही उनकी पत्नी को यह ज्ञात हुआ कि वह और कृष्ण एक ही साथ पढ़े हुए हैं तो उसने सुदामा को द्वारिकावासी कृष्ण के पास भेजने की जिद ठान ली। इस आशा से कि कृष्ण इनकी यह दयनीय दशा देखकर द्रवित हो जायेंगे और फिर कुछ-न-कुछ इनकी सहायता अवश्य करेंगे। अतः सुदामा को जब द्वारिका जाने के लिये उनकी पत्नी ने बहुत विवश किया तो उन्होंने अपनी दशा का उल्लेख करते हुए कहा—हे स्वामिन ! मुझे कृष्ण के पास मत भेज। मेरी पगड़ी और धोती फट गई है। पैर बिना जूते के हैं। अतः मैं वहाँ कैसे जाऊँगा ? फिर बहुत दिन हुए जब वह हमारे साथी थे। न जाने अब वह मुझे पहचान भी पायेंगे या नहीं।

इतनी विवशता व्यक्त करने पर भी जब उनकी पत्नी अपनी जिद पर अड़ी रही तो वह कृष्ण को भेंट देने के लिये मुट्ठी भर चावल कपड़े में बाँधकर द्वारिका की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँचते ही सुदामा ने कृष्ण के पास अपने आगमन की सूचना भेजी। मित्र सुदामा के आगमन की बात ज्ञात कर कृष्ण ने दूत भेजकर उन्हें महल में बुलवाया। विप्र सुदामा के भीतर आते ही कृष्ण उनसे गले मिले। और फिर उन्हें चन्दन की चौकी पर आदरपूर्वक बैठाया।·········सुदामा की दयनीय दशा देखकर कृष्ण द्रवीभूत हो गये, और फिर दान स्वरूप स्वर्ग तथा पाताल लोक का समस्त ऐश्वर्य उन्हें दे डाला। लेकिन जब कृष्ण मृत्यु लोक का वैभव सुदामा को देने लगे तो रुक्मिणी ने कृष्ण का हाथ पकड़ लिया।—(२२६)

राधा-कृष्ण विवाह—कृष्ण के विवाह योग्य होने एवं राधा से जुड़ी प्रीति डोर देखकर यशोदा ने वृषभानु के घर राधा के साथ कृष्ण के विवाह की बात चलाई तो राधा की माता ने यशोदा के पास उनके सन्देश के उत्तर में कहलवा भेजा कि मै अपनी राधा का विवाह कृष्ण से कैसे करूँ ? क्योंकि तुम्हारा कृष्ण तो काला है। उस पर से वह काली कमरी ओढ़े वृन्दावन की गलियों में सब की गायें चराता है तथा सब से दूध-दही छीन-छीनकर खाता फिरता है। अतः तुम्हीं बताओ, मेरी राधा का गुजारा उसके साथ कैसे हो सकेगा ? और तो और मेरी राधा सर्वसुन्दरी है—जैसे तारों में चन्द्रमा, और तुम्हारा कन्हैया,

वह तो काला है—जैसे अंधेरी रात। अतः राधा का विवाह कृष्ण के साथ कैसे हो सकता है ?—(२२०)

वृषभानु के घर से इस प्रकार टका-सा जवाब पाकर यशोदा ने पुनः वृषभानु की पत्नी के पास सन्देश भेजते हुए कहलवाया कि—हे सखि ! तुम मेरे कृष्ण को काला न कहो। वह तो समस्त ब्रज की ज्योति है। उसने कालिया नाग को नाथा था—इसी कारण वह उस नाग की फूत्कार से श्याम वर्ण का हो गया है। नहीं तो पीताम्बर की कछनी काछे मेरे मुरली-मनोहर कृष्ण जैसा रूप त्रिलोक में भी न मिलेगा। फिर यदि वह काला ही है तो क्या यह रंग बुरा है ? तुम्हीं बताओ कि क्या काली कोयल की कूज प्यारी नहीं लगती ? आखिर वह भी तो काली होती है। फिर हौने को तो मेघ भी काले होते हैं, लेकिन उनके द्वारा की गई जल वृष्टि कितनी सुखद होती है। और कहाँ तक गिनाऊँ, यहाँ तक कि काले काजल की स्याही से ही प्यारी अपने प्रियतम को प्रेम पत्र लिखा करती है। अतः हे सखि ! तुम मेरे कृष्ण को बार-बार काला न कहो। वह तो मेरा चन्द्र-सा प्रकाशित कृष्णचन्द्र है। इस पर भी यदि तुम्हें कृष्ण के साथ अपनी राधा का विवाह नहीं करना है तो रहने दो। अभी मेरा गोपाल छोटा ही है। वह कुंवारा ही रहेगा। तुम अपनी राधा को अपने घर बैठाए रहो।—(२२७, २२८)

समय बीता। अनेक दिनों के वाद-विवाद के पश्चात् राधा के साथ कृष्ण के विवाह की बात तय हो गई। धीरे-धीरे वह शुभ घड़ी आ पहुँची कि जब दूल्हा कृष्ण श्रृंगार कर बरसाने, अपनी ससुराल जाने को तैयार हुए। नन्द महर के गृह हर्षोल्लास का वातावरण व्याप्त हो गया। गोपियाँ बन्ना गाने लगीं—

नन्द को दुलारो मेरो बन्ना।
सिर सोहै जाली को चीरा,
कलगीं लहरिया-लहरियादार मेरो बन्ना। नन्द०
कान सोहै सूरति को मोती,
चुन्नी लहरिया—लहरियादार मेरो बन्ना। नन्द०

इधर सखियाँ बन्ना गा रही हैं तो उधर चौक पूरा जा रहा है। अमृत से भरा हुआ कलश एवं पटुली उसके बीच रखी गयी। श्रृंगार किये हुए कृष्ण अपनी माता के साथ उस पटुली पर जैसे ही आकर बैठे कि उनकी बूआ और बहिन उनकी आरती उतारने लगीं। आरती उतार कर वे फिर अपने-अपने नेंग प्राप्त करने के लिये यशोदा व कृष्ण से झगड़ने लगीं।—(२२९, २३०)

चौक-पूजन के पश्चात् शुभ मुहूर्त में घर से बन्ना कृष्ण और बारात

की निकासी हुई। जिस मार्ग से वे निकले, उस मार्ग में निरन्तर अच्छे-अच्छे सगुन होते रहे। सूखे हुए बाग के वृक्ष लहलहा उठे। जल-विहीन कुँए जल से आप्लावित हो उठे। और जब वे जनवासे में पहुँचे तो उनके स्वागत में बड़े-बड़े फर्श बिछा दिय गए। वृषभानु के द्वार पर पहुँचे तो कामिनियाँ द्वार पर कलश सजाकर आ उपस्थित हुईं। और कृष्ण के पौर में प्रविष्ट होते ही स्त्रियों ने मंगल-गीत गाने आरम्भ कर दिये।

विवाह की बैठक हुई। दूल्हा कृष्ण शीश पर सेहरा धारण किये हुए थे, जिससे लटकती हुई मोतियों की लड़ियाँ एवं कानों के कुण्डल उनकी शोभा को द्विगुणित कर रही थीं। बरसानेवासी उनके पाँव पखारने आते और उनके रूप-सौन्दर्य को देख ईर्ष्यालु हो वापस जाते। स्त्रियाँ, वह तो आपस में कृष्ण को सुना-सुनाकर उनके विगत जीवन पर कटाक्ष कसते हुए कहतीं—हे सखि ! मुकुटधर साँवरे कृष्ण दो पिता के जाये हैं। एक पिता इनका मथुरा में बसता है तो दूसरा गोकुल में। कोई पूछती है कि हे सखी ! किस माँ ने इन्हें दस मास तक अपने गर्भ में रखा और किसने फिर इनका लालन-पालन किया ? कहाँ पर इन्होंने जन्म लिया, और कहाँ पर आनन्द बधाये बजे ? तो कोई गोपी उत्तर में कहती हैं—हे सखी ! रानी देवकी ने इन्हें गर्भ में धारण किया और माता यशोदा ने इनका पालन-पोषण किया। साथ ही इन्होंने जन्म तो लिया मथुरा में लेकिन जन्मोत्सव मनाया गया गोकुल ग्राम में। यह सुनकर अन्य गोपी कहती है—हे सखी ! मेरी राधा को देखो, कैसी सुन्दर और लम्बी है। और यह दूल्हा जी, यह तो साँवरे और छोटे सें हैं। इतना सुनते ही दूसरी गोपी ने पूछा—तो फिर यह छोटे क्यों हैं ? क्या इनकी माता ने इन्हें खैंच-खैंचकर बढ़ाया नहीं ? सम्भवतः इसी कारण यह छोटे-से हैं। यह तर्क सुनते ही तीसरी गोपी ने पूछा—अच्छा, तो बताओ यह कारे क्यों हैं ? क्या इनकी अम्मा ने इन्हें उबटन नहीं लगाये, इसीलिये ये कारे हो गये ?—(२३१ से २३४)

इस हास्यपूर्ण सुखद वातावरण में धीरे-धीरे विवाह की रस्म पूरी हुई। भोजन का समय हुआ। समस्त बराती भोजन करने के लिये पंक्तिबद्ध बैठे। इधर ज्योनार आरम्भ हुआ, उधर बरसाने की गोपियाँ गारी गा-गाकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करने लगीं—

हाँ-हाँ श्याम रंग बरसैगो, हाँ-हाँ राम रंग बरसैगो।
सब सारे बरसाने वारे, रावल वारे सारे। श्याम०
बाबा जी भानोखर वारे, प्रेम सरोवर वारे। श्याम०

.... —(२३६)

प्रातः हुआ। बन्ना और बन्नो—कृष्ण और राधा बगीचा घूमने निकले। उनके आगमन से बाग की शोभा अपूर्व हो उठी। फूलों की कलियाँ खिल-खिल-कर झूम उठीं।—(२३०)

बारात की विदाई का समय आया। दुल्हन राधा, कृष्ण के साथ अपनी ससुराल जा रही हैं। बरसाने की नारियाँ आँखों में वियोगाश्रु लिये विदाई की तैयारियाँ करते हुए बड़ा ही करुणापूर्ण गीत गा उठीं—

सात बरस की राधिका, समधी जी पाली दूध पिवाइ,
सरन तिहारी दै दई, जाय मन कर लीजो,
दुख मत दीजो वारी जो। सात०
बासी-कूसी टुकड़ा समधी जी, लीने भोग लगाय,
नीले पीरे चीथरा, जाय मन कर लीजो,
चित कर लीजो वारी ज। सात०

इस प्रकार हर्षमिश्रित दुःखद वातावरण में राधा कृष्ण से प्रीति-डोर बाँध उनके साथ बरसाना छोड़ वृन्दावन की ओर चल पड़ीं। अतः उनके चलते समय वहाँ की नारियों ने कृष्ण को होलिकोत्सव पर अपने यहाँ आकर होली खेल जाने के लिए आमन्त्रित करते हुए कहा—कृष्ण! तुम हमारी गली होली खेलने जरूर आना। हम तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करेंगी। और जब तुम यहाँ आओगे तो तुम्हारे ऊपर चंदन छिड़केंगी।—(२३९)

राधा-कृष्ण पारिवारिक जीवन—समय बीता। वसंत आगमन के साथ ही राधा बरसाने आ पहुँची। होली का दिन आया। बरसाने के गोपी-ग्वाल होली के रंग में डूब गये। फिर राधा और कृष्ण क्यों पिछड़ते। वह भी फेंटा में गुलाल और हाथ में पिचकारी लेकर रंग की फुहार में झूम उठे। नव-दम्पत्ति राधा-कृष्ण की इस रंगीली फाग को देखकर गोपी-ग्वाल भी कृष्ण से होली खेलने के लिये लालायित हो उठे।—(२४०, २४१)

होली की इस रंगविरंगी बौछार के साथ मादक वसंत का भी जैसे अंत आ गया। जीवनचक्र पुनः उसी पुराने मार्ग पर चलने लगा। समय बीतने लगा। हँसी-हँसी में राधा ने एक दिन कृष्ण से पूछा—मैंने सुना है तुमने रानी रुक्मिणी के साथ भी विवाह कर लिया है। यह सुनकर कृष्ण ने कहा—राधा इस कथन का प्रमाण तुम्हारे पास क्या है कि मैंने एक और विवाह किया है। राधा ने अपने कथन का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए जानना चाहा कि हे कृष्ण यदि तुमने दूसरा विवाह रानी रुक्मिणी के साथ नहीं किया है तो फिर तुम्हारे नेत्रों में काजल और पैरों में मेहँदी कहाँ से और कैसे लग गई? और यह

पीला वस्त्र कहाँ से तुम्हें मिला ? राधा के अकाट्य प्रमाण को सुनकर कृष्ण ने उत्तर दिया—प्राण प्यारी राधा ऐसे कटु शब्द मत कहो। तुम मेरी बातों का विश्वास करो। मैं तो गुरु गृह पढ़ने गया था वहीं स्याही की छींटें मेरी आँखों में लग गई और कुछ सखियों के साथ बाग में घूमने चला गया था, वहाँ मेहँदी की पत्ती पाँव में गल गई, इसीसे मेरी आँखें कजरारी और पैर मेहँदी से माड़े हुए तुम्हें प्रतीत हो रहे हैं तथा यह पीला वस्त्र........इस कपड़े को तो धोबी को धुलने के लिये दिया था किन्तु उसने कुछ अन्य कपड़ों के साथ मेरे कपड़े भी धो दिये इसीसे ये पीले हो गए हैं, नहीं तो राधा प्यारी ! मैंने दूसरा विवाह थोड़े ही किया है। यह तो तुम्हें भ्रम हो रहा है।—(२४२)

एक दिन प्रातः कृष्ण राधा से पूर्व ही सोकर उठ गये। अतः उन्होंने मीठी नींद सोती हुई राधा को जगाया। विलम्ब से उठने के कारण वह घबरा गईं। आँखें मीड़ते और जम्हाई लेते हुए उन्होंने अपने पुत्र को गोद में उठाया और कंधे पर धोती तथा हाथ में लोटा ले, ओंधा की दातुन तोड़ती स्नानार्थ यमुना तट की ओर चलीं गईं।—(२४२ ए)

दूसरा दिन आया। आज राधा अन्य दिनों की अपेक्षा शीघ्र उठ गई थीं। अतः दैनिक कार्यों से निवृत हो वह माता यशोदा के पास गई और कहने लगीं––हे सासू जी, और दिन तो हम देर से उठते थे लेकिन आज जल्दी ही उठ गये हैं। अतः कुछ कार्य बतायें। यशोदा ने कहा—अच्छा, हे बहू, प्रथम तुम झाड़ू-बुहारू कर लो, फिर बर्तन धो डालो। तत्पश्चात् पानी भर लेना। तुम्हारी ननद और देवर—दोनों बैठे कलेवा करने की माँग रहे हैं। कुछ देर पश्चात् राधा ने सास जी से बताया कि मैंने झाड़ू-बुहारू आदि कर लिया। यह सुनते ही यशोदा ने पुनः राधा को कार्य बताते हुए कहा—बहू, द्वार पर पड़ा हुआ गोबर पीछे हटा दो तथा पीछे बंधे पशुओं को सानी-पानी कर दो।······ सास द्वारा बताये गये समस्त कार्यों को किसी प्रकार समाप्त कर जब राधा उनके पास अपने लिये कलेवा माँगने पहुँचीं तो यशोदा ने कलेवा देने से इन्कार कर दिया। यह सुनते ही राधा ने कहा—हे सासू जी, यदि मैं आज अपनी माँ के घर होती तो प्रातः उठते ही उनसे दौड़कर कलेऊ माँगती। परन्तु यहाँ तो इतनी देर हो गई, तब भी आप कुछ नहीं दे रहीं हैं। राधा का यह कहना था कि यशोदा ने उसे बड़े जोर का थप्पड़ मारकर धकेल दिया और फिर उसे भाइयों की गालियाँ देते हुए चुप हो गईं। सास का यह बुरा व्यवहार पाकर राधा दुःखित हो अपने महल की अटारी में चद्दर ओढ़कर सो गईं।

संध्या हुई। कृष्ण गोचारण से वापस लौटकर घर आये तो आते ही माता से पूछा––माँ ! राधा कहाँ गई ? मुझे शीघ्र बता। यशोदा ने कहा—हे

बेटा ! यदि तुम्हें राधा ही चाहिये तो अपने सम्मान के साथ हृदय में धैर्य रखो। तुम्हारी जीवन-सदृश राधा अपने महल की लाल अटारी में जाकर सोई हुई है। यह सुनते ही कृष्ण वहाँ जा पहुँचे और झरोखे से झाँककर उन्होंने राधा को जगाया। द्वार खुलने पर कृष्ण राधा के पास पहुँचकर पूछने लगे—हे राधा ! तू चद्दर तानकर क्यों सो गई थी ? मुझे अपने हृदय की बात बता। आखिर, क्या बात है ? कृष्ण के इस प्रकार पूछने पर राधा ने सविस्तार प्रातः घटित घटना कह सुनाई और यह भी बताया कि तुम्हारी माँ ने मुझे झाड़ू-बुहारू करते समय अनेक ताने मारे तथा गालियाँ भी दीं। राधा के उलाहने सुनकर कृष्ण ने बड़े स्नेह से कहा—राधा ! तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ ? वह मेरी माँ है और तू मेरी प्रिया।—(२४३, २४४)

३

बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण-कथा

कृष्ण-जन्म और जन्मोत्सव—संयोगवश एक दिन एक ही समय देवकी और यशोदा यमुना के तटों पर पानी भरने पहुँची। देवकी को अनमनी और दुर्बल देख यशोदा ने पूछा—बहिन ! तुम्हारी यह अवस्था कैसे हो गई ? मुझे अपनी कुशल ठीक-ठीक बताओ। यशोदा की स्नेहपूर्ण बातें सुनकर देवकी ने बताया—हे बहिन ! मेरी कोख से छः पुत्र जन्मे और उन सबको कंस ने मरवा डाला। न जाने मेरे किस जन्म के पाप से यह कंस मेरा वैरी हो गया है। इन शब्दों को सुनकर यशोदा ने कहा—बहिन ! अब जब तुम्हारे पुत्र हो तो उसे मेरे पास गोकुल भेज देना।—(१)

समय बीता। भादों बदी अष्टमी की घनघोर अंधेरी आधी रात को कंस के कारागृह में बंद देवकी की गोद में एक ज्योति पुंज आकाश से उतर कर आई और उसी क्षण कृष्ण ने माता देवकी के गर्भ से जन्म लिया। वसुदेव और देवकी हर्षोल्लास में डूब गये। देवगण आकाश से आनन्दित हो सुमन-वृष्टि करने लगे। प्रभु की लीला—इसी समय जागते हुए पहरेदार सो गये। कंस भय से चिंतित वसुदेव के हाथों और पाँवों में पड़ी बेड़ी और कारागार के वज्र सदृश द्वार स्वयमेव खुल गये। प्रातःकाल का समय हो चला। वसुदेव ने कृष्ण को धीरे से उठाया और गोकुल की ओर चल पड़े। यमुना तट पहुँच कर

उसे पार करने के लिये जैसे ही वह नदी में प्रविष्ट हुए वैसे ही यमुना ने उमड़कर कृष्ण के चरणों का स्पर्श किया। यमुना की इस अचानक बाढ़ से वसुदेव सोच में पड़ गये कि अब गोकुल, नंद के घर कैसे चला जाये? यदि वह आगे बढ़ते हैं तो अथाह यमुना का जल है, और यदि पीछे लौटते हैं तो गरजते हुए सिंह मिलते हैं। अतः ऐसी स्थिति में वह गोकुल की ओर ही चल पड़े। कृष्ण-वसुदेव की इस यात्रा से मेघ आनन्दित हो गरज-गरजकर बरसने लगे और यमुना उमंगित हो बढ़ चलीं। गोकुल पहुँच कर वसुदेव ने उलटी रीति का पालन करते हुए अपने पुत्र को दे, यशोदा की पुत्री ले ली।—(२, ३)

इस प्रकार ब्रज में कृष्ण और बलदेव प्रकट हुए। यद्यपि कृष्ण ने जन्म तो माता देवकी की कोख से पाया था, लेकिन अब यशोदा उन्हें पालने के कारण उनकी माता हुईं। यशोदा ने पुत्रजन्म पर नंद को बुलाया। वह यह समाचार सुनकर हर्ष से फूले न समाये। और अनेक प्रकार से कृष्ण के मंगल के लिये बलैंया लेते हुए ब्राह्मणों को बुला-बुलाकर दान बाँटने लगे। यह आनंदोत्सव देखकर यशोदा हर्षातिरेक से फूली न समाईं।—(४)

ऐसे सुखद अवसर पर यशोदा को बधाई देने ब्रज की गोपियाँ उमड़ पड़ीं। सभी कहने लगीं—यशोदा बड़ी भाग्यवान् है, जिसके घर कृष्ण ने जन्म लिया। इस प्रकार वे उनके भाग्य पर सिहाते हुए एक-दूसरे से पूछने लगीं—हे सखि! किस मूहर्त में किसने जन्म लिया है? किस चीज के छुरे से उसका नाल-छेदन हुआ? किस धातु के खप्पर में उन्हें स्नान कराया गया? कौन से सूप में लिटाया गया? तथा किसका अक्षत डाला गया? यह सुनकर दूसरी सखी उत्तर देती है—हे सखि! शुभ घड़ी में कृष्णचन्द्र ने माता यशोदा के घर जन्म लिया, सोने के छुरे से उनका नाल-छेदन हुआ, रूपे के खप्पर में स्नान कराया गया तथा रेशम के सूप में लिटाकर मोतियों का आखत डाला गया। अतः यशोदा बड़ी भाग्यवान् है।—(५, ६)

बाहर नंद जी के द्वार पर बधाव बज रहा है। माता यशोदा नाइन से सहेज कर कह रही हैं—तुम जाकर शीघ्र ही सारे नगर में बुलावा दे आओ, और सब गोपियों से कहना कि वे शीघ्र ही साज-श्रृंगार कर आएँ, विलम्ब न करें। बाबा नंद को वह बाजार जाकर सालू सरद लाने के लिये कह रही हैं। इधर सुहागिन गोपियाँ अपने पाँवों में महावर दिये एवं हाथों में मंगल-सूचक गुड़ की भेली लिये तैयार हो आपस में कहती हैं—हे सखि! शीघ्र ही यशोदा घर चलो। जिनके द्वार पर आम के पत्तों के बंदनवार लगे हुए हैं।

इस प्रकार बालिकायें एवं युवती गोपियाँ हर्षित हो नंद महर के घर आईं। बड़े उत्साह और हर्ष से बधाव गीत गाया गया। यशोदा ने जिसको जो भी वस्त्र भाया, पहनाया। सब अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनकर तैयार हो हृदय से बाल-कृष्ण को शुभाशीर्वाद देती हुई अपने-अपने घर लौट गईं।—(७, ८)

जन्म का छठा दिन आया। आज तो पुत्रजन्म के कारण दिन स्वर्णिम हो उठा है। यशोदा के गृह छठी पूजन का समारोह होने जा रहा है। अतः गोपियाँ वहाँ जाने को व्यग्र हो रही हैं। ·········सुरहिन सुरभी का गोबर मँगाकर, पोतनी की ढिक धरकर आंगन लिपवाया गया। आंगन में मोतियों का चौक पूरा गया, जिसके बीच चार बातियों से सज्जित दीपक जलाकर सोने का कलश और चंदन की पटरी रखी गई। रानी यशोदा को शिशु कृष्ण को गोद में लेकर चौक में बैठने के लिये बुलाया गया। उनके चौक में आने पर अमृत का आचमन किया गया, तथा नंद बाबा को यशोदा की गोद से पुत्र को लेकर अपने हृदय से लगाने को कहा गया।—(९)

इस प्रकार छठी पूजन का कार्य समाप्त हुआ। पुरजनों के साथ-साथ परिजनों ने भी कृष्ण-जन्म पर हर्ष मनाया। मालिन, तमोलिन और पटविन आदि क्रमशः फूलों का सुन्दर हार, पान का बीड़ा और आम के कोमल पत्तों का बंदनवार बनाकर यशोदा के गृह चल पड़ीं। यशोदा ने भी उनकी इन मांगलिक वस्तुओं के बदले में—मालिन को लहँगा, तमोलिन को ओढ़नी, और पटविन को एक अच्छी-सी दखिनी चीर भेंट किये। सब प्रसन्न हो कृष्ण को चिरंजीवी होने की कामना करती हुईं अपने-अपने घर वापस चली गईं।—(१०) लेकिन यही नहीं, इनके अतिरिक्त एक दिन कुछ गोप बधुओं के साथ ललिता, विशाखा और चन्द्रावलि भी यशोदा को बधाई देने के लिए एवं बालकृष्ण को गोद खिलाने के लिये आईं। कृष्ण उस समय शृंगार किये हुए थे। सब ने मोहन को गोद में लेकर हँस-हँसकर, नाच-नाचकर खूब खिलाया। कृष्ण भी प्रसन्न हो किलकारियाँ मारने लगे। उनकी इस समय ऐसी शोभा बन रही थी कि इन्द्र भी उसे देखकर लज्जित हुआ जाता था। यह मनोमुग्धकारी और उल्लासपूर्ण समाचार जब राधा ने सुना तो वह भी कृष्ण-जन्म का आनन्द मनाने लगीं।—(११)

शैशव—शनैः-शनैः दिन बीतने लगे। कृष्ण कुछ बड़े हुए। माता यशोदा वात्सल्य प्रेम में उमड़ पड़ीं। उनके हृदय में अनेक प्रकार की भावनायें हिलोरें लेने लगीं। सोचतीं कि जब पाँवों में पैंजनियाँ पहनकर यह मेरी राम-लखन सदृश कृष्ण-बलराम की जोड़ी आंगन में खेलेगी और जब वे कुछ और

बड़े होकर पहनने के लिये भंगुलिया और सिर पर लगाने के लिये रत्नजटित टोपी, खेलने के लिये चन्द्र तथा सूर्य को खिलौने सदृश तथा कलेवे में दधि और माखन के साथ रोटी, और दूल्हन के रूप में किसी बड़े राजा-महाराजा की बेटी माँगेंगे तब मेरी समस्त आशायें फलवती होंगी और उसी समय मैं अपने इन्हीं पैरों से गिरि गोवर्धन की परिक्रमा करूँगी।—(१२)

हिंडोला—नंदलाल चन्दन के पालने में झूला झूलने लगे। सखियाँ उन्हें झुलाने लगीं। नंद और यशोदा हर्षित हो उनका मुख चूमने लगीं।—(१३) कभी यशोदा स्वयं ही पालने की रेशमी डोर पकड़कर उन्हें झुलाती तो कभी नंद बाबा उन्हें गोद में लेकर आंगन में खिलाते।—(१४)

इस प्रकार गोपाल नित्य झूला झूलते और नंद-यशोदा को हर्षित करते। लेकिन एक दिन न जाने किस गोपी ने झूलते हुए बालकृष्ण को नजर लगा दी। वह खीझकर रो उठे। माता यशोदा ने देखा तो राई-नोन से कृष्ण की नजर उतारी। अब वह पुनः प्रसन्न हो झूला झूलने लगे।—(१५) अतः यशोदा वहाँ से जाते समय गोपी को सहेजती गई कि देखो मनमोहन झूले से उचक-कर गिर न पड़ें। अतः हे सखि, तनिक धीरे से ही पालने को झुलाना। और देखो, जो हमारे लाल को इस तरह पालना झुलायेगी, उसे मैं उपहार स्वरूप रत्नजटित कंगन दूँगी।—(१६)

महादेव आगमन—इसी समय किसी गोपी ने आकर यशोदा को बताया कि हे सखि, द्वार पर एक बालयोगी आया हुआ है। वह अपने अंगों में भभूत लगाये, मृगछाला धारण किये तथा शीश पर सर्प लपेटे हुए है। यह सुनकर यशोदा सोने के थाल में भिक्षा लेकर बाहर निकलीं और योगी से कहने लगीं—हे योगी, तुम भिक्षा लेकर अपनी कुटिया को लौट जाओ। मेरा गोपाल भयभीत हो रहा है। योगी ने उत्तर दिया—माँ, मुझे तुम्हारी धन-दौलत नहीं चाहिये। तुम केवल मुझे अपने गोपाल का दर्शन करा दो—बस, इसीलिये मैं यहाँ आया हूँ।—(१७)

पूतना स्तन-पान—एक दिन जब कि बालक कृष्ण नित्य की भाँति झूले में पड़े खेल रहे थे, साज-शृंगार एवं अपने स्तन में विष लगाकर नारी पूतना कृष्ण के पास आई और उन्हें अपनी गोद में उठा लिया। कृष्ण की हत्या करने के विचार से उसने अपना स्तन उनके मुख में लगाया ही था कि कृष्ण ने स्तन पा खूब जोर से उसे चूसा। उनके इस प्रकार करने से पूतना मृत्यु भय से चिल्ला उठी। उसकी भयानक चीख को सुनकर यशोदा यह सोचते हुए दौड़ पड़ीं कि शायद कोई दुष्टा कृष्ण के पास आ गई।—(१८)

घुटनों चलना—कृष्ण अब घुटनों चलने लगे। अतः वे एक दिन घिसटते-घिसटते ललिता के पास जा पहुँचे। माता यशोदा ने उन्हें अपने पूर्व स्थान पर न देखा तो पूछने लगीं—अरे, किसी ने मेरे छोटे से गोपाल को देखा है? उनके इस प्रकार पूछने पर गोपी ने बताया कि वह तो ललिता सखी के पास हैं।
—(१६)

माखन चोरी—कृष्ण कुछ और बड़े हुए, अब वह गोपियों के घर जाकर दधि-माखन की चोरी करने लगे। एक दिन कृष्ण ने ललिता के घर घुसकर ताले को तोड़-मरोड़कर दही की चोरी की। इस चोरी की खबर समस्त ब्रज में फैल गई कि कृष्ण ने ललिता के घर चोरी कीं और उसी में राधा की दुलरी की भी चोरी हो गई। गोपियाँ यह सुन चोरी देखने चल पड़ीं।—(२०) और फिर वहाँ से हो, यशोदा के पास आकर उलाहना देने लगीं। यशोदा को उनके उलाहनों पर विश्वास ही नहीं होता था। अतः वे कहने लगीं—कैसे तुम कहती हो कि कृष्ण ने दही चुराया है? मेरा नन्हा-सा गोपाल अभी थोड़ी ही उम्र का तो है। उसने कैसे अपने छोटे-छोटे हाथों से तुम्हारी दधि-माखन की मटकी उठाई होगी? पुनः वह प्रातः होते ही गायों बछड़ों के साथ गोचारण को चला जाता है। इस पर भी यदि तुम कहती हो कि उसने तुम्हारा दही चुरा लिया है तो क्या हो गया? जिसे तुम सदैव नन्द किशोर कहती हो, उसे ही आज तुम माखन चोर कह रही हो। ऐसे भोले-भाले गोपाल का तुम उलाहना लेकर आई हो?

गोपियाँ आज तो लौट गईं। लेकिन यह एक दिन की परेशानी हो, तब न। कृष्ण नित्य ही दधि-माखन की चोरी करने लगे। एक दिन उन्होंने फिर जब इसी प्रकार की चोरी की तो गोपियाँ पुनः यशोदा के पास उलाहना देने आईं। लेकिन आज कृष्ण ने अपने बचने की एक नई चाल खेली। वह बाल-रूप धारण कर पालने में लेट गये। यशोदा उन्हें झुलाने लगीं, गोपियाँ पालना घेर कर यशोदा को उलाहना देने लगीं—आज श्याम ने पुनः मेरा दही जूठा कर दिया है। यशोदा को यह सुनकर आश्चर्य हुआ। उनका गोपाल तो पालना झूल रहा है। ये गोपियाँ क्या कहतीं हैं? अतः वह रुष्ठ हो गोपियों से कहने लगीं—हे सखि, कहीं तुम सब दीवानी तो नहीं हो गई हो? देखो, मेरा गोपाल तो पालने में पड़ा झूल रहा है।—(२१, २२)

दिनचर्या—दिन भर के थके-मांदे कृष्ण को यशोदा लोरियाँ गा-गाकर सुला रही हैं—

सोजा-सोजा बारे बीर,
तोरी तौ बलैया लै लउं जमुना के तीर।—(२३)

कृष्ण सो गये। रात्रि बीती, प्रभात हुआ। यशोदा अब प्रभाती गा-गाकर कृष्ण को जगा रही हैं। कहतीं हैं—कृष्ण, ग्वाल-बाल सब द्वार पर खड़े हैं। वन में जाने का समय हो गया, गायें वन को जा चुकी हैं। तुम भी उठो और माखन खाओ। मैं तुम्हारे लिये आज एक नई मुरली ले आई हूँ।—(२४) लेकिन वह न उठे। माता यशोदा उन्हें पुनः उठने के लिये कहती हैं—कुँवर उठो, मैं तेरे दर्शन के लिये तरस रही हूँ। उठो, कलेवा कर लो। बाबा नन्द ने गायें उबेर दी हैं, जो वृन्दावन में इधर-उधर भटक रही हैं।—(२५)

रात हुई, यशोदा ब्यारी करने के लिये कृष्ण को बुलाती हैं—भोजन के लिये आओ लाल, थाली परस कर रख दी गई हैं।—(२६)

कन्हैया अब आँगन में खेलने लगे, कभी-कभी वह अपने बाल स्वभाव के कारण माखन-मिश्री तथा मलाई खाने के लिये हठ करते हैं, कभी वह खेलने के लिये भौंरा-चकई माँगते हैं, तो कभी चन्द्र ज्योत्स्ना पाने के लिये मचल उठते हैं।—(२७) माता यशोदा उनके इस बालपन के हठ को देखकर हृदय मे अत्यधिक हर्षित होती हैं और अपने गोपाल के लिये विविध प्रकार के वस्त्राभूषण बनवाने का विचार करती हैं।—(२८)

इसी बीच एक दिन अपने बाल स्वभाव के कारण कृष्ण अपने साँवरे होने का कारण अपनी माता से पूछ ही तो बैठे—माँ, मैं साँवला क्यों हो गया ? दाऊ गोरे हैं, बाबा गोरे हैं और तू, तू तो चन्दा-सी गोरी है। फिर मैं क्यों साँवला हो गया ? मैंने तो चोरी कर-करके खूब सफेद माखन और मिश्री खाई, तब भी मेरा साँवला रंग न गया।—(२९) यहाँ तक कृष्ण की बाल-सुलभ उत्सुकता तो कुछ ठीक थी, पर एक रात पूर्णिमा को जब वह चन्द्र खिलौना लेने के लिये बहुत अधिक जिदकर मचल उठे तो यशोदा ने समझा कि सम्भवतः किसी ने कृष्ण को नज़र लगा दी है। अतः उन्होंने राई-नमक से नज़र उतारी, तरह-तरह से पुचकारा, बहलाया परन्तु उनका रोना बन्द न हुआ। वह परेशान हो नन्दबाबा के पास दौड़ी गई, वहाँ उन्हें एक युक्ति सूझी। वह सोने की एक थाली में जल भर लाई और उसी में चन्द्र प्रतिबिम्ब दिखाकर कृष्ण को किसी प्रकार शान्त किया।—(३०, ३१)

गोचारण एवं गोवत्स-हरण लीला—कुछ और बड़े होने पर कृष्ण प्रातःकाल उठकर कलेवा आदि से निवृत्त हो नन्दबाबा के साथ-साथ अपने साथियो को ले गोचारण को जाने लगे। वहाँ वह तरह-तरह से यमुना तट पर वंशी बजाकर खेल खेलते तथा जंगली बेर, नीबू और जामुन को तोड़कर स्वयं खाते और अपने साथियों को खिलाते।—(२५) एक दिन वह अकेले ही अपने

साथियों के साथ गोचारण को चले गये। कुछ समय बाद वह देखते हैं कि अनेक गायें खो गई हैं। यह देखकर उनके साथी बहुत घबराये और माता यशोदा के पास आकर उलाहना देने लगे कि कृष्ण ने बहुत-सी गायें खो दी हैं। हम सब जगह उसे ढूँढ़ते-ढूँढ़ते हार गये परन्तु कहीं भी गायों का पता न चला। लेकिन कृष्ण को गायें ढूँढ़ने की कौन कहे, वह तो स्वयं ही काली कमरिया ओढ़े उन्हें बिचकाते फिरते हैं। किन्तु आज तो गायों को न जाने किसने छिपा लिया है कि खोजने पर भी वे कहीं नहीं मिलती। फिर माँ—वे मिलें चाहे न मिलें, हम तो वही अपनी काली गाय ही लेंगे, न हम नीली लेगें न पीली।—(३२, ३३)

राधा-कृष्ण मिलन—संयोग से मार्ग में एक दिन कृष्ण से राधा की भेंट हो गई, और वह उसे देखते ही पूछ बैठे—हे सुनयेन, तू कौन है? कहाँ से आ रही है? तुम्हारे माता-पिता का क्या नाम है? हमें बताओ तो सही और हाँ, कौन से पुरा (गाँव) में तुम्हारा महल है? राधा ने अपना परिचय दे तो दिया कि मैं बृषभानु की बेटी हूँ और बरसाने में रहती हूँ, जहाँ के स्वच्छ महलों पर ऊँची-ऊँची ध्वजा फहराती रहती है। पर वह यह न समझ सकीं कि आखिर यह है कौन? और यह सब पूछ क्यों रहा है? अतः अन्त में वह भी कृष्ण से पूछ बैठीं—हम तो तुम्हें नहीं पहचान रहे हैं, फिर भी तुम बिना प्रयोजन मुझसे छेड़-छाड़ कर रहे हो। तुम किसके पुत्र हो और किसके सेवक हो? कृष्ण ने भी सुअवसर देख अपना छोटा-सा परिचय दे ही तो दिया— मैं नन्द और यशोदा का पुत्र तथा अपने भक्तों का भक्त हूँ।—(३४, ३५)

कृष्ण के व्यक्तित्व एवं उनके इस चपल व्यवहार से राधा अत्यधिक प्रभावित हो गईं। अतः अपने घर जाने से पूर्व कृष्ण को आमन्त्रित करते हुए राधा ने पुनः इस प्रकार अपना परिचय दिया—हे कृष्ण! यमुना तट पर मेरा गाँव है, जहाँ मेरी ऊँची हवेली है। मैं ब्रज की अनोखी गोपी—राधा हूँ, अतः हे कृष्ण! तुम मेरे घर अवश्य आना लेकिन अभी नहीं, जब मौज आये—तब। फिर भी जरा जल्दी ही आना, मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी। जब तुम आओगे तो मैं अनेक प्रकार से तुम्हारी सेवा-सत्कार करूँगी, तुम्हारे लिये खस का एक सुन्दर-सा बंगला बनवाऊँगी, उसमें रची एक कुसुम शैया पर तुम्हें लिटाकर तुम्हारे पाँव दबाऊँगी, और साथ ही तुम्हें अपना स्नेह दान दूँगीं।—(३६)

राधा के इतना आग्रह करने पर भी जब कृष्ण उसके यहाँ न गये तो वह स्वयं ही उनके घर के सामने एक दिन आकर उनसे मिलने का बहाना बनाकर कहने लगी—हे कृष्ण! तुम्हारे द्वार पर खेलते समय हमारा चम्पक-कली का हार टूट कर गिर पड़ा और उसके मोती बिखर गये। राधा की यह पुकार सुनकर कृष्ण से न रहा गया। वह घर से बाहर आकर पूछ बैठे कि

तुम्हारे कितने माशे के मोती थे और कुल कितने वजन का हार था ? राधा ने बताया कि नौ माशे का मोती था और दस माशे का मेरा हार था।—(३०)

राधा ने हार टूटने के बहाने कृष्ण को बुलाकर उनके दर्शन तो कर लिये लेकिन अपने मन की शान्ति खो बैठीं। उनका हृदय उद्विग्न हो उठा। वह कुछ शर्माती हुई मुसकाई ही थीं कि श्याम भी अधीर हो उठे।—(३८)

गेंद चोरी—एक दिन कृष्ण मार्ग में गेंद खेल रहे थे। यकायक राधा अपनी चन्द्रावलि और ललिता सहेलियों के साथ उसी मार्ग से निकलीं। गेंद की चोरी लगाकर राधा को छेड़ने का एक अच्छा बहाना कृष्ण को सूझा। फिर क्या था, वह कह ही तो बैठे—राधा प्यारी, तनिक रुकना तो। तुमने मेरी गेंद चुराई है ? राधा यह सुनते ही चकरा गईं। लेकिन तत्काल ही अपनी जान बचाने के लिये उन्होंने कहा—नहीं-नहीं, मैंने तुम्हारी गेंद नहीं चुराई है। तुम्हारी गेंद तो ललिता ने चुराई है। लेकिन कृष्ण कहाँ मानने वाले थे। अतः राधा ने अपनी जान न बचते देखकर पूछा—कृष्ण, किस चीज की तुम्हारी गेंद बनी हुई थी ? और कौन-सी चीज से कसी थी ? कृष्ण ने बताय कि वह सोने की बनी थी और रूपे के तार से कसी थी। यह ज्ञात कर राधा ने एक शर्त पर गेंद देने का वायदा किया कि यदि मेरे अंचल से गेंद न निकलेगी तो क्या तुम एक की जगह दो दोगे ? यह कहते ही राधा ने गेंद यमुना में फेंक दो। गेंद का यमुना में गिरना था कि उसी के साथ कृष्ण भी यमुना में कूद पड़े, और उसे निकाल कर तट पर पुनः अपने खेल में लग गये।—(३९)

राधा के साथ कृष्ण की यह छेड़छाड़ तो पूर्व परिचय के कारण कुछ सीमा तक ठीक रही। पर एक दिन कृष्ण ने ऐसी ही गेंद-चोरी एक अपरिचिता गोपी को—जो दही बेचने जा रही थी, लगाकर कहने लगे—हे गूजरी, तुमने मेरी गेंद चुराई है। मेरी गेंद अभी यहीं भूमि पर पड़ी थी जिसे तुमने छिपा लिया है। तुम मुझे अकेला पाकर—देखो, गेंद लेकर कहीं अपने घर न भाग जाना। गोपी ने बड़ी सफाई पेश की कि मैंने तुम्हारी गेंद नहीं देखी, तुम झूठ में ही हमें चोरी लगा रहे हो। लेकिन कृष्ण न माने। अतः उसने रोष में आकर कह दिया—मैं कंस से जाकर तुम्हारी सब बातें कह दूँगी। वह तुम्हें ब्रज से निकलवा देगा। कंस का नाम सुनते ही कृष्ण ने भी उसे उसी तरह उत्तर देते हुए कहा—हे ग्वालिन, तू चुप रह। बेकार न बोल। यदि राजा कंस का ही तुझे सहारा है तो दही बेचने क्यों निकली थी ? यदि तुमने मुझे कंस का भय दिखाया तो मैं तुमसे एक की जगह दो गेंद ले लूँगा।—(४०) कृष्ण की इस प्रकार की जोर-जबरदस्ती देखकर ग्वालिन खीझ उठी और कहने लगी—श्याम, कहना तो मानो। क्या तुम्हीं एक अनोखे यशोदा के पुत्र हो ? तनिक ठीक

से रहा करो। मुझे अब घर जाने दो। मैं घर जाकर अब तुम्हारी शिकायत करूँगी।—(४१)

कालिय दमन लीला—एक दिन यमुना तट पर गेंद खेलते समय कृष्ण ने गेंद मारी ही थी कि वह यमुना जल में जा गिरी, और डूबते-डूबते पाताल-लोक तक पहुँच गई। कृष्ण गेंद निकालने के लिये यमुना में कूद पड़े। वह पाताल लोक के बन्द द्वार खोल वासुकी नाग के पास जा पहुँचे। वहाँ एक नागिन ने बालक कृष्ण को देखा तो उनसे प्रार्थना करने लगी कि हे कृष्ण ! द्वार पर से चले जाओ, विषधर नाग जब तुम्हारा आना सुन लेगा तो बड़ा बुरा होगा। पर कृष्ण न माने और उत्तर में उससे कहा—नागिन, अब मैं यहाँ से नहीं जाऊँगा। देखूँ—तेरा नाग कैसा है ? बालक कृष्ण का यह हठ और फलस्वरूप उनकी मृत्यु निकट समझकर अश्रुपात करती हुई वह नागिन कालिय नाग को जगाने चल पड़ी। नाग को उसने बताया कि एक बालक द्वार पर खड़ा उत्पात मचा रहा है और मेरे बहुत मना करने पर भी वह वहाँ से नहीं हटता। यह सुनते ही नाग क्रोधित हो उठा और कृष्ण के पास आ अपनी विषाक्त फुस्कार से उन्हें श्याम वर्ण का कर दिया। लेकिन कृष्ण इतने से हारने वाले न थे। उन्होंने वंशी बजाकर शीघ्र ही उसे नाथ लिया।—(४२) नागराज को कृष्ण के चंगुल में देख—उसकी पत्नियाँ भयभीत हो कृष्ण से हाथ जोड़कर बारबार विनय करतीं, उनके चरणों पर अपना शीश रख नाग को छोड़ने की याचना करतीं और कहतीं—हे तीनों लोकों के अन्तर्यामी ! तुम्हारी महिमा नहीं जानी जा सकती।—(४३)

इसी बीच कृष्ण के साथियों ने यशोदा को दौड़कर सूचित किया कि कृष्ण यमुना में कूद पड़े। यह सुनते ही वह प्रेम-विह्वल हो यमुना तट दौड़ पड़ीं। वह कभी इस घाट पर तो कभी उस घाट पर दौड़ती हुई कहने लगीं—अरे किसी ने मेरे कृष्ण को कूदते हुए नहीं देखा ? कल का उसका कलेवा रखा पड़ा है, अब उसे कौन करेगा ? यदि उसे ऐसा ही करना था तो बता तो दिया होता। इस प्रकार इधर माता यशोदा पुत्र-प्रेम से व्याकुल हो चीख रही थीं तो उधर बलदेव कृष्ण को पुकार-पुकार कर कह रहे थे कि वह हम सबको छोड़कर कहाँ चले गये ?—(४४, ४५) इस प्रकार सब व्यथित और विह्वल हो रहे थे कि कृष्ण कालिय नाग को नाथकर उसके फण पर नृत्य करते हुए जल के ऊपर आ गये।

नित्य की भाँति एक दिन पुनः जब कृष्ण गेंद खेलने के लिये जाने लगे तो माता यशोदा ने कहा—हे काले नाग के नाथने वाले कृष्ण, तनिक दूर खेलने

मत जाना। कंस तुम्हें मारने के लिये पीछे पड़ा है। लेकिन कृष्ण कहाँ मानने वाले थे। वह कहने लगे—माँ, मैं तो दूर ही खेलने जाऊँगा, मुझे कौन मारने वाला है ?—(४६)

वंशी वादन—गोपियाँ श्याम से बार-बार आग्रह करती हैं—हे कृष्ण, एक बार पुनः वंशी में वही धुन बजा दो जैसी पहले बजाई थी। जिसे सुनकर हम छूम-छूम, छन न-न-नां करती हुई तुम्हारे पास चली आएँ। नाचें-गावें और ताल बजाकर तुम्हारे साथ हिल-मिलकर रास रचायें, फिर चाहे घर के समस्त लोग हमारे ऊपर खीझें ही।—(४७)

गोपियों के इस आग्रह पर श्याम ने यमुना तट पर खड़े होकर वंशी बजा ही तो दी। जिसकी माधुरी से प्रभावित हो यमुना का चंचल जल स्थिर हो गया और इन्द्र मोहित हो जहाँ एक क्षण के लिये आने को लालायित हो उठे।—(४८) यद्यपि यह वंशी वादन कृष्ण ने वृन्दावन में किया था, लेकिन उसका प्रभाव बहुत दूर तक फैल गया। यहाँ तक कि मधुवन के मोर भी उसकी माधुरी के बशीभूत हो कूजने लगे। सोती हुई राधा जग पड़ीं और कृष्ण छवि का ध्यान कर एक कुञ्ज से दूसरे कुञ्ज में उन्हें ढूँढ़ते हुए सोचने लगीं कि यह वंशी कहाँ से बज रही है।—(४९)

एक दिन पुनः कृष्ण ने गोचारण को जाते हुए वंशी बजाई, जिसकी मधुर ध्वनि सुनकर जल भरने जाती हुई राधा ठिठक-सी गई। कृष्ण ने राधा को देखा और फिर उसकी बाहें पकड़कर कदम्ब वृक्ष की ओट में चलने के लिये आग्रह किया। राधा ने बड़ी विनती की कि हे घनश्याम, मेरी बाहें तो छोड़ दो। मुझे घर जाने दो। मेरी सास बड़ा कठोर है। वह मुझ पर नाराज होगी। लेकिन कृष्ण न माने, कहने लगे—तुम्हारी सास और ननद क्या कर लेगी ? तुम मेरे साथ, उस कदम्ब वृक्ष की ओट में चलो।—(५०)

कृष्ण राधा को साथ ले बीहड़ स्थानों में चले गये। गोधूलि हो चली, परन्तु कृष्ण अभी तक घर न लौटे। यह देखकर माता यशोदा और बलदाऊ रोने लगे। इतने में ही किसी ने बताया कि कृष्ण तो राधा को साथ लिये वन में गायें चरा रहे थे, अतः वहीं कहीं होंगे। चलो, चलकर उन्हें खोज लायें। बिचारे बछड़े भी उनके बिना विलम्ब होने के कारण उकता रहे हैं।—(५१)

राधा यशोदा-गृह आगमन और कृष्ण गो-दोहन—राधा कृष्ण से मिलने के लिये नित्य नवीन बहाने बनाया करती थीं। आज वह कृष्ण से मिलने एवं उन्हीं से दूध दुहाने के बहाने सायंकाल उनके घर आईं और माता यशोदा से कहने लगीं—मां, तनिक गिरधारी को जो मेरे हृदय मन्दिर में बसते हैं, मेरे

साथ भेज दो । उन्हीं के हाथों मेरी गाय लगती है अन्य के द्वारा नहीं । यहाँ तक कि आज तो समस्त गोप सखा तथा बलदाऊ भी उसे दुहने की चेष्टा करके हार गये, लेकिन वह न लगी । अतः तुम तनिक गोपाल को मेरे साथ भेज दो ।—(५२, ५३)

यशोदा ने कहा—बड़ी अजीब तू और तेरी गइया है । जो औरों के हाथ नहीं लगती, केवल कृष्ण के ही हाथ लगती है । लेकिन कन्हैया तो अभी-अभी गोचारण से लौटा है, उसे पुनः कैसे तुम्हारे साथ भेज दूँ ? यह सुनकर राधा जिद कर देहरी पर आ बैठीं और कहने लगीं—अब तो मैं तभी जाऊँगी जब कन्हैया मेरे साथ चलेंगे । राधा की यह भोली-भाली बातें सुनकर नन्द और यशोदा हँस पड़े । और कृष्ण से कहने लगे—जाओ कृष्ण, राधा की गाय दुह आओ ।—(५३, ५४)

माता की आज्ञा पाकर श्याम गये तो थे गाय दुहने लेकिन वहाँ जाकर करने लगे राधा का रूप-रसपान । अतः दूध ठीक से न दुहने के कारण राधा पुनः यशोदा के पास आकर उराहना देने लगीं—माँ, अब मैं श्याम से गाय न दुहाऊँगी । वह न जाने कैसे गाय दुहते हैं कि समस्त दूध भूमि पर आ गिरता है । फिर कभी वह सेर-सवा सेर दूध दुहते हैं, तो कभी आध पाव ही दुहकर देते हैं । फिर माँ, एक तो वह वैसे ही काले हैं उस पर से काली कमरिया ओढ़कर वे मेरी गाय को विचका देते हैं, अतः मैं उनसे कभी भी दूध न दुहाऊँगी । राधा के इस उराहने पर यशोदा ने खीझ कर कहा—

तू तो गुआलिन मद की माती,
अबं तो हमारो प्यारो बारो है कन्हैया ।—(५४, ५५)

चीर हरण—एक दिन कुछ गोपियाँ अपने समस्त वस्त्र उतार यमुना में नग्न होकर स्नान कर रही थीं कि इतने में ही कृष्ण चुपके से आकर सबके वस्त्र ले—पास के एक कदम्ब के वृक्ष पर जा बैठे । कुछ समय बीतने पर जब गोपियाँ स्नान कर अपने वस्त्रों की ओर देखती हैं तो उन सबके कपड़े वहाँ नहीं हैं । उन्हें तो कृष्ण लेकर पेड़ पर जा बैठे हैं । अतः वे उसे पाने के लिये आपस में कहती हैं—सब कपड़े लेकर कृष्ण कदम्ब वृक्ष पर जा बैठे और हम सब जल के भीतर बिना वस्त्र के हैं । अब हम क्या करें ? वस्त्र मिलने का कोई उपाय न देख सब कृष्ण से विनय करने लगीं—हे माधव ! हम तुम्हारी सब प्रकार से प्रार्थना करके हार गईं, अब तुम्हारे पाँव पड़ती हैं, हमारे वस्त्र हमें वापस कर दो । कृष्ण भला क्यों देने लगे । उन्होंने कहा—जब तुम सब जल से नग्न ही बाहर आ जाओगी, तभी तुम्हारे कपड़े तुम्हें दूँगा । कृष्ण की यह शर्त सुनकर

गोपियों ने कहा—यदि हम जल से बाहर इसी प्रकार निकल आयेंगी तो लोग हमें देखकर हँसेंगे, अतः हम न आयेंगी। कृष्ण ने पुनः कहा—तुम सब बाहर निकल आओ। लोग हँसें तो हँसने दो। क्योंकि यहाँ अकेले हम पुरुष और तुम सब नारी हो।—(५६)

पनघट लीला—कृष्ण गोपियों को जहाँ भी पाते उन्हें तंग करते। आज और कहीं नहीं तो पनघट जाती हुई राधा को ही रोककर उससे पुनः परिचय प्राप्त करने का यत्न कर रहे हैं। उन्होंने जब राधा को पनघट जाते हुए देखा तो पुकार लगाई—अरे, कौन पनिहारिन पनघट जा रही है? तनिक रुकना तो। तुम किसकी पुत्री और किसकी सहेली हो और तुम्हारा क्या नाम है? राधा कृष्ण को देखकर रुक गई। यद्यपि अनेक बार कृष्ण से मिलन एवं परिचय हो चुका था, फिर भी राधा ने संक्षेप में अपना परिचय देते हुए कहा—कृष्ण, मैं वृषभानु की बेटी और ब्रज नारियों की सहेली—राधा हूँ। मुझे सब 'दुलारी' कहकर पुकारते हैं।—(५७)

परिचय प्राप्त करने में तो कृष्ण ने बड़ी शिष्टता दिखाई। लेकिन जब राधा पनघट से गागर भर कर लौट रहीं थीं, तब उसके बहुत मना करने पर भी कि हे श्याम! मेरी जल से भरी गागर मत फोड़ो, घर पर मेरी सास जब यह सुनेगी तो वह नाराज होगी और हम दोनों को गालियाँ देगी तथा मुझे तो घर की देहरी भी न चढ़ने देगी। लेकिन कृष्ण ने गेंद मारकर राधा की गागर फोड़ ही दी। राधा रूठ गई। और माता यशोदा के पास श्याम का उराहना लेकर गई। यशोदा ने दूर से ही बिना देखे पूछा—कौन है जो उराहना लेकर आई है? कहाँ तुम पानी भर रही थीं? राधा ने बताया कि मैं राधा हूँ और जब मैं मथुरा में पनघट से पानी भर कर लौट रही थी तो तुम्हारे गोपाल ने मुझसे गली में बरजोरी की।—(५८) मैं तो उनसे हार गई। मैं जब यमुना जल भरने जा रही थी तो वह मेरे पीछे पड़ गये। मार्ग रोककर उन्होंने मेरी गागर फोड़ दी और मेरी बाँह पकडकर मुझे खूब झकझोरा। मेरे आभूषणों को खींच-खींचकर तोड़ डाला और तो और मेरी चोली के अंद-बंद भी खोल दिये। यह देखो मेरी चूनर भी तानी है।—(५९)

यशोदा को आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा—मेरा गोपाल तो पालने में पड़ा है। तुम वृन्दावन की इतनी सीधी-साधी राधा बेकार मेरे कन्हैया को झूठा दोष लगा रही है। तू झूठी और तेरा उराहना भी झूठा है।—(५८) अब राधा मन ही मन कहती—हे कृष्ण, ब्रज नारियाँ तो तुमसे हार गईं। जहाँ देखो वहीं तुम खड़े रहते हो। ताल, कुआँ, शाला और गौशाला में ही नहीं, आने-

जाने के मार्गों में और यमुना तट पर भी तुम खड़े दीखते हो। यहाँ तक कि तुम अब हमारे तन-मन और नेत्रों के सामने सदैव उपस्थित रहते हो। फिर मुझ राधा की क्या, वह तो जैसे तुममें और तुम उसमें रम गये हो। और गोपियाँ, वह तो तुम्हारे ऊपर न्यौछावर हैं।—(६०)

कृष्ण ने एक दिन फिर किसी गोपी को पनघट पर छेड़ा। वह यशोदा के पास उराहना लेकर आई कि कृष्ण ने पनघट पर मुझसे छेड़छाड़ की। मुझे बड़े जोर से कंकरी मारी जिससे मेरे सिर की गागर गिरकर फूट गई और मेरी चूनर भी भींग गई।—(६१) वह इस प्रकार यशोदा से कृष्ण की शिकायत कर ही रही थी कि वह भी वहाँ आ पहुँचे और माता यशोदा से उलटे गोपियों की ही शिकायत करते हुए कहने लगे—माँ, मुझे ब्रज नारियाँ बहुत सताया करती हैं। जहाँ देखो वहीं कुँए पर मुझसे जबरदस्ती पानी भराती हैं और अपने घर के समस्त छोटे-मोटे काम मुझसे कराती हैं। कभी वे बड़ी-बड़ी गोबर की टोकरी मेरे सिर पर रखती हैं तो कभी मेरा नारी का वेश बनाकर अपने साथ चक्की पिसाती हैं। यही नहीं, वे वृन्दावन की गलियों में मेरी बाँसुरी भी छीन लेती हैं और जब मैं उसे उनसे माँगता हूँ तो वे मुझे गालियाँ देती हैं।—(६२)

गोवर्धन धारण लीला—कृष्ण के एक हाथ पर गोवर्धन पर्वत को धारण करने तथा दूसरे हाथ से अपने अस्तव्यस्त आभूषणों को ठीक करने के कारण यशोदा वात्सल्य प्रेम के वशीभूत हो डर रही हैं कि कहीं यह भारी पर्वत कृष्ण के हाथ से गिर न पड़े, क्योंकि उनका कृष्ण अभी बालक है। इसी कारण वह एक हाथ में लकुटिया लिये हुए दौड़-दौड़कर सब लोगों से थोड़ा-थोड़ा-सा कृष्ण को पर्वत उठाने में सहारा देने के लिये कह रही हैं।—(६३)

इधर कृष्ण गोवर्धन धारण कर ब्रज के नर-नारियों एवं गाय-बछड़ों को इन्द्र के कोप से बचाने में व्यस्त हैं तो उधर इन्द्र मारे क्रोध के ब्रज को बहा देने के लिये अपने समस्त उपाय काम में ला रहा है। यहाँ तक कि पवन के प्रचंड वेग के कारण चतुर्दिक साँय-साँय हो रही है। समस्त बादल काले हो चले, जिनसे जल की सीधी धार ब्रज के ऊपर गिर रही है। इन सब के कारण ब्रज में ऐसा अन्धकार छा गया कि कहीं कुछ भी नहीं सूझ रहा है।—(६४) सात दिनों तक ब्रज की यही दशा बनी रही। ऐसा प्रतीत होता था मानों प्रलय होने वाला हो। लेकिन ब्रज पर इतने दिनों तक अतिवृष्टि करने के बाद इन्द्र का गर्व चूर हो गया। वह और अधिक वर्षा करने से थक गये, क्योंकि इतनी वृष्टि करने पर भी ब्रज में न एक बूँद जल गिरा और न पनारे बहे। अतः

यह सब कृष्ण की महिमा जानकर—इन्द्र उनकी शरण में आये और अपने दु:साहस के लिये क्षमा-याचना की।—(६५)

दधि-दान लीला—पौ फटते ही राधा अपनी सखियों के वहाँ गईं और सब से कहा कि आज दही बेचने के लिए गोकुल चलना चाहिए। वहाँ दही बहुत मँहगा बिकता है। राधा की बात सुनकर सखियों ने भी कहा—राधा, दही बेचने तो हम चल सकतीं हैं लेकिन गोकुल हम सब न जायेंगी, क्योंकि वहाँ नंद का लाड़ला कृष्ण बहुत छली है। फिर भी यदि वहाँ चलना ही है तो जो वृद्धायें या बच्चों वाली हैं, वे हमारे साथ न चलें। केवल हम युवतियाँ ही वहाँ चलें। देखें—कृष्ण क्या करते हैं ?

इस प्रकार निश्चय करने पर सब सखियों को बुलाने का कार्य एक नाइन को सौंपा गया। वह एक कटोरे में तेल लिये गली-गली जाकर आवाज देने लगी कि जिस किसी को गोकुल चलना हो वह आकर वेणीं गुँथा ले और हाँ जो सखी जल्दी तैयार होकर घर से निकल पड़े वह आगे चलकर ताल के पास पहुँचकर शेष हम सब के आने की प्रतीक्षा करे।

इस निर्णय के अनुसार सोलह सखी सुहागिनें और सोलह कन्यायें दही लेकर गोकुल की ओर चल पड़ीं। कुछ दूर जाने पर उन्होंने महुए और खजूर के पेड़ों की छाया में एक चरवाहे को देखा। वे उससे पूछने लगीं—हे चरवाहे, तेरे मुख पर ललाई क्यों छाई हुई है ? क्या वन में बर्रों ने उड़कर तुम्हें काट खाया हैं या वन में टेसू फूले आये हैं, जिससे तुम्हारे गालों पर लालिमा छा रही है ? चरवाहे कृष्ण ने उत्तर दिया—तुम सब ध्यान से मेरी बात सुनो। मुझे दधि-दान दिये जाओ, नहीं तो तुम सब को घर न जाने दूँगा।—(६७) तथा शृंगार किये हुए राधा की ओर संकेत करते हुए चरवाहे ने पुनः कहा—ओ बेंदी वाली, तनिक दही तो दिये जा। तुम और तुम्हारे नेत्र कितने रसीले हैं। जरा घूँघट खोलकर अपना मुख तो दिखाये जा और साथ ही तनिक मेरा उलझा मन भी सुलझाती जा।—(६८, ६९)

दधि-दान के लिये कृष्ण की इस प्रकार की जिद देखकर गोपियों ने कहा—हे कृष्ण, तुम निरर्थक अपनी शान दिखा रहे हो। हम यह मार्ग छोड़कर चली जायेंगी, लेकिन तुम्हें दधि-दान देना ठीक नहीं। फिर आज तो हमारे साथ वृषभानु की पुत्री राधा भी है। अतः आज तुम दान न पाओगे। आज हमने भी जिद ठान ली है। यदि तुमने हम ब्रज बालाओं पर हाथ उठाया और हमारे अनमोल आभूषणों को तोड़ा या गिराया तो समझ रखना कि तुम हमारे छल्लों की तरह बेमोल बिकोगे। और फिर हम तुम्हारी सब दान-लीला भुला देंगी। यदि आज तुम गोरस भी चाहो तो उसे भी न पाओगे। अतः हे श्याम,

हमारी कही मान लो, नहीं तो गुलचा ही खाओगे और फिर तुम मथुरा की गलियों में न आओगे। अब तक तो तुम नित्य पनघट पर ऊधम मचाया करते थे और आज मार्ग रोककर दधि-दान माँगने लगे हो।—(७०) हम सब ने तो यह सुना था कि अन्न-दान और गोदान ही सब दानों में बड़े दान हैं, किन्तु यह न सुना था कि नंदलाल दधिदान भी लेते हैं।—(६७)

गोपियों ने अनेक प्रकार के कृष्ण को मनाना चाहा कि आज वह उन्हें छोड़ दें। कल प्रातःकाल पुनः जब वे दधि बेचने आएँगी तो दधिदान देकर ही वापस जायेंगी। लेकिन कृष्ण को उन पर विश्वास नहीं होता था। बेचारी गोपियाँ भी करें तो क्या करें? बहुत विश्वास दिलाती हैं—हम सब कल प्रातःकाल दही लेकर अवश्य ही बेचने आएँगी। यदि विश्वास नहीं तो लो हम सबकी मटकी, मोती जड़ी हुई कीमती इँडुरी, ओढ़ने की चुनरी तथा बहुमूल्य आभूषण ही रख लो।—(७१) और आज हमको चले जाने दो, क्योंकि बहुतों के तो बच्चे घर पर रोयेंगे तथा तुम्हारे न जाने देने से विलम्ब होने के कारण बहुत-सी पीटी जायेंगी। यह सुनकर कृष्ण ने कहा—हे ब्रजनारियो! मुझे इधर-उधर न बहकाओ। मैं बिना दधिदान लिये तुम सब को घर न जाने दूँगा।

कृष्ण की ऐसी जिद देखकर गोपियों को एक बहाना सूझा। उन्होंने कहा—अच्छा, यदि नहीं मानते तो जल्दी से किसी पेड़ का पत्ता तोड़ लाओ और दधिदान लो। कृष्ण भी चतुर थे। वह गोपियों की चाल समझ कर कहने लगे—अरी गोपियो, पत्ते तो कीड़ों के खाने से झंझरीले हो गये हैं। अतः तुम अपने-अपने आंचल के छोर में ही मुझे दधिदान दो। विवश गोपियों ने फिर एक बहाना बनाया। उन्होंने कहा—हम लोगों के आँचल झूठे हो गये हैं, क्योंकि उनमें लड़कों की लार लगी हुई हैं। इसलिये शीघ्र पत्ते तोड़ो और दधिदान लो।—(६७)

गोपियों को इस प्रकार टालमटोल करते देख कृष्ण ने जबरदस्ती दधिदान लेने का निश्चय कर उसे कार्य-रूप में प्रारम्भ कर दिया। अब अपने बचने का कोई उपाय न देख निडर गोपियाँ संभीत हो विनय करने लगीं—हे श्याम! हमारी मटकी एवं मटके तो दे दो। देखो, दधि छलक-छलककर बाहों पर गिर रहा है, जिसके कारण हमारी लाल रंग से रंगी चूनर भी भींगी जा रही है। अतः यदि तुम अब भी हमारी कुंडरियाँ हमें वापस न करोगे तो हम तुम्हारी ब्रज नगरी में न रहेंगी। लेकिन इतना तो है कि अब जब भी तुम हमारी गली में आओगे, हम तुम्हारी मुरली और मुकुट छीन लेंगी।—(७२)

कृष्ण की दधिदान लीला की यह अनहोनी घटना समस्त ब्रज में फैल गई कि दधि लेकर जाती हुई सीधी-सादी गोपियों का सारा दही कृष्ण ने जबरदस्ती घाटी में लूट लिया तथा इसी छीना-झपटी में राधा का समस्त शृंगार भी लुट गया।—(७३, ७४) कृष्ण के इस व्यवहार से तंग आकर सब गोपियाँ इकट्ठी होकर यशोदा के पास उराहना लेकर गईं और कहने लगीं—हम अपनी सास-ननद की लाड़ली दधि बेचने गोकुल आ रही थीं कि बीच मार्ग में ही कृष्ण मिल गये। वह हमें यहाँ आने से रोकने लगे। यही नहीं, उन्होंने हमारा सारा दही खा लिया तथा मटकी भी तोड़ डाली। और हमारे कोमल हाथों को पकड़ कर झकझोरा भी। इस प्रकार वह नित्य ही हम सबसे रार किया करते हैं। यह सुनकर यशोदा ने खीझ कर कहा—हे गोपियो, हमारा तो कन्हैया पाँच वर्ष का है, वह रार या तकरार करना क्या जाने? तुम्हीं सोलह बरस की मस्तानी हो, तुम्हें ही यह सब आता है। यशोदा की इस प्रकार की बातें सुनकर गोपियों ने कहा—हे माँ, उस पाँच वर्षीय छली कृष्ण के आगे हम सोलह वर्ष की कुछ भी नहीं जानतीं।—(७५) यह प्रत्युत्तर सुन यशोदा ने पुनः कहा—हे गोपियों, वह तो तुम्हारे दही के कारण ही ऐसा हो गया है। और इसीलिए वह अपने साथ में अपने साथियों की टोली लिये घूमता रहता है।—(७६)

यशोदा का यह तर्कपूर्ण उत्तर सुनकर गोपियों ने व्यंग से कहा—यशोदा, तुम धन्य हो—तुमने अपनी कोख से ऐसे पुत्र को जन्म दिया। जिसने यमुना में नहाते समय हम सब की चूनर चुराई, पनघट पर पानी भरते समय हमारी गागर फोड़ी और अब जब दधि बेचने गोकुल आ रही थीं तो सारा का सारा गोरस ही बिखेर दिया।—(७७)

कृष्ण की इस दधिदान लीला एवं उनके नित्य प्रति के छेड़छाड़ के कारण गोपियाँ अब गोरस बेचने जाने से डरने लगीं। वे आपस में कहतीं—हे सखि, अब कैसे दधि-दूध बेचने चला जाय? इधर मथुरा और उधर गोकुल नगरी है। इन्हीं के बीच में कृष्ण का गाँव पड़ता है। अतः वहाँ जाते समय उनसे जब मार्ग में भेंट हो जाती है तो वह बरजोरी करके हम सबके मुख का घूँघट-पट खोलकर मुस्कराता है तथा शरीर से चिपट जाता है। हे सखि, अब तुम्हीं बताओ—दूध-दही बेचने कैसेचला जाये?—(७८)

चन्द्रावलि छलन लीला—दधिदान लीला में जिन बत्तीस गोपियों से कृष्ण ने दान मांगा था, उनमें चन्द्रावलि भी एक थी। यह चतुरा कृष्ण को धोखा देकर वहाँ से बरसाने भाग आई थी। यह ज्ञात होने पर कि चन्द्रावलि ने मुझे धोखा दिया, कृष्ण उसे छद्म रूप में छलने का विचार कर घर आये और

अपनी रोनी सूरत बनाकर खाट बिछाकर लेट गये । इतने में ही माता यशोदा उनके पास आईं और उन्हें अनमना देखकर घबराकर पूछने लगीं—गोपाल, तुम्हारा मुख आज उतरा-उतरा-सा क्यों है ? क्या सिर दुःख रहा है या तुम्हें ज्वर चढ़ आया है ? कृष्ण ने कहा—नहीं माँ, न मुझे सिर दर्द है और न ज्वर ही । मैं तो अब तुम्हारा देश छोड़कर काशीजी जा रहा हूँ, यहाँ न रहूँगा । क्या करूँ एक तो प्रातः होते ही मुझे गायों को लेकर गोचारण के लिये वन-वन भटकना पड़ता है और उस पर से जब दिन भर का थका-मादा सायंकाल घर वापस आता हूँ तो तरह-तरह के उलाहने मिलते हैं । अतः यह ले, अपने समस्त आभूषण वापस ले ले । मेरे हृदय में एक गोपी बस गई है, उसी के पास मुझे जाना है ।

कृष्ण की ये बातें सुनकर यशोदा ने उन्हें विविध प्रकार से समझाया बुझाया और कहा कि—तुम यह छेड़खानी छोड़ दो । मैं तुम्हारी एक नहीं, चार-चार शादियाँ कर दूँगी, वह भी दो गोरी और दो काली से । लेकिन कृष्ण अपनी जिद पर अड़ गये । और कहने लगे—माँ, मैं तो उस गोपी को छलने जाऊँगा ही । अतः तुम अपने समस्त आभूषण मुझे दे दो, जिससे मैं नारी का रूप बनाकर वहाँ जा सकूँ ।

कृष्ण ने हाथों में मेंहदी, पाँवों में महावर तथा माँग में सिंदूर भर अपना एक सुन्दर नारी का रूप बनाया और गली-गली—'चन्द्रावलि का घर कहाँ है'—पूछ-पूछकर खोजने लगे । किसी ने बताया कि जिस मकान की ऊँची अटारी तथा चन्दन के किवाड़ हों, समझ लेना वही उसका घर है । कृष्ण उसके घर का पता लगाते-लगाते उसके द्वार जा पहुँचे और—'बहिन द्वार खोल, बहिन द्वार खोल'–कहकर चन्द्रावलि को पुकारने लगे । चन्द्रावलि ने पुकार सुनी तो आश्चर्य में पड़ गई कि मेरी बहिन कहाँ से आ गई ? न मेरी माता ने जना और न मैंने गोद खिलाया, फिर यह कहाँ से आ गई ?········नारी वेशधारी कृष्ण ने बताया कि तुम्हारी माँ मेरी मौसी थी । इसी रिश्ते से तुम मेरी बहिन हो । इस तरह किसी प्रकार कृष्ण ने चन्द्रावलि को विश्वास दिलाया कि वह उसकी बहिन है और चन्द्रावलि ने भी सोचा अच्छा हुआ—यह आ गई, कुछ काम में मेरा हाथ ही बटायेगी ।

चन्द्रावलि ने अपने साथ कृष्ण से विविध घरेलू कार्य कराये लेकिन उन कार्यों को करने में कृष्ण का पुरुष रूप न छिप सका । अतः जब कृष्ण ने देखा कि चन्द्रावलि मुझे पहचान गई है तो उन्होंने स्पष्ट रूप में कह दिया कि बहुत दिनों तक तुमने मुझसे छल किया, आज तुमको मैंने छला । अब तुम मेरे हाथ

पड़ गई हो।''''''''चन्द्रावलि ने हाथ जोड़कर ईश्वर से प्रार्थना की कि जब कृष्ण से मेरा संयोग हो ही गया है तो आज की यह रात शीघ्र न बीते।
—(७९, ८०)

विविध छद्म लीलाएँ

मनिहारी लीला—कृष्ण राधा से मिलने के लिये नित्य नये-नये छद्म वेश धारण कर उसके गाँव बरसाना जाया करते थे। फलस्वरूप आज उन्होंने एक सुन्दर नारी रूप में मनिहारो का वेश धारण कर विविध प्रकार से अपना साज-श्रृंगार किया। सिर पर हरे बाँस की एक डलिया में भाँति-भाँति की चूड़ियाँ लीं और वृन्दावन की गलियों में आवाज लगाते हुए—'है कोई चूड़ियाँ पहिनने वाली'—वह बरसाना जा पहुँचे। वहाँ पहुँचकर उन्होंने राधा के घर के पास अपनी दूकान लगा दी।

राधा ने जब अपनी महल की अटारी पर से मनिहारी को देखा तो उसे चूड़ियाँ लेकर अपने पास बुलाया। उसके पास आने पर राधा ने उसका परिचय प्राप्त करने के लिये पूछा—तुम्हारा घर (ससुराल) और मायका कहाँ है? मनिहारी (कृष्ण) ने अपना परिचय देते हुए कहा कि—मैं मथुरा नगर की रहने वाली हूँ और यहाँ बरसाने में ही मेरा मायका है। अपने गाँव का ही ज्ञात कर राधा ने उस मनिहारी से चूड़ियाँ पहिनाने को कहा। कृष्ण को मनचाहा सुअवसर प्राप्त हुआ। वह अपने हाथों से राधा का कोमल हाथ दबा-दबाकर चूड़ियाँ पहिनाने लगे और साथ ही उनका रूप-रसपान भी करने लगे।
—(८१–८३)

गुदनारी लीला—एक दिन पुनः कृष्ण को राधा को छलने की सूझी। अतः उन्होंने अपना गुदनारी का रूप बनाया और राधा के द्वार पर जाकर पुकार लगाने लगे—गुदना गुदा लो, गुदना गुदा लो—मैं यमुना पार की रहने वाली हूँ और मैंने यह नया रोज़गार किया है। राधा ने आवाज सुनी तो अपने घर के द्वार तक आई और गुदनारी (कृष्ण) को पहचान कर घर के भीतर लिवा गईं तथा कहने लगीं—मोहन, हटाओ यह अपना छद्म वेश। यह सुनकर कृष्ण मुस्कराते हुए राधा के नेत्रों में नेत्र डाले सकुचे से रह गये।—(८४)

वैद्य लीला—कुछ दिनों बाद कृष्ण ने ललिता को छलने के लिये एक नई चाल चली। उन्होंने अपना वैद्य का रूप बनाया। कन्धे पर एक झोली में जंगल की अनेक जड़ी-बूटियाँ डालीं और गलियों में बड़े मधुर स्वर में आवाज देने लगे कि—वैद्य आया, वैद्य आया। उनकी यह पुकार सुनकर अनेक ब्रज-नारियाँ घर से बाहर निकल आईं।

ललिता ने जब सुना तो उसने इशारा देकर वैद्यजी को अपने पास बुलाया और कहा—मैं बहुत बीमार हूँ, तुम मेरी दवा करो। मेरी सास और ननद इस समय यहाँ नहीं हैं अतः मैं किससे कुछ कहूँ ? यह सुअवसर देख कृष्ण शीघ्र ही ललिता को लेकर घर के भीतर गये और अपनी झोली में एक गोली निकाल कर उसे दी, ललिता ने अपना घूँघट हटाकर अपनी नाड़ी दिखाई ! कृष्ण ने नाड़ी देखी और बताया कि तुम्हें सर्दी, गर्मी लग गई है—इसी कारण तुम्हारा चित्त घबरा रहा है। लेकिन तुमने दवा खा ली है अतः समझो तुम्हारी बीमारी ठीक हो गई और देखो, तुम्हें स्फूर्ति भी आ रही है।—(८५)

मोहिनी लीला—ललिता को वैद्य बनकर छलने के पश्चात् कृष्ण ने एक बार पुनः राधा को छकाने के विचार से अपना अनेक प्रकार से श्रृंगार कर एक सुन्दर गोपी का रूप बनाया और सिर पर एक मटकी में भैंस के दूध का जमाया हुआ दही ले, मालदही की चादर ओढ़ मस्तानी चाल से बरसाने की गलियों में घूमने लगे। वहाँ पर किसी ने भी उन्हें न पहचाना, लेकिन राधा को सन्देह हो गया कि शायद ये कृष्ण हैं जो नारी का वेश धरे बड़ी मस्ती में घूम रहे हैं।—(८६)

ग्वालिन राधा का कृष्ण के पास जाना—कई दिनों से कृष्ण के दर्शन न होने के कारण एक दिन राधा ने दही बेचने के बहाने उनके पास वृन्दावन जाने का विचार किया, फलस्वरूप अपना श्रृंगार कर सिर पर दही की मटकी रखी और कृष्ण के महल के पास पहुँचकर तरह-तरह से आवाज देती हुई दही बेचने का उपक्रम करने लगी—

दही ले लो सलौने स्याम,
नई आई ग्वालिनिया रे।
नई-नई मटकी नई ग्वालिनी,
नई कलोरी के दूध लइ आई रे।
दही ले लो सलौने स्याम····।

कृष्ण का उत्तर न पाने पर राधा ने पुनः पुकार दी—बिहारी, ओ बिहारी! मेरा दही ले लो। मैंने बिलकुल कोरी मटकी में दही जमाया है। यही नहीं, उसमें पानी की एक बूंद भी नहीं डाली है। इस बार कृष्ण ने राधा की आवाज सुनते ही बुलाया—अरी ओ ग्वालिन, दहिया इतै लै आ। राधा तो इस प्रतीक्षा में थी ही, अतः तत्काल कृष्ण की ओर चल पड़ीं। लेकिन कृष्ण के महल की ऊँची-नीची सीढ़ियाँ उनसे चढ़ी न गईं तो वह कहने लगीं—कृष्ण,

मुझसे तुम्हारी इन ऊँची-नीची सीढ़ियों पर चढ़ा नहीं जाता। इस पर कृष्ण ने कहा—नई सीढ़ियाँ बनवा दूँ, डोरियाँ डलवा दूँ, जिसे पकड़कर तुम ऊपर आ जाओ। अंततः किसी प्रकार राधा हाँफते-गाफते ऊपर पहुँचीं और कृष्ण से दही का मोल करने के लिये कहने लगीं। कृष्ण को दही तो लेना नहीं था, अतः वह कहने लगे—राधा, दूध-दही का क्या मोल करूँ ? लेकिन तेरी सुरति की क्या कीमत देनी होगी ? यह सुनकर राधा ने भी व्यंग में कहा—हे कृष्ण, एक टका मेरे दही का मोल है और लाख टका मेरा, लेकिन श्याम तुम्हें हो क्या गया है जो उल्टा-सीधी बातें कर रहे हो ? यदि मेरा साजन यह सुन ले तो तुम्हें पकड़वा मँगवाये। इतना कह राधा वहाँ से अपने घर की ओर चल पड़ी।

—(८७–८९)

कृष्ण को छोड़ राधा वहाँ से चल तो पड़ीं परन्तु उनका मन तो श्याम रंग में रंग गया था। वह मन-ही-मन सोचती हुई पग बढ़ाती जा रही थीं—मुरारी ! तुमसे मुझे स्नेह हो गया है, ये नेत्र तुममें उलझ गये हैं। कितना भी इन्हें सुलझाना चाहती हूँ पर सुलझाने में असमर्थ हूँ। जब से मैंने तुम्हारी साँवरी सूरत देखी है तब से वह मेरे मानस पटल से निकालने पर भी नहीं निकलती। अतः अब तो हे मुरारी, मैं हारी और तुम जीते।—(९०) इन्हीं विचारों में उलझी राधा अपने घर लौटने का मार्ग भी भूल गईं। वह लोगों से पूछने लगीं—अरे, हमें कोई बरसाना जाने का मार्ग तो बताओ। मैं वृन्दावन आकर घर जाने का मार्ग भी विस्मृत कर बैठी। राहगीरों ने उसकी बात सुनकर साश्चर्य पूछा—तू कहाँ की ग्वालिन है तथा कहाँ दधि बेचने गई थी ? राधा ने बताया—मैं बरसाने की रहने वाली, वृन्दाबन दधि बेचने गई थी।

इधर राधा की यह अवस्था। उधर श्याम, वह भी राधा के रूप-शृङ्गार का स्मरण कर खोये-खोये से हो रहे हैं। उसकी सौन्दर्य-राशि उनके मन में बस गई है। वह उसकी अनुपम छवि का अंकन करते हुए मन ही मन कहते हैं—

वृषभान की लली।
कोरी-कोरी मटकी है दूध की भरी।
मुख में पान नैन में सुरमा,
कजरा की कोर मोरे मन में बसी।
वृषभान की लली।—(९२)

वंशी-वादन : गोपियों की वंशी के प्रति ईर्ष्या—कृष्ण नित्य ही गाचारण को जाते और वंशी-वादन करते। जिसे सुनकर गोपियाँ ईर्ष्या से कह

उठतीं—देखो, अहंकार में डूबी बाँसुरी बज उठी। और फिर वे आपस में पूछतीं—हे सखि, किस चीज की यह बाँसुरी बनी हुई है तथा किस चीज के तार से कसी गई है ? इस पर कोई कहती है कि वह तो हरे बाँस की बनी है और सोने के तार से कसी गई है।—(९३) इस प्रकार आपस में बातें हो ही रही थीं कि कृष्ण की मुरली फिर बज उठी। उसका बजना था कि गोपियाँ खीझकर कहने लगीं—इच्छा होती है कि वृन्दावन जाकर समस्त बाँसों को ही कटवा दूँ, जिससे कृष्ण की यह मुरली फिर से न बज सके।—(९५) हे सखि, जब यह आधी रात को बजती है तो हमें सौत-सी दुःखदायी प्रतीत होती है। यद्यपि यह वन में ही काटी गई और लुहार द्वारा पोर-पोर पर छेदी गई, फिर भी मानों इसका सार, इसका औगुण नहीं निकला। यह हरे बाँस की बाँसुरी तो हम सबका चित्त चुरा ले गई है (९४)। लेकिन कृष्ण को क्या कहें। एक बार इसी वंशी वाले ने मुझसे कहा था कि मेरी और तुम्हारी प्रीति तो वृन्दावन के कुञ्जों में हुई थी। यह कहकर उसने मेरा मन हर लिया है। लेकिन अब उस प्रीति को निभाने की कौन कहे, उल्टे वह वंशी बजा-बजाकर हम सबका जी जलाया करता है।—(९५)

इधर एक ओर गोपियाँ कृष्ण के वंशी-वादन से परेशान हैं तो दूसरी ओर राधा भी त्रस्त हैं। हुआ ऐसा कि एक रात कृष्ण ने एक हरा बांस काट-कर उसकी मुरली बनाई और उसे बजाने लगे। उसकी स्वर-लहरी गोकुल ग्राम से मथुरा तक जा पहुँची। इसी समय मुरगे ने भी बांग दी। राधा सोते सें चौंककर उठ बैठी और कहने लगी—न जाने मथानी कहाँ रख दी। गोकुल जाने को देर हो रही है। यह सुनते ही राधा की भाभी ने बताया कि वहीं छींके पर दहेंड़िया, रस्सी और मटके में मथानी रखी है। तुम दही मथ लो। मथानी हाथ में लेकर राधा उठीं और कहने लगीं—उसके मुख की मुरली में आग लगे तथा बजाने वाला मर जाये जो इस प्रकार की वंशी बजाता है। मैंने धोखे में ही कच्चा दही बिलो दिया, जिससे दही भी खराब हुआ और मैं थक भी गई परन्तु माखन हाथ न लगा। हे भाभी, तेरा भाई मर जाये जिसने कि सारा का सारा माखन सत्यानाश कर डाला।

राधा की बातें सुनकर उसकी भाभी ने हँसी लेते हुए कहा—हे रानी ! न भौजी के बीरन मरें और न उसके माँ-बाप। स्वयं तो तुम रसिया कृष्ण के फंदे में फँसी हो और दोष देती हो दही को। प्रथम मथानी की रस्सी की फाँस थोड़ी और तंग कर लो और दही में ठंडा पानी डालकर मिला लो। फिर उसको मथो, माखन निकल आयेगा।—(९६, ९७)

रास लीला—रास-लीला में सम्मिलित होने में असमर्थ कोई गोपी अपनी सखी से बता रही है कि वृन्दावन में यमुना तट पर समस्त गोपियाँ एक-से एक बढ़कर साज-शृंगार किये एकत्र हो, ग्वालों के साथ मिलकर रास-नृत्य कर रही हैं। इन सब के बीच विविध आभूषणों से सज्जित राधा अति प्यारी लग रही हैं।—(९८, ९९) रास-लीला की शोभा अवर्णनीय होने के कारण सुरराज इंद्र भी उसे देखने को आये हुए हैं। चंद्रज्योत्स्ना छिटकी हुई हैं। तारों सदृश फूलों की कलियाँ खिल उठी हैं। इस प्रकार चतुर्दिक हर्षोल्लास व्याप्त है। लेकिन हे सखि, मैं अभागिन इस रास-नृत्य को देखने न जा सकी। —(९८)

इस लीला में कृष्ण ने समस्त गोपियों को विविध प्रकार से कामातुर कर दिया। उनके लिए कृष्ण का क्षण मात्र का वियोग भी असह्य होने लगा। कृष्ण को पुकारती हुई कहने लगीं—

ओरी आओ कन्हैया री।
लुकिये छिपिये भागिये, आओ बनैया री।
छाती छुवत है, कर पकरत है, बांको जनैया री।
छैल छुवन में गागर फोरे, ऐसो लरैया री। आओ० —(१००)

इधर गोपियाँ कृष्ण के लिये व्याकुल हैं, उधर वह राधा को साथ लिये यमुना में जल-क्रीड़ा कर रहे हैं। क्रीड़ा करते-करते काफी समय बीत चला। अतः राधा विलम्ब होने से डरती हुई मन-ही-मन सोचने लगीं—कन्हैया ने भी कैसा खेल मचाया। मुझे संग ले यमुना विहार करते हुए इतना विलम्ब कर दिया कि चाँदनी भी निकल आई। इधर राधा विलम्ब से व्याकुल हैं तो दूसरी ओर माता यशोदा बलदाऊ भैया के साथ चिंतित हो रो रही हैं कि मेरा कन्हैया कहाँ रह गया ? उसके बिना गायें और बछड़े कछार में अब तक फैले पड़े हैं।—(१०१)

राधा मान-लीला—एक सखी राधा के मान का उल्लेख करती हुई कहती हैं कि राधा ने भी क्या मान ठाना ? न वह कृष्ण की बात मानती हैं और न उनसे प्रसन्न होकर बोलती ही हैं। अतः कृष्ण उन्हें बैठकर विविध प्रकार से मना रहे हैं। लेकिन राधा मान नहीं तोड़ रही हैं। इसी बीच कृष्ण ने राधा की साड़ी की कोर पकड़ कर खींचा ही कि हे सखि, उनके इस प्रयास से राधा अपना मान भंग कर उनसे आ मिलीं, जिससे उनकी सवतों को भी बड़ी प्रसन्नता हुई।—(१०२, १०३)

हिंडोला—सावन आया। बागों में झूले पड़ गये। नंदकिशोर राधा को साथ ले चन्दन की पटुली और रेशमी डोर का झूला झूल रहे हैं। झूलते-

झूलते कभी वह राधा को बड़े वेग से झुलाने लगते हैं, जिससे वह भयभीत हो कृष्ण से विनय करने लगतीं हैं—हे प्रभु, तनिक धीरे-धीरे झुलाओ न। मुझे डर लग रहा है।—(१०४) राधा को इस प्रकार सभीत देखकर कृष्ण उन्हें आश्वासन देते हुए कहते हैं—राधा प्यारी, तुम तो मुझे प्राणों से भी अधिक प्यारी हो, अतः डरो मत। तुम गिरोगी नहीं।—(१०५)

इधर एक ओर तो वह राधा को भय से आश्वस्त कर रहे हैं और दूसरी ओर धीरे-धीरे झूला झुलाने के बहाने राधा से चिपटे जा रहे हैं। राधा उनकी इस छेड़खानी को देखकर कहती हैं—गोपाल, तुम क्यों इतनी छेड़-छाड़ कर रहे हो ? तुम्हीं यशोदा के एक अनोखे पुत्र हो, जो मुझे धीरे-धीरे अपनी बाहों में लिये जा रहे हो।—(१०६)

गोचारण—यमुना तट पर कृष्ण अपने गोप सखाओं के साथ गोचारण करते हुए उनके साथ खेल भी खेल रहे हैं। इसी बीच कभी-कभी वह वंशी भी बजाते जाते हैं, जिसकी मधुर ध्वनि गोकुल, वृन्दावन तथा मथुरा तक सुनाई पड़ने के कारण गोपियाँ उसकी माधुरी के वशीभूत हो यह ज्ञात करने के लिये उतावली हो उठती हैं कि यह ध्वनि कहां से आ रही है।—(१०७)

कृष्ण के इस वंशी-वादन को सुनकर गोप सखाओं ने कृष्ण से पुनः आग्रह किया कि श्याम एक बार फिर वैसी ही वंशी बजा दो— जैसे कि इसके पहले बजाकर तुमने ब्रह्मा, विष्णु एवं ऋषि-मुनियों के साथ-साथ समस्त संसार को भी मोहित कर दिया था।—(१०८) सबके अनुरोध पर कृष्ण ने पुनः वंशी बजाई, और उसकी ध्वनि में वह राधा का नाम ले-लेकर उसे पुकारने लगे। राधा ने सुना तो सोते से उनकी नींद उचट गई। वह अपनी सखी से कहने लगीं—हे सखि, जब-जब मोहन की वंशी बजती है तब-तब मैं बेचैन हो उठती हूँ। मैं अपना दुःख किससे कहूँ ?—(१०९) जी में तो आता है कि यदि मैं कृष्ण की मुरली पा जाऊँ तो मैं उसे उनकी ही तान में बजाकर उन्हीं के संग गाऊँ तथा जो-जो नृत्य वह कुंजो में करते हैं वही मैं कर-करके उन्हें दिखाऊँ। उनका मुकुट स्वयं धारण कर मैं उनकी माँग काढ़कर उनकी चोटी गूथूँ तथा अपनी साड़ी उन्हें पहिना कर नर से उन्हें नारी बना दूँ, जिससे वह वृषभानु सुता होकर बैठें और फिर मैं ब्रज में नंदलाल कही जाऊँ। पुनः जैसे उन्होंने समस्त ब्रजबालाओं को अपने वश में कर रखा है, वैसे ही मैं उन्हें भी अपने वश में करके रिझाऊँ।—(११०)

इतने में ही पुनः कृष्ण की वंशी बज उठी। तब एक सखी राधा से कहती है—राधा, तुम्हें मुरली के सुर में राधा-राधा कहकर कोई पुकार रहा

है। राधा भी अपना नाम सुनकर प्रत्येक झरोखों एवं द्वारों से देखती हैं कि हमें कौन कहां से बुला रहा है ? इन्हीं विचारों में डूबी वह पानी भरने चल पड़ीं। कृष्ण ने भी राधा से मिलने का अच्छा मौका देख अपनी गायें दौड़ा दीं। जिनके दौड़ने से धूल उड़ने लगी तथा उड़-उड़कर राधा पर पड़ने लगी। उनका शृंगार बिगड़ने लगा। राधा से जब न सहा गया तो वह कृष्ण से कहने लगीं—कृष्ण, अपनी गायों को तुम रोकते क्यों नहीं ? देखो, मेरी माथे की बेंदी धूल से भर जायेगी। राधा की यह गर्वोक्ति सुनकर कृष्ण ने भी वैसे ही उत्तर दिया—हे राधा, तुम अपनी बेंदी अपने घूँघट की ओट मे छिपा लो। मेरी गायें चरने को जा रही हैं। जैसे तुम्हें अपने माथे की बेंदी प्यारी है, वैसे ही मुझे मेरी गायें भी प्यारी हैं। अतः मैं अपनी गौएँ नहीं रोक सकता।—(१११) राधा ने यह सुना तो खीझकर मन में कहा—अच्छा देखूँगी, चराओ अपनी प्यारी गौओं को।

कृष्ण जब अपनी गायें चराने जाते तो मौका पाकर राधा कभी उनकी चरती हुई गायें बहोर देतीं तो कभी प्यासी होने पर उन्हें पानी पीने से रोक देतीं। इन कारणों से कृष्ण की गायें धीरे-धीरे दुर्बल हो चलीं।…………एक दिन नंदबाबा प्रातः होते ही खिरक गये तो वहाँ अपनी गौओं एवं सांड़ों को दुबली-पतली तथा झिरहरे देखकर कृष्ण से पूछा—कृष्ण, ये गायें इतनी दुर्बल क्यों हो गई है ? क्या वन के सब घास-पात सूख गये या यमुना का जल सूख गया जिससे इन सबकी ऐसी दशा हो गई है ? नंदबाबा के इस प्रकार पूछने पर कृष्ण ने बताया कि न तो वन की हरियाली ही सूख गई है और न यमुना का जल ही समाप्त हो गया है। बात यह है कि वृषभानु की घमंडिन लड़की राधा मेरी चरती हुई गौओं को चरते समय भगा दिया करती है। वह भी एक बार नहीं, दो-दो बार। एक बार तो प्रातःकाल और दूसरे सांयकाल। तीसरे वह इन्हें पानी पीते समय भी भगा देती है। इसी भूख और प्यास के कारण मेरी गायें दुर्बल होती जा रही हैं।

यह बताकर कृष्ण हाथ में छड़ी तथा मुख में मुरली लेकर वृषभानु के घर राधा का उराहना देने गये। वहाँ पहुँच कर वृषभानु-पत्नी से कृष्ण ने कहा—अपनी बेटी को रोक लो कि वह मेरी चरती हुई गायें न भगाया करे ! कृष्ण की ये बातें सुनकर राधा की माँ ने साश्चर्य कहा—हे लाल, तुम झूठ न बोला करो। मुझे असत्य वाणी प्रिय नहीं लगती। मेरी बेटी तो राजकुमारी के समान है, वह तो पलंग पर बैठा पान चबाती है। भला तुम्हारी गायें खदेड़ने वह क्यों जायेगी ? यह उत्तर सुनकर कृष्ण ने पुनः कहा—चाहे जैसी तुम्हारी राधा हो ! परन्तु जिस प्रकार तुम्हारी बेटी तुम्हें प्यारी है, उसी प्रकार मुझे

मेरी गायें भी प्यारी हैं। अतः अब कभी यदि तुम्हारी बेटी को मथुरा की गलियों में मैं पा गया तो विवाह करके उसे रख लूँगा।

इतना कहकर कृष्ण लौट गये। तब राधा की माँ ने राधा को बुला कर समझाते हुए कहा—हे बेटी, मैं बार-बार तुन्हें मना करती हूँ कि तू दही बेचने गोकुल न जाया कर। वहाँ पर अब अन्याय होने लगा है। माँ की बातें सुनते ही राधा का हृदय टूक-टूक हो गया। उसने कहा—माँ, अकेली दधि बेचने जाने की कौन कहे, मैं अब न तो वयो वृद्धाओं और न सहेलियों के साथ ही उस तरफ जाऊँगी—चाहे दूध से पुष्ट की हुई मेरी देह टूक-टूक क्यों न हो जाये।—(११२)

होली—फागुन आया। ब्रज की गलियों एवं कुंजों में होली का उल्लास छा गया। यमुना तट पर कृष्ण भी होली खेलने को उत्सुक हो उठे। राधा को होली खेलने के लिये आमंत्रित करने का कार्य-क्रम बना। अतः कृष्ण ने अपने किसी सखा से कहा—चलो, कुंज में होली खेलने के लिये राधा को भी बुलाया जाये।—(११३)

इधर श्याम ने राधा का स्मरण किया, और उधर राधा एवं उनकी सखियों ने भी होली का उड़ता हुई गुलाल देखकर कृष्ण को बुलाने का विचार किया और अपनी सहेलियों के साथ हाथ में हरे बांस का डंडा ले कृष्ण के पास जो कि अपने हाथ में जेरी लिये हुए थे, फाग खेलने जा पहुँचीं। —(११३–११५)। हृदय से तो राधा कृष्ण से होली खेलना चाहती थीं, परन्तु जब कृष्ण ने कदम्ब वृक्ष पर बैठकर राधा को रंगभरी पिचकारी मारी तब ऊपरी भाव से वह यह कहते हुए रूठ चलीं कि ऐसे धृष्ट से कौन होली खेले ? राधा को इस तरह रूठती देख कृष्ण ने उन्हें मनाते हुए कहा—राधा, खेल में कैसा मान ? चलो, अपनी साँवरी गोरी सहेलियों को साथ ले ब्रज में रची हुई फाग में हम भी मिल जायें। मानवती राधा ने कृष्ण का ऐसा अनुराग देखकर कहा—गिरधारी, हमारी-तुम्हारी पटरी नहीं खा सकती। तुम नहीं जानते कि मैं वृषभानु की लाड़ली पुत्री राधा हूँ। तुमने रंग से भरी हुई पिचकारी मेरे ऊपर चला दी जिससे मेरी साड़ी नष्ट हो गई। यदि तुम्हारा करतब मेरे पिता जी कहीं सुन लें तो तुम्हारी क्या गति करें, कह नहीं सकती।—(११६–११८)

मानवती राधा मन गईं। रंग की धार बहने लगी। कृष्ण के साथ राधा ने होली खेली जिसकी धूम में राधा की चूनर और श्याम की पचरंगी पाग रंग से भींग गई। यमुना तट पर होली के इस अपूर्व उल्लास में बरसाने की गोपियों की अपार भीड़ एकत्र हो गई, जिनमें कुछ साँवली तो

कुछ गौर वर्ण की थीं—वे ग्वाल-सखाओं के साथ हर्षित हो नाचने-गाने लगीं। इन्हीं के मध्य कृष्ण भी राधा को लेकर नृत्य करने लगे। होली का उल्लास अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया। भैया बलभद्र मधुर ध्वनि में ढप बजाने लगे। ग्वालों के मृदंग और खंजड़ी ने भी साथ दिया। फिर कृष्ण का मुरचंग क्यों न बजता ? वह भी बजा। कालिंदी तट पर मची इस अनुपम होली को देखने के लिये वेदों का पढ़ना छोड़कर ब्रह्मा, इन्द्रासन त्याग कर इन्द्र, तथा प्रमुख छत्तीसों देवताओं के साथ समस्त देवगण भी आये और स्वयं भी होली के रंग में रंगकर वापस गये।—(११९–१२२)

दूसरे दिन पुनः श्याम ने होली खेलने की ठानी तो यशोदा ने कहा—श्याम, आज होली खेलने बाहर न जाओ। कुँजों में यदि कहीं राधा और ब्रज की मतवाली गोपियाँ मिल गईं तो वह तुम्हें पकड़ लेंगी और फिर तुम्हारी वनमाला और मुरली छीनकर तुम्हें अपनी चूनर उढ़ाकर तुम्हारा शृङ्गार करेंगी। साथ ही, वे तुम्हारे ऊपर रंग डालकर अपनी सब दिन की कसर निकाल लेंगी। अतः हे कृष्ण, मेरी कही मानो। तुम बाहर न जाओ। यदि उस समय राधा मिल गई तो तुम्हारे कोई भी सखा तुम्हारे काम न आयेंगे।—(१२३)

इस प्रकार मना करने पर अन्यत्र न जाकर कृष्ण ने गोकुल में अपने ही द्वार पर होली मचा दी। सामने से आती किसी गोपी को पकड़कर उस पर रंग डाल दिया। विवश एकाकी गोपी श्याम से विनय करने लगी—साँवरे, मुझ पर रंग न डालो। मैं तो वैसे ही (तुम्हारे) रंग में डूबी हुई हूँ। लेकिन तुम्हारे इस तरह से मेरे साथ होली खेलने की बात यदि कहीं मेरे ससुर जी सुन लेंगे तो वह मुझे घर में घुसने तक न देंगे। और यदि कहीं यह बात मेरे जेठ जी ने सुन ली तो वह मुझे रसोई भी न छूने देंगे। फिर यदि इन सब से बची और अन्त में मेरे पति ने सुन लिया तब तो मैं उनके साथ उनकी सेज पर रहने से भी वंचित हो जाऊँगी। अतः ऐसी विवशता में हे कृष्ण, तुम मेरे ऊपर रंग न डालो। मैं तो ऐसे ही रंग में डूबी हुई हूँ।—(१२४)

लेकिन कृष्ण कहाँ मानने वाले थे। और जब कृष्ण मानने वाले नहीं थे, तो गोपियाँ ही क्यों चूकें ? वे अपनी अनेक सखियों को साथ ले कृष्ण के पास यह निश्चय करके आईं कि सब मिलकर उन्हें बांसों से मारेंगीं तथा उनकी एक आँख में काजल लगाकर एक आँख वैसे ही रहने देंगीं। जब वे अपने निश्चय के अनुसार वैसा ही करने लगीं तो कृष्ण भाग निकले। यह देख गोपियाँ शोर कर उठीं—

भागो जात भगन ना पावै, भलो मिलो फगुवारो।—(१२६)

ब्रज की जो भी गोपियाँ अपने घर से निकल-निकल कर कृष्ण के साथ होली खेल सकती थीं, सब ने जी भर कर होली खेली। लेकिन इनमें कुछ ऐसी भी थीं जो प्रकट रूप से घर के बाहर निकल कर कृष्ण से होली नहीं खेल सकती थीं। वे समाज के कठोर बंधन में बाँध दी गई थीं, जिससे वे छिपकर ही कृष्ण से होली खेलने का विचार मन ही मन कहने लगीं—

अपनो बार चंदा हिलमिल खेलें,
हमरी बार चंदा छिप जाइयो री।
आओ श्याम मिल खेलेंगे होरी,
शीशी में रंग भर लाइयो री।
ऊंची ऊंची साड़ी जरद किनारी,
घूंघट में समझाइयो री।—(१२७)

अक्रूर संग कृष्ण मथुरा-गमन एवं गोपी-विरह—कृष्ण को बुलाने के लिये कंस ने अक्रूर को अपना दूत बनाकर गोकुल भेजा। अक्रूर गोकुल आये। कृष्ण उनसे मिलकर प्रसन्न हुए। अक्रूर एवं अपने बड़े भाई बलदाऊ सहित जब कृष्ण मथुरा जाने लगे तो गोकुल के नर-नारी उनके विछोह का ध्यान कर बिलख पड़े और कहने लगे—हे ब्रजवासी कृष्ण! हमें इस प्रकार छोड़कर तुम कहाँ जा रहे हो? यदि हमें छोड़कर तुम चले जाओगे तो हम सब गले में फाँसी डालकर अपने प्राणों को छोड़ देंगे।—(१२८, १२९)

इस प्रकार गोकुल को दुःखी कर कृष्ण अक्रूर के साथ मथुरा चले गये। वहाँ पहुँच कर सर्वप्रथम उन्होंने कंस के हाथी को पछाड़ा, मल्लों को मार गिराया एवं राजा कंस की शिखा पकड़ कर उसे छत पर कुचल-कुचल कर यमलोक पहुंचा दिया।—(१२९)

उधर कृष्ण मथुरा गये। इधर गोकुल उनके बिना विरह-सागर में डूब गया। सभी कृष्ण-वियोग में दुःखी हो गये। माता यशोदा तो कृष्ण विछोह में जैसे पागल-सी हो गईं, उनका कृष्ण सदैव उनकी आँखों में झूलने लगा। उन्हें रात में नींद न आती। वह उन्हीं के ध्यान में डूबी हुई कभी देखतीं कि उनका कृष्ण छींके पर रखी दधि की मटकी फोड़-फोड़कर उसका दही गोकुल की गलियों में छिपाकर खा रहा है तो कभी देखतीं कि वह तो वृन्दावन की कुंज गली में गोपियों के साथ रास-लीला कर रहा है।—(१३०)

गोपियाँ कृष्ण-विरह में और भी दुःखित हैं। वे विक्षिप्त-सी हो कृष्ण को यत्र-तत्र ढूंढ़ती हैं। कभी वे यमुना के घाटों पर उन्हें खोजने जाती हैं तो

कभी गोकुल और वृन्दावन के चप्पे-चप्पे छानती फिरती हैं। लेकिन कृष्ण वहाँ हों तब न मिलें। अतः वे निराश हो कहने लगती हैं—मेरे गोपाल, अब तुम कब मिलोगे ? तुम्हें हमने सर्वत्र ढूँढ़ डाला।—(१३१, १३२)

राधा की दशा का तो कहना ही क्या। वह तो श्याम विरह में और भी विक्षिप्त हो इधर-उधर भटकती फिरती हैं। कभी वह कहती हैं—हे श्याम, मैं तुम्हारे बिना कहीं की न रही। तुम्हारी खोज में मैं तालों पर गई थी लेकिन वहाँ तुम्हारी मधुर स्मृति में, मैं ऐसी खो गई कि मुझे अपने तन-मन की तनिक भी सुधि न रही। वह तो जब हवा के झोंके से मेरा शरीर निर्वस्त्र हो गया, तब मुझे ध्यान आया कि मैं कहाँ हूँ। इसी तरह एक दिन मैं बाग में फूल चुनने गई थी लेकिन वहाँ भी तुमसे मिलने की प्राचीन स्मृतियाँ जाग उठीं और मैं फूल बीनना भूलकर तुम्हीं में खो गई। बहुत समय बीतने पर याद आया कि मैं यहाँ फूल चुनने आई थी। इस प्रकार हे कृष्ण—कहाँ तक बताऊँ, अब तो तुम्हारे बिना नहीं रहा जाता।—(१३३)

एक बार जब हमारा-तुम्हारा संयोग हो ही गया है तो फिर तुम क्यों मुझसे बिछड़ गये ? मुझसे दूर न हो, मेरे पास आओ। यह समय भी बड़ा सुहावना है। फिर यदि तुम्हें मुझसे बिछड़ना ही था तो वैरिन वंशी बजाकर मुझे अपनी ओर आकर्षित कर प्रीति की डोर क्यों बाँधी थी ?—(१३४)

राधा इन्हीं विचारों में डूबी थी कि एक गोपी उसके पास दौड़ती-दौड़ती आई और रात्रि में देखे अपने सुखद स्वप्न को बताने लगी—हे सखि ! आज वृन्दावन की कुंज गली में कृष्ण से मेरी भेंट हुई और फिर वहीं उनसे एक झड़प भी हो गई। इसके बाद देखती हूँ कि ब्रज का एक रूपसी मालिन प्रिय श्याम के लिये एक सुन्दर-सा हार गूँथकर ले आई। हे सखि ! प्रिय मिलन के इस संयोग-सुख से मेरे नेत्रों में प्रेमाश्रु आ गये, जिससे मेरी आँखों में लगी काजल की रेख भी देखो बह गई। एक अन्य गोपी स्वयमेव कहती है—हे कृष्ण, अपने नगर जाते समय मैं मार्ग भूल गई हूँ। तुम आकर मुझे राह बता दो—क्योंकि एक तो सावन-भादों की अँधेरी रात, दूसरे वर्षा की नन्हीं-नन्हीं फुहार और तीजे मेरे सिर पर जल से भरी गागर रखी है। अतः हे घनश्याम अब तो तुम आकर मेरी सुधि लो। देखो न, यमुना अथाह गहरी है। उसे मैं कैसे पार करूँ ? फिर पार जाने के लिये जो नौका है, वह भी जर्जर हो चली है। उस पर से प्रचंड वायु का झोंका चल रहा है। ऐसी दशा में हे गोपाल, अब तुम्हीं आकर मेरी इस जीवन-नौका को पार लगाओ। हे प्रभु, मैं करूँ भी तो क्या करूँ ? मुझे कुछ नहीं सूझ रहा है। मैं तो केवल तुम्हारे दर्शन की ही प्यासी हूँ। आओ, हम-तुम महरा-महरी के रूप में कुँए पर जल भरने चलें

और वहाँ से जल भर लायें। बागों में चलकर फूल तोड़ें और एक सुन्दर-सा हार बनाकर तुम्हारे गले में डाल दें, फिर महलों में चलें। वहाँ हम दोनों प्रिया-प्रियतम के सदृश हो, मैं तुम्हें अपने हृदय से लगाकर तुम्हीं में खो जाऊं।—(१३६, १३७)

हे श्याम—शीघ्र आओ। तुम्हारी प्रतीक्षा में वर्षों बीत गये। इन बारह मासों को मैंने कैसे व्यतीत किया है—कहाँ तक बताऊँ? चैत मास में अपने चारों ओर का वातावरण देख-देखकर मैं तो अपना हृदय ही खो बैठी। बैशाख लगा—तो तुम्हारे बिना नींद की कौन कहे, आँख भी नहीं झपीं। वह बीता तो जेठ की प्रचंड वायु शरीर को अग्नि की तरह जलाने लगी। आषाढ़ लगा। वनों में मोर शोर कर कूजने लगे। देखते ही देखते सावन आया। रिमझिम-रिमझिम वर्षा होने लगी। समस्त धरती लहलहा उठी। लेकिन भादों की घनघोर अंधेरी रात तो तुम्हारे बिना बड़ी डरावनी लगती है। हे गिरधारी, तुम तो क्वार में ही आने का वादा कर गये थे परन्तु अब तो कार्तिक भी लग गया और तुम वापस न लौटे। इससे मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है। अगहन लगते ही मुझे अब तुम्हारे आने में भी सन्देह होने लगा है कि तुम आओगे भी या नहीं। इस विचार मात्र से ही मुझे वेदना हो रही है।—(१३८) यदि कहीं मैं गोपी न होकर ब्रज की मोर होती तो कितना अच्छा होता। हे सखि! फिर मैं ब्रज की मोर ही क्यों न हो गई? कम से कम इन विरह-दुःखों से छुटकारा तो मिल जाता। मोर होती तो प्रसन्न होकर मथुरा में रहती, वृन्दावन के वन फलों को खाती और कूजने के लिये गोकुल तक चली जाती। वहाँ उड़-उड़कर कदम्ब वृक्षों पर बैठती और चारों ओर दृष्टि फेरकर कृष्ण को तो ढूंढ़ती। जब मेरे उड़ने से पंख टूट-टूटकर पृथ्वी पर गिरते तो उनको वह बीन-बीन कर मोर मुकुट बनाकर धारण तो करते। हे सखि, इस प्रकार अपने प्रियतम कृष्ण के अंग-स्पर्श का सुख तो पाती रहती।—(१३९)

इधर गोपियाँ व्यथित उदास हैं—तो उधर राधा की दशा और भी विचित्र हो रही है। रह-रहकर पुरानी स्मृतियाँ उसके हृदय को कुरेद उठती हैं।—(१४०) वह उन्हीं में डूबी अपने वर्ष भर के कष्टों को याद कर कहती है—हे कृष्ण, तुम्हारे बिना मेरे कष्टों को कौन दूर करे? पावस ऋतु में जब मेघ नभ में बिजली चमकाते एवं गर्जन करते हुए छकाछक वर्षा करते हैं, तब मैं तुमसे मिलन के लिये अधीर हो उठती हूँ। वर्षा के व्यतीत होते ही शरद आगमन पर जब निर्मल आकाश में चाँदनी छिटक जाती है, गड्ढों एवं पोखरों के गदले जल निर्मल हो जाते हैं तथा जब अगहन में किसान बुआई और जुताई में जुट जाता है तो मुझ एकाकी विरहिन का मन तुम्हारे बिना अधीर एवं

व्याकुल हो उठता है। हे प्रिय, यह शरद बीतने भी नहीं पाता कि शिशिर आ घेरता है। फिर पूस की शीत, वह तो शरीर में जैसे समा जाती है। शरीर कांपने लगता है। पर यह सब दुःख तो तुम्हारे बिना किसी प्रकार सह भी लेती हूँ। लेकिन वसंत में हे कृष्ण, मैं किसके साथ होली खेलूँ? किस पर रंग डालूँ? चैत लगते ही बन में टेसू फूल जाते हैं जो दहकते अंगारे सदृश लगते हैं उस पर से वैशाख की तपती हुई प्रचंड वायु और जेठ की धू-धू करती हुई दोपहरी की धूप मेरे शरीर को झुलसा देती है।—(१४१)

राधा इन्हीं बीते दिनों की दुःखद स्मृतियों में उलझी थी कि कोई गोपी उसको होली खेलने के लिये आमंत्रित करने आई। राधा उससे बातें करते-करते उदास हो कह पड़ी—हे सखि, श्याम घर नहीं आये। उनके बिना कौन, किसके साथ होली खेले? वह तो हमसे मुख मोड़कर कुब्जा के संग रास-रंग मना रहे हैं। और मैं हूँ कि यहाँ उन बिन होली की अग्नि में जली जा रही हूँ। तुम्हीं बताओ, मैं क्या करूँ? मेरा तो कोई बस ही नहीं चलता। सभी सखियाँ हिल-मिलकर फाग खेल रही हैं लेकिन निष्ठुर श्याम हैं कि उन्हें मैंने चले आने के लिये अनेक पत्र लिखे, फिर भी वह अब तक न आये। उन्हें पाने के लिये मैं दिन-रात तड़पती रहती हूँ, जिसके कारण मेरे तन-मन में आग-सी लगी रहती है। हे सखि, जी में तो अब यही आता है कि मैं विष खाकर मर जाऊँ। इससे अच्छी मेरे लिये अब कोई बात न होगी।—(१४२)

लेकिन हे सखि, ब्रजराज कृष्ण से मेरी इतनी-सी बात जाकर अवश्य कहता—फागुन आ गया। झाँझ और ढप बजने लगे। जहाँ देखो, वहीं भीड़ दिखाई पड़ती है। लेकिन हे गोपाल, मुझ राधा को तो केवल तुमसे ही मिलने की अभिलाषा है, जिसके आगे मैं सब कुछ भूल गई हूँ। अतः गोपाल, तुम्हारे बिना मेरा जीवन अन्धकारपूर्ण हो चला है। एक बार तो ब्रज आओ। मैं तो अब अपने इन आँसुओं का रंग बनाकर अपने नेत्रों की पिचकारी से तुम्हारे ऊपर इन्हें छोड़ते-छोड़ते हार गई हूँ। हे प्रिय, मैं तुम्हें ब्रज की कुंज-गलियों में भी ढूँढ़-ढूँढ़कर थक गई। यदि तुम मेरी इतनी प्रार्थना पर भी न आना चाहो तो एक बार अपनी ही इच्छा से आकर दर्शन दे जाओ।
—(१४२, १४३)

अब तो गोपाल, मैं तुम्हारी राधा जोगिन होने जा रही हूँ। तुम्हारे मिलन की प्रतीक्षा में कदम्ब वृक्ष के नीचे बैठी मैं अपने गीले केशों को सुखा रही हूँ। लेकिन कहाँ तक तुम्हारी आशा करूँ? अब तो आशा छोड़कर निराश हो मैंने हाथों में माला ले ली है। किसी तरह तुम्हारे दर्शन पाने की लालसा में जी रही हूँ, लेकिन इस झूठी लालसा से भी कब तक जीती रहूँगी?–(१४४)

धीरे-धीरे जीवन बीतता जा रहा है और तुम हो कि आते ही नहीं। फिर तुम्हारे आने की कौन कहे ? जब से मथुरा गये हो, कभी हमारी सुधि भी न ली। एक पत्री भी न भेजी, जिसके कारण न दिन में मुझे चैन पड़ती है और न रात में नींद ही आती है। बस रह-रहकर जी घबरा उठता है। हे प्रियतम, मेरी तरह मेरी सभी सखियाँ तुम्हारी विरहाग्नि में रो-रोकर अश्रु बहा रही हैं। अतः अब तो केवल तुमसे एक ही विनय है कि—तुम चाहे एक दिन के लिये ही आ जाओ, लेकिन आओ अवश्य।—(१४५)

गोपी-उद्धव सम्वाद—विरह-व्यथित गोपियों को सान्त्वना देने के लिये कृष्ण ने उद्धव को अपना सन्देश देकर ब्रज भेजा। उन्होंने ब्रज आकर दुःखित गोपियों को धैर्य बंधाते हुए कृष्ण की पत्री दी। गोपियाँ पत्र पाकर कृष्ण वियोग में डूब गईं। उन्हें सिवा कृष्ण के और कुछ नहीं सुहाता था। वे उद्धव से कहने लगीं—हे उद्धव ! कृष्ण की यह पाती तुम वापस ले जाओ। क्योंकि पाती देखते ही हमारे अश्रु प्रवाहित होने लगते हैं, और उसे पढ़ते ही हृदय फटने लगता है। फिर अब उनका और हमारा सम्बन्ध ही कैसा ? न हम उनके हैं और न वे हमारे हैं। वह तो अब कुब्जा के हो गये हैं। यदि वह हमारे होते तो कभी तो हमारी सुधि लेते। अतः जब वे हमारे नहीं तो फिर इस प्रकार का सन्देश भेजकर हम सब का हृदय क्यों जलाया करते हैं ? अच्छा तो यह है कि तुम उनका यह सन्देश लेकर यहाँ से वापस चले जाओ।—(१४६)

अपनी मार्मिक व्यथा को व्यक्त करते हुए गोपियाँ निष्ठुर श्याम के श्याम रंग पर कटाक्ष करती हुई कहने लगीं—हे उद्धव ! हमारे कृष्ण को ही क्या, सभी काले रग वालों को देखो और आजमाओ कि वे सभी अपने-अपने मतलब के साथी हुए। जब तक उनका (कृष्ण) मतलब सधा—वे हमारे बने रहे, नहीं तो हमें भूल गये। काली कोयल, काले भ्रमर और काले नाग को ही देखो, इन तीनों का रंग कितना सुन्दर है, लेकिन ये सब हृदय हीन हैं। कोयल के बच्चे को कौआ पालता है। उसकी सेवायें कर उसे बड़ा करता है। लेकिन जब वही बड़ा हो बोलने लगता है तो उसका साथ छोड़कर अपने परिवार में चला जाता है। इसी प्रकार भ्रमर को देखो, विविध फूलों का रस चूसकर वह पुनः उन फूलों पर आने की कौन कहे, उन्हें देखता भी नहीं। नाग है—उसे कितना ही दूध पिलाओ, लेकिन वह अपना विषैलापन कब घटाता है ? जब वह काट लेता है तो लहर तक नहीं आती। यही हाल यशोदा के लाल और नन्दजी के लाडले पुत्र कृष्ण का है। जब तक हम सब से मतलब निकलता रहा, वे कोयल के सुत की तरह हमारे बने रहे। और जब कुछ बडे हुए, हमारे काम आने योग्य हुए तो हमें ही छोड़कर मथुरा जा बसे।—(१४७)

अतः हे उद्धव ! श्याम किसी के सनेही थोड़े ही हैं । जिस माँ यशोदा ने उन्हें नौ मास तक अपने गर्भ में रखा और फिर कितने ही दिनों तक गोद में खिलाया, उस पर भी जब वह उनके न हुए - उन्हें भूल गये तो कैसे कोई कहे कि वह हम सबको चाहते हैं, हमारे प्रति उन्हें स्नेह है ? जब तक कृष्ण ब्रज में रहे, गोकुल का दूध-दही खूब जी भरकर खाया । लेकिन उसी गोकुल से जब वह मधुवन को जाने लगे तो हम गोपियों के कितना ही रोकने और नन्दबाबा की सौगन्ध दिलाने पर भी वह न रुके, न वहाँ जाकर उन्होंने हम सबकी एक बार सुधि ही ली । हे उद्धव ! यदि हम कृष्ण को इतना निर्मोही जानती होतीं तो उनसे कभी भी प्रीति न करतीं । इसी प्रीति के कारण ही हम सबने लोक-लज्जा त्यागी, कुटुम्ब से सम्बन्ध तोड़े, फिर भी वे हमारे न हुए । अच्छा है—जायें, वे उसी कुबरी कुब्जा से प्रेम करें ।—(१४८, १४९)

लेकिन हे उद्धव ! कृष्ण के कुंज वनों को छोड़कर चले जाने से हमें कुछ भी नहीं समझ में आ रहा है कि अब हम क्या करें ? यदि कहीं हम गोपी न होकर आज जल की मछली भी होतीं तो भी स्नान करते हुए कृष्ण का चरण-स्पर्श तो कर लेतीं । या यदि हम वन की हरिणी होतीं तो कृष्ण के छोड़े गये बाणों से बिधकर प्राण ही त्याग देतीं या कहीं हम सुरभी होतीं और कृष्ण हमें अपने हाथों से दुहते तो हम अपने दूध से उनकी गागर को भर देतीं । इस प्रकार हे उद्धव ! यदि हम गोपी न होकर आज कुछ और होतीं तो कृष्ण का अंग-स्पर्श तो अवश्य ही किसी-न-किसी रूप में प्राप्त कर लेतीं । लेकिन अब हम गोपी होकर करें भी तो क्या करें ?—(१५०)

उद्धव प्रत्यागमन और गोपी सन्देश—ब्रज की दयनीय दशा का अवलोकन कर जब उद्धव कृष्ण के पास मथुरा वापस जाने लगे तो राधा ने उनके द्वारा कृष्ण के पास अपना सन्देश भेजते हुए कहा—हे उद्धव ! तुम मथुरा जाकर माधव से कहना—हे रस के लोभी भ्रमर (कृष्ण), तुम्हारे रंग में रंगी श्यामल कली राधा अब जोगिन हो गई है, उसने तुम ऐसे निर्मोही कन्त के कारण अपने सोलहों शृंगार त्याग दिये हैं । न वह कुछ बोलती है और न उसे कुछ खाना-पीना ही अच्छा लगता है । उसका शरीर सदैव जलता रहता है, उसकी सहेलियाँ उसे समझा-समझा कर हार गईं लेकिन उसे तुम्हारे बिना कुछ भी नहीं भाता । अब तो ऐसा लगता है—मानों उसके ऊपर अनन्त दुःख आ पड़े हों, जिसके कारण उसके जीवन का भी अब अन्त समीप ही हो ।—(१५१) और हे उद्धव ! कुबरी कुब्जा को अलग बुलाकर कृष्ण से कहना कि राधा कह रही थी कि वह उसको इतना भूल गये कि एक बार याद भी न किया । जब से वह उसे छोड़कर मथुरा चले गये तब से उसका मन आठों याम उन्हीं के दर्शन के

लिये लालायित रहता है। कहाँ तो वह यह कहकर गये थे कि वह परसों ही वहाँ से वापस आ जायेंगे, लेकिन परसों की कौन कहे—बरसों बीत गये, फिर भी वह ब्रज न लौटे। बताओ, राधा अब अपने हृदय की लज्जापूर्ण बातें उनके बिना किससे कहे ?·········हे उद्धव ! राधा तो भाग्य में श्याम वियोग लिखाकर जन्मी ही थी। अतः जो कुछ भाग्य में ब्रह्मा का लिखा हुआ है, वह मिट थोड़े ही सकता है। अब तो वह कृष्ण का नाम लेते हुए विष खाकर मर जायगी। हाँ, उसकी वह सौत कुबरिया प्रसन्न रहे और कृष्ण चिरजीवी हों।—(१५२)

राधा का उद्धव से कृष्ण के प्रति व्यक्त किये गये उपर्युक्त सन्देश के पश्चात् गोपियों ने कृष्ण के लिये अपने सन्देश में उद्धव से कहा—हे उद्धव ! मथुरा जाकर तुम कृष्ण को भाँति-भाँति से हम सबका स्मरण दिलाना। यदि वे हम गोपी-ग्वालों को भूल गये हों तो हे उद्धव, तुम वहीं रहस रचा देना, तथा यदि वह नन्द और माता यशोदा को भूल गये हों तो तुम मोहन को माखन-मिश्री देकर उनकी सुधि लाने की चेष्टा करना। और यदि वह समस्त ब्रज को ही भूल गये हों तो यहाँ का सारा हालचाल बताकर उन्हें यहाँ का स्मरण कराना। सम्भव है—तुम्हारे इन प्रयत्नों से हम भूले-बिसरों की उन्हें सुधि आ जाये, और वह एक बार हम सबको यहाँ आकर अपना दर्शन दे जायें। फिर हे उद्धव ! अब तो आषाढ़ भी बीत चला, लेकिन हरि ने हमारी सुधि न ली। मधुवन के दादुर, मोर और पपीहे भी हमारी ओर देख-देखकर श्याम-श्याम रटा करते हैं। परन्तु श्याम ऐसे हैं कि उन्होंने इनकी भी खबर न ली, अतः मथुरा पहुँचकर तुम कृष्ण को समझाना कि हम गोपियाँ जब उनके विषम वियोग में दुःखित हो विष खाकर मर जायेंगी तो उन्हें फिर पछताना ही हाथ लगेगा।—(१५३, १५४)

उद्धव ब्रज से सबका सन्देश लेकर जब मथुरा पहुँचे तो हँस-हँसकर कृष्ण उनसे ब्रज की बातें पूछते हुए कहने लगे—हे उद्धव ! नन्दबाबा और यशोदा माँ कैसी हैं ? हमारी गायें और हलधर भैया कैसे हैं ? और हाँ, ब्रज की गोपियाँ कैसी हैं ? तथा अब वे किसके सहारे जी रही हैं ? यह सुनकर उद्धव ने कहा—हे गोपाल ! बाबा नन्द और माता यशोदा, तुम्हारी गायें और भैया बलदाऊ—सभी वहाँ अच्छे हैं। परन्तु गोपियाँ, वह तो तुम्हारा ही सहारा पाने के लिये भटकती फिरती हैं।—(१५५)

१५. कृष्ण द्वारिका गमन—उद्धव के मथुरा आगमन एवं समय बीतने के साथ ही कृष्ण मथुरा का समस्त कार्य समाप्त कर द्वारिका जाने को तैयार हुए। मथुरावासी कृष्ण का द्वारिका जाना ज्ञात कर उनसे विनय करते हुए रो पड़े—हे गिरधारी ! तुम द्वारिका न जाओ। वृन्दावन के प्रत्येक घने वन और

वृक्ष तुम्हारी यहाँ रक्षा (सम्भवतः जरासन्ध और कालयवन से) करेंगे, और फिर तुम्हारे बिना तुम्हारे इस ब्रज की रक्षा कौन करेगा ? क्या कुब्जा के मन यही भाया कि इस बसी-बसाई ब्रज की बस्ती को उजाड़कर अब तुम अन्यत्र जा बसो और बसाओ। हे प्रभु ! हम सब तुमसे यही विनय करते हैं कि तुम यहीं रहो, द्वारिका न जाओ।—(१५६) देखो, समस्त ब्रज के साथ-साथ माता यशोदा और नन्दबाबा भी तुम्हारे जाने से व्याकुल हो रहे हैं। वे तुम्हारे बिना कैसे जीवित रहेंगे ? अतः हे कृष्ण, वहाँ जाने का विचार त्याग कर तुम सबके उद्विग्न हृदय को धैर्य बँधाओ।—(१५७)

रुक्मिणी विवाह—द्वारिका वासी आपस में बातें करते हुए कह रहे हैं कि हमने सुना है श्रीकृष्ण बड़े साज-बाज से रुक्मिणी के साथ विवाह कर रथ में बैठे बलदाऊ जी सहित कुंडिनपुर से द्वारिका वापस आ गये। उन्होंने विवाह में अड़चन डालने वाले समस्त नरेशों को अपने पौरुष और शस्त्रबल से हराकर उनका मान-मर्दन किया। इसी प्रसन्नता में आज द्वारिका में बधाव भी बज रहा है।—(१५८, १५९)

सुदामा दारिद्र्य भंजन—निर्धन सुदामा द्वारिका जाकर कृष्ण से मिले। करुणानिधान कृष्ण ने उनकी दरिद्रता क्षण भर में दूर कर दी, लेकिन सुदामा को वहाँ उनकी कृपा का पता न चला। जब वह वहाँ से वापस अपनी मिट्टी की मड़ैया के पास आये तो देखते हैं कि उसके स्थान पर सोने का महल खड़ा है। तुलसी के विरवा के स्थान पर चन्दन के वृक्ष लहरा रहे हैं। यही नहीं, महल की पहली पौर पर हाथी, दूसरी में घोड़े, और रत्नजटित तीसरे पौर में स्वयं विश्वकर्मा जी बैठे उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं।—(१६०)

राधा का पथिक द्वारा कृष्ण को सन्देश—उद्धव के मथुरा प्रत्यागमन के पश्चात् जब राधा को पुनः कृष्ण का कोई समाचार न मिला तो उन्होंने एक पथिक द्वारा कृष्ण के पास सन्देश भेजा—हे प्रिय ! तुम्हारे बिना मैं किसके साथ होली खेलूं ? फागुन की ऋतु भी बीती जा रही है, और तुमने अब भी मेरी सुधि न ली। तुम्हारे बिना मेरी ठीक वही दशा हो गई है, जैसे जल वियुक्ता तड़पती मछली की होती है।....हे पथिक, तुम बिना किसी भय के जाकर मेरे हरि से कहना—हे कृष्ण ! हम सब तुम्हारे दर्शन के लिये तरस रही हैं। क्या तुम्हें अपने माता-पिता की भी तनिक चिन्ता नहीं ? तुम्हारे बिना उनकी कैसी अवस्था हो चली है, इसकी भी तुम्हें खबर नहीं ? फिर मुझ राधा को भी भूल गये जो तुम्हारी सोलह हजार अड़सठ पटरानियों में प्रमुख है तथा अब जिसकी तुम्हारे

बिना समस्त जीवनी शक्ति नष्ट हो चुकी है। बस, केवल तुम्हारे मिलने की थोड़ी सी आशा ही उसमें शेष है जिसके फलस्वरूप वह जीवित है।—(१६१, १६२)

राधा की यह विरहोक्ति सुनकर एक गोपी ने कुब्जा पर व्यंग कसते हुए कहा—हे कुब्जा, तू प्रिय कृष्ण के संग होली खेल ले। बहुत दिनों की तेरी यह अभिलाषा आज फलवती हो रही है। श्याम के नेत्र तेरी ही प्रतीक्षा कर रहे हैं। अतः अब और अधिक उनका हृदय न चुराकर उनके सम्मुख आ और उनकी बाहें पकड़कर उनका कम्बल और पीताम्बर छीन उन्हें रंग में डुबो दे। तू ने कैसा श्याम को अपने वश में कर रखा है कि यहाँ गोरी राधा हाथ मलते ही रह गई।—(१६३)

कृष्ण ब्रज स्मरण—द्वारिकावासी कृष्ण को प्रायः जब ब्रज का स्मरण हो आता तो वह अपनी सुधि-बुधि खो बैठते। एक दिन रानी रुक्मिणी से उन्होंने कहा—प्रिये, मैं कितना भी चाहता हूँ कि ब्रज को भूल जाऊँ लेकिन भूल नहीं पाता। यद्यपि द्वारिका का वैभव गोकुल से बढ़कर है। यहाँ के समस्त महल सोने के बने हैं, फिर भी ऐसा लगता है कि गोकुल के घरों की सी न छवि ही इनकी हैं और न यमुना के सदृश यहाँ का जल ही निर्मल और स्वच्छ है। फिर जो सुख माता यशोदा से प्राप्त होता था, वह स्वप्न में भी यहाँ कहाँ ? इन्हीं कारणों से प्रिये, मुझे ब्रज की स्मृति बरबस हो आती है।—(१६४, १६५)

कृष्ण-राधा विवाह और पारिवारिक जीवन—राधा के साथ कृष्ण के विवाह सम्पन्न होने में सबसे बड़ी कठिनाई—उनका काला या साँवला होना ही था। एक दिन जब यशोदा ने वृषभानु के घर कृष्ण का राधा से वैवाहिक-सम्बन्ध स्थापित करने के लिये संदेशा भेजा तो वृषभानु पत्नी ने उसके उत्तर में कहलवाया—मैं अपनी राधा का विवाह तुम्हारे कृष्ण से नहीं करूँगी, क्योंकि वह काला है। कहाँ मेरी राधा ऐसी सुन्दर कि जैसे नौ लाख तारों में प्रकाशमान चन्द्रमा, और कहाँ भादों की काली घटा सदृश तुम्हारा कन्हैया ? फिर मेरी राधा तो १२ वर्ष की है और तुम्हारा छली कन्हैया केवल ५ वर्ष का ही है। अतः मैं अपनी राधा का विवाह तुम्हारे कन्हैया से कदापि नहीं कर सकती।
—(१६६)

वृषभानु के यहाँ से ऐसा रूखा उत्तर पाकर यशोदा ने उनके घर पुनः कहलवा भेजा—हे सखि, मेरे कृष्ण को तुम काला-काला मत कहो। काला तो समस्त संसार ही है। फिर कृष्ण तो पाताल लोक जाकर कालिय नाग का नाथने एवं उसकी फुत्कार के कारण काले हो गये हैं। पुनः तुम कहती हो कि वह तो वृन्दावन की कुञ्ज गलियों में गायें चराता है तथा गोपियों का दधि छीन-छीन कर खाता है, अतः मेरी राधा का निर्वाह उसके साथ कैसे होगा ?

तो हे सखि, अच्छा यही है कि तुम अपनी राधा को अपने घर ही बैठाए रहो। मेरा छोटा-सा गोपाल कुँवारा ही पड़ा रहेगा।—(१६७)

खैर, किसी प्रकार राधा के साथ कृष्ण का विवाह तय हुआ और वह शुभ घड़ी भी आई कि विवाह की रस्म सकुशल समाप्त होने के बाद कृष्ण एवं उनके सगे-सम्बन्धी ज्यौनार पर बैठे। बधू (राधा) पक्ष की स्त्रियाँ समधियों एवं उनकी स्त्रियों के नाम ले-लेकर गालियाँ गाने लगीं और साथ ही अपनी असमर्थता भी व्यक्त करती जाती थीं कि—हे यशोदा के लाल कृष्ण, हम अनपढ़ गवाँर स्त्रियाँ तुम्हें किस प्रकार गारी दें।—(१६८)

विवाह हुआ। राधा घर आई। नित्य की भाँति कृष्ण आज पुनः प्रातः न उठ सके तो माता यशोदा उन्हें जगाती हुई कहने लगीं—हे कृष्ण, उठो प्रातः हो गया। शीघ्र ही गौओं को चरने के लिये ढील दो।""""कृष्ण उठे। जब तक राधा गाय दुहने के लिये दोहनी ही लाती रहीं कि उन्होंने गायें भी दुह दीं। तत्पश्चात् यशोदा ने अज्जाझारे की दातुन और सोने के लोटे में यमुना जल लाकर कृष्ण को दातुन करने के लिये दिया। दातुन करने के बाद शरीर में सुगन्धित उबटन लगाकर कृष्ण को माता यशोदा ने स्नान कराया और धर्म चौकी पर बैठकर उनके लिये विविध प्रकार का व्यंजन बनाने लगीं।

कृष्ण कलेवा कर घर से बाहर आये कि राय तमोलिन ने पान लगाकर उन्हें दिया तथा मालिन ने उन्हें फूलों का एक हार पहराया। इसके बाद पीताम्बर ले कृष्ण विश्राम करने के लिये चित्रसारी चले गये। उनके पश्चात् राधा तथा रुक्मिणी अनेक ब्रज नारियों के साथ वहाँ गईं और विविध प्रकार से उनकी सेवाएँ करने लगीं।

दोपहर के साथ भोजन का समय हुआ। कृष्ण के स्नान करने के लिये कुनकुना जल की व्यवस्था की गई। वह स्नान कर भोजन करने बैठे कि राधा और रुक्मिणी उन्हें पंखा झलने लगीं।—(१६९)

सध्या हुई। दीपों के जलने के साथ ही राधा विश्राम करने के लिये अपने महल की दूसरी मंजिल पर स्थित शयन कक्ष (चित्रसारी) चलीं गईं। आधी रात बीती। महल के पहरेदार भी सो गये। इतने में ही कृष्ण राधा के महल में आये और उनकी तिलरी चुरा ली। प्रातः उठने पर जब राधा को अपनी तिलरी न मिली तो वह दुःखित होकर नीचे आ खड़ी हुईं। माता यशोदा ने हँसकर पूछा—हे बहू ! तुम्हारा मुख आज मलिन क्यों है ? तुम लज्जा त्याग कर अपने हृदय की बात मुझसे बताओ। सास को उत्सुक देखकर राधा ने कहा—हे माँ ! क्या बताऊँ, मुझसे तो कुछ कहते ही नहीं

बनता। न रंगमहल में सेंध लगी है और न वज्र सदृश द्वार ही खुले हैं, फिर पहरा होने पर भी मेरी तिलरी की चोरी हो गई। कहिये तो माँ, अब मैं कुँआ में गिर जाऊँ या जहर खाकर मर जाऊँ। मेरी तो समझ में नहीं आता कि अब मैं क्या करूँ ? यदि मैं उस चोर को चोरी करते हुए पा जाती तो बड़ी मार मारती और फिर घी के बने पूये पर खांड डालकर उसे खिलाती तथा अपने हाथों का तकिया लगाकर उसे पडे-पडे समझाती कि उसे ऐसा नहीं करना चाहिये था।

राधा को इस प्रकार दुःखित देखकर यशोदा ने ढाढ़स बँधाते हुए कहा—हे बेटी, तू कुँआ में गिरने और जहर खाने की बात क्यों करती है ? जिसने तेरी तिलरी चुराई हो, उसकी तुम मुरली चुरा लो। संध्या बीती और रात हुई। राधा ने भी सुअवसर देखकर रंगमहल में सोते हुए कृष्ण की चुपके से मुरली चुरा ली। अतः प्रातः पौ फटते ही कृष्ण मुरली न मिलने के कारण मलिन मुख नीचे आ खड़े हुए। माता ने देखा तो पूछने लगीं—बेटा कृष्ण, तुम्हारा मुख आज उदास क्यों है ? कृष्ण ने कहा—माँ, आज की बात तुमसे क्या कहूँ, कहते नहीं बनती। रात को पहरा होने पर भी न जाने किसने मेरी मुरली चुरा ली। यह सुनकर यशोदा ने कहा—कृष्ण, जिसकी तुमने तिलरी चुराई है उसी ने तुम्हारी मुरली चुराई है। कृष्ण ने कहा—हे माँ, मैं तो उसे लाख की लखौट समझता था, इसलिये उसे बछड़े को पहना दिया। यह सुनकर राधा ने भी व्यंग में उत्तर दिया—माँ, मैंने तो उस मुरली का जंगल की साधारण लकड़ी समझकर चूल्हे में लगा दी। राधा का यह कहना था कि कृष्ण ने पुनः कहा—हे प्रिय, तुम उसे वन की साधारण लकड़ी न समझो, वह नंद बाबा की दी हुई भेंट है। इस पर राधा ने कहा—हे स्वामी, तुम उसे ऐसी वैसी लाख की लखौट न समझो। उसमें नौलखा हीरे जड़े हुए हैं। राधा की ये गर्वोक्तियाँ सुनकर कृष्ण ने पुनः व्यंग में कहा—दूध-दही के बेचने वाली, गोबर को हटाने वाली राधा ने कब तिलरी गढ़ाई थी और कब उसे पहरी थी ? कृष्ण की बातें सुनकर राधा ने भी पूछा—तो फिर काला कम्बल ओढ़ कर गायों को चराने और बहोरने वाले कृष्ण ने मुरली कब बजाई थी ?
—(१७०–१७२)

वसन्त ऋतु आई, आम वृक्ष की प्रत्येक नई कोपलें मौर गई, जिनकी मादक सुगन्ध वायु में घुल-मिलकर बागों में बह चली। ऐसा प्रतीत होने लगा मानों समस्त संसार ही सौरभमय हो गया हो। ऐसे वातावरण में राधा सोलहों श्रृंगार कर अपने रंग महल से नीचे उतरकर आई कि यशोदा ने अपनी लाड़ली बहू को आज इस प्रकार श्रृंगार किये देखकर व्यंग कसते हुए पूछा—तुम्हारे

माँ-बाप ने क्या-क्या आभूषण बनवा दिये हैं, जो इस प्रकार सजी हो ? यह सुनकर राधा ने बड़ी नम्रता से उत्तर दिया—हे सासु जी, मुझे आभूषण नहीं चाहिए। इस परिवार के सब सदस्य ही मेरे लिये आभूषण सदृश हैं।—(१७३)

ऐसे सुखद परिवार में एक दिन यकायक कृष्ण और राधा में झगड़ा हो गया। कृष्ण रूठकर परदेश चले गये, राधा पति-विरह में एकाकी जीवन व्यतीत करने लगीं।–(१७४) इसी प्रकार दिवस पर दिवस बीतते गये। एक दिन नित्य की भाँति स्नानादि से निवृत्त हो राधा अटारी में आकर रसोई बनाने लगीं, परन्तु जब उन्हें प्रिय मिलन की सुधि आई तो वह धुएँ का बहाना करके रोने लगीं। रोते-रोते उन्होंने अपने देवर से कहा—हे मेरे लाला, हे मेरे देवर ! तुम अपने भाई की कुशलता तो ज्ञात करो ? देवर ने उत्तर दिया—हे भाभी, न हम तुम्हारे देवर हैं और न लाला ही, और न हम भाई की खबर ही मँगायेंगे। भाई का पाला हुआ जो परबत्ता सुआ है—उसी से तुम उनकी कुशलता का समाचार मँगा सकती हो। राधा ने कहा—हे देवर ! मैं किसका कागज, किसकी दावात तथा किसकी स्याही बनाऊँ, जिससे उन्हें पत्र लिख सकूँ। देवर ने बताया, हे भाभी ! अपना अंचल फाड़कर कागज, नेत्रों की दावात तथा उँगली चीरकर कलम बना लो और दो-दस शब्द पत्र में लिखकर तोते को दे दो, जिसे लेकर वह परदेश चला जाये। राधा ने अपना अंचल फाड़कर कागज, नेत्रों की दावात तथा स्याही और अंगुली चीरकर लेखनी बनाई तथा दो-दस बोल लिखकर पत्र तोते को दे दिया। तोता उसे लेकर कृष्ण के पास परदेश उड़ चला।

राधा के स्वामी के आँगन में एक लौंग का वृक्ष था। तोता उसी पर जाकर बैठ गया, वहाँ से जब कृष्ण गुजरे तो तोते ने उस पत्र को वृक्ष पर से गिरा दिया। पत्र पाकर कृष्ण अपनी सुध-बुध खो बैठे तथा उनके नेत्र अश्रुपूर्ण हो गये, उन्होंने तोते से पूछा—हे तोते ! हमारे माता-पिता और कुटुम्ब परिवार के लोग कैसे हैं ? तथा मेरी सुन्दर स्त्री किस प्रकार है—जिसने यह पत्र भेजा है ? तोते ने बताया कि सकुटुम्ब आपके माता-पिता कुशल से हैं तथा आपकी सुन्दर स्त्री को मैंने रोती हुई वहाँ छोड़ा था, जिसने यह पत्र भिजवाया है। —(१७५)

पत्र पाकर कृष्ण घर वापस आये। दिन पुनः आनन्दपूर्वक बीतने लगे, कि एक दिन यशोदा ने राधा से प्रातः दातुन माँगा। एक बार माँगा, दो बार माँगा, लेकिन राधा ने उसका कोई उत्तर न दिया। इस पर यशोदा ने रुष्ट होकर कहा—राधा ! मैं कब से तुमसे दातुन माँग रही हूँ और तुम बोलती तक नहीं। इतने में ही बाहर से कृष्ण सोने के लोटे में पानी और आम की दातुन

लेकर अन्दर आये और माता से दातुन करने के लिये कहने लगे। यशोदा ने कहा—हे कृष्ण ! यह दातुन मैं तभी करूँगी जब तुम राधा को उसके नैहर भेज आओगे। कृष्ण ने आश्चर्य चकित हो पूछा—माँ ! ऐसी कौन-सी गलती उससे हो गई है कि उसे उसके मायके भेज आऊँ या देश से निकाल दूँ। राधा ने कहा—मैं बुरी हूँ, मुझे मेरे नैहर भेज दो, मुझे देश से निकाल दो।

डोली सजाकर कृष्ण राधा को उसके मायके ले चले, परन्तु माता यशोदा जाते समय भी राधा से न बोलीं। राधा के नैहर पहुँचने पर उसकी समस्त सखियाँ आ इकट्ठी हुईं, उन्हें देखते ही राधा के नेत्रों में आँसू आ गये। ....कृष्ण के वापस लौटते समय राधा की सहेलियों ने पूछा—हे कृष्ण ! अब हमें (राधा) लेने के लिये फिर कब आओगे ? एक वर्ष का वादा कर कृष्ण चले आये। धीरे-धीरे वर्ष बीत गया तो सखियों ने कहा— राधा ! कृष्ण तुम्हें लिवाने अब भी न आये, शायद उन्होंने सोचा होगा—

राधा मरि है और हुइ जैहै,
माता जसोदा कहा हम पैहैं ?
धरती जोत उरिन हुइ जैहैं,
माता जसोदा उरिन नहिं हुइ हैं।—(१७७)

कृष्ण-तुलसा विवाह—एक दिन प्रातः होते ही तुलसा के घर की बैठक की द्वार के खपरैल पर कौआ बोला। हाथ और सिर पर घड़ा रखकर तुलसा पानी भरने निकल पड़ीं। प्रतिदिन तो तुलसा शीघ्र ही जल भर लेती थीं किन्तु आज वह घड़ा ही नहीं डूब सका। वन में वहीं कृष्ण गायें चरा रहे थे। अतः उन्हीं से तुलसा ने कहा—हे वन के बरेदी, हे गायों के चराने वाले, तुम मेरा घड़ा उठा दो। कृष्ण ने कहा—हे तुलसा, यदि हम तुम्हारी गागर उठा देंगें तो आज ही से तुम मेरी पत्नी हो जाओगी। तुलसा ने कहा—हे बरेदी, न तो मैं तुम्हारा नाम जानती हूँ और न गाँव ही, फिर बताओ मैं तुम्हें किस नाम से पुकारा करूँगी ? कृष्ण ने कहा—मेरा नाम नारायण है तथा ग्राम वृन्दावन है। तुम हरि नाम से हमें सम्बोधित किया करना।

जल से भरी गागर ले हिलती-कँपती तुलसा घर तक आईं और कहने लगीं—हे माता, हे भाभी, मेरा घड़ा उतारो। वन के बरेदी ने, वन के चरवाहे ने मुझसे बोली बोली है। माता ने कहा—हे प्यारी तुलसा, चलो उस वन की ओर चलो जहाँ वह चरवाहा है। तुलसा के साथ उनकी माता वहाँ गईं और फिर तुलसा से पूछा—हे प्यारी तुलसा, यहाँ क्या काँस फूला है या किसी बनजारे ने अपना डेरा डाला है ? तुलसा ने बताया—हे माँ, यहाँ न तो काँस ही फूला

है और न बनजारे ने पड़ाव ही डाला है। यहाँ उन्हीं हरि की धोती सूख रही है, जो तुम्हारे यहाँ पाहुने बनकर आयेंगे। यह ज्ञात कर तुलसा की माता ने कृष्ण को सम्बोधित करते हुए कहा—हे चरवाहे, मैं तुम्हें चाँटा मारूँगी तो तेरा मुँह फिर जायेगा, तूने मेरी प्यारी तुलसा को सताया है। कृष्ण ने उत्तर दिया—हे माता, तुम मुझे चाँटा क्यों मारती हो तथा मुँह क्यों फेरोगी ? मैंने इन्हीं तुलसा को पाने के लिये बारह वर्ष तक गायें चराईं हैं। कृष्ण की ये बातें सुनकर तुलसा की माता ने कहा—हे बरेदी, तेरे आगे-पीछे कौन है, और कौन तेरी बारात में आयेगा ? कृष्ण ने बताया—हे माँ, चन्द्रमा और सूर्य मेरे आगे और पीछे हैं तथा देवता मेरी बारात में आयेंगे, तब तुलसा की भाँवर पड़ेंगी और ब्रह्मा वेदपाठ करेंगे।—(१७८) विवाह की शुभ घड़ी आई। दूलह कृष्ण के साथ इन्द्र सहित करोड़ों देवगण बारात में सम्मिलित हुए। मधुर ध्वनि करते हुए बाजे बजने लगे और नारद, वह तो ऐसे आनन्दित हुए कि अपने तन-मन की सुधि भूल नाच उठे।—(१७९)

विवाह के पश्चात् एक दिन जब कृष्ण तुलसा के यहाँ रात भर रह गये तो प्रातः उनके लौटने पर राधा तनक-मनक कर कृष्ण से पूछ बैठीं—हे नाथ, आज सारी रात कहाँ बिता दी ? कृष्ण ने कहा—हे राधा, मैं झूठ तो बोलता नहीं, मैं अपनी परिणीता तुलसा के पास गया था। यह सुनकर राधा ने कहा—यदि तुलसा तुम्हारी परिणीता है तो मैं उस पेड़ को गंगा जी में डाल दूँगी। कृष्ण ने यह सुना तो कहा—हे राधे, यदि तुम उसे गंगा जी में डाल दोगी तो वही जल तो भर कर आता है और मैं उससे स्नान करता हूँ। इस पर राधा ने कहा—तो मैं उसे जंगल में फेंक दूँगी। कृष्ण ने पुनः कहा—हे राधे, यदि तुम उसे जंगल में फेंक दोगी तो वही चंदन का वृक्ष बन जायेगा और फिर तिलक के रूप में वही मेरे मस्तक पर लगेगा। राधा ने पूछा—तो फिर तुलसा रानी ने ऐसा कौन-सा व्रत किया था जिसके कारण वह तुम्हारे सिरहाने चढ़कर सोती है, जब कि हम और रुक्मिणी तुम्हारे बगल में सोती हैं। कृष्ण ने बताया—हे राधे, तुलसा ने बड़े जप-तप किये थे, इसीलिये मैं उसे पति रूप में मिला हूँ।—(१८०)

कुछ दिनों पश्चात् एक रात तुलसा स्वयं कृष्ण से मिलने चल पड़ीं। सूर्यदेव अस्ताचलगामी हो रहे थे। मिलनोत्सुका तुलसा यमुना तट पर खड़ी विचार मग्न हो गईं कि किस प्रकार नदी के उस पार उतरा जाये। इसी समय उन्हें नौका के भ्रम में एक मृतक शरीर बहता हुआ दीख पड़ा। अतः उन्होंने इसी के सहारे यमुना पार करने का विचार किया और नदी के दूसरे तट पर जलते हुए दीपक को लक्ष बनाकर उस पार पहुच गईं ....।

रंगमहल में कृष्ण जी सो रहे थे। अतः वे उन्हें कैसे जगायें ? इसी चिन्ता में पड़ी थीं कि उन्होंने कृष्ण के भ्रम में राधा के दाहिने हाथ की छिंगरी पकड़ ली। राधा जागते ही चिल्ला उठीं—अरे, हमारी सौत तुलसा तुम ! कृष्ण ने सुना तो वह भी वहाँ आ गये, और पूछने लगे—तुलसा, तुम्हारा मुख मलिन क्यों है ?........राधा ने बीच में टोकते हुए कहा—तुलसा, हमारी सौत है। अतः हे प्रिय, इसे या तो आँगन के बीच में लगा दो या ढाक के जंगल में गाड़ दो। यह सुनकर तुलसा ने विनय की—हे कृष्ण, आँगन के बीच रखने से मैं कुचल जाऊँगी तथा वन में रखने से मेरे ऊपर से मार्ग बन जायेगा। अतः हे स्वामी ! तुम मुझे अपने हृदय से लगा लो जिससे मेरे हृदय की समस्त दाह मिट जाये और मुझे शान्ति मिले।—(१८१)

४

श्रीमद्भागवत, सूरसागर तथा लोकगीतों
की
कृष्ण-कथा का तुलनात्मक स्वरूप

प्रस्तुत अध्याय में उपर्युक्त दोनों ग्रन्थों की कृष्ण कथा से लोकगीतों की कृष्ण-कथा का तुलनात्मक स्वरूप विस्तार के साथ उपस्थित किया गया है। इस तुलना में यह देखा गया है कि लोकगीतों की कृष्ण-कथा श्रीमद्भागवत या सूरसागर की कृष्ण-कथा से मूलतः प्रभावित नहीं कही जा सकती। लोकगीतों की कृष्ण-कथा की अपनी एक विशेषता और नवीनता है जो समय-समय पर कृष्ण-भक्ति साहित्य को सम्पन्न करती रही है।

अस्तु, लीला-स्थल की दृष्टि से कृष्ण-चरित्र को चार प्रमुख अंशों में विभाजित कर उन पर विचार किया गया है। यथा—

१. ब्रजलीला, जिसे पुनः (क) गोकुल लीला और (ख) वृन्दावन-लीला के अन्तर्गत विभाजित किया गया है।
२. मथुरा लीला।
३. द्वारिका लीला और
४. पारिवारिक लीला—कृष्ण-रुक्मणी, कृष्ण-राधा और कृष्ण-तुलसा।

ब्रजलीला के अन्तर्गत आने वाली गोकुल और वृन्दावन लीलायें पुनः लौकिक और अलौकिक लीलाओं के अन्तर्गत विभाजित की गई हैं :—

१—ब्रज-लीला

(क–गोकुल लीला)

अलौकिक लीलाएँ

कृष्ण-जन्म—श्रीमद्भागवत में भागवतकार ने कंस के कारागार में कृष्ण के जन्म समय के सम्बन्ध में केवल रोहिणी नक्षत्र और रात्रि के अतिरिक्त तिथि, मास व दिवस का कोई उल्लेख नहीं किया है। परन्तु महाकवि सूरदास ने सूरसागर में दिन, तिथि, पक्ष, मास एवं नक्षत्र के साथ-साथ अर्ध-रात्रि का भी उल्लेख किया है :—

सम्वत सरस विभावन भादौं, आठें तिथि बुधवार।
कृष्ण पक्ष, रोहिनी, अर्ध निसि, हर्षन जोग उदार॥

—(पद : ७०४)

(इस पद के अतिरिक्त सूरसागर के पद : ६२२, ६२६ और ६४६ भी देखे जा सकते है।)

लोकगीतों में भादों बदी अष्टमी की अंधकारपूर्ण आधी रात को कृष्ण के अवतार लेने का ही उल्लेख मिलता है। सूरदास ने कंस के कारागृह में कृष्ण-जन्म पर उन्हें भागवत की तरह चतुर्भुज रूप में ही चित्रित किया है। परन्तु लोकगीतों में उनके इस रूप का कहीं भी उल्लेख नहीं मिलता। वे यहाँ एक सामान्य बालक के रूप में जन्म लेते हैं।—(बुन्देली : २)

भागवत एवं सूरसागर के अनुसार कृष्ण को गोकुल ले जाते हुए यमुना वसुदेव को मार्ग देती हैं। ऐसा ही उल्लेख लोकगीतों में भी मिलता है। स्वयं को नन्द महर के यहाँ ले चलने की बात भागवत में कृष्ण द्वारा ही वसुदेव को ज्ञात हुई थी। यही बात सूरसागर में भी मिलती है। लोकगीतों में कृष्ण द्वारा शिशु-विनिमय की बात का यद्यपि उल्लेख तो नहीं मिलता परन्तु विनिमय होता अवश्य है। यहाँ कृष्ण के गोकुल भेजने की बात उनके जन्म लेने के बहुत पूर्व ही यशोदा और देवकी में एक दिन यमुना तट पर जल भरते समय निश्चित हो जाता है। यद्यपि पौराणिक एवं लोक प्रचलित कथाओं के आधार पर इस समय देवकी कंस के कारागर में कैद थीं।—(बुन्देली : १)

गोकुल में नन्द महर के गृह कृष्ण-जन्म के उपलक्ष पर आनन्दोत्सव और बधाई आदि का विस्तृत वर्णन भागवत और सूरसागर में मिलता है। यद्यपि सूरदास ने भागवत के विवर्णनात्मक अंशों को प्रबन्धात्मक शैली में नहीं दिया है, परन्तु गीति-पद शैली में उन्होंने संदर्भों के रूप में ऐसी छोटी-छोटी घटनाओं की कल्पना की है जो भागवत में नहीं मिलतीं, जैसे—नाल-छेदन, छठी, सातिये रखना आदि। लोकगीतों में सूरसागर के समान ही नाल-छेदन

व छठी आदि का उल्लेख तो मिलता है परन्तु कृष्ण-जन्म पर सातिये रखने का उल्लेख नहीं होता।—(बुन्देली : ५, ६)

पूतना वध—भागवत के अनुसार पूतना नाम की एक राक्षसी कंस की आज्ञा से नगर, ग्राम और अहीरों की बस्तियों में बच्चों को मारने के लिये घूमा करती थी। कृष्ण द्वारा उसके वध के उपरान्त भागवत में उसके दाह-संस्कार का भी उल्लेख किया गया है। सूरदास ने पूतना को बकी के रूप में ग्रहण करके उसके दानवी रूप और दाह-संस्कार का वर्णन नहीं किया है।

लोकगीतों में पूतना के दानवी रूप व उसके दाह आदि का कोई उल्लेख नहीं मिलता। यहाँ वह एक सुन्दर नारी के रूप में कृष्ण को दूध पिलाने के लिये आती है। कृष्ण उसका स्तन जोर से खींचकर पीते हैं, जिससे वह चिल्ला उठती है। भजन गीतों में उसके कृष्ण द्वारा मारे जाने का भी उल्लेख हुआ है।—(बुन्देली : १८)

सिद्धर ब्राह्मण अंग-भंग—सूरसागर में पूतना वध के पश्चात् कंस द्वारा सिद्धर बांमन के भेजने की बात है। यह भी कृष्ण का अनिष्ट करने के लिये आया था, परन्तु कृष्ण ने स्वयं ही उसका अंगभंग कर दिया। इस कथा का भागवत और लोकगीतों में अभाव है।

तृणावर्त, शकटासुर तथा कागासुर वध—भागवत में कंस द्वारा भेजे गये तृणावर्त के दैत्य होने एवं उसके वध का स्पष्ट उल्लेख हुआ है। सूरदास ने भी भागवत की तरह इसके वध का वर्णन किया है। भागवत में वर्णित शकट-भंजन की कथा में जहाँ किसी असुर की कल्पना का मिश्रण नहीं है और न इसका कंस से ही कोई सम्बन्ध ज्ञात होता है, वहीं सूरदास ने शकट में असुरत्व की स्थापना की है तथा उसे पूतना की तरह कंस द्वारा प्रेरित बताया है। साथ ही एक नवीन प्रसंग—कागासुर वध का भी उल्लेख किया है जिसका भागवत में नितान्त अभाव है। लेकिन लोकगीतों में जहाँ तक इन कथाओं के मिलने का सम्बन्ध है, इस सबका वहाँ कोई संकेत तक नहीं हैं।

कृष्ण का मिट्टी खाना तथा यशोदा का विश्व-दर्शन—सम्भवतः कृष्ण द्वारा मृत्तिका भक्षण प्रसंग भागवतकार की अपनी कल्पना है—जिसमें उसने यशोदा द्वारा कृष्ण के मुख में विश्व-दर्शन का विस्तृत रूप से वर्णन तो किया है, लेकिन इस प्रसंग को वह स्वतन्त्र रूप से वर्णित न करके बलदेव आदि अन्य गोप बालकों द्वारा की गई शिकायत से व्यंजित करता है। सूरदास ने भागवत का आधार लेकर स्पष्ट एवं विस्तार से कृष्ण के मिट्टी खाने का चित्रण करते हुए शिकायत का भी वर्णन किया है। लोकगीतों में लोक-मानस भागवतकार की ही तरह मिट्टी खाने की कल्पना स्वतन्त्र रूप से न करके कृष्ण-सखाओं

द्वारा की गई शिकायत से व्यंजित तो करता है, लेकिन यशोदा द्वारा कृष्ण के मुख में विश्व-दर्शन की बात वह नहीं कहता। वह केवल संकेत भर कर देता है कि एक दिन कृष्ण ने मिट्टी खाई तो तीनों लोकों की रचना कर डाली।
—(ब्रज : २३, २४)

बाल-योगी आगमन—कृष्ण-दर्शन के लिये बाल-योगी शंकर जी के गोकुल आने की कथा का उल्लेख यद्यपि भागवत और सूरसागर में नहीं मिलता, लेकिन चाचा वृन्दावन दास, पुरुषोत्तम प्रभु और ठाकुरदास के पदों के साथ-साथ लोकगीतों में इस कथा का उल्लेख विधिवत् हुआ है।
—(ब्रज : १४, १५, १६; बुन्देली : १६)

उलूखल बंधन और यमलार्जुन उद्धार—भागवत में वर्णित इस कथा का सूरदास ने भी अनुकरण किया है—वह भी एक नहीं, दो बार। जिसमें यशोदा और उनकी सखियों के वात्सल्य और कृष्ण की त्रासयुक्त रूप-शोभा का चित्रण प्रमुख है। लोकगीतों में इस कथा का अभाव है।

लौकिक लीलाएँ

नामकरण—कृष्ण के नामकरण संस्कार का उल्लेख भागवत में हुआ है, जिसमें वसुदेव द्वारा नामकरण के लिये गर्ग के गोकुल भेजे जाने का उल्लेख हुआ है। जो एकांत मे प्रथम बलदेव का और फिर कृष्ण का नामकरण करते हैं। सूरदास ने इस प्रसंग को केवल तीन पदों में ही निपटा दिया हैं, जिसमें न तो वसुदेव द्वारा गर्ग के गोकुल भेजे जाने की बात का उल्लेख है और न उनके द्वारा कृष्ण के नाम रखे जाने का ही। यद्यपि वह लग्न आदि शोधकर नन्द-यशोदा को कृष्ण के समस्त लक्षण सविस्तार बताते है। फिर भागवत की तरह यहाँ एकान्त का तो प्रश्न ही नहीं उठता। क्योंकि विप्र, सुजान, चारण एवं बन्दीजन—सभी इस अवसर पर नन्द के घर उपस्थित हैं।

सूरसागर की तुलना में लोकगीतों की स्थिति भिन्न है। न इनमे गर्ग के आगमन की बात है, और न आदि ज्योतिषी की। फिर भागवत की तरह यहाँ एकान्त भी नहीं। समस्त संस्कार का कार्य हर्षोल्लास के वातावरण में नन्द के घर एक पण्डित द्वारा सम्पन्न कराया जाता है जो लगभग सूरसागर के समान कहा जा सकता है।—(ब्रज : १३)

अन्न-प्राशन—भागवत में तो इसका उल्लेख नहीं परन्तु सूरदास ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। नन्द के घर इस अवसर पर विविध प्रकार के व्यंजन बनते हैं और नन्द स्वयं इस अवसर पर समस्त पुरवासियों को जा-जाकर अपने यहाँ आने के लिये आमंत्रित करते हैं। लोकगीतों में भी यह संस्कार

सुखद वातावरण में नन्द के घर एक पुरोहित की उपस्थित में सम्पन्न होता है।—(ब्रज : २०)

वर्षगाँठ—भागवत में कृष्ण की **वर्षगाँठ** मनाने का उल्लेख संकेत रूप में यद्यपि दो स्थलों पर हुआ है, परन्तु इसका क्रमिक वर्णन वहाँ नहीं मिलता। सूरदास ने सूरसागर में तीन पदों में कृष्ण की वर्षगाँठ एवं नन्द के घर होने वाले उछाह का वर्णन किया है, लेकिन लोकगीतों में इसका संकेत भी नहीं मिलता।

कर्ण-छेदन—इस संस्कार का उल्लेख सूरसागर को छोड़कर भागवत या लोक गीतों में नहीं हुआ है।

भैया-दूज—लोकगीतों के अतिरिक्त भागवत और सूरसागर में सुभद्रा द्वारा कृष्ण की मंगल कामना के लिये भैया-दूज पूजे जाने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।—(ब्रज : १८)

बाल लीला—भागवत में कृष्ण की अलौकिक लीलाओं की तरह लौकिक बाल लीलाओं को भी महत्व प्राप्त हुआ है। और इन्हीं लौकिक लीलाओं को आधार मानकर महाकवि सूरदास ने कृष्ण के आठों पहर[1] की दिनचर्या का चित्रण करते हुए उसके साथ-साथ अनेक नवीन लीलाओं का भी समावेश किया है। परन्तु लोकगीतों की स्थिति इससे कुछ भिन्न है। इनमें लीलाओं की विविधता तो अधिक नहीं, परन्तु कुछ नवीनता अवश्य है।

घुटनों एवं पैरों चलना—भागवत में यद्यपि कृष्ण और बलराम के चलना सीखने का उल्लेख है लेकिन उन्हें सिखाता कौन है, इसका कोई संकेत नहीं। सूरदास ने कृष्ण के उलटने, घुटन एवं पैरों चलने का सविस्तार वर्णन किया है, जब कि लोकगीतों में केवल एक-दो स्थल पर कृष्ण का माता यशोदा का हाथ पकड़ कर चलना सीखने व आँगन में नाचने का वर्णन मिलता है।—(ब्रज : २५, २६)

दुग्ध-पान—सूरदास ने यशोदा द्वारा कृष्ण को चोटी बढ़ने का प्रलोभन देकर दूध पिलाने का वर्णन किया है, जिसके द्वारा यशोदा के वात्सल्य का चित्रण करना कवि का मुख्य उद्देश्य जान पड़ता है। लेकिन भागवत में इस प्रकार का कोई चित्रण नहीं है। लोकगीतों में यद्यपि कृष्ण को दूध पिलाने का वर्णन हुआ है लेकिन चोटी आदि बढ़ने की बात नहीं कही गई है।

कलेवा (राजभोग)—भागवत और सूरसागर में अपना मनचाहा कलेवा पाने के लिये कृष्ण के मनचले और रूठने का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

---

१. **आठों पहर—मंगला-दर्शन, श्रृङ्गार, गोचारण, राजभोग, उत्थापन, भोग, संध्या और शयन।**

परन्तु लोकगीतों में वह कभी दूध-दही की जगह माखन-मिश्री के लिये मचल उठते हैं तो कभी गोचारण के लिये जाने से पूर्व रोटी पाने के लिए रूठ जाते हैं। —(ब्रज : ३९; बुन्देली : २७)

चकई, झुँझुना व चन्द्र-खिलौना के लिये मचलना—भागवत में इन सब के लिये कृष्ण के मचलने का कोई संकेत नहीं है। परन्तु सूरदास ने चन्द्र-खिलौना के लिये कृष्ण के मचलने का विस्तृत वर्णन अवश्य किया है। लोकगीतों में चन्द्र-खिलौना के साथ-साथ चकई और झुँझुना पाने के लिये भी कृष्ण के मचल जाने का वर्णन मिलता है।—(ब्रज : ३७, ३८; बुन्देली : २७)

खेल—भागवत में कृष्ण के भौंरा, चकडोरि, चौगान और चोर-मिहीचिनी आदि के खेलने का उल्लेख वृन्दावन लीला के अन्तर्गत हुआ है, जब कि सूरदास ने सखाओं के साथ कृष्ण के इन खेलों का वर्णन गोकुल लीला के अन्तर्गत ही किया है। लोकगीतों में भी कृष्ण के भौंरा, चकडोरि, चौगान तथा वृषभानु के के द्वार पर उनके पाँचों पुत्रों के साथ गेंद-बल्ला खेलने का उल्लेख हुआ है। यहाँ एक बात उल्लेखनीय है कि लोकगीतों में जहाँ राधा के पाँच भाइयों के होने का संकेत है, वहीं सूरसागर में राधा के केवल दो भाइयों के होने का उल्लेख है जो राधा से बड़े थे।

—(सूरसागर पद : १३१६; ब्रज : ४१, ४६, ८१)

माखन चोरी—माखन-चोरी लीला सम्भवतः भागवतकार की मौलिक कल्पना है जिसका भागवत में विस्तार से उल्लेख हुआ है। यहाँ तक कि यही कथा यमलार्जुन उद्धार उलूखल बंधन का कारण भी बनती है। भागवत में जहाँ माखन चोरी का वर्णन गोपियों के उपालम्भ के माध्यम से चित्रित किया गया है, वहीं सूरसागर में इसका स्वतन्त्र रूप से भी चित्रित किया गया है, जिसके फलस्वरूप सूरसागर में अनेक ऐसी स्थितियों एवं परिस्थितियों का चित्रण हो गया है—जिसका भागवत में संकेत तक नहीं। लोकगीतों में मिलने वाली माखन-चोरी लीला में सूरसागर की तरह अधिक विविधता तो नहीं है परन्तु कुछ नवीनता तो है ही, जैसे—माखन चोरी से तंग आकर गोपियों का यशोदा के पास उलाहना लेकर आना, माता के डाटने के भय से कृष्ण का रूप परिवर्तन कर लेना, तथा माखन-चोरी की आदत छोड़ देने के लिए यशोदा का कृष्ण को तरह-तरह से समझाना, आदि।—(ब्रज : ३०, ३१; बुन्देली : १७)

गोदोहन सीखना—भागवत और लोकगीतों में कृष्ण के गोदोहन सीखने का कोई उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन सूरसागर में नंद से गोदोहन सीखने का वर्णन मिलता है।

(ख–वृन्दावन लीला)

अलौकिक लीलाएँ

वृन्दावन गमन—भागवत के अनुसार जब महावन में बड़े-बड़े उत्पात होने लगे तो नंद आदि गोपों ने उपनंद की सलाह से गोकुल छोड़कर वृन्दावन जाने का निर्णय किया और फिर सब के सब वहाँ आकर आनन्द पूर्वक रहने लगे। लेकिन सूरसागर में वृन्दावन जाने का निर्णय नंद और यशोदा की सम्मति से हुआ। इस समय सूरदास ने कृष्ण को ५ वर्ष का बताया है। लोक-गीतों में नंदादि के वृन्दावन गमन का कोई भी उल्लेख नहीं मिलता।

वत्सासुर, वकासुर तथा अघासुर वध—भागवत में असुरों के वध का उल्लेख है जो कंस द्वारा प्रेरित किए गए थे। सूरदास ने वकासुर तथा अघासुर के वध के साथ-साथ वत्सासुर की मृत्यु का दो बार उल्लेख किया है—एक बार बलराम के हाथ, और दूसरी बार कृष्ण के हाथ। साथ ही अघासुर के वध के द्वारा कृष्ण सखाओं का कृष्ण के प्रति की गई प्रेमाभिव्यक्ति का भी चित्रण सूरदास ने किया है, जबकि भगवत में कृष्ण के देवत्व पर अधिक बल दिया गया है। लोक गीतों में इन असुरों के वध का कोई स्वतन्त्र उल्लेख तो नहीं मिलता, लेकिन संकेत रूप में एक स्थल पर वत्सासुर के मारे जाने का उल्लेख अवश्य हुआ है।—(ब्रज : २४६।२)

विधि-मोह या बाल वत्स हरण लीला—सम्भवतः भागवतकार की इस मौलिक कल्पना के आधार पर ही सूरदास ने इस प्रसंग का तीन बार वर्णन किया है। परन्तु जहाँ भागवत का कथानक आलौकिकता, आध्यात्मिकता और भक्ति-पोषक दार्शनिकता से ओतप्रोत है और उसका चरम उद्देश्य—ब्रह्मा के मोह का नाश है, वहीं सूरसागर की इस कथा में कृष्ण सखाओं के सहज प्रेम की भावपूर्ण व्यंजना और गोपाल कृष्ण के गोप रूप और गोप-लीला का चित्रण प्रमुख है। लोकगीतों में इस लीला का स्वतन्त्र चित्रण नहीं हुआ है। केवल गोप बालकों के उलाहनों से ही इतना ज्ञात होता है कि कृष्ण वन में समस्त गायों को खो आये जिन्हें बहुत खोजने पर भी कहीं पता न चला।

—(बुन्देली : ३२, ३३)

कालिय दमन—भागवत में कालिय दमन का प्रसंग कालिय दह जल-पान से सम्बद्ध है। परन्तु सूरदास ने इसे नंद द्वारा कंस के लिये कमल पुष्प लाने की कथा से सम्बद्ध कर दिया है। कृष्ण के यमुना दह में कूदने का सूरदास ने एक कारण और भी दिया है, वह है—कंदुक-क्रीड़ा प्रसंग। भागवत में इस कथावस्तु का उल्लेख नहीं है। लेकिन लोकगीतों में कृष्ण के कंदुक-क्रीड़ा एवं भागवत के कालिय दह जलपान के अंतर्गत यमुना जल

को शुद्ध करने के निमित्त, यमुना में कूदकर कालिय नाग को नाथने का उल्लेख हुआ हैं। यहाँ सूरसागर की भाँति नारद के परामर्श से कंस के आदेशानुसार नंद के कालिय दह से कमल पुष्प लाने की कथा का कोई उल्लेख नहीं मिलता।
—(ब्रज : ४५, ४६)

दावानल पान—भागवत में मौलिक रूप से वर्षित कृष्ण द्वारा गौओं को दावाग्नि से बचाने की कथा का यद्यपि दो बार वर्णन हुआ है, परन्तु दावाग्नि के लगने का कोई कारण नहीं बताया गया है। सूरदास ने इस प्रसंग को भी कंस द्वारा प्रेरित अन्य असुरों की तरह चित्रित किया है। लोकगीतों में इस कथा का उल्लेख नहीं हुआ है।

गोवर्धन धारण—भागवत में इस लीला का वातावरण सूरसागर की अपेक्षा धार्मिक और दार्शनिक अधिक है। आरम्भ में ही ७ वर्ष के बालक कृष्ण के द्वारा कर्म-मार्ग का विस्तृत उपदेश कराया गया है। परन्तु सूरसागर में यह कथानक ब्रज के ग्रामीण वातावरण और ब्रजवासियों के सरल चरित्र को मनोहर रूप में चित्रित करता हुआ आरम्भ होता है। सूरदास के कृष्ण दार्शनिक तर्कों के आधार पर ब्रजवासियों को इंद्र-पूजा से विरत नहीं करते, वरन् वह सहज विश्वासी अहीरों को अपने स्वप्न का हाल सुनाते हैं जिसमें किसी चतुर्भुज अवतारी पुरुष ने उन्हें गिरि गोवर्धन की पूजा का आदेश दिया था। गोवर्धन पूजा का वर्णन भी सूरसागर में भागवत से नितान्त भिन्न है। सूरदास ने ब्रजवासियों में—ललिता, चंद्रावलि, राधा तथा वृषभानु की सेविका बदरौला का भी उल्लेख किया है। साथ ही इस अवसर पर राधा-कृष्ण की रस-केलि का भी एक स्थान पर संकेत कर दिया है, जिसका भागवत में अभाव है।

पुनः भागवत में इस कथा का प्रारम्भ नन्द और कृष्ण के विचार-विमर्श से आरम्भ होता है, जबकि सूरदास इसका प्रारम्भ यशोदा और नन्द के सम्वाद से करते हैं। नन्द इन्द्र-पूजा को भूले से रहते हैं, जिसका स्मरण उन्हें यशोदा कराती हैं। भागवत में जहाँ कृष्ण स्वयं द्वितीय गोवर्धन रूप धारण करके समस्त भोग स्वीकार करते हैं—वहाँ सूरदास के अनुसार पर्वत ही सहस्र भुजा वाला रूप धारण कर भोग स्वीकार करता है, और उसका यह रूप बिल्कुल कृष्ण के समान दीखता है। पुनः भागवत के अनुसार इन्द्र गर्व-भंग के पश्चात् जहाँ सुरभि को लेकर एकान्त में कृष्ण के आगे शीश नवाते हैं, वहीं सूरसागर के अनुसार इन्द्र के साथ समस्त देवगण कृष्ण के पास आते हैं।

यद्यपि भागवत के ही अनुसार सूरदास ने भी कृष्ण के गोवर्धन पर्वत को हाथ से उठाने की बात लिखी है, लेकिन गोपों ने भी अपनी-अपनी लकुट

लगाकर कृष्ण को गोवर्धन उठाने में सहायता की, इसका उल्लेख भागवत में नहीं है। लोकगीतों में गोवर्धन पूजा, ब्रज में अति वृष्टि, कृष्ण का गोवर्धन धारण और उसके उठाने में ब्रजवासियों का योग ही मुख्य रूप से चित्रित हुआ है। यहाँ न इस कथा में धार्मिकता का पुट है, न दार्शनिकता का संयोग। न कृष्ण ब्रजवासियों को गोवर्धन पूजा का आदेश ही देते हैं। फिर ब्रजवासियों के बीच न राधा हैं, और न राधा-कृष्ण रस-केलि का ही कहीं उल्लेख है। मानभंग के पश्चात् इन्द्र के ब्रज आने का उल्लेख तो अवश्य है, लेकिन अकेले ही।—(बुन्देली : ६४, ६५; ब्रज : ८५)

वरुण गृह से नन्द का उद्धार तथा गोपों द्वारा बैकुंठ दर्शन—भागवत के अनुसार ही सूरदास ने भी इस घटना का उल्लेख किया है। जिसमें गंगा द्वारा कृष्ण के ब्रह्मत्व की सूचना भी नन्द को देने का उल्लेख किया गया है। यद्यपि कि यह उल्लेख भागवत में गोवर्धन लीला के अन्तर्गत आता है, फिर भागवत की तरह सूरदास ने कृष्ण द्वारा ब्रजवासियों को अपने सगुण और निर्गुण रूपों को दिखाने का उल्लेख इस कथा में नहीं किया गया है। लोक-गीतों में इन सब प्रसंगों का नितान्त अभाव है।

विद्याधर, शंखचूड़, अरिष्ट, केशी और व्योमासुर वध—भागवत में रास के पश्चात् इन सबके वध की कथा आती है, जिसमें भागवतकार केशी को भी कंस से प्रेरित बताता है। सूरसागर में भी इन पाँचों के वध की चर्चा है, जिसमें केशी-वध वर्णन को प्रमुख स्थान मिला है। वध सम्बन्धी इन लीलाओं में कवि का प्रधान उद्देश्य—ब्रजवासियों के भावों, विशेषकर यशोदा के वात्सल्य का चित्रण है। लोकगीतों में केशी-वध के अतिरिक्त अन्य किसी के वध की चर्चा नहीं मिलती।—(ब्रज : १९०)

लौकिक लीलाएँ

भागवत और सूरसागर में गोचारण का वर्णन प्रायः सभी अलौकिक लीलाओं की पृष्ठ-भूमि के रूप में आया है; क्योंकि इसी के निमित्त कृष्ण घर से बाहर निकलते थे और सायंकाल लौटते थे। इसी गोचारण के अन्तर्गत सूरदास ने गोप बालकों की विविध क्रीड़ाओं, गायों के भटकने, उन्हें खोजने, वंशी बजा कर या वृक्ष पर चढ़ कर उन्हें बुलाने, ब्रज लौटते समय उनके अनुपम रूप-सौन्दर्य के चित्रण और वंशी-वादन के वर्णन-चित्रण तथा उसके प्रभाव के विस्तृत प्रसंग के चित्रण को स्थान दिया है। इसी तरह लोक गायक भी कृष्ण के गोचारण को जाते समय गोपियों की प्रेम-विह्वलता, कृष्ण के रूप-शृंगार, वन में विविध क्रीड़ा, गोचारण से लौटते समय उनके

अनुपम छवि के चित्रांकन तथा माता यशोदा के हर्षातिरेक का चित्रण करता है।—(ब्रज : ४८, ४९, ५२, ५३, ५४; बुन्देली : २५)

कात्यायनी व्रत और चीर हरण—यद्यपि भागवत में वर्णित इस मौलिक कथा-प्रसंग के अनुसार सूरसागर में भी इस लीला का वर्णन किया गया है, किन्तु यत्र-तत्र सूरदास ने कुछ मौलिक परिवर्तन भी किये हैं। जहाँ वर्षा और शरद की प्रकृति शोभा के बीच भागवत की गोपियाँ भद्रकाली कात्यायनी देवी की एक मास तक पूजन करती हैं, वहीं वह सूरसागर में नित्य नियम से यमुना-स्नान करके रवि और शिव की वर्ष भर आराधना करती हैं—जिससे उन्हें श्याम सुन्दर ही पति रूप में मिलें, फिर सूरदास के कृष्ण यमुना स्नान के समय जल के भीतर प्रकट होकर नग्न गोपियों की पीठ मींजते और उन्हें सुख देते हैं। इस प्रसंग का उल्लेख भागवत में नहीं है। इसी तरह सूरदास के कृष्ण भागवत के अनुसार जब नग्न दशा में गोपियों को तट पर बुलाते हैं तो वह यह नहीं कहते कि नग्न होकर यमुना स्नान करना अनुचित है, वरन् वे तो स्पष्ट रूप से कहते हैं कि अब उनका व्रत पूर्ण हो गया अतः उन्हें समस्त लोक-लज्जा त्याग कर बिना किसी भेद-भाव के उनसे मिलना चाहिए। पुनः कृष्ण की इस छेड़-छाड़ से परेशान हो, गोपियों का यशोदा के पास उलाहना लेकर जाना आदि घटनायें भागवत में नहीं मिलतीं।

लोकगीतों में गोपियों के यमुना स्नान करने के अभिप्राय का उल्लेख नहीं है। वहाँ गोपियाँ सामान्य ढंग से यमुना जल में प्रविष्ट होकर स्नान करती हैं, इसी बीच कृष्ण चुपके से आकर उनके वस्त्रों को ले कदम्ब वृक्ष पर जा बैठते हैं और अन्त में उनके जल से बाहर निकल कर विनय करने पर ही उन्हें उनके वस्त्र वापस देते हैं। यहाँ न कृष्ण जल के भीतर प्रकट होकर गोपियों की पीठ मींजते हैं, और न उन्हें भविष्य में यमुना में स्नान करने से रोकते ही हैं।—(ब्रज : ६२, ६३)

यक्ष-पत्नी लीला—भागवत की इस कथा को सूरदास ने प्रायः अनुवादात्मक ढंग से सूरसागर में वर्णित किया है। लेकिन यहाँ कवि की वर्णन-तन्मयता अवश्य उल्लेखनीय है। जिसमें कृष्ण की मधुर भक्ति में कुल, मर्यादा, तथा लौकिक पातिव्रत की अवहेलना का चित्रण ही कवि का प्रमुख उद्देश्य प्रतीत होता है। लोकगीतों में इस कथा का अभाव है।

राधा-प्रधान कृष्ण लीलाएँ

राधा जन्म—भागवत में राधा का कोई उल्लेख नहीं मिलता। सूरदास ने राधा के जन्म का वर्णन तो नहीं किया है, किन्तु जन्म की बधाई के पद अवश्य गाये हैं, जिसमें राधा के माता-पिता एवं उनके जन्म-स्थान का उल्लेख

मिलता है। लोकगीतों में यद्यपि राधा का प्रमुख रूप से चित्रण हुआ है लेकिन उनके जन्म एवं बधाई आदि से सम्बन्धित कोई उल्लेख नहीं मिलते।

राधा-कृष्ण प्रथम मिलन—सूरदास ने भौंरा, चकई खेलते समय कृष्ण और राधा को यमुना तट पर पहली बार अचानक मिलाकर दोनों में प्रथम दर्शन से ही उत्कट अनुराग के जागने का अत्यन्त स्वाभाविक और स्वच्छन्द वर्णन किया है। यद्यपि इस समय कृष्ण की अवस्था ५ बर्ष की और राधा की ७ वर्ष की बताई गई है, फिर भी कवि ने दोनों के रति-विलास को वृन्दाविपिन में मनोवैज्ञानिक विकास के साथ चरम परिणति पर पहुँचा दिया है, मानों दोनों किशोर हों। पुनः राधा और कृष्ण अपनी माताओं के सामने अपने प्रेम को गुप्त रखने में भी चतुर दिखाये गये हैं। लेकिन राधा-कृष्ण की किशोर सुलभ बाल-केलि का किंचित आभास पाकर उनकी माताएँ दोनों के वैवाहिक सम्बन्ध की सुखद कल्पना करती हैं।

लोकगीतों में भी सूरसागर की तरह राधा-कृष्ण की अचानक भेंट एक दिन कहीं हो जाती है, जहाँ कृष्ण राधा की रूप-माधुरी पर उत्सर्ग हो उससे उसका पता-ठिकाना आदि भी पूछने लगते हैं। राधा सविस्तार अपना ठौर-ठिकाना बताकर कृष्ण की रूपासक्ति के वशीभूत हो उन्हें बरसाने आने के लिये बार-बार आमन्त्रित करती हैं। यह वर्णन सूरसागर में नहीं मिलता। लोकगीतों में सूरसागर की भाँति प्रथम मिलन में ही राधा-कृष्ण में रति-केलि का उल्लेख तो नहीं मिलता लेकिन माताओं से अपने गुप्त प्रेम को छिपाने का तथा यशोदा का राधा से कृष्ण के वैवाहिक सम्बन्ध की सुखद कल्पना करके उससे हँसी-मजाक करने का उल्लेख अवश्य मिलता है जो सूरसागर की परम्परा मानी जा सकती है।—(बुन्देली : ३४, ३५, ३६ ब्रज : ६०, ६१)

गोदोहन—सूरसागर के अनुसार राधा यशोदा के घर खरिक में दोहिन लेकर गाय दुहाने के बहाने कृष्ण से भेंट करने आती हैं। इस तरह उन्हें यहाँ कृष्ण से मिलने का अवसर प्राप्त हो जाता है। लेकिन लोकगीतों में राधा नंद के खिरक में दोहिनी लेकर नहीं आतीं। वह कृष्ण को अपने यहाँ लिवा चलने के लिये केवल बुलाने आती हैं कि वह चलकर उसकी गाय दुह दें। जिसे दुहने का प्रयत्न करते करते समस्त गोप बाल तथा बलदाऊ भी हार गये हैं।—(ब्रज : ५५)

कृष्ण की छद्म लीलायें—भागवत में कृष्ण की छद्म लीलाओं का कहीं भी उल्लेख नहीं हुआ है। हाँ, सूरसागर में कृष्ण गारुड़ी रूप धारण कर सर्प दंश का बहाना किये राधा को झाड़ने-फूकने अवश्य जाते हैं। राधा मान-लीला के अंतर्गत भी कृष्ण दूती रूप धारण करके राधा से मिलने जाते हैं।

लेकिन लोकगीतों में बरसाने जाकर राधा को छद्म रूप में छलने के लिये कृष्ण के अनेक रूप धारण करने का उल्लेख मिलता है। इन्हीं लीलाओं के अन्तर्गत कृष्ण की मोहिनी लीला, वैद्य लीला, योगिन लीला, और मनिहारी-लीलायें आती हैं। साथ ही एक बार नट वेश धारण कर तरह-तरह के कौतुक दिखाकर गोपियों के चित्त चुराने का भी उल्लेख मिलता है।

—(ब्रज : १००, १०३, १०४, १०६; बुन्देली : ८३)

लोकगीतों में प्राप्त होने वाली कृष्ण की छद्म लीलाओं का साहित्य में विस्तृत उल्लेख सम्भवतः चाचा वृन्दावन दास की रचनाओं में ही प्राप्त होता है। वैसे सर्वप्रथव ध्रुवदास ने ही कृष्ण के बरसाने जाकर राधा को छद्म वेश में छलने का उल्लेख किया है।

हार खोने व मुरली देने के बहाने राधा का कृष्ण से मिलना—भागवत में इस कथा का कोई संकेत नहीं है। परन्तु सूरसागर में इसका वर्णन अवश्य हुआ है। लोकगीतों में भी नंद के द्वार पर खेलते समय एक बार हार टूटने तथा दूसरी बार वंशी देने के बहाने कृष्ण से राधा के मिलन का चित्रण हुआ है।—(बुन्देली : ३७; ब्रज : ५७)

पनघट लीला—भागवत में कात्यायिनी व्रत और रास-लीला के प्रसंग में गोपियों का यमुना तट जाना वर्णित हैं, किन्तु उसमें पनघट की लीलाओं का कोई संकेत नहीं हुआ है जो सम्भवतः लोक-परम्परा का ही प्रभाव है। इस लीला में कृष्ण की अचगरी अधिक बढ़ी हुई है। फलस्वरूप अब गोपियाँ कृष्ण से खुलकर प्रेम करने का निश्चय करती हैं। सूरसागर में कृष्ण पनघट पर मुरली बजाकर तथा अपनी मोहिनी मूर्ति दिखाकर गोपियों को मुग्ध करते हैं। यही नहीं, वह पनघट को रोक लेते हैं जिससे गोपियाँ जल नहीं भर पातीं। गोपियों के साथ राधा भी जल भरने जाती हैं, जहाँ कृष्ण उन्हें तथा उनके साथ-साथ गोपियों को भी तरह-तरह से तंग करते हैं। अतः वे सब यशोदा के पास उलाहने ले लेकर आती हैं, लेकिन यशोदा को उन पर विश्वास ही नहीं होता।

लोकगीतों में इस लीला के अन्तर्गत कृष्ण के मुरली बजाने तथा पनघट को रोकने का कोई उल्लेख नहीं मिलता, लेकिन वहाँ कृष्ण के रहने के कारण गोपियों को जल भरने में संकोच अवश्य होता है। उनके पनघट से चलते समय कृष्ण उन्हें तरह-तरह से छेड़ते हैं। गोपियाँ रूठकर यशोदा के पास कृष्ण की शिकायत लेकर जाती हैं। यशोदा उनकी शिकायत पर विश्वास न कर उल्टे उन्हें ही डाँटती हैं। कृष्ण माता को अपना पक्ष लेते देखकर उल्टे

गोपियों की ही शिकायत करने लगते हैं। सूरसागर में कृष्ण के इस तरह से शिकायत करने का उल्लेख नहीं मिलता।

—(ब्रज : ६४, ७५, ७७; बुन्देली : ६२)

दान लीला—भागवत में दधिदान लीला का कोई उल्लेख नहीं मिलता, जब कि सूरसागर में इस प्रसंग का तीन बार चित्रण किया गया है। पहली बार के वर्णन में राधा का कोई उल्लेख नहीं है। परन्तु दूसरा प्रसंग कृष्ण एवं उनके अन्तरंग सखाओं द्वारा राधा एवं उनकी सखियों को कालिंदी तट पर घेरने की योजना से आरम्भ होता है। तीसरे प्रसंग में राधा एवं अन्य ब्रजनारियाँ शृङ्गार आदि करके गोकुल दधि बेचने जाती हैं और वहाँ स्वतः वे कृष्ण तथा उनके सखाओं को दधि-माखन खिलाती हैं। इस दान-लीला प्रसंग के अन्त में सूरदास ने राधा एवं अन्य समस्त गोपियों के साथ कृष्ण के रमण का वर्णन किया है। साथ ही अब राधा-कृष्ण का प्रेम गोपियों के लिए सामान्य चर्चा का विषय बन जाता हैं। साथ ही इस लीला के फलस्वरूप गोपियों के मन में कृष्ण के प्रति उत्कट अनुराग भी उत्पन्न होता जाता है जिससे वे आत्म-विभोर हो उन्मत्त की भाँति आचरण करने लगतीं हैं। प्रमोन्माद में तथा कृष्ण के प्रति गूढ़ भाव की अनुभूति में राधा का स्थान सबसे प्रमुख है। इसी प्रसंग के अन्तर्गत सूरदास ने अनेक पदों में राधा-कृष्ण के चिर संयोग का उल्लेख कर उन्हें भक्ति का युगल आश्रय भी घोषित किया हैं।

सूरसागर में जहाँ कृष्ण एवं उनके अन्तरंग सखा राधा एवं उनकी सखियों को दधिदान के लिये कालिदी तट पर घेरने की योजना बनाते हैं, वहीं लोकगीतों में इसकी जगह राधा अपनी चुनी हुई बत्तीस सखियों के साथ गोकुल दधि बेचने जाने का निर्णय करती हैं और दूसरे दिन प्रातः सबको शीघ्र ही तैयार करके प्रस्थान कराने का कार्य एक नाइन को सौंपती हैं, जो प्रातः से ही सबकी वेणी गूँथकर उन्हें गोकुल चलने के लिए तैयार करती है। सूरसागर की तरह दधिदान लीला का घटना-स्थल भी लोकगीतों में कालिन्दी तट न होकर वन में एक सरोवर का तट है, जहाँ कृष्ण गोचारण कर रहे थे। कृष्ण के दधिदान लेते समय चन्द्रावलि ही एक ऐसी गोपी थी जो वहाँ से बिना दान दिये बचकर भाग आई थी। अतः कृष्ण ने एक दिन उसे उसकी मौसेरी बहिन बनकर छला। चन्द्रावलि को इस तरह छलने का उल्लेख सूरसागर में नहीं मिलता।—(बुन्देली : ६६, ६७, ७९, ८०)

सूरसागर में वर्णित दधिदान लीला के तीसरे प्रसंग की तरह लोक-गीतों में अब केवल राधा ही कृष्ण-प्रेम के वशीभूत हो शृङ्गार आदि करके

गोकुल दधि बेचने जाती हैं। जहाँ कृष्ण उनके दधि का मोल न करके उनकी सुरति का मोल करते हैं। अतः राधा वहाँ से अपने लठमार बलम का झूठा भय दिखाकर घर की ओर चल पड़ती हैं, लेकिन कृष्ण-प्रेम में रंगी होने के कारण वह मार्ग में उन्मत्त की भाँति आचरण करने लगती हैं।

—(बुन्देली : ८८, ९०, ९१)

रास लीला—भागवत में शरद पूनों की रात्रि को यमुना तट पर होने वाली गोपी-कृष्ण रास लीला का सविस्तार वर्णन हुआ है जिसके अन्तर्गत निम्न प्रसंग मुख्य रूप में वर्णित हैं : वेणु-गीत, गोपी-कृष्ण सम्वाद, गोपी गर्व, कृष्ण का अन्तर्धान होना, गोपियों का कृष्ण-लीला अनुकरण तथा कृष्ण की खोज, यमुना तट पर कृष्ण का प्रगट होना, सम्भाषण, कृष्ण का अनेक रूप धारण करके महारास करना, उनके साथ रति-क्रीड़ा और फिर यमुना जल-विहार जो उसी रात को सम्पन्न होती है।

सूरसागर में रास लीला का प्रारम्भ कृष्ण के वंशी-वादन एवं उसके चराचर व्यापी प्रभाव से आरम्भ होता है। रास में सम्मिलित होने वाली गोपियों में राधा प्रमुख हैं जिसे लेकर कृष्ण अन्तर्धान हुए थे। गोपियों को विरह का अनुभव कराने के बाद जब कृष्ण प्रकट होते हैं तो वे कहते हैं कि वे तो केवल विनोद में ही अन्तर्धान हो गये थे। भागवत के कृष्ण की तरह वे अपनी परम दयालुता और सुहृदता का भाव गोपियों को नहीं समझाते, वरन् प्राकृत मानव की भाँति आचरण करते हुए रास लीला आरम्भ करते हैं। इसी रास के अन्तर्गत कृष्ण से राधा का गान्धर्व विवाह एवं यमुना जल-विहार भी कराया गया है। रास के अनन्तर भागवत में वर्णित गोपियों के साथ कृष्ण की रति क्रीड़ा और रमण के स्थान पर सूरदास ने कृष्ण को केवल राधा के साथ रति-सुख के लिये प्रवृत्त दिखाया है। भागवत के प्रतिकूल दूसरे दिन प्रातः होने वाले यमुना जल-विहार के बाद कवि रास की महिमा का वर्णन करके ब्रह्मा और भृगु के संवाद के रूप में बताता है कि गोपियाँ वस्तुतः वेदों की श्रुतियाँ थीं जो कृष्ण के सगुण रूप में उनके संयोग सुख का आनन्द लेने के लिये ब्रज में पैदा हुई थीं। इस कथन का भागवत में संकेत भी नहीं है। इसके बाद सूरदास ने राधा-कृष्ण के संयोग सुख तथा मान लीला का वर्णन किया है।

लोकगीतों में शारदी पूर्णिमा की अर्द्ध-रात्रि को कृष्ण के वंशी-वादन तथा उसके प्रभाव के वशीभूत हो, गोपियों का गृह-काज छोड़कर यमुना तट जाने का उल्लेख तो मिलता है लेकिन यहाँ कृष्ण-गोपी संवाद, गोपी गर्व, कृष्ण का अन्तर्धान होना, गोपी विरह तथा पुनः कृष्ण का यमुना तट पर प्रकट होना—आदि बातें नहीं मिलतीं। कृष्ण के वंशी-वादन तथा गोप-गोपियों के

शृंगार कर यमुना तट पर पहुँचते ही रास लीला आरम्भ हो जाती है, जिसे देखने के लिये सूरसागर में वर्णित नारायण और कमला की तरह सुरराज इन्द्र भी लालायित हो उठते हैं। रास लीला में राधा को प्रमुख स्थान मिलने के साथ, रास के अनन्तर कृष्ण-राधा के यमुना जल-विहार करने का भी उल्लेख मिलता है। लेकिन भागवत की तरह रास के अन्तर्गत कृष्ण की गोपियों के साथ रति-क्रीड़ा एवं सूरसागर की तरह राधा-कृष्ण विवाह का उल्लेख लोकगीतों में नहीं मिलता। हाँ, वैसे स्वतन्त्र रूप से राधा-कृष्ण के विवाह एवं पारिवारिक जीवन सम्बन्धी अनेक गीत मिलते हैं, जिन पर द्वारिका लीला के पश्चात् विचार किया गया है। पुनः लोकगीतों में न यही उल्लेख मिलता है कि रास में सम्मिलित होने वाली गोपियाँ सामान्य गोपियाँ न होकर वेदों की श्रुतियाँ थीं।—(ब्रज : १२३, १२६; बुन्देली : ६८, १००, १०१)

मान लीला—भागवत में राधा के न होने से उनकी मान लीला का भी कोई संकेत नहीं हैं। लेकिन सूरदास ने रास लीला के अनन्तर इस प्रसंग की तीन बार उद्भावना की है। राधा के मान करने का कारण प्रथम—कृष्ण के शरीर में स्वप्रतिबिम्ब दर्शन है; तथा दूसरा—कृष्ण का बहुनायकत्व है जिसमें वह ललिता, चन्द्रावलि, सुखमा, शीला, प्रमदा और वृन्दा आदि सखियों के साथ अनुरक्त चित्रित किये गये हैं। ऐसी अवस्था में राधा खण्डिता होकर मान करती हैं। उनके इस मान का कारण—उनका रूप यौवन-गर्व भी है। सूरसागर में वर्णित राधा-मानलीला की कुछ और भी बातें उल्लेखनीय हैं; जैसे—कृष्ण की अनुरक्ता गोपी चन्द्रावलि का राधा के पास जाकर उससे सुरति सुख की बात पूछना। पाँच वर्ष के बालक कृष्ण का सहसा तरुण होकर एकान्त अन्तःपुर में राधा के साथ रमण करना। कृष्ण का मनुहार तथा दूती रूप धारण करके स्वयं राधा का मान छुड़ाने के लिये जाना। एक स्थल पर कवि ने यह भी बताया है कि वस्तुतः कृष्ण का केवल राधा के साथ ही चिर-संयोग हैं, अन्य गोपियों के यहाँ तो वह केवल शरीर से जाते हैं।

लोकगीतों में राधा के मान करने के कारण एवं कृष्ण के बहुनायकत्व का उल्लेख तो नहीं हुआ है लेकिन राधा के मान करने और कृष्ण द्वारा उनको मनाये जाने, राधा के मान न त्यागने पर कृष्ण की विकलता, ललिता एवं विशाखा को दूती बनाकर राधा के पास भेजना एवं राधा का मान भंग कर कृष्ण से सहर्ष मिलने का उल्लेख हुआ है। राधा का यह मान प्रेम विनोद का एक खेल जैसा लगता है।—(ब्रज : १२८, १२६; बुन्देली : १०२)

हिंडोल लीला—हिंडोल लीला का उल्लेख भागवत में नहीं मिलता, जब कि लोक-परम्परा से प्रभावित हो सूरदास ने इस लीला का विस्तृत एवं

सुन्दर वर्णन किया है। कवि ने राधा-कृष्ण के स्वर्ण निर्मित एवं मणि-रत्नों से खचित हिंडोले को विश्वकर्मा की रचना कहा है, जिस पर गोपियों के साथ राधा-कृष्ण के झूलने का सजीव वर्णन मिलता है। इस अवसर पर सूरदास ने गोपियों के साथ गोपालों एवं बलराम का भी उल्लेख किया है। यमुना तट पर हिंडोला झूलने के वर्णन के अतिरिक्त सूरदास ने राधा-कृष्ण के रंगमहल में भी झूला झूलने का चित्रण किया हैं, जहां बलराम भी उपस्थित दिखाये गये हैं।

लोकगीतों में कृष्ण-राधा के हिंडोले को विश्वकर्मा की रचना होने का कोई उल्लेख नहीं मिलता। यहां तो यमुना तट के किसी कदम्ब वृक्ष पर रेशम की पचरंगी डोर और चंदन की पटुली का झूला डाला जाता है जिस पर राधा-कृष्ण एवं गोपियाँ झूलती हैं तथा ललिता और विशाखा 'मल्हार' गाती हैं। यमुना-तट के अतिरिक्त कृष्ण वंशीबट पर रत्नों से जड़ित सुभग हिंडोले पर भी झूला झूलते हैं तथा कुँजवन और बगीचों में कहीं केले के दो खम्भ गाढ़कर झूला डालते हैं तो कहीं अमर का। लेकिन इस लीला में बलराम जी की उपस्थिति का कहीं कोई भी उल्लेख नहीं मिलता।

वसन्त लीला—झूलन लीला के साथ ही भागवत में वसन्त ऋतु में कृष्ण के फाग खेलने का भी कोई उल्लेख नहीं मिलता। सूरदास ने इस लीला का भी सम्भवतः लोक से प्रभावित होने के कारण विस्तृत वर्णन किया है। जिसके अन्तर्गत कुछ ऐसे भी प्रसंग आ गये हैं जो उल्लेखनीय हैं; जैसे वारुणी-दान, कृष्ण-राधा का गठबंधन, बलराम की उपस्थिति, बांसों की मार, नन्द को गाली, गर्दभारोहण तथा तिथि-क्रम से होली-वर्णन आदि। होली के अन्तर्गत इन सबका उल्लेख तो लोकगीतों में नहीं मिलता, लेकिन राजा बलि के द्वार पर होली मढ़ी जाने, बांसों की मार, बलराम की उपस्थिति, कृष्ण का बरसाने अपनी ससुराल जाकर होली खेलने और स्वर्ग से देवताओं का वृन्दावन में होली के रूप में होने वाली राधा-कृष्ण एवं कृष्ण-गोपियों की सम्मिलित आनन्द क्रीड़ा को देखने आने का उल्लेख अवश्य मिलता है।

—(ब्रज : १५१, १५३, १७०, १७३; बुन्देली : १२२)

ऋतु वर्णन—भागवत में ऋतु वर्णन के अन्तर्गत भागवतकार ने वर्षा और शरद का क्रम से वर्णन तो किया है, लेकिन षट् ऋतुओं या बारह मासों के वर्णन का कोई उल्लेख नहीं मिलता। सूरदास ने वर्षा, वसन्त आदि विभिन्न ऋतुओं का पृथक्-पृथक् वर्णन तो किया है, लेकिन यहा भी क्रमबद्धता नहीं मिलती। जहाँ तक लोकगीतों का सम्बन्ध है, यहाँ भी स्वतन्त्र रूप से ऋतुओं का वर्णम क्रम से और न पृथक् रूप में ही मिलता है। हाँ, सावन के गीतों म

वर्षा का वर्णन पृष्ठ-भूमि के रूप में और 'बारहमासों' का उल्लेख गोपी विरह के अन्तर्गत अवश्य हुआ है ।—(बुन्देली : १३८, १४१)

२—मथुरा लीला

कंस का कृष्ण को बुलाने के लिये प्रेरित होना तथा अक्रूर के साथ कृष्ण और बलराम का मथुरा प्रस्थान—भागवत के अनुसार नारद जी से प्रेरणा पाकर कंस ने अक्रूर को कृष्ण-बलराम को मथुरा बुलाने के लिये ब्रज भेजा था, जबकि सूरदास ने लिखा है कि कंस को नारद से एवं एक भयंकर स्वप्न से यह प्रेरणा मिली थी। साथ ही यहाँ नारद को स्वयं कृष्ण ने सलाह देकर कंस के पास भेजा था कि वह जाकर कंस को यह परामर्श दें कि अब कृष्ण-बलराम को मथुरा बुलाना चाहिये। अक्रूर के ब्रज पहुँचने के समय ब्रज-वासियों, विशेषकर गोपियों और यशोदा के करुण भावों के चित्रण में सूरदास की मौलिकता उल्लेखनीय है। लोकगीतों में कृष्ण और बलराम को मथुरा बुलाने की प्रेरणा कंस को कैसे हुई? इसका उल्लेख तो नहीं मिलता लेकिन कंस द्वारा अक्रूर को अपना दूत बनाकर वृन्दावन भेजने का उल्लेख अवश्य मिलता है। साथ ही गोपियों के विछोह-दुःख की व्यंजना लोक गायक विशेष रूप से करता है।—(बुन्देली : १२८)

अक्रूर को जल में कृष्ण-दर्शन—भागवत के अनुसार जब अक्रूर कृष्ण-बलराम के साथ मथुरा जाते हुए मार्ग में यमुना स्नान करते हैं तो उन्हें जल में कृष्ण के दर्शन होते हैं। लेकिन जब वह आश्चर्य चकित हो पीछे मुड़कर देखते हैं तो वहाँ भी वह साक्षात् कृष्ण को बैठा हुआ देखते हैं। भागवत में इस प्रकार जल में कृष्ण के दर्शन देने का कोई कारण नहीं दिया गया है। किन्तु सूरदास ने अक्रूर के इस अन्तर्द्वन्द को कि ये बालक क्रूर कंस से किस प्रकार अपनी रक्षा कर सकेंगे, निर्मूल करने के लिये कृष्ण उन्हें अपने ब्रह्मत्व का आभास देते हैं। लोकगीतों में इस प्रसंग का कोई उल्लेख नहीं मिलता।

मथुरा प्रवेश, रजक वध, दरजी, माली और कुब्जा पर कृपा—भागवत में वर्णित मथुरा प्रवेश और धनुर्भंग के बीच घटित होने वाली इन छोटी-छोटी घटनाओं का वर्णन भागवतकार ने स्थल-स्थल पर किया है। सूरदास ने मथुरा-प्रवेश पर वहाँ के नर-नारियों के हर्षोल्लास के उल्लेख के बाद केवल रजक वध का ही उल्लेख विस्तार से किया है तथा उसका सम्बन्ध तृणावर्त से स्थापित कर दिया है। शेष दर्जी और माली पर कृष्ण की कृपा का उल्लेख बहुत संक्षेप में किया है। भागवत की त्रिवक्रा किन्तु सुमुखी तरुणी कंस की दासी कुब्जा को कृष्ण सूरसागर में रूप-दान के अतिरिक्त सम्पत्ति दान भी करते हैं। लोक-

गीतों में इन कथा-प्रसंगों में से केवल कुब्जा पर कृष्ण की कृपा एवं उसे अपनी पटरानी बनाने का उल्लेख मिलता हैं।

धनुर्भंग तथा कुवलयापीड, चाणूर-मुष्टिक और कंस वध—भागवत में इन समस्त घटनाओं का उल्लेख भागवतकार ने क्रम से और सविस्तार किया है। सूरदास ने इनके वर्णन में भागवत का ही अनुकरण किया है। साथ ही धनुर्भंग के प्रसंग में ही कंस द्वारा किसी एक असुर के भेजे जाने का वर्णन भी किया है जिसे कृष्ण मार डालते हैं। इस घटना का उल्लेख भागवत में नहीं मिलता। कुवलयापीड से युद्ध करने में सूरदास ने कृष्ण और बलराम—दोनों को प्रेरित दिखाया है। इसके अतिरिक्त सूरदास ने अन्य मल्लों के नामों का उल्लेख नहीं किया है। साथ ही कंस और उसके सहयोगियों के वध जैसी महत्वपूर्ण घटना को भागवत की तुलना में बहुत ही संक्षेप में वर्णित कर दिया है।

लोकगीतों में धनुर्भंग का कोई संकेत तो नहीं मिलता लेकिन पील पछाड़ने और मल्लों को गिराने का उल्लेख अवश्य मिलता है जो सम्भवतः कुवलयापीड वध और चाणूर-मुष्टिक के वध की ओर संकेत करता है। कंस की चोटी पकड़कर और उसे छत पर गिराकर कृष्ण द्वारा पैरों से कुचल कर मारे जाने का भी उल्लेख मिलता है, जो भागवत की तरह कहा जा सकता है।—(बुन्देली : १२८)

वसुदेव-देवकी को कारागृह से मुक्ति, उग्रसेन को राज्य, नंद आदि की विदाई, उपनयन संस्कार तथा सांदीपनि से शिक्षा लाभ—भागवत के अनुसार कंस वध और उसके क्रिया-कर्म करने के पश्चात् कारागार से अपने माता-पिता को छुड़ाने एवं उग्रसेन को मथुरा का राज्य देने के बाद कृष्ण ने नन्द एवं दूसरे ब्रजवासियों को समझा बुझाकर बड़े आदर के साथ ब्रज विदा किया। उसके पश्चात् वसुदेव जी ने गर्गाचार्य जी के द्वारा कृष्ण-बलदेव का यज्ञोपवीत संस्कार कराया। यज्ञोपवीत होने के बाद दोनों भाइयों के अवंतीपुर जाकर सांदीपनि मुनि के आश्रम में रहते हुए विद्याध्ययन करने का भी विस्तार से उल्लेख भागवतकार ने किया है। सूरसागर में उपयुक्त सब प्रसंग तो मिलते हैं, लेकिन कृष्ण के विद्याध्ययन के सम्बन्ध में सूरदास ने दो भिन्न प्रकार के उल्लेख किये हैं। एक स्थल पर उल्लेख मिलता है कि कृष्ण मथुरा में ही रहकर विद्याध्ययन करते हैं और गुरु-दक्षिणा स्वरूप उनके मृत पुत्रों को यम-लोक से लाकर उन्हें देते हैं। दूसरे स्थल पर अर्थात् 'सुदामा दारिद्रय भंजन' प्रसंग के अन्तर्गत रुक्मिणी के पूछने पर कि यह ब्राह्मण कौन है, और कहाँ से आया है ? कृष्ण कहते हैं :

संदीपन कैं हमऽरु सुदामा, पढ़े एक चटसार। —(पद : ४८४८)

जिससे ज्ञात होता है कि कृष्ण सांदीपनि मुनि के आश्रम में रहकर शिक्षा प्राप्त किये थे।

सूरदास ने भागवत वर्णित उपर्युक्त सब प्रसंगों में से नन्द के वृन्दावन आगमन, नन्द-यशोदा का कृष्ण के लिये विरहजन्य वात्सल्य प्रेम और गोपियों तथा ब्रजवासियों की विरहावस्था का चित्रण सविस्तार किया है। इसी प्रसंग के अन्तर्गत यशोदा और राधा—दोनों ही पथियों द्वारा देवकी और कृष्ण के पास विरहजन्य संदेश भेजती हैं जिसका भागवत में उल्लेख भी नहीं मिलता।

लोकगीतों में केवल उग्रसेन को राज्याभिषिक्त किये जाने व वसुदेव-देवकी को कारागृह से मुक्त करने भर का उल्लेख हुआ है। उनके उपनयन संस्कार, विद्याध्ययन, नन्दादि की विदाई, नन्द-यशोदा का विरह और पथियों द्वारा देवकी और मथुरावासी कृष्ण के पास सन्देश भेजने का कोई संकेत नहीं मिलता।—(ब्रज : १६०)

श्याम पर कटूक्तियाँ—भागवत में उद्धव को वृन्दावन भेजने का उद्देश्य केवल नन्द-यशोदा को कृष्ण का सन्देश देकर सुखी करना तथा गोपियों को सांत्वना देना बताया गया है। लेकिन सूरसागर में कृष्ण उद्धव को गोपियों को ज्ञान सिखाने के बहाने उन्हें स्वयं ही प्रेम-भक्ति में दीक्षित होने के लिये ब्रज भेजते हैं। इस प्रकार सूरसागर में आकर भागवत की कथा का सारा केन्द्र ही बदल जाता है। भागवत के अनुसार गोपियों को गोधूलि वेला में उद्धव का रथ देखकर अक्रूर के पुनरागमन का भ्रम होता है, कृष्ण-बलराम के आगमन का नहीं। किन्तु सूरदास ने दोनों के वर्णन के साथ-साथ गोपियों के शुभ शकुन होने का भी उल्लेख किया है। भागवत के कृष्ण जहाँ उद्धव को मौखिक रूप से अपना संदेश देकर नन्द-यशोदा एवं गोपियों के पास भेजकर उनकी विरहावस्था दूर करने का प्रयत्न करते हैं, परन्तु वह सन्देश क्या था? इसका उल्लेख नहीं करते, वहाँ सूरदास के कृष्ण नन्द, यशोदा, राधा और श्रीदामा आदि को पृथक्-पृथक् लिखित सन्देश भेजते हैं। साथ ही कुब्जा भी गोपियों एवं राधा के लिये उद्धव को पाती लिखकर देती है; और उद्धव कृष्ण जैसा ही रूप बनाकर उनका ज्ञान, योग, तपस्या और निर्गुण ब्रह्म की उपासना का नीरस सन्देश ले उन्हीं के रथ में बैठकर ब्रज आते हैं तथा अपने आगमन की सूचना सर्वप्रथम एक सखी द्वारा राधा के पास भेजते हैं। इस प्रकार का उल्लेख भागवत में नहीं मिलता।

भागवत की गोपियाँ कुब्जा के प्रति स्पष्ट रूप से कहीं भी कोई व्यंग्य नहीं कसतीं परन्तु सूरदास ने तो जैसे कुब्जा को व्यंग्य का आधार ही बना दिया

है। साथ ही भागवत की गोपियाँ जहाँ उद्धव का ज्ञानोपदेश सुनकर संतुष्ट हो जाती हैं, वहाँ सूरसागर की गोपियाँ अपने व्यंग्य और करुणपूर्ण वाक्यों से उद्धव का पाण्डित्य एवं ज्ञान-गर्व भुलाकर उन्हें भी सगुण का चेला बना लेती हैं। अब वह किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो नन्दादि से विदा ले प्रेम-भक्ति के रंग में रंगे मथुरा लौटकर गोपियों की ओर से कृष्ण की निष्ठुरता की आलोचना करते हैं, साथ ही ब्रज-दशा और गोपी-विरह का वर्णन भी करते हैं। लेकिन भागवत के उद्धव ने कृष्ण से मिलकर क्या कहा, इसका वहाँ संकेत मात्र भी नहीं। हाँ, उन्होंने ब्रजवासियों की प्रेममयी भक्ति का उद्रेक—जैसा उन्होंने ब्रज में देखा था, कृष्ण से अवश्य कह सुनाया। लेकिन वह सूरसागर की तरह यहाँ कृष्ण की निष्ठुरता की आलोचना नहीं करते।

लोकगीतों में उद्धव के ब्रज आगमन का कारण, नन्द-यशोदा से भेंट और कुब्जा का सन्देश—इन प्रसंगों का किंचित् भी संकेत तो नहीं मिलता लेकिन गोपियों के प्रति कृष्ण की भेजी गई पाती का उल्लेख अवश्य हुआ है। भागवत की गोपियों की तरह लोकगीतों की गोपियाँ नहीं, वह तो सूरसागर की गोपियों के समान भ्रमर को आधार बनाकर कृष्ण पर, साथ ही कुब्जा तथा उद्धव पर भी अपने व्यंग्य वाण छोड़ती हैं और उद्धव का ज्ञान-गर्व भुलाकर उन्हें भी अपनी ही तरह कृष्ण-प्रेम के रंग में रंग लेती हैं।

सूरसागर में उद्धव के मथुरा लौटते समय गोपियाँ विनय, दीनता और प्रेम के साथ तथा राधा अपनी मौन वाणी द्वारा कृष्ण के पास अपनी वियोग-व्यथा का सन्देश भेजती हैं। लेकिन लोकगीतों में राधा श्याम के अतिरिक्त कुब्जा को भी सन्देश भेजती हैं और उद्धव को यह भी सहेजती हैं कि वह कुब्जा को अलग बुलाकर कृष्ण से उनका संदेश कहें।—(बुन्देली : १५२)

कुब्जा-रमण और अक्रूर गृह-आगमन—भागवत में ये दोनों प्रसंग भ्रमरगीत के पश्चात् वर्णित हैं किन्तु सूरसागर में कुब्जा-कृष्ण के रति-विलास का चित्रण भ्रमरगीत के पूर्व ही प्राप्त होता है। हाँ, अक्रूर गृह-गमन और उन्हें हस्तिनापुर भेजने का उल्लेख भागवत की तरह भ्रमरगीत के बाद ही हुआ है। लोकगीतों में इन दोनों प्रसंगों का संकेत भी नहीं मिलता।

जरासंध आक्रमण, कालयवन को मुक्ति, राजा मुचकुंद पर कृपा, द्वारिका प्रस्थान और गोपी-विरह—भागवत के अनुसार कंस वध की अप्रिय घटना जब उसके ससुर जरासंध को अपनी पुत्रियों के द्वारा ज्ञात हुई तो उसने कृष्ण एवं यदुवंशियों से बदला लेने के लिये १७ बार मथुरा पर आक्रमण

किया और दुर्भाग्यवश बराबर हार खाता रहा, लेकिन जब वह १८वीं बार मथुरा पर आक्रमण करने वाला था तो उसी समय नारद द्वारा प्रेरित काल-यवन भी अपनी अतुलनीय वीरता के मद में चूर कृष्ण से लड़ने मथुरा जा पहुँचा। अतः कृष्ण ने इस दोहरे आक्रमण के भय से एक दिन में नवनिर्मित द्वारिकापुरी में अपने समस्त स्वजन सम्बन्धियों को अपनी अचिंत्य महाशक्ति 'योगमाया' के द्वारा पहुँचा दिया तथा शेष प्रजा की रक्षा का भार बलरामजी के ऊपर छोड़कर स्वयं कालयवन का सामना करने मथुरा से बाहर निकल पड़े।

इसके अतिरिक्त राजा मुचकुंद की क्रोधाग्नि से कालयवन का भस्म होना, कृष्ण की राजा मुचकुंद पर कृपा, इसी समय जरासंध द्वारा किये गये आक्रमण से कृष्ण एवं बलराम का सब की दृष्टि बचाकर द्वारिका पहुँच जाने आदि की कथा का कोई विस्तार से वर्णन सूरसागर में नहीं मिलता। कवि ने केवल तीन पदों के अन्तर्गत ही जरासंध के आक्रमणों एवं युद्धों को एक नदी के रूपक द्वारा, तथा मुचकुंद द्वारा कालयवन के भस्म किये जाने का उल्लेख एक पंक्ति में ही कर दिया है। फिर जिस योग के प्रभाव से भागवत के कृष्ण ने समस्त स्वजन सम्बन्धियों को नवनिर्मित द्वारिकापुरी में पहुँचा दिया था, उसके स्थान पर सूरदास ने केवल इतना ही लिखा है कि कृष्ण ने सिंधु नदी के तट पर एक नगर बसाया जहाँ उग्रसेन समस्त कुटुम्ब को लेकर चले गये। इसके बाद कृष्ण जरासंध की सेना को धोखा देकर द्वारिका जा पहुँचे।

लोकगीतों में जरासन्ध और कालयवन के आक्रमण, द्वारिका के निर्माण, तथा वहाँ कालयवन और जरासन्ध के भय से अपने समस्त सम्बन्धियों के भेजने आदि का उल्लेख तो नहीं मिलता लेकिन कृष्ण के मथुरा छोड़कर द्वारिका चले जाने का उल्लेख अवश्य हुआ है, जब कि गोप-गोपियाँ तरह-तरह से कृष्ण को द्वारावती जाने से रोकती हैं तथा कहती हैं कि वे मथुरा छोड़कर कहीं न जायें।

—(बुन्देली : १५६)

३—द्वारिका लीला

द्वारिका प्रवेश—द्वारावती प्रवेश के समय रथ के साथ-साथ कृष्ण की शोभा, नगरी की अपूर्व शोभा-सम्पन्नता एवं बलदेव तथा अन्य राजकुमारों के साथ चौगान खेलने का जो वर्णन सूरदास ने किया है—वह न भागवत में मिलता है, और न लोकगीतों में ही।

रुक्मिणी हरण—सूरदास ने सूरसागर में कृष्ण-रुक्मिणी विवाह की कथा का दो बार वर्णन किया है तथा इसके लिये उन्होंने भागवत की कथा

का ही अनुसरण किया है। विदर्भराज की पुत्री रुक्मिणी कृष्ण के नाम एक पत्री लिखकर एक विश्वासपात्र ब्राह्मण को देती है और उसे गोपनीय सन्देश बताकर कृष्ण के पास द्वारिका भेजती है। इस पत्री को लेकर किसी चमत्कारिक ढंग से ब्राह्मण के द्वारिका पहुँचने का उल्लेख कहीं भी नहीं हुआ है। भागवत में इसी पत्री में रुक्मिणी ने बलपूर्वक राक्षस विधि से तथा कुलदेवी यात्रा कहकर अपने हरण की समस्त विधि कृष्ण को बतला दी है। हरण विधि का स्पष्ट उल्लेख न करते हुए भी सूरदास एवं ब्रज लोकगायक (क्योंकि ब्रज-क्षेत्र में ही कृष्ण-रुक्मिणी से सम्बन्धित गीत प्राप्त होते हैं) ने पाती का स्पष्ट वर्णन किया है।—(ब्रज : २१६)

सूरदास ने—'द्विज पाती दै कहियो स्यामहिँ'—के रुक्मिणी के मौखिक सन्देश को भी विस्तार दिया है जिसमें वह ब्राह्मण देवता से कहती हैं कि—"तुम कृष्ण से कहना कि पत्र पढ़ते ही वह यहाँ चले आएँ। प्रभात में लग्न का समय है। अतः प्रातः शिशुपाल के आने के कुछ पूर्व ही वह आ जायें और मुझे शिशुपाल के हाथों पड़ने से बचा लें।"—(सूरसागर पद : ४७८६) इस मौखिक सन्देश का न भागवत में उल्लेख है, और न लोकगीतों में। साथ ही जहाँ भागवत में रुक्मिणी ने कृष्ण को विवाह के एक दिन पूर्व होने वाली कुलदेवी यात्रा के अवसर पर बुलाया है, वहाँ सूरसागर में रुक्मिणी कृष्ण को प्रातःकाल लग्न समय एवं शिशुपाल के आगमन के पूर्व कुंडिनपुर बुलाती हैं।

ब्रज लोकगीतों में कृष्ण के कुंडिनपुर पहुँचने के समय का कोई संकेत नहीं किया गया है। यद्यपि द्वारिका से कुंडिनपुर आते समय ब्राह्मण देवता जिसका नाम लोक गायक ने पैज मिश्र कहा है, कृष्ण के ब्रह्मत्व की परीक्षा लेता है। इस प्रकार का कोई भी उल्लेख भागवत या सूरसागर में नहीं मिलता। फिर लोक गीतों में एक मौलिक कल्पना यह भी मिलती है कि जब नाई लग्न लेकर शिशुपाल के पास पहुँचता है और उसे उनके हाथ में देता है तो उस समय उसका हाथ व शरीर सम्भवतः भावी अमंगल की सूचनावश कँपने लगता है जिसके परिणाम स्वरूप उसके सिर की पगड़ी भूमि पर गिर पड़ती है। पुनः शिशुपाल जब बारात लेकर कुंडिनपुर को चलता है तो उसके पूर्व एक ज्यौनार होता है और तत्पश्चात् जगह-जगह वह सोने की मोहरें रखाकर शुभ शकुन करता चलता है। इस तरह का वर्णन न भागवत में मिलता है, और न सूरसागर में ही।—(ब्रज : २१७, २१८)

कुलदेवी का प्रकट होना—सूरसागर में जब रुक्मिणी देवी मन्दिर में उनके दर्शन करने और कृष्ण को वर रूप में पाने की प्रार्थना करने जाती हैं तो सूरदास 'गौरी सुनि मुसकाई' और साथ ही देवी के इन शब्दों को—

सुनि कुँअरि पांइ मेरे जनि लागहि,
कहा कुटुंब के बैन, नैन श्रीपति अनुरागहि।
आधौ श्री वृषभानु कौं, आधौ दीन्हौ तोहि,
राज-सुहाग बढ़ौ सबै, कहा निहोरौ मोहि।

लिखकर रुक्मिणी पर देवी की प्रसन्नता का उल्लेख करते हैं। भागवत में इस तरह का कोई उल्लेख नहीं मिलता। परन्तु ब्रज के लोकगीतों में देवी के केवल प्रसन्न होकर रुक्मिणी को प्राण तजने से रोकने का उल्लेख अवश्य हुआ है।—(ब्रज : २१८)

शिशुपाल के साथी राजाओं सहित रुक्मी की हार तथा कृष्ण-रुक्मिणी विवाह—भागवत में जहाँ रुक्मिणी हरण के पश्चात् शिशुपाल के साथी राजाओं द्वारा कृष्ण का पीछा कर उनसे युद्ध करने का उल्लेख है, वहाँ सूरदास ने शिशुपाल को भी लड़ाई में हारा हुआ दिखाया है। भागवत में जब कृष्ण रुक्मी को मारने लगते हैं तो रुक्मिणी के विनय करने पर वह उसे केवल कुरूप करके छोड़ देते हैं। लेकिन सूरसागर में वही रुक्मी कृष्ण द्वारा कुरूप किये जाने पर भी कृष्ण से प्रार्थना करता है और अपने किये पर पश्चाताप भी। इसी अवसर पर सूरसागर मे विदर्भ राज भीष्मक ने आकर कृष्ण को बहुत-सा विवाह का दहेज भी दिया है, जिसके बाद कृष्ण सानन्द द्वारिकापुरी वापस लौट आते हैं। भागवत या ब्रज के लोकगीतों में राजा भीष्मक के आने और दहेज देने का कहीं भी संकेत नहीं मिलता।

द्वारिका वापस आने पर भागवतकार ने अतीव हर्षोल्लास के वातावरण में कृष्ण-रुक्मिणी के विवाह के सम्पन्न होने मात्र का उल्लेख भर किया है, जब कि सूरदास ने विवाह का सविस्तार वर्णन किया है। जिसमें ब्रह्मा स्वयं चौक पूरते हैं और फिर वैदिक विधि से उनका विवाह सम्पन्न कराते हैं। इसी अवसर पर इन्द्र-इन्द्राणी भी उपस्थित रहते हैं। वसुदेव सहित सब लोग हर्षित होते हैं और नारियाँ गारी गाती हैं। द्वारिका में होने वाले इस विवाहोत्सव का वर्णन ब्रज के लोकगीतों में तो नहीं मिलता, लेकिन वहाँ की नारियों द्वारा रुक्मिणी के रूप-सौन्दर्य की विनय-चर्चा अवश्य चलती है।—(ब्रज : २१९)

प्रद्युम्न जन्म और शम्बरासुर वध—भागवत में रुक्मिणी विवाह के पश्चात् प्रद्युम्न के जन्म और शम्बरासुर बध का उल्लेख हुआ है। सूरदास ने भी इसी कथा का संक्षेप में अनुसरण करते हुए सूरसागर में लिया है। ब्रज के लोकगीतों में रानी रुक्मिणी के पुत्र होने, नाई द्वारा कुंडिनपुर रुचन भेजने, सुभद्रा का सातिये रखने और नेग आदि के रूप में 'जगमोहन लुगरा' के माँगने एवं

झगड़ने आदि का सविस्तार उल्लेख हुआ है। लेकिन रुक्मिणी के होने वाले नवजात पुत्र का क्या नाम था, इस पर प्रकाश नहीं डाला गया है। केवल ब्रज के लोकगीतों में मिलने वाली यह सम्पूर्ण कथा न भागवत में मिलती है, और न सूरसागर में ही। साथ ही भागवत और सूरसागर की भाँति यह पुत्र इन लोकगीतों में न कामदेव के अवतार रूप में वर्णित है, और न यहाँ शम्बरासुर के वध और मायादेवी या रति का ही कोई उल्लेख मिलता है।

—(ब्रज : २२१, २२३, २२४)

अन्य प्रसंग—भागवत में वर्णित सत्राजित के स्यमंतक मणि से सम्बद्ध जाम्बवान और अक्रूर आदि की कथा, सत्यभामा तथा जाम्बवन्ती का कृष्ण से विवाह, शतधन्वा वध, अक्रूर द्वारिका आगमन, कृष्ण का अन्य पाँच रानियों—कालिंदी, सत्या, भद्रा, मित्रवृन्दा और लक्ष्मणा से विवाह; भौमासुर वध, उनके द्वारा बन्दी की गई १६,१०० रानियों के साथ कृष्ण का उतने ही रूप धारण कर विवाह, सत्यभामा का मान, इन्द्र के नन्दनवन से कल्पवृक्ष आनयन, रुक्मिणी के पातिव्रत धर्म की परीक्षा, वाणासुर वध; राजा नृग, पौंड्रक और काशीराज के उद्धार के पश्चात् नारद संशय की कथायें प्रायः उसी रूप में परन्तु सूक्ष्म ढग से सूरसागर में वर्णित हैं। लेकिन जहाँ तक इन समस्त कथानकों के लोकगीतों में पाये जाने का सम्बन्ध है, वहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि लोक गायक ने इन कथा-प्रसंगों को अपने गीतों में कोई स्थान नहीं दिया है। हाँ, एक स्थल पर वह विरहिणी राधा के द्वारा कृष्ण की १६६०८ रानियों के होने का उल्लेख अवश्य करता है।—(बुन्देली १६२)

सुदामा दारिद्रय भंजन—भागवत में मिलने वाली सुदामा दारिद्रय भंजन की कथा के समान ही सूरदास ने इस कथा का सविस्तार वर्णन किया है। जिसमें कवि ने सुदामा के दारिद्रय की अतिरंजना और कृष्ण की मैत्री के आदर्शीकरण के अतिरिक्त भागवत की मूल कथा में कोई आमूल परिवर्तन नहीं किया है। हाँ, यत्र-तत्र कथा में कुछ मौलिक कल्पना अवश्य मिल जाती है; जैसे सूरदास ने सुदामा की पत्नी का नाम सुशीला बताया है। फिर भागवत में कृष्ण जहाँ सुदामा का एक मुट्ठी चिउड़ा खाते हैं, वहाँ सूरसागर में वह सुदामा के दो मुट्ठी चावल खा जाते हैं—तब कहीं रुक्मिणी उनका हाथ पकड़ती हैं। पुनः भागवत में सुदामा के द्वारिका से वापस आने पर सुदामा-पत्नी सुदामा से यह कभी नहीं पूछती कि कृष्ण तुमसे किस प्रकार मिले, जबकि सूरसागर में वह सुदामा से पूछती है—

"कैसे मिले पिय स्याम संघाती।"

ऐसा पूछने पर सुदामा सविस्तार अपने मिलने व कृष्ण के आदर-सत्कार का वर्णन करते हैं। लेकिन लोक-गीतों में मिलने वाली सुदामा की कथा प्रायः भागवत की ही तरह होते हुए भी संक्षिप्त अधिक है।

—(ब्रज : २२५; बुन्देली : १६०)

ब्रजवासियों का पथिक द्वारा कृष्ण के पास सन्देश—सूरसागर का यह प्रसंग सर्वथा मौलिक और मार्मिक है। उद्धव के ब्रज आगमन और प्रत्यागमन के पश्चात् जब गोपियों को कृष्ण की कुशलता का कोई समाचार न मिला तो वे एक पथिक द्वारा मथुरावासी कृष्ण के पास अपना विरहपूर्ण सन्देश भेजती हैं कि वह एक बार ब्रज आकर हम सबको सनाथ करें। पथिक सन्देश लेकर मथुरा जाता हैं और फिर वहाँ से लौटकर बताता हैं कि कृष्ण तो मथुरा छोड़ कर अब द्वारिका जा रहे हैं। यह सुनकर समस्त ब्रजवासी विशेषकर यशोदा और राधा—कृष्ण के वियोग सागर में डूब जाती हैं। वे कहती हैं—अब तक कृष्ण मथुरा में थे तो उनके कुछ मिलने की आशा भी थी, लेकिन उनके मथुरा से चले जाने पर तो यह आशा भी जाती रही। ऐसी स्थिति में विरहिणी राधा उडपति द्वारा द्वारिकावासी कृष्ण के पास अपना सन्देश भेजती हैं।

लोक-गीतों में भी विरहिणी राधा पथिक द्वारा द्वारिकावासी कृष्ण के पास सन्देश भेजती हैं कि गोपाल आओ। फागुन आ गया। मैं अब किसके साथ होली खेलूँ? क्या तुम मुझे भूल गये? यदि मुझे भूल भी गये तो क्या अपने माता-पिता को भी विस्मृत कर बैठे? लोक-गीतों का यह सन्देश सूरदास की राधा नहीं भेजती। —(बुन्देली : १६१, १६२)

अन्य प्रसङ्ग—भागवत में वर्णित कुरुक्षेत्र में कृष्ण और ब्रजवासियों की भेंट, वसुदेव का यज्ञोत्सव, कृष्ण का द्वारिका प्रत्यागमन, वसुदेव को ब्रह्मज्ञान का उपदेश, कंस द्वारा मारे गये अपने छहों भाइयों को सुतल लोक से वापस लाकर माता देवकी को देना, सुभद्रा हरण, राजा जनक और श्रुतदेव ब्राह्मण के घर एक साथ जाना, भस्मासुर वध, भृगु द्वारा त्रिदेवों की परीक्षा और मरे हुए ब्राह्मण पुत्रों को वापस लाने की कथाएँ सूरसागर में भी दी गई हैं परन्तु बहुत ही संक्षेप में। हाँ, कुरुक्षेत्र मिलन की कथा को सूरदास ने भले ही बड़े विस्तार और मौलिक ढङ्ग से प्रस्तुत किया है। लेकिन इन समस्त कथा-प्रसङ्गों का लोक-गीतों की कृष्ण-कथा में नितान्त अभाव है।

राधा-कृष्ण विवाह और गृहस्थ जीवन—कृष्ण और राधा के विवाह का भागवत में तो कोई उल्लेख नहीं, क्योंकि वहाँ राधा का कहीं नाम ही नहीं

है। हाँ, सूरदास ने कृष्ण-राधा विवाह की कल्पना अवश्य रास के प्रसङ्ग में की है। जहाँ शरद्-निशि की लग्न तथा मुरली ध्वनि से गोपियों के आमन्त्रित किये जाने के प्रसङ्ग से स्पष्ट है। यही नहीं, सूरदास ने व्यास की साक्षी देकर राधा-कृष्ण के प्रेम विकास का संक्षिप्त इतिहास देते हुए वन-भूमि के प्राकृतिक और सरस वातावरण में उनके गन्धर्व विवाह का पूर्ण और चित्रोपम वर्णन भी किया है। लेकिन ब्रज और बुन्देली लोक-गीतों में कृष्ण विवाह की कथा का क्रमिक विकास मिलता है। जहाँ वैवाहिक संस्कार के विशद् चित्रण के अतिरिक्त संयुक्त परिवार में रहते हुए राधा-कृष्ण के पारिवारिक जीवन, सास यशोदा की बहू राधा और रुक्मिणी के प्रति कठोरता का व्यवहार आदि का भी वास्तविक चित्र उपलब्ध होता है, जिसमें हर्ष और विषाद, सुख और दुःख—सब ग्रामीण वातावरण में घटित होते हैं।

—(ब्रज : २२६ से २४३ तक; बुन्देली : १६६ से १७७ तक)

कृष्ण-तुलसा विवाह—इस कथा का उल्लेख न तो भागवत में मिलता है और न सूरसागर में ही। हाँ, देवी भागवत पुराण के नवम् स्कन्ध में राजा धर्मध्वज और माधवी से लक्ष्मी के अंश से कातिकी पूर्णिमा के दिन उत्पन्न हुई कन्या तुलसी ने अपने पूर्व जन्म के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है, उससे तुलसी और कृष्ण के आपसी सम्बन्ध पर महत्वपूर्ण प्रकाश पड़ता है :—

"पूर्व जन्म में मैं तुलसी नाम की गोपी थी। गोलोक मेरा निवास स्थान था। भगवान् श्रीकृष्ण की प्रिया, उनकी अनुचरी, उनकी अर्द्धाङ्गिनी तथा उनकी प्रेयसी सखी—सब कुछ होने का सौभाग्य मुझे प्राप्त था। गोविन्द नाम से सुशोभित उन प्रभु के साथ मैं हास-विलास में रत थी। उस परम सुख से अभी मैं तृप्त नहीं थी। इतने में एक दिन रास की अधिष्ठात्री देवी भागवती राधा ने रास-मण्डल में पधार कर रोष से मुझे यह शाप दे दिया कि "तुम मानव योनि में उत्पन्न होओ।" उसी समय भगवान गोविन्द ने मुझ से कहा—"देवी! तुम भारतवर्ष में रहकर तपस्या करो। ब्रह्मा वर देंगे, जिससे मेरे स्वरूप भूत अंश चतुर्भुज श्री विष्णु को तुम पति रूप में प्राप्त कर लोगी।"

लेकिन बुन्देली लोकगीतों में हरि अर्थात् कृष्ण के साथ तुलसा का विवाह, राधा की अपनी सौत तुलसा के प्रति ईर्ष्या, तुलसा का यमुना पार कर एक रात छिपे-छिपे कृष्ण से मिलने का असफल प्रयास करने, आदि की कथायें पूर्णतया लोक की अपनी कल्पना है, जिसका किसी भी पुराण में उल्लेख नहीं मिलता। —(बुन्देली : १७७ से १८१ तक)

लोकगीतों और सूरसागर की कृष्ण-कथा के इस तुलनात्मक अध्ययन से यह परिणाम निकाला जा सकता है कि सम्भव है ये कथा-विस्तार लोकगीतों में

सूरदास या अन्य कृष्ण-भक्त कवियों के पदों से आये हों। परन्तु तथ्य कदाचित ठीक इसका उल्टा है। सूरदास तथा कृष्ण-भक्ति साहित्य के अन्य कवियों ने ही लोक-साहित्य से अपनी कृष्ण-कथा को सम्पन्न बनाया होगा, इसी की सम्भावना भी अधिक है, जैसा कि "कृष्ण-कथापरक लोकगीत और हिन्दी कृष्ण-भक्ति साहित्य का पारस्परिक सम्बन्ध" शीर्षक अध्याय के अन्तर्गत कुछ सीमा तक स्पष्ट किया गया है।

५

कृष्ण-कथापरक लोकगीत और हिन्दी कृष्ण-भक्ति साहित्य का पारस्परिक सम्बन्ध

भारत जैसे प्राचीन सभ्यता के देश में लोक-साहित्य का अध्ययन बहुत जटिल व्यापार है। यहाँ शास्त्रीय चिन्तनधारा बराबर लोक विश्वासों को प्रभावित करती रही है और लोक के प्रचलित साहित्य रूप भी उच्च स्तर के साहित्यिक प्रयत्नों को प्रभावित करते रहे हैं। फिर भारतीय साहित्य का ज्ञाता यह भी जानता है कि किस प्रकार संस्कृत, पाली और प्राकृत में लोक-कथानकों ने लिखित साहित्य का रूप ग्रहण किया। जातकों की कहानियाँ, पंचतन्त्र की कथाएँ और वृहत्कथा की निजंधरी कथायें केवल साहित्य का अंग ही नहीं बनी हैं वरन् परवर्ती काल के अत्यन्त अलंकृत कथा साहित्य को प्रेरणा भी देती रही हैं। फिर मध्ययुग के सन्तों का लिखा हुआ सम्पूर्ण देशी भाषा का साहित्य, जो कई बार तो लिखा भी नहीं गया, कुछ थोड़ से अपवादों को छोड़कर लोक साहित्य के अन्तर्गत लाया जा सकता है। क्योंकि साधारणतः मौखिक परम्परा से प्राप्त और दीर्घकाल तक स्मृति के बल पर चले आते हुए गीत और कथानक लोक साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। अतः यदि गम्भीरता के साथ अध्ययन किया जाये तो हमारे सभी काव्य रूपों के मूलभूत रूप, सामान्य अभिप्रायों एवं हमारे अत्यन्त जटिल छन्दो विधान और परिष्कृत संगीत शैलियों के आरम्भिक रूप भी लोक साहित्य में खोजे जा सकते हैं।

पुनः जहाँ तक मध्यकालीन हिन्दी कृष्ण भक्त कवियों एवं उनके काव्य का सम्बन्ध है, इन भक्त कवियों को सांस्कृतिक समन्वय के कवि के साथ लोक संस्कृति का कवि कहना भी उचित होगा। महाकवि सूरदास के ही काव्य को यदि देखा जाये तो उनके काव्य की मूल विषय-वस्तु—जैसे लोक की अपनी वस्तु है। यहीं लोक में प्रचलित सोहर, बधाव, हिंडोला, बारहमासा और होली आदि को सुनकर सूरदास ने ब्रज के ग्रामीण जीवन का यथातथ्य वर्णन किया था; और यहीं पुत्र जन्म और छठी पर होने वाली लौकिक परम्पराओं एवं विश्वासों को देख सुनकर सूरदास ने लिखा था :

चौक चन्दन लीपि कै, धरि आरती संजोइ।
कहति घोष कुमारि ऐसौ अनन्द जौ नित होइ॥
द्वार सथिया देत स्यामा, सात सींक बनाइ।
नव किसोरी मुदित ह्वै-ह्वै, गहति जसुदा पाइ॥

—(सूरसागर, पद : ६४४)

या फिर :

धनि-धनि भादौं अष्टमी (हो) जनम लियौ जब कान्ह।
काढ़ौ कोरे कापरा (अरु) काढ़ौ घी के मौन॥
जाति पाँति पहिराइ कै (सब) समदि छतीसौ पौन।
काजर रोरी आनहू (मिलि) करौ छठी कौ चार॥

—(पद : ६५८)

सूरदास या अष्टछाप के अन्य कृष्ण भक्त कवियों की महत्ता इसी बात में है कि वे ब्रज की भूमि, वहाँ की जन संस्कृति, वहाँ की बोली बानी के सबसे अधिक निकट हैं। सूरदास ने इसी ब्रज लोक संस्कृति के आधार पर लोक जीवन के अनुपम चित्र उपस्थित किये हैं। ब्रज की होली का कैसा सजीव वर्णन लोक शैली के ही माध्यम से सूरदास ने किया है।

हो हो हो हो लै लै बोलैं, गोरस केरे माते डोलैं।
ब्रज के लरिकनि संग लिये जो लैं, घर-घर केरे फरके खोलैं॥
गोपी-ग्वाल मिले इक सारी, बचत नहीं बिनु दीन्हें गारी।
आनि अचानक अँखियाँ मीचैं, चन्दन बदन ऊपर सीचैं॥

—(पद : ३५१४)

मध्य युगीन साहित्य में एक ओर जहाँ दरबारी कविता की अतिशयोक्तियाँ हैं, वीर और शृंगार रस—दोनों में जमीन-आसमान के ओर-छोर मिलाये जाते हैं, अलंकारों की झड़ी लगा दी जाती है, वहीं दूसरी ओर यह

भक्त काव्य है, जिसकी रुझान यथार्थ जीवन की ओर विशेष है। यह काव्य लोक के रीति-रिवाज, उनके त्यौहार और आनन्दोत्सव, उनकी सुख और सौन्दर्य की कामना ही प्रकट नहीं करता, वरन् वह लोक मानस के दु:ख का भी प्रतिबिम्ब है। पुनः इस साहित्य की कला भी अत्यन्त लोकप्रिय है। संत-भक्तों ने अपनी रचनाओं को इस तरह सँवारा कि वह करोड़ों जन मानस का कण्ठहार बन गई। ऐसे लोकप्रिय साहित्य की रचना और उसका प्रचार एक अपूर्व सफलता है और इस सफलता एवं लोकप्रियता का सम्भवतः मूलभूत कारण उसका लोकगीत साहित्य और लोक संस्कृति से प्रभावित होना भी है।

कृष्ण भक्तों ने अधिकतर भजन-कीर्तन रचे, जो लोक में प्रायः गाये और सुने जाते रहे हैं और आज भी यह क्रम किसी न किसी रूप में जारी है। फलस्वरूप इस धारा के सबसे प्रमुख भक्त महाकवि सूरदास के पदों ने अन्य भक्त कवियों की अपेक्षा, लोकगीतों और विशेषकर ब्रज के गीतों पर अपनी भाव और शैली द्वारा स्पष्ट छाप डाली है। साहित्य के इस प्रभाव को कुछ सीमा तक स्पष्ट करने के लिये सूरदास के अतिरिक्त परमानन्ददास, नन्ददास, गोविन्दस्वामी तथा आसकरन प्रभु के अनेक पदों की तुलना लोकगीतों से करके स्पष्ट की जा सकती है।

सूरदास द्वारा रचित "तृणावर्त वध" शीर्षक के अन्तर्गत आने वाले इस प्रथम पद को ही उदाहरण स्वरूप लिया जा सकता है :

जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरो लाल घुटुरुवनि रेंगै, कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दाँत दूध के देखौं, कब तोतरैं मुख बचन भरै॥

—(पद : ६९४)

इस उपर्युक्त पद का प्रभाव निम्नलिखित बुन्देली लोकगीत पर भाव एवं शैली के रूप में स्पष्टतः देखा जा सकता है :

दुविधा कब जैहै जा मन की।
चिंता कब जैहै जा मन की।
इन चरनन परकम्पा देहौं, छाया गोवरधन की।
जब मेरो कान्ह झंगुलिया मांगे, रतन जतन की टोपी।
....

—(बुन्देली : १२)

इसी गीत को देखकर लगता है कि लोक गायक सूरदास के उपर्युक्त पद की गति, ताल और लय के साथ-साथ भाव एवं शैली के आधार पर अपनी इसी प्रकार की भावनाओं को अपनी भाषा में व्यंजित कर गया। और यही

नहीं, उसने उसे लोकप्रिय करने के हेतु उसमें सूरदास की छाप भी दे दी। इसी तरह सूरदास के कुछ अन्य पदों का प्रभाव ब्रज और बुन्देली लोकगीतों पर देखा जा सकता है, जिन्हें लोक गायक ने अपने रंग में रंग कर कभी सूरदास, सूरस्याम तो कभी चंदसखी की छाप डाल दी है। सूर के पदों की सूची इस प्रकार है :

१. मोहन जागि हौं बलि गई। —(सूरसागर, परि० पद : २०४)
२. मेरे गिरधर जू सों कौन लरी। —(परि० पद : २१)
३. बूझति जननी कहाँ हुती प्यारी। —(पद : १३२६)
४. मैं हरि की मुरली बन पाई। —(पद : १८०४)
५. श्री गोपाल लाल जी बंसी नेकु तिहारी पाऊँ। —(पद : २७५८)
६. तिहारी लाल मुरली नैकु बजाऊँ। —(पद : २७५९)
७. ऊँचौ गोकुल नगर जहाँ हरि खेलत होरी। —(पद : ३४८८)
८. श्यामा स्याम सौं आज बृन्दावन खेलति फाग नई।
—(परि० पद : १२७)
९. ऊधौ कही सु फेरि न कहिये। —(पद : ४२२५)
१०. रुक्मिनि मोहि ब्रज बिसरत नाहीं। —(पद : ४८९०)

सूर के इन पदों का प्रभाव क्रमशः (१) बुन्देली गीत : २४, (२) ब्रज गीत : ७७, (३) ब्रज गीत : ६०, (४) ब्रज गीत : ५७, (५) बुन्देली गीत: ११०, (६) ब्रज गीत : १२२, (७) बुन्देली गीत : ११८, (८) ब्रज गीत : १८६, (९) ब्रज गीत : २१०, (१०) बुन्देली गीत : १६४ वें में देखे जा सकते हैं।

सूरदास की ही तरह परमानन्ददास, नन्ददास, गोविन्दस्वामी और आसकरन प्रभु के निम्नलिखित कुछ पदों को भी लिया जा सकता हैं, जो थोड़े से हेर-फेर के साथ लोक में प्रचलित होकर लोकगीतों की ही कोटि में आ गये हैं। इन पदों की प्रथम पक्तियाँ इस प्रकार हैं :

१. दधि लै आऊँगी उठि भोर।—(परमानन्द सागर, पद : १९६)
२. नेक पठै गिरधर जू कों मैया। —(परमानन्द सागर पद : ६९९)
३. बृन्दावन क्यों न भये हम मोर। —(परमानन्द सागर, पद : ७६६)
४. बन से आवत गावत गोरी।
मुरली अधर धरे नंदनंदन, मानों लगी ठगोरी।
याही ते कुल कान हरी है, ओढ़े पीत पिछौरी।
ब्रज वधू अटन चढ़ देखत, रूप निरखलई बोरी।
नंददास जिन हरि मुख निरख्यो, तिनको भाग्य बड़ोरी।
—(कीर्तन संग्रह; भाग ३, उत्तरार्द्ध पृ० : १३)

५. **महरि के मन्दिर वेगि चलो री।**
चलो-चली जाव वह धाम, स्याम हो जिन कहूँ बीच परी री।
मालिन बाँधत बंदन मालें, बीच आँव की मोरी।
देत महावर पाइन नाइम डोलत दोरी - दोरी।
....
जन गोविन्द बलवीर दरस कों, सबहिन लागी डोरी।
—(कीर्तन संग्रह ; भाग १, पृ० ७२)

६. **लाल तेरि फिर-फिर जात सगाई।**
चोरी की बात छाँड दे मोहन, लर-लर जात लुगाई।
दूध-दही घर में बहुतेरो, माखन और मलाई।
आसकरन प्रभु मोहन नागर, फिर गये बामन नाई।
—(कीर्तन संग्रह; भाग १, खंड २; पृ० ११५)

इन उपर्युक्त छहों पदों का लोक प्रचलित रूप क्रमशः (१) बुन्देली-गीत : ७१, (२) ब्रज गीत : ५५ और बुन्देली गीत : ५२, (३) ब्रज गीत : २०४ और बुन्देली गीत : १३६, (४) ब्रज गीत : ५३, (५) बुन्देली गीत : ८, तथा (६) ब्रज गीत : ३१ में देखा जा सकता है।

इन भक्त कवियों के पदों का जो प्रभाव या प्रचार लोकगीतों पर या लोक में पाया जाता है, उसका एक कारण यह भी है कि इनके अनेक पदों को थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ इनके परवर्ती भक्त कवियों ने लोक में गा-गाकर प्रचलित किया। ऐसे ही कवियों में राधावल्लभ सम्प्रदाय के भक्त एवं लोक कवि चंदसखी का नाम अग्रगण्य है जो कुछ अन्य क्षेत्रों के अतिरिक्त ब्रज और बुन्देली क्षेत्रों में तुलसी, मीरा, सूर और कबीर की भांति अपने भजनों एवं लोकगीतों के कारण अत्यधिक लोकप्रिय हैं। इनके द्वारा गाये हुए भजन और लोकगीत लोक को इतने रुचिकर प्रतीत हुए कि उनका ग्रामीण समाज में व्यापक प्रचार ही नहीं हुआ वरन् उन्हीं के अनुकरण पर अनेक प्रक्षिप्त रचनायें भी रच ली गई। अतः चंदसखी के उन गीतों और भजनों का जो कि भक्त-कवियों के पदों से प्रभावित होते हुए लोक की भावाभिव्यक्ति के माध्यम बन गये हैं उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। यथा—

१. **बन से आवत गावत गोरी।**
—(नन्ददास के इस पद से प्रभावित 'चन्दसखी' का ब्रज गीत : ५३)

२. **नेंक पठै दै मोहनजी को मैया।**
—(परमानन्ददास के पद : ६६९ से प्रभावित, ब्रज गीत : ५५)

३. **स्याम की बंशी बन पाई।**
—(सूरदास के पद, १८०४ से प्रभावित, ब्रज गीत : ५७)

४—माधो जी मैं न भई बन मोर।

—(परमानन्ददास के पद : ७६६ से प्रभावित, ब्रज गीत : २०४)

५. आ जाऊंगी बड़े भोर दही ले के।

—(परमानन्ददास के पद : १९७ से प्रभावित, बुन्देली गीत : ७१)

६. भई न बिरज की मोर सखी री।

—(परमानन्ददास के पद : ७६६ से प्रभावित, बुन्देली गीत : १३९)

जैसा कि पहले उल्लेख किया जा चुका है कि मध्यकालीन कृष्ण भक्त कवियों को सांस्कृतिक समन्वय का कवि न कहकर लोक संस्कृति का कवि कहना अधिक उचित होगा, क्योंकि इनके काव्य की विषय-वस्तु अधिकतर लोक की अपनी वस्तु है। लोक में प्रचलित लोक रीतियों, परम्पराओं, मान्यताओं एवं विश्वासों से प्रभावित होने के कारण ही इन्होंने कृष्ण के जात-कर्म पर सोहिले, बधाई, गारी, चहरका आदि के गाये जाने के साथ-साथ उनके अन्य संस्कारों जैसे—नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, कनछेदन, उपनयन, वेदारम्भ और विवाह पर अनेक लोक रीतियों एवं विश्वासों का उल्लेख किया है। उदाहरण स्वरूप कृष्ण जन्मोत्सव एवं छठी सम्बन्धी 'सूरसागर' के अनेक पदों की कुछ पंक्तियों को देखा जा सकता है, जिनमें ब्रज की लोक परम्पराओं एवं विश्वासों से प्रभावित होने के कारण ही सूरदास ने लिखा है कि कृष्ण जन्म के हर्षातिरेक पर कोई गोपी मङ्गल सूचक दधि-दूब सिर पर रखती है तो कोई परस्पर हरद-दही छिड़कता है तथा कोई दधि-गोरोचन-दूब दूसरे के शीश पर रख कर शिशु की मङ्गल कामना करता है।—(दशम् स्कन्ध, पद : २०) इसी अवसर पर होम, द्विज पूजा और घर लीपने का भी कार्य सम्पन्न होता है। (पद : ४) यदि एक ओर बारिन या मालिन बन्दनवार और तोरण बांधती है—(पद : १९) तो दूसरी ओर नन्द बाबा स्नान करके कुश हाथ में ले नांदीमुख श्रद्धा और पितरों का पूजन करते हैं।—(पद : २४) साथ ही सूति गृह के द्वार पर स्त्रियाँ सींक से सतिया (स्वास्तिक चिह्न) बनाती हैं।—(पद : २६)

कृष्ण जन्म के छठे दिन ब्रज नारियाँ और यशोदा उनकी छठी मनाती है। वे एकत्र हो सोहर या सोहिलो गाती हैं और काजर-रोरी से छठी के चार करती हैं।—(पद : ४०) नाइन यशोदा के पैरों में महावर लगाती है और पुरस्कार में लाख टका और झूमका पाती है। इसी अवसर पर गोपियों द्वारा चहरका गीत[1] भी गाये जाने का उल्लेख हुआ है।—(पद : ३०)

---

१. इस गीत में बच्चे की माता को गालियाँ दी जाती हैं। यह गीत प्रायः रात में सबसे बाद में गाया जाता है।

इन उपर्युक्त लोक प्रचलित परम्पराओं एवं विश्वासों के साथ-साथ इन भक्त कवियों ने लोकोत्सवों के अन्तर्गत हिंडोला और बसन्त लीला आदि का भी वर्णन किया है। साथ ही लोकगीतों की विबिध गति, ताल और लय के आधार पर या यों कहें कि विविध लोक शैली के आधार पर अनेक पदों की रचनायें भी की हैं, जिनके द्वारा निःसन्देह ब्रज के प्रचलित लोकगीतों का कलात्मक रूप प्रस्तुत किया गया है। इस प्रक्रिया में उन्होंने लोकगीतों के अस्तित्व की रक्षा भी की है। ब्रज के प्रमुख लोकगीतों यथा रसिया, होली, सोहिलो, मल्हार आदि को सूरदास ने अपने पदों में केवल स्थान ही नहीं दिया है, वरन् उसका स्वरूप भी ठीक वही रखा है जो आज लोक में प्रचलित है तथा पहले भी रहा होगा। उन्होंने लोकगीतों की भावुकता, इतिवृत्तात्मकता, समूहगत सामाजिक चेतना आदि विशेषताओं को भी जन्म बधाई के सोहिलों, लम्बे वर्णनों और होली जैसे उत्सव पदों में ज्यों का त्यों रखा है। इस प्रकार सूरदास के ये पद कला गीत भी हैं और लोकगीत भी। लोक गीतों की समस्त विशेषतायें सूरदास के कुछ पदों में अवश्य प्राप्त होती हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि सूरदास के ये पद लोकगीतों के अनगढ़ रूप से मुक्त हैं। उनका रूप परिष्कृत है। दशम स्कन्ध पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध में ऐसे पदों की संख्या अधिक हैं, जिसमें लोकगीतों की उमङ्ग प्रत्यक्ष हैं। यद्यपि भाषा का साहित्यिक रूप और शास्त्रीय रागों का झीना आवरण उसमें गरिमा अवश्य भर दिये हैं।

कृष्ण-जन्म पर बधाई, सोहिलो, ज्योनार, राधा कृष्ण विवाह, हिंडोला, होली, बसन्त आदि प्रसङ्गों में सूरदास तथा अन्य कृष्ण-भक्त कवियों के अनेक परिष्कृत लोकगीत पद मिलते हैं, जिनमें से कुछ उदाहरण स्वरूप भी दिये जा सकते हैं। ब्रज के जन्ति गीतों से प्रभावित सूर के ये निम्नलिखित तीन पद बिना किसी झिझक के परिष्कृत लोकगीतों की कोटि में रखे जा सकते हैं :

१. **धनि-धनि नन्द जसोमति, धनि जग पावन रे।**
धनि हरि लियो अवतार, सुधनि दिन आवनरे।
....
—(पद : ६४६)

२. **गौरि गनेस्वर बीनऊँ (हो) देवी सारदा तोहि।**
गावौं हरि कौ सोहिलौ (हो), मन आखर दै मोहि।
....
—(पद : ६५८)

३. **पालनौं अति सुन्दर गढ़ि ल्याउ रे बढ़ैया।**
सीतल चन्दन कटाउ, धरि खराद रंग लाउ,
विविध चौकरी बनाउ, धाउ रे बनैया।
....
—(पद : ६५६)

इसी प्रकार लोकगीतों का प्रिय छन्द 'लावनी' अपनी द्रुत लय के कारण

सूर को प्रिय हुई तो उन्होंने उसका कृष्ण के अन्नप्राशन प्रसङ्ग में प्रयोग कर डाला—

कान्ह कुँवर की करहु पासनी, कछु दिन घटि षट्‌मास गए।
नन्द महर यह सुनि पुलकित जिय, हरि अनप्रासन जोग भए।
....
—(पद : ७०६)

इसी प्रकार यह पद—

लालन हौं या छवि ऊपर वारी।
बाल गोपाल लगौ इन नैननि रोग बलाई तुम्हारी।—(पद : ७०६)

शुद्ध ग्राम-गीत का उदाहरण है। जिसमें वही मातृ भाव व्यक्त है, जो प्रायः सामान्य लोरियों में प्राप्त होता हैं। पुनः सूरदास ने गोचारण प्रसंग में अनेक ऐसे पद लिखे हैं, जिन्हें लोकगीत की धुन में ग्रामीण सहज ही गा सकता है। ऐसा ही एक पद राग 'बिलावल' का है—

आज चरावन गाइ चलौ जू कान्ह कुमुद बन जैये।
सीतल कुंज कदम की छहियाँ छाक छहूँ रस खैये।
....
—(पद : १०६३)

कृष्ण विवाह प्रसंग के अन्तर्गत भी कुछ लोकगीतों सें प्रभावित पद मिलते हैं, जिसमें से एक वधू द्वारा विविध रूप धारण कर वर को देखने की उत्सुकता से सम्बन्धित एक अति प्रचलित लोकगीत से प्रभावित है। पद इस प्रकार है—

(दूलह देखौंगी जाइ)
उतरे संकेत बटहिं, किहि मिस लखि पाउँ।
फूल गूंथि माला लै, मालिनी ह्वै जाउँ।
....
—(पद : १६६३)

विवाह के अवसर पर 'ज्योनार' भी ग्रामीण नारियों का एक अति प्रिय लोकगीत है। सूरदास ने इसी गीत शैली पर इस ज्योनार पद की रचना की है—

भोजन भयो भावते मोहन, तातोइ जेंइ जाहु गो गोहन।
खोर खाँड़ खीचरी संवरी, मधुर महेरी गोपिन प्यारी।
....
—(पद : १८३१)

इसी तरह दान लीला के अन्तर्गत सूरदास ने जिन पदों की रचनायें की हैं उनमें से कुछ में 'रसिया' की प्रवृत्ति का आभास निश्चित रूप से लक्षित होता है; जैसे अग्रांकित पद में—

ऐसो दान माँगियै नहिं जौ, हमपै दियौ न जाइ।
बन में पाइ अकेली जुवतिन, मारग रोकत धाइ।
—(पद : २०८०)

सावन का 'झूला' या 'हिंडोला गीत' और फागुन की 'होली' ब्रज के सबसे प्रिय और प्रसिद्ध लोकगीत हैं। अतः सूरदास ने इनसे भी प्रभावित होकर इन्हीं ऋतूत्सवों पर सबसे अधिक पदों की रचनाएँ भी की हैं। यद्यपि हिंडोले के अधिकांश पद साहित्यिक छटा से युक्त होने के कारण लोकगीतों की सीमा पार करके कला गीत हो चले हैं, फिर भी कुछ पद ऐसे हैं जो परिष्कृत लोकगीतों की कोटि में अवश्य गिने जायेंगे। जैसे 'हिंडोले' का यही पद है—

हिंडोंर हरि संग झूलियै हो अरु पिय कौ देहि झुलाइ।
गई बीति ग्रीषम गरद हित रितु सरस बरषा आइ।
....
—(पद : ३४४८)

होली के पद तो सूरसागर में ७४-७५ के लगभग हैं जो शास्त्रीय रागों में बंधे होने पर भी शास्त्रीय स्वर-ताल का उतना आग्रह नहीं करते, जितना लोक होरी का। फलतः लगभग सभी पदों में लोक होरी की उमंग, शब्दावली और नादो-उल्लास का संयोग मिलता है। उदाहरण के लिये इन दो होली पदों को देखा जा सकता है—

निकसि कुंवर खेलन चले रंग होरी।
मोहन नंद किसोर लाल रंग होरी।
....
—(पद : ३४८४)

या

कछु दिन ब्रज औरौ रहौ, हरि होरी है।
अब जिनि मथुरा जाहु, अहो हरि होरी है।
....
—(पद : ३५३२)

इसी तरह संक्षेप में अन्य कृष्ण भक्त कवियों के कुछ पदों को भी उदाहरण स्वरूप उपस्थित किया जा सकता है, जो किसी न किसी लोकगीत विशेष की भाव धारा के साथ-साथ उसकी शैली से भी स्पष्टतः प्रभावित दीख पड़ते हैं। जैसे—

तुम आवोरी तुम आवो,
मोहन जू कौं गारी सुनावो।
....
—(परमानन्द सागर, पद : ३३५)

या :

चलहु तौ ब्रज मैं जैयं, जहाँ राधा-कृष्न रिझैये।
वृषभान राज घर आये, तहाँ अति रस न्यौति जिवाये।
....
—(परमानन्द सागर, पद : ९२६)

प्रथम पद 'काफी' राग में बँधी होली सम्बन्धी 'गाली' द्रुतलय में गाने की दृष्टि से ही लिखी गई है। इसी प्रकार परमानन्ददास का उपयुक्त दूसरा पद भी 'गारी' या 'ज्योनार गीत' की कोटि में आता है। इसी प्रकार हरिदास स्वामी और गिरधर प्रभु के क्रमशः निम्नलिखित दो पद स्पष्ट रूप से 'सावन गीतों' की भाव धारा से अनुप्राणित होते हुए उसी गीत-शैली में रचे गये हैं—

१—हिंडोरे झुलत हे दुलहा दुलहिन, बिहारी वरी ललना।
गौर स्याम तन अति छबि भात भात, हा, बिहारी वरी पलना।
नीलाम्बर पीताम्बर चंचल चलत ध्वजा फहरात री कलना।
हरिदास के स्वामी स्यामा कुंज विहारी, हा, विहारी वरी ललना।
—(कीर्तन संग्रह, भाग ३, खंड २, पृ० : ११७)

२—हेरी सखी शरद चाँदनी रात, छटा छटक रही लटक सो।
रंग सावन मास हिंडोरना।

हेरी सखी स्वेत हिडोरो सोभा देत, नटवर झूलत उमंग सो। रंग०
हेरी सखी काछनी परम रसाल, पहरे सब गुण आगरी। रंग०
हेरी सखी देखन सब मिलि जाय, चलो जुथ जुरी आगरी। रंग०
····—गिरधर प्रभु (कीर्तन संग्रह, भाग १, खंड २, पृ० : ३३६)

ठीक इसी प्रकार आनन्दघन एवं नन्ददास के ये पद भी देखे जा सकते हैं जो ब्रज के 'रसिया' गीत की गति, ताल और लय के आधार पर ही रचित हुए जान पड़ते हैं—

१—होरी खेलूंगी श्याम संग जाय हो, सजनी भागीन तें फागुत आयो।
ओ भीजवे मेरी सुरंग चुनरियां, में भीजवु बाकी पाग।
चोवा चंदन और अरगजा, रंग की परत फुहार।
लाज निगोड़ी रहो चाँय जावो, मेरो हीयरो भरो अनुराग।
आनन्दघन खेलो सुघड़ बालम सो, मेरो रहीयो हे भाग सुहाग।
—(कीर्तन संग्रह, भाग २, पृ० : २३७)

२—गोकुल की पनिहारी पनियां भरन चली।
बड़े बड़े नयना तामें खुभ रह्यो कजरा,
पहिरें कसूंमी सारी अंग-अंग छबि भारी,
गोरी-गोरी बहियन में मोतिन के गजरा।
············—नन्ददास (कीर्तन संग्रह, भाग ३, खंड १, पृ० : ७७)

अन्त में उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जहां एक ओर हिन्दी भक्ति साहित्य में कृष्ण-कथा के अन्तर्गत लोक गायक के लिये कुछ नवीन कल्पनायें और नया वातावरण प्रस्तुत हुआ है, वहीं इस हिन्दी कृष्ण-भक्ति साहित्य को प्रेरणा और स्वरूप देने में लोक-साहित्य और विशेषकर लोक गीतों का भी योगदान कुछ कम नहीं रहा है ।

६

लोकगीतों में काव्य-पक्ष एवं सांस्कृतिक तत्त्व

(अ) काव्य-पक्ष :

क्रष्ण-कथा से सम्बद्ध इन लोकगीतों का स्थान लोक साहित्य में है। वस्तुतः साहित्य के विशिष्ट अर्थ में लोक की अभिव्यक्ति को साहित्य की अभिव्यक्ति के स्तर का नहीं कहा जा सकता। "साहित्य जीवन का सर्जन है, कह सकते हैं उसमें जीवन को पुनः जीने की प्रक्रिया होती है। लोक-अभिव्यक्ति के क्षणों में भी समाज के बीच व्यक्ति अपनी सजगता में प्रमुखतः जीवन का अनुभव करता है, जबकि साहित्यकार यथार्थ जीवन के सर्जन में भी सामाजिक जीवन का अनुभव न करके सृष्टि के असम्पृक्त सुख का अनुभावन करता है।"[१] वस्तुतः लोक साहित्य की यह दृष्टि ही साहित्य के भावात्मक स्तर से इसे अलग करती है। लोक अभिव्यक्ति के सृजन पक्ष और अनुभूति-पक्ष पर विचार करते समय इस अन्तर को निरन्तर दृष्टि में रखना आवश्यक है। लोक-अभिव्यक्ति में स्रष्टा और पाठक की दो भिन्न कोटियाँ सम्भव नहीं हैं, यहां स्रष्टा और उपभोक्ता की एक ही स्थिति है, दोनों का व्यक्तित्व एक में समाहित है। अपनी इसी विशिष्ट स्थिति के कारण लोक-अभिव्यक्ति साहित्य के सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति से भिन्न ठहरती है। वस्तुतः

---

१. साहित्य और लोक-साहित्य (राजर्षि अभिनन्दन ग्रन्थ), पृ० २८१।
—डा० रघुवंश

यह जीवन की प्रवाहित धारा की उल्लासमयी तरंग है, जो जीवन के सहज यथार्थ से निरंतर अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध है। इसमें अभिव्यक्त सुख-दुःख, राग-द्वेष, प्रेम-करुणा तथा उत्साह-निराशा आदि एक ओर अपने आदिम संस्कारों का क्रमिक अनुभव है, दूसरी ओर सामाजिक स्तर पर सहभोग।

इस प्रकार लोक गायक, लोक काव्य के प्रति न तटस्थ है और न निजत्व की भावना से असम्पृक्त ही।········फिर भी लोक अभिव्यक्ति का संवेदन मात्र जीवन के सामान्य स्थितियों के सम्वेदन से भिन्न है। इसके दो कारण हैं। पहले तो यह अभिव्यक्ति सक्रिय रूप से सृजनात्मक है, दूसरे इसका सहभोग सामाजिक स्तर पर ग्रहण किया जाता है। इस प्रकार लोक-गायक लोक-मानस के स्तर पर लोक-प्रवाह में अपनी अभिव्यक्ति का स्वयं स्रष्टा भी है और भोक्ता भी। सहभोगी तो वह अपनी सम्पूर्ण सामाजिक स्तर पर है ही, क्योंकि उसके सर्जन और भोग में सारे समाज का योग है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि प्रस्तुत कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोक-काव्य की सौन्दर्य सम्बन्धी दृष्टि साहित्य की सौन्दर्य दृष्टि से भिन्न होगी। यह समस्त गीत मात्र अभिव्यक्ति नहीं है, वरन् अभिव्यक्ति के साथ-साथ जीवन के अभिन्न अंग भी हैं। इनका सृजन और अनुभावन लोक जीवन में एक साथ चलता रहता है। इसी कारण इनके पात्रों की सृष्टि, भावात्मक स्तर, रसात्मक अनुभूति, शिल्प-विधान, अलंकरण आदि साहित्य की कोटि से अलग हैं।

१. चरित्रों की उद्भावना

जिस कृष्ण कथा का कथा सूत्र इन गीतों में ग्रहण किया गया है. वे लोक जीवन से अभिन्न हैं। जिस प्रकार की तटस्थता साहित्यकार साहित्य में बनाये रख सका है, वह यहाँ सम्भव नहीं। लोक-जीवन के स्तर पर इस कथा के सभी पात्रों का व्यक्तित्व लोक-जीवन में सर्जित और विसर्जित होता रहता है। लोक-जीवन के संदर्भ में कृष्ण-लोक प्रेमी, लोक नायक, लोक शिशु आदि रूपों में ही प्रस्तुत होते हैं। ऐसे क्षण इन गीतों में कभी ही व्यंजित हुए हैं जब लोक गायक की भावना में कृष्ण का व्यक्तित्व लोक जीवन में विसर्जित न होकर अपने परम्परागत् विशिष्ट रूप में प्रस्तुत हुआ हो, और यह स्थिति भी इन लोक-गीतों पर व्यापक कृष्ण-साहित्य तथा कृष्ण-भक्ति के सघन प्रभाव का ही द्योतक है। इसी प्रकार अन्य पात्रों अर्थात् राधा, यशोदा नन्द, गोप, गोपी के चरित्रों के बारे में भी समझा जा सकता है। ये चरित्र एक ओर कृष्ण-कथा के पात्र हैं और दूसरी लोक-जीवन के विभिन्न चारित्रिक स्तर भी।

इन गीतों में कृष्ण-कथा के जिन विभिन्न सूत्रों को संकलित किया गया है उनमें कृष्ण-कथा के प्रमुख पात्रों की रूपरेखायें भी एक क्रमिक स्थिति में व्यक्त होती हैं। इस क्रम में प्रस्तुत करने के कारण ही कथानक के विकास-क्रम के साथ चरित्रों का विकास भी परिलक्षित होता है। परन्तु यह भी स्पष्ट है कि कृष्ण-कथा की यह सारी भावात्मक अभिव्यक्ति लोक जीवन के स्पन्दनों में ही संवेदित हुई है। उसकी अपनी स्वतन्त्र स्थिति कम ही स्थलों पर देखी जा सकती है। इसी दृष्टि से इन चरित्रों के विषय में विचार करते समय भी यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि इनका संगठन और विकास लोक जीवन के चरित्रों की अभिव्यक्ति में देश, काल और परम्परा का अतिक्रमण होकर लोक जीवन का स्पन्दन ही अधिक मुखरित हुआ है।

कृष्ण-कथा में कृष्ण का व्यक्तित्व केन्द्र में है, और कथा के अन्य सभी पात्र पूर्णतया उन्हीं पर निर्भर हैं। यह स्थिति ब्रज और बुन्देली लोकगीतों की कृष्ण-कथा में भी देखी जा सकती है। परन्तु साहित्य में कृष्ण का व्यक्तित्व ब्रह्म, परात्पर, लीलामय तथा असुर संघारक आदि रूपों में प्रतिस्थापित है और यही उनके व्यक्तित्व का केन्द्र है। लोकगीतों की कृष्ण-कथा में कृष्ण के व्यक्तित्व का यह केन्द्रीय भाव लोक मानस पर आधारित है। वस्तुतः वे लोक नायक हैं। चाहे उनका शिशु रूप हो; चाहे लोकत्राता रूप हो या प्रेमी रूप। वे अपने इन सभी रूपों में सभी अन्य लोक के पात्रों के आकर्षण केन्द्र बन जाते हैं। लोक की भावना के केन्द्र को इस प्रकार कृष्ण के व्यक्तित्व के साथ समाहित कर दिया गया है। और इस रूप में सभी अन्य लोक उनके जन्म का उत्सव मनाता है, उनकी बाल-लीलाओं का आह्लाद प्राप्त करता है। उनकी किशोर लीलाओं से रीझता-खीझता है; और आगे यही कृष्ण यौवन के प्रतीक होकर लोक की नारी-भावना का नायकत्व करते हैं। वे गोपियों के रूप में लोक-नारियों से पनघट लीला, दधिदान लीला, हिंडोला और रास-लीलायें आदि रचाते हैं।

कृष्ण-कथा के अन्य पात्र लोक के माता-पिता, सास-ससुर, सखा-परिजन, बन्धु-बान्धव, प्रेमी-प्रेमिकाओं का रूप ग्रहण कर लेते है। यहाँ इस बात का भी स्मरण रखना चाहिये कि लोकगीत मुक्तक हैं और उनमें प्रगीति भावना मुख्यतः व्यञ्जित है। इस स्थिति में भी कथात्मक चारित्रिक विकास के स्थान पर भावात्मक अभिव्यक्ति तथा तादात्म्य का होना अधिक सहज है। ऐसी स्थिति में इन चरित्रों का अध्ययन लोक मानस की विभिन्न भावनाओं को व्यक्त करने वाले प्रतीक रूप में लोक चरित्रों की उद्भावना हो जाती है।

कृष्ण-कथा में मुख्य चरित्र कृष्ण के साथ-साथ राधा और यशोदा का आता है। यद्यपि कृष्ण के साथ ये दोनों चरित्र कृष्ण-भक्ति साहित्य की परम्परा से गृहीत और एक सीमा तक प्रभावित भी कहे जा सकते हैं। परन्तु जैसा ऊपर कहा जा चुका है कि इनके व्यक्तित्व का भावात्मक संघटन लोक मानस के ही स्तर पर हुआ है। यशोदा लोक जीवन को मातृत्व की प्रतीक हैं तो राधा उसके यौवन और उल्लास का। बिना लोक मानस की भावभूमि के लोकगीतों की कृष्ण-कथा के पात्रों के चरित्रों की व्याख्या करना सम्भव नहीं है। कृष्ण-कथा की बाह्य परम्परा से इनका बाह्य रूप भले ही संगठित हुआ हो परन्तु इनका भावात्मक संगठन लोक जीवन से ही प्रेरित है।

कृष्ण-चरित्र

सूरदास ने बाल कृष्ण की उद्भावना में स्वयं ही लोक से प्रेरणा ग्रहण की थी, यह स्पष्ट है। परन्तु इन गीतों के कृष्ण मुक्त ग्रामीण वातावरण में पले बालक की भाँति अत्यन्त चपल, हठी और विनोदी हैं।—(ब्रज : ३६; बुन्देली: २६) मिट्टी खाने के प्रसंग में सर्वप्रथम कृष्ण में चतुराई के दर्शन होते हैं और उनका यह कौतुक तथा चातुर्य बाल-चरित के विकास के साथ माखन चोरी की धृष्टता में परिवसित होता जाता है। वस्तुतः बाल-कृष्ण के अनेकानेक प्रसंगों को सूर तथा अन्य परवर्ती कृष्ण-भक्त कवियों ने लोक भावना तथा लोक जीवन के स्तर से ही ग्रहण किया है और इसी कारण इनके काव्य के इन स्थलों पर ही सहज, मुक्त और कोमल मानवीय भावनाओं की अभिव्यक्ति हो सकी है। परन्तु लोकगीतों के इस वातावरण में लोक-बालक कृष्ण की अचकरी अधिक स्पष्ट और सहज रूप में व्यक्त हुई है।

भक्ति साहित्य में कृष्ण के परात्पर ब्रह्म तथा लीलामय रूप को पग-पग पर स्थापित करने की आवश्यकता का अनुभव किया गया है। इसी कारण कृष्ण की अलौकिक लीलाओं का समावेश विस्तार से हुआ है। लोक-भावना बाल-कृष्ण के कौतूहल वर्धक तथा क्रीड़ाशील रूप के प्रति तो आकर्षित है, पर उसने चरित के उस अलौकिक पक्ष को अपेक्षाकृत बहुत कम महत्व प्रदान किया है। मिट्टी खाते हुए कृष्ण का अपने मुख में तीनों लोकों की स्थिति दिखाना, केवल लोक कल्पना की प्रेरणा न बनकर परम्परा से गृहीत मात्र है। बुन्देली लोकगीतों में पूतना प्रसंग का संकेत अवश्य है परन्तु वह लौकिक जीवन में व्याप्त माँ के हृदय की शंकाकुलता से भी गठित है। इसी प्रकार कालिय दमन के प्रसंग में भी वैचित्र्य का भाव अधिक है। यह क्रीड़ा-कौतूहल लोक जीवन से प्रेरित हैं। यहाँ कृष्ण के अलौकिक व्यक्तित्व का आभास भी नहीं

मिलता। गेंद के कालीदह में चले जाने पर कृष्ण क्रीड़ा कौतुक वश काली दह में कूद पड़ते हैं। कालीनाग का नाथा जाना भी जैसे उनकी कौतुक प्रियता का ही अंग हो। लोकगीतों में इस भावना को यशोदा की मार्मिक व्यथा, परिजनों की आतुरता तथा सखा जनों की उद्विग्नता को व्यक्ति करने के लिये हुआ है।

प्रारम्भिक गोचारण का प्रसंग 'पास्टोरल' (Pastoral) बातावरण के बिल्कुल अनुकूल है। ग्रामीण पशु-पालक के बालक के रूप में कृष्ण सुबह ही कलेवा करके गाय चराने के लिये निकल पड़ते हैं और अपने गोप सखाओं के साथ वृन्दावन में (जो वस्तुतः लोक कल्पना में गोचारण भूमि ही है) गाय चराते हुए बेर, जामुन, नीबू जैसे फल खाते हुए क्रीड़ा करते हैं।–(बुन्देली: २५) सूर ने इसी वातावरण से इस प्रसंग को ग्रहण कर गोचारण लीला के लीला सौन्दर्य की सृष्टि की है। आगे दूसरे गोचारण प्रसंग में वंशीवादक कृष्ण युवतियों के हृदय को आकर्षित करने वाले रसिक युवक के रूप में अंकित हैं।

लोक नायक कृष्ण के प्रेमी रूप के दो भिन्न पक्ष इन लोकगीतों में व्यंजित हुए हैं। एक-व्यक्तित्व में वह राधा के प्रेमी और सखा के रूप में प्रस्तुत होते हैं और दूसरे रूप में वह समस्त अन्य गोपियों; अर्थात् लोक नारियों की उन्मुक्त प्रेम भावना के आलम्बन हैं। परन्तु इन दोनों ही पक्षों में कृष्ण का चरित्र लोक के महज मुक्त और उच्छृङ्खल भावनात्मक स्तर पर स्थापित है। यहाँ भक्त कवियों की भावना में संगठित कृष्ण के चरित्र की जो समता परिलक्षित होती है उसका यह कारण मानना संगत नहीं है कि लोक की कृष्ण परक भावना पर कृष्ण भक्त कवियों की अभिव्यक्ति का प्रभाव हैं, वरन् सत्य तो इसके बहुत विपरीत है। कृष्ण काव्य के प्रमुख कवियों ने वस्तुतः कृष्ण के चरित्र के इस पक्ष को नियोजित करने में लोक की मुक्त भावना से मौलिक प्रेरणा प्राप्त की है। इसका स्पष्ट कारण यह है कि इस प्रेम प्रसंग और प्रेम क्रीड़ा में जो मुक्ति और स्वच्छन्दता इन कवियों में मिलती है उसका मूल स्रोत लोक भावना में ही माना जा सकता है। जहाँ तक इन लोकगीतों में व्यंजित प्रेम की इन स्थितियों का सम्बन्ध है, इनमें लोक जीवन की स्वच्छन्दता और मुक्ति के साथ ही उसका उन्माद, उसकी उच्छृङ्खलता, उसकी स्वस्थ मांसलता का आग्रह सर्वत्र परिलक्षित होता हैं। इन सभी प्रसंगों में ऐसा कहीं भी दृष्टि-गत नहीं होता कि भावात्मक आन्दोलन, उद्वेग या आड़ोलन किसी आध्यात्मिक भावशीलता का संकेत करती हो। सर्वत्र कृष्ण एक रसिक या यों कहें कि रसिया युवक प्रेमी के रूप में प्रस्तुत होते हैं, जो एक ओर अपने आकर्षक व्यक्तित्व से व्यक्तिगत रूप से राधा को आकर्षित करते रहते हैं तो दूसरी ओर

सामूहिक रूप में गोपियों को। उनका यह आकर्षण मादक तथा अधिकृत करने वाला है। लोक भावनाओं के स्तर पर प्रतिष्ठित होने के कारण इसमें काव्यात्मक आभिजात्य, सुकुमारता तथा मार्दव की अपेक्षा प्राकृतिक अनगढ़पन, अक्खड़पन तथा धृष्टता ही विशेष है। यह अलग बात है कि अनेक भावनाओं के आवेग में चरित्र का यह गद्दरपन (अधकचरापन) तथा परुषता विशेष आस्वाद्य है।

राधा के प्रति कृष्ण के प्रेम को व्यक्तिगत स्तर पर तथा सख्यभाव पर प्रतिष्ठित माना जा सकता है। इस सम्बन्ध में लोक की इस प्रकार की मनोवृत्ति का गहरा प्रतिनिधित्व है। ब्रज लोकगीतों में इस प्रेम का प्रारम्भ राधा की ओर से ही जान पड़ता है और राधा ही कृष्ण की ओर आकर्षित होकर उन्हें पुनः बरसाने आने के लिये आमंत्रण देती हैं, जब कि बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण इस छेड़-छाड़ को स्वयं प्रारम्भ करते हैं। परन्तु मिलने की आतुरता दोनों ही क्षेत्रों में राधा में ही अधिक परिलक्षित होती है और इसके लिये वे नानाविधि युक्तियाँ भी निकालती हैं। यह प्रेम दोनों के एक-दूसरे के यहाँ आने-जाने से ही सम्वर्द्धित होता है और राधा के अनेक उपालम्भों से परिपुष्ट। कृष्ण राधा के प्रति अपने प्रेम को चतुर लोक-नायक की भाँति अपने स्वजनों से छिपाने में सफल होते हैं। ऐसी परिस्थितियों में वे सदा अपने भोलेपन का उपयोग करते हैं जब कि अपने प्रेम के विनिमय में वे अधिक स्पष्ट, उन्मुक्त और कभी-कभी धृष्ट भी हैं।

राधा के प्रति कृष्ण की भावना में व्यक्तिगत सम्बन्ध की स्थिति निरन्तर बनी रहती है। परन्तु इस परिस्थिति में राधा का व्यक्तित्व अधिक योगदान देता है। ब्रज की राधा अपने व्यक्तित्व की प्रखरता सें और बुन्देली राधा अपेक्षाकृत अपनी समर्पणशील स्थिति से कृष्ण के अधिक निकट है। यही कारण है कि कृष्ण राधा का सामीप्य एवं एकान्त की आकांक्षा भी करते हैं, जब कि सामान्य गोपियों के प्रति उनके मन में केवल उन्मादपूर्ण प्रेम-क्रीड़ा का भाव निरन्तर बना रहता है। छद्मवेश सम्बन्धी लीलाओं में राधा से मिलने के लिये कृष्ण अनेक रूप धारण करते हैं[1], और उनके इस लौकिक स्तर के उन्मुक्त प्रेम-व्यापार में क्रमशः राधा के प्रति बढ़ता हुआ अनुराग भी परिलक्षित होता है, जिसको प्रेम कहा जा सकता है। परन्तु कृष्ण के इस प्रेम में भी लौकिक भावना का उद्वेग और आवेश विद्यमान हैं और यह भावना दधिदान लीला के प्रसंग में भी स्पष्ट हुई है। कृष्ण जिस स्पष्टता और धृष्टता से राधा से

---

१. देखें—**ब्रज गीत** : १००, १०३, १०४; बुन्देली गीत : ८३, ८४।

दधिदान का आग्रह करते हैं, उसका राधा उसी स्तर पर संवेदन ग्रहण करती हैं।

कृष्ण अपने व्यक्तित्व से राधा को अन्ततः विमुग्ध कर देते हैं और लौकिक स्तर पर उनके मान की स्वीकृति भी देते हैं।[1] वंशीवादन के प्रसंग में राधा कृष्ण से विमुग्ध अंकित की गई हैं। इस स्थिति में ब्रज की राधा भी कृष्ण की अनुवर्तिनी हो जाती हैं और वे कृष्ण के प्रति मादक आकर्षण का अनुभव करती हैं। यह अवश्य है कि इस सम्पूर्ण प्रेम की स्थिति का अभिव्यक्तिकरण लोक स्तर पर ही हुआ है। अतः कृष्ण और राधा की प्रतिद्वन्दिता आगे भी व्यंजित हुई है। कभी कृष्ण को राधा का उपालम्भ सहना पड़ता हैं और कभी उनकी प्रतारणायें भी। वस्तुतः विरह की स्थिति में ही इस बात का पता चलता है कि राधा कृष्ण के प्रति किस गहरी भावना का अनुभव करती हैं और कृष्ण की किस प्रकार एकान्त प्रेयसी रही हैं। विरह प्रसंग में कृष्ण का व्यक्तित्व प्रमुख नहीं रह जाता परन्तु इसका संकेत अवश्य मिलता हैं कि वे राधा के प्रति संवेदनशील हैं।

गोपियों के प्रति कृष्ण का प्रेम व्यक्तिगत न होकर सामूहिक लोक-भावना से उद्वेलित है, और इस प्रसंग में उनका रसिक रूप ही प्रधान है जो अपने यौवन के उच्छृङ्खल उन्माद में लोक की समस्त युवतियों का नायकत्व करता है। इन प्रसंगों में गोपियों का अनेक स्थलों पर उसी भावात्मक स्तर पर सक्रिय सहयोग है। वे कृष्ण के यौवन के प्रति आकृष्ट हैं, उनकी प्रेम क्रीड़ाओं से उद्वेलित हैं और उनमें भी वैसा ही यौवन का उन्माद है, परन्तु कृष्ण के गोपियों के प्रति इस प्रेम में वे उनकी धृष्टता से अनेक बार उद्विग्न, विकल और असंतुष्ट भी हैं। वस्तुतः इस भावस्थिति के स्तर को लोक की भूमिका में ही ग्रहण किया जा सकता है। कृष्ण की प्रेम क्रीड़ायें जब तक एक मर्यादा के अन्तर्गत हैं, गोपियाँ उनकी सहयोगी होकर उद्वेलित होती है। परन्तु जब वे उच्छृङ्खल रूप में सीमाओं का अतिक्रमण करते हैं तो गोपियाँ गाँव छोड़ देने और कंस से शिकायत करने की धमकी देती हैं।—(ब्रज : ६५; बुन्देली : ४०) यह ध्यान देने की बात हैं कि सूर आदि कवियों ने इन प्रसंगों को आध्यात्मिक संदर्भों से पुष्ट करने के लिये मार्मिक व्यंग्यार्थ में ग्रहण किया है, जब कि लोकगीतों में गोपियों की यह भावस्थिति भी वैसी ही यथार्थ है जैसा कि उनका उन्मादपूर्ण यौवन से उद्वेलित प्रेम।

---

१. **देखें—ब्रज गीत** : १२८, १२६; बुन्देली गीत : १०२।

दधिदान प्रसंग में कृष्ण स्वच्छंद और उन्मत्त प्रेमी के रूप में प्रस्तुत होते हैं, और दधिदान के मिस यौवन दान मांगने की उच्छृङ्खलता स्पष्टतः व्यंजित हुई है।—(व्रज : ६२) इस प्रसंग में गोपियां और कृष्ण की प्रतिद्विन्दता कृष्ण के चरित्र को सामान्य नायक के रूप में ही व्यंजित करती हैं। वंशीवादन तथा रास के प्रसंग में कृष्ण गोपियों को सहज रूप में आकृष्ट करते हैं। कृष्ण का आकर्षण गोपियों के लिये निरन्तर उद्वेलनकारी रहा है। एक ओर वे उनको उद्दाम भावना से प्रेरित करते है तो दूसरी ओर अपनी उच्छृङ्खलता से आक्रोशपूर्ण भी।—(बुन्देली : १००)

ब्रज की प्रेम-क्रीड़ाओं के उपरांत और मथुरा गमन के पश्चात् कृष्ण के चरित्र में लोक मानस का सहज उद्वेलन नहीं दिखाई देता। वस्तुतः यहां से लोकगीतों में कृष्ण अनुपस्थित हैं। कृष्ण के प्रति गोपियों के कथनों में प्रायः व्यंग्य की प्रधानता है। यद्यपि काव्य के इस व्यंग्य में गोपियों, राधा तथा ब्रजवासियों का कृष्ण के प्रति एकान्त प्रेम ही व्यंजित किया गया है, पर लोकगीतों मे प्रेम की वेदना और व्यथा का तीखापन है। इस स्थिति में उनकी विकलता, व्यथा, प्रतीक्षा ओर ईर्ष्या—सभी यथार्थ हैं।

लोक-भावना की स्वच्छंद भूमिका से हट जाने के बाद कृष्ण अपने सरस और भावमय व्यक्तित्व से व्यंजित न होकर निष्ठुर जान पड़ते हैं। वस्तुतः उनका मथुरा तथा द्वारिका का चरित्र लोक भावना के प्रतिकूल पड़ता है। इसी कारण यहा से जो भी कृष्ण चरित्र के संदर्भ आते हैं—उनमें वे कठोर, निर्मम भावशून्य जान पड़ते है। कृष्ण गोकुल से जाते समय ऐसे ही कठोर हैं और कंस के वध के बाद भी लोक-मानस को वैसे ही निर्मम लगते हैं, क्योंकि उसकी दृष्टि से वे अपने माता-पिता के भी नहीं हो सके।—(बुन्देली : १४८)

द्वारिका पहुच कर कृष्ण वैभवपूर्ण जीवन बिताने लगते हैं, साथ ही यहीं रुक्मिणी का दाम्पत्य प्रेम भी स्वीकार करते हैं। वास्तव में यहां से कृष्ण के जीवन में एक भिन्न भाव-भूमि ही प्रारम्भ होती है। कृष्ण के जीवन में लोक जीवन के ग्राहस्थ जीवन का समावेश होता है। इस जीवन में कृष्ण के भाववेश और उन्मादपूर्ण जीवन के स्थान पर स्थिर तथा व्यवस्थित पारिवारिक तथा ग्रहस्थी की दृष्टि विकसित होती है, जिसके परिणाम स्वरूप कृष्ण पिता माता, बहन के बीच एक दायित्वपूर्ण परिवारिक व्यक्ति के रूप में उपस्थित होते हैं। इसी दायित्व के कारण वह लोक-लज्जा, मर्यादा, और पिता-माता की आज्ञाकारिता के वशीभूत होकर अपनी पत्नी राधा और रुक्मणी से अधिक अपनी माता को महत्व देते हैं। वह यशोदा के जरा से रूठने पर अपनी

पत्नियों को मायके पहुँचा आते हैं। भाई के रूप में कृष्ण के हृदय में अपनी बहिन सुभद्रा के प्रति पवित्र स्नेह की भावना सदैव व्याप्त रहती है जिसके कारण ननद-भावज में कहा-सुनी हो जाने पर वह अपनी बहिन का ही पक्ष लेते हैं। बुन्देली गीतों में राधा के पति के रूप में कृष्ण का सम्बन्ध सुखद, हर्षोल्लास-पूर्ण होने के साथ-साथ कुछ कठोर भी है, या यों कहें कि निष्ठुरतापूर्ण हैं। क्योंकि राधा से जरा भी कहा सुनी पर हो जाने पर वह रूठकर परदेश चले जाते हैं, और फिर बहुत दिनों तक घर का कोई समाचार भी नहीं लेते।

—(बुन्देली : १७६)

इस प्रकार कृष्ण का चरित्र परम्परा से प्रभावित न होकर—लोक-नायक के उन गुणों से मंडित है जिसके कारण उन्हें एक ग्रामीण रसिया कहा गया है।

राधा—राधा का चरित्र लोक भावना के स्तर पर प्रेमिका रूप में प्रतिष्ठित हैं। जिस प्रकार कृष्ण प्रेमी रसिक ग्राम युवक हैं, उसी प्रकार राधा भी यौवन की भावना से आंदोलित प्रेमाकांक्षिणी युवती हैं। वे कृष्ण की ओर सामान्य भावना से ही आकर्षित न होकर व्यक्तिगत स्तर पर उन्मुख होती हैं। वस्तुतः राधा और कृष्ण के प्रेम की व्यक्तिगत रूप से उन्नत होने वाली स्थिति ही लोक में उनके विवाह की आधार भूमि बन जाती है। सूर ने समस्त परम्पराओं के विरुद्ध राधा और कृष्ण के विवाह की जो कल्पना की है उसका मूल स्रोत लोक की यही भावना है। राधा के कृष्ण के प्रति आकर्षण में प्रारम्भ से यह भाव निहित रहा है कि वे कृष्ण को व्यक्तिगत रूप से प्राप्त करना चाहती हैं। उनके सामीप्य, उनके मिलन और उनके साथ क्रीड़ा-सुख की कामना एकान्त रूप से राधा के हृदय में स्फुरित है। गोपियों के कृष्ण के प्रति आकर्षण में और राधा के आकर्षण से यही मौलक अंतर है। एक भाव-भूमि पर राधा अन्य गोपियों के समान कृष्ण के यौवन, उनकी रसिकता, उनके कौतुक और उनकी स्वच्छंदता के प्रति सहज ही उद्वेलित और आकर्षित हैं तो दूसरी ओर वह अन्य गोपियों की अपेक्षा कृष्ण की अधिक सखी, सहचरी और प्रेमिका हैं। यह भावना उनकी आपसी प्रतिद्वन्दिता, लागडाट, उपालम्भ शीलता आदि में भी व्यंजित हुई है।

राधा का व्यक्तित्व ब्रज और बुन्देली गीतों में किंचित् भिन्न है। ब्रज की राधा प्रारम्भ से अधिक स्वतन्त्र, आग्रहशीला, अधिकारिणी एवं प्रभुत्वपूर्ण हैं। वह स्वच्छंदता पूर्वक गेंद खेलते हुए कृष्ण से स्वयं प्रश्न करती हैं—

लाला कौन की माइल उरधरे,
और कौन बहन के बीर,
मनोहर सांमरे ।—(ब्रज : ४१)

और पुनः उन्हें बरसाने आने के लिये आमंत्रित करती हैं ।—(ब्रज : ४२) इसके बाद राधा मुक्त भाव से ही अनेक प्रसंगों के ब्याज कृष्ण से मिलने के अवसर भी निकालती हैं, जैसे कभी वह कृष्ण से गोदोहन कराने के लिये उन्हें बुलाने उनके घर जाती हैं तो कभी हार टूटने या कृष्ण को उनकी मुरली देने के बहाने उनसे उनके घर जाकर मिलती हैं ।—(ब्रज : ५५, ५७;बुन्देली : ३७) एक प्रकार से राधा कृष्ण को इस प्रेम-प्रसंग के लिये प्रोत्साहित करती हैं । इस प्रकार राधा में लोक की युक्ति का चातुर्य भी है । क्योंकि वे इन प्रसंगों का आविष्कार तो करती ही हैं, साथ ही परिजनों के सामने अवसर पड़ने पर चतुराई से बात बनाना भी जानती हैं ।—(ब्रज : ६१) ब्रज की राधा में आत्म-विश्वास की भावना पर्याप्त मात्रा में है । उनका स्वाभिमान कृष्ण की प्रेम-सम्बन्धी उच्छृङ्खलताओं से कभी-कभी आक्रोशपूर्ण और उग्र भी हो जाता हैं । फलस्वरूप कृष्ण के प्रति की गई उनकी शिकायतों में उनके स्वभाव का अक्खड़पन भी देखा जा सकता है । कृष्ण जब अपनी छेड़छाड़ में सीमा का अतिक्रमण करते हैं तब राधा उनकी मुरली और पीताम्बर छीनकर अपनी चूनर उन्हें उढ़ा कर उन्हें ताना देती हैं—

कहाँ गये तेरे संग के सखा सब, कहाँ गये बलभाई ।
कहाँ गई तेरी मात जसोदा, तुमको लेय छुड़ाई ।
—(ब्रज : ८३)

इसकी अपेक्षाकृत बुन्देली राधा सरल और आभिजात्य गुणों से युक्त हैं । उनमें उग्रता और आग्रहशीलता के स्थान पर प्रेम की आकुलता और समर्पण की भावनाएँ प्रारम्भ से ही परिलक्षित होती हैं । कहीं-कहीं अपने आभिजात्य संस्कार के अनुकूल इनमें भी अभिमान और उपालम्भ की भावना व्यक्त हुई है । परन्तु प्रायः वे कृष्ण के यौवन से आकर्षित उनकी अनुवर्तिनी ही अधिक हैं । राधा के चरित्र का यह अन्तर दधिदान-लीला प्रसंग में भी देखा जा सकता है । यद्यपि राधा कृष्ण की धृष्टता से सतर्क होकर दधि बेचने के लिये अपनी सखियों के साथ आत्मविश्वास की भावना लेकर जाती हैं, परन्तु उनके मन का भय तथा आतंक इस अवसर पर भी व्यंजित हुआ है । यहाँ कृष्ण की वाचालता और धृष्टता के सम्मुख राधा आक्रोशपूर्ण होकर भी विवश और विनम्र हो जाती हैं । राधा एक अवसर पर स्वयं कृष्ण से मिलने के

लिये दही बेचने के बहाने वृन्दावन निकलती हैं। यहाँ वे कृष्ण से अपने मोल को दही की अपेक्षा लाख टका अवश्य बतलाती हैं।

एक टका मोरा दहिया बिकाये,
लाख टका मोरो मोल रे।—(बुन्देली : ८७)

परन्तु उनमें समर्पण और विमुग्धता का भाव अधिक है और कृष्ण के यह कहने पर कि—

दूध दही को मोलऊ नई है,
अरी ग्वालिन तेरी सुरतिया को मोल।
—(बुन्देली : ८६)

राधा इतना ही कह पाती हैं—

जो सुन पाहे मोरो सजनवा,
अरे कान्धा तोको लेय पकराय रे।—(बुन्देली : ८६)

इसकी अपेक्षा ब्रज के इसी प्रसंग में राधा कृष्ण के द्वारा अपने सुरत के मोल के प्रश्न पर उग्रता और आवेश में उत्तर देती हैं—

मेरी सुरत को मोल न कीजे,
मेरो बलम लठ मार रे।—(ब्रज : १०७)

इस प्रसंग में ब्रज की राधा में अधिक नखरा, वक्रता, स्पष्टता और स्वच्छन्दता है।—(ब्रज : १०८)

दधिदान लीला, छद्मलीला, रासलीला आदि प्रसंगों में राधा का व्यक्तित्व प्रायः गोपियों के साथ अन्तर्भुक्त हो गया है। रासलीला प्रसंग में राधा के मान का उल्लेख दोनों ही क्षेत्रों में समान रूप से मिलता है। वंशी-वादन प्रसंग में बुन्देली राधा कृष्ण के मादक आकर्षण से आत्मसमर्पण की स्थिति में हैं। ब्रज की राधा में यह आकर्षण उद्वेगजनक और विह्वलकारी हैं। गोचारण प्रसंग में केवल बुन्देली गीतों में राधा और कृष्ण की पारस्परिक प्रति-स्पर्धा का चित्रण है।—(बुन्देली : १११, ११२) कृष्ण राधा को मुरली पर पुकारते हैं; राधा कृष्ण को गउओं को रोकने के लिए कहती हैं जिससे उनकी बेंदी गरद से न भर जाय। कृष्ण नन्द के पूछने पर उनसे स्पष्टीकरण करते हैं कि वृषभानु की घमण्डिन राधा उनकी गउओं को छेड़ती है। इसी कारण वे दुर्बल और क्षीणकाय हैं। यह शिकायत वृषभानु पत्नी तक पहुँचती है और राधा कृष्ण के पास न जाने का संकल्प करती हैं। होली में ब्रज की राधा का पुनः व्यक्तित्व गोपियों का नेतृत्व करते हुए उद्दण्ड, मुक्त और स्वच्छन्द व्यक्त हुआ

है। कृष्ण की प्रतिद्वन्दिता में वे बदला तथा दाँव लेने की भावना से फाग खेलने में संलग्न हैं।

विरह के प्रसंग में राधा का चरित्र पुनः व्यक्तित्व ग्रहण करता है। ब्रज की राधा विरह के अवसर पर अपनी समस्त उच्छृङ्खलता और अल्हड़पन को छोड़कर हृदय में वेदना और व्यथा का अनुभव करती हैं। भाव-विभोर राधा को सर्वत्र साँवरा दिखाई देता है।—(ब्रज : १९९) वे पलका से लग गई हैं।—(ब्रज : २००) और स्वप्न में संयोग सुख की कासनायें जागृत करती हैं। —(ब्रज : २०१) यौवन की आकांक्षा में उद्वेलित राधा कदम्ब के नीचे खड़ी मौन रुदन करती हैं।—(ब्रज : २१४) और कुब्जा के प्रति ईर्ष्या की भावना से आकुलित हैं।—(ब्रज : २१४)

विरह के इस अवसर पर भाव की तन्मयता में ब्रज और बुन्देली राधा में अन्तर मिट गया है। बुन्देली राधा भी बिसूरती हैं।—(बुन्देली : १४४) बीती सुधि करती हैं।—(बुन्देली : १४०) और कदम्ब के नीचे प्रतीक्षा करती हुई रोती हैं—

जोवन तो बीता जाये री नहि आये कन्हैया।

—(बुन्देली : १४५)

और विधि के विधान की चर्चा करती हुई कहती हैं—

ऊधो श्याम वियोग राधिका, जनमो करम लिखाय मोरे लाल।
जो कछु लिखो बिधान विधी का, सो मिटने को नांय मोरे लाल।

—(बुन्देली : १५२)

कृष्ण के साथ पारिवारिक जीवन में पदार्पण करने के पश्चात् राधा का चरित्र ब्रज और बुन्देली दोनों ही क्षेत्रों में एक ग्रामीण सुशीला कुलवधू के रूप में उभरता है। यहाँ वह सास के कठोर व्यग्य वाणों एवं मार को भी बिना किसी प्रत्युत्तर के सहती जाती हैं।—(ब्रज : २४३) इतनी सहनशीला होने के साथ ही वह पूर्ण रूप से पतिपरायणा भी हैं। इस प्रकार राधा का चरित्र प्रारम्भ में एक चंचल, चपल वालिका के रूप में प्रारम्भ होकर अन्त में एक कुशल ग्रामीण नारी के रूप में उभरता है, जो लोक-कल्पित यशोदा के संयुक्त परिवार में रहते हुए भी अपनी शालीनता एवं सौम्यता के द्वारा सब कुछ निर्वाह कर ले जाती हैं।

गोपियाँ—गोपियों का चरित्र जिस प्रकार कृष्ण-भक्ति साहित्य में माधुर्य भावना से आसक्त भक्तों के सामूहिक चरित्र के रूप में प्रस्तुत हुआ है उसी प्रकार लोकगीतों में लोक की नारी के यौवन, शृंगारिकता तथा उल्लास-

पूर्ण प्रेम-भावना का सामूहिक प्रतिनिधित्व करता है। लोकगीतों में गोपियों का चरित्र साधारण स्तर पर सहज नारी-भावना का अभिव्यक्तीकरण है। उसमें भक्ति-भावना का उदात्तीकरण किसी स्तर पर भी परिलक्षित नहीं होता। कहीं प्रासंगिक संकेत कृष्ण भक्ति परम्परा के अवशेष रूप में भले ही देखा जा सकता हैं। इनमें राधा जैसा न तो चरित्र का वैशिष्ट्य है और न कृष्ण के प्रति उनका वैयक्तिक स्तर का प्रेम ही। लोक की व्यापक भाव-भूमि पर कृष्ण एक रसिक प्रेमी के रूप में जिस प्रकार अपने समाज की युवती स्त्रियों को आकर्षित और यौवनोद्वेलित करते हैं, उसी प्रकार गोपियाँ भी उसी स्तर पर प्रतिक्रियाशील हुई हैं। वे यौवन की भावना से स्फुरित साधारण नारी हैं। वे कृष्ण की छेड़-छाड से एक ओर उपालम्बशील तथा उद्विग्न जान पड़ती हैं तो दूसरी ओर उनके हृदय में स्वयं ही कृष्ण के प्रति आसक्ति परिलक्षित होती रहती है। यदि वे यशोदा से जाकर कृष्ण की शिकायत करती हैं, उनकी उद्दण्डता और उच्छृङ्खलता के प्रति आक्रोशपूर्ण होकर उनको इससे रोकने का आग्रह व्यक्त करती हैं तो साथ ही वे अपने लोक-निन्दक समाज तथा कुटिल लोगों के प्रति सतर्क भी हैं।—(ब्रज : ८०) गोपी और कृष्ण का प्रेम लोक स्तर पर प्रतिघटित होने के कारण अपनी उद्दाम और मादक स्थिति में उच्छृङ्खल और मुक्त है। उनके इस पारस्परिक आकर्षण को लोक की भावना के आधार पर हीं समझा जा सकता है। शिष्ट परम्परा में इस प्रकार के प्रेम को और इस प्रकार के यौवन की उच्छृङ्खलता को मान्यता नहीं प्राप्त हो सकी। वस्तुतः कृष्णभक्ति काव्य पर प्रायः शृंगार भावना के अतिरेक का जो आरोप लगाया जाता है, उसमें इस दृष्टि का अभाव भी एक कारण है कि इस साहित्य ने लोक की स्वच्छन्द भावना से बहुत बड़ी सीमा तक प्रभाव ग्रहण किया है।

कृष्ण गोपियों को मुरली पर गाली देते हैं। बीच रास्ते में छेड़छाड़ करते है, उनकी गागर और मटकी फोड़ते हैं और यही नही, इस व्यवहार में वे सीमा का अतिक्रमण भी करते हैं परन्तु गोपियों की समस्त उपालम्भशीलता में उनकी भावना का आवेगपूर्ण उल्लास एक सीमा तक व्यंजित होता रहता है। यौवन के उन्मादपूर्ण प्रेम की यह वास्तविक अभिव्यक्ति है। पनघट पर यही कृष्ण उनकी सहायता करते हैं। इन्हीं कृष्ण की मुरली उन्हें प्रिय लगती है और गोकुल के लोग चबाई प्रतीत होते हैं।—(ब्रज : ७८, ७९)

ब्रज और बुन्देली क्षेत्र में गोपियों के चरित्रों में कोई मौलिक अन्तर नहीं लगता। प्रारम्भ में ब्रज की अपेक्षा बुन्देली गोपियाँ अधिक विनम्र अवश्य लगती हैं जो कृष्ण से त्रस्त होकर कंस के पास शिकायत ले जाने की बात

कहती हैं।—(बुन्देली : ४०) परन्तु बाद में दोनों स्थलों पर गोपियों के चरित्र में कोई अन्तर नहीं रह जाता।

वस्तुतः दधिदान लीला का प्रसंग लोक की भावभूमि की दृष्टि से यौवन और प्रेम की उच्छृङ्खलता की भावना से अधिक ओत-प्रोत है। यह स्थिति लोकगीतों की सहज भाव-भूमि है। इसमें गोपियों का उन्मुक्त रूप व्यक्त हुआ है। वे सज्जा-शृंगार के साथ मादक भाव से दही बेचने निकलती हैं और कृष्ण उच्छृङ्खल और रसिक प्रेमी की भाँति दधिदान के साथ यौवन दान की माँग करते हैं।—(गीत : ९२) वस्तुतः कृष्ण के द्वारा स्वच्छन्दता तथा सीमा का अतिक्रमण गोपियों के अन्तर्निहित प्रोत्साहन से प्रेरित हैं। यह अवश्य है कि वास्तविकता की यथार्थ स्थिति के रूप में नायक की धृष्टता से गोपियाँ सचमुच उद्विग्न और आक्रोशशील होती हैं। उनके इस उपालम्ब में अन्तर्निहित प्रेम का भाव नहीं है, क्योंकि प्रारम्भ में ही कहा गया है कि कृष्ण और गोपियों का यह सम्बन्ध मात्र यौवन के उल्लास से प्रेरित है, प्रेम की इस संगठित भावभूमि पर आधारित नहीं। इसी प्रकार छद्म लीलाओं में भी गोपियों का यह उन्मुक्त और उद्दाम भाव कृष्ण के साथ व्यंजित हुआ है।

वंशीवादन प्रसंग में गोपियों का प्रेम भावात्मक स्तर पर भी व्यंजित हुआ है। वे वंशी के प्रभाव से आन्तरिक स्नेह का अनुभव भी करती हैं और आत्म-स्मरण की स्थिति तक पहुंच जाती हैं। परन्तु उनके प्रेम की आन्तरिक भावना में शरीर की यौवनजन्य मांसल व्यथा का अनुभव ही अधिक है। कृष्ण की वंशी ऐसी बज उठती है कि उसकी मादक ध्वनि उनके हृदय में प्रविष्ट हो उनकी नस-नस को एक साथ प्रकंपित कर देती है और फिर उनकी सारी रात बिलबिलाते ही बीतती है।—(ब्रज : ११०) वंशी का प्रभाव उन पर सर्प दंशन से बढ़कर तीर के लगने के समान तीखा है। इस प्रेम प्रसंग में उनके हृदय में लोक-भावना की गोपन प्रवृत्ति भी परिलक्षित होती है। वे कृष्ण से मिलने के लिये आकुल हैं, परन्तु वर्षा के कारण यमुना के तट पर जाना कैसे हो? घर में सास-ससुर सो रहे हैं लेकिन ननद के जागने और पैरों की पायल के बजने के कारण वह कृष्ण से मिलने में असमर्थता का अनुभव करती हैं।
—(ब्रज : ११८)

वंशीवादन के साथ ही गोचारण का प्रसंग भी मिला हुआ है, जिसमें युवक कृष्ण की बाँसुरी से गोपियाँ खीझती हैं और कृष्ण कदम्ब वृक्ष तले वंशी बजाते हुए उन्हें छेड़ते हैं।—(ब्रज : १४८) इस प्रसंग में गोपियों की विकलता का ही चित्रण है। होली तथा हिंडोला जैसे प्रसंगों में वातावरण की

मादक भावना परिव्याप्त है। यद्यपि गोपियाँ स्वयं इस क्रीड़ा विलास में भाग लेने के लिए उत्सुक हैं परन्तु उनके मन में लोक-मर्यादा और लोक-लज्जा भी आती है और वे कृष्ण की उच्छृंखलता से उद्विग्न होती हैं।

विरह की स्थिति में प्रेम की सीमा स्वतः मर्यादित जान पड़ती है। वस्तुतः प्रेमपात्र की अनुपस्थिति ही विरह का कारण है और ऐसी स्थिति में उद्दाम, आवेग अथवा यौवन की उन्मत्तता के लिए अवसर नहीं रह जाता। यही कारण है कि लोकगीत की गोपियाँ विरह की स्थिति में अपनी सम्पूर्ण व्याकुलता, विकलता के साथ भाव-विभोर और तन्मयता को स्थिति में उपस्थित होती हैं। वे कृष्ण के सामीप्य के लिये उत्सुक हैं, प्रतीक्षातुर हैं, और कुबरी के प्रति ईर्ष्या की भावना से उद्वेलित हैं। साथ ही मिलन के क्रीड़ा-सुख की आकांक्षा उनके मन को नाना प्रकार की अभिलाषाओं से मथित करती है।

यशोदा—जिस प्रकार राधा कृष्ण-प्रेम की साक्षात् मूर्ति हैं, उसी प्रकार यशोदा का सम्पूर्ण व्यक्तित्व कृष्ण स्नेह का प्रतीक है। उनका चरित्र आदि से अन्त तक उनके स्नेहशील सरल मातृत्व की ही सूचना देता है। वह ब्रज के सब सें अधिक सम्भ्रान्त व्यक्ति नन्द महर की पत्नी और कृष्ण जैसे पुत्र की माँ होते हुए भी अपने पुत्र के जन्म पर ब्रज के समस्त नर-नारियों को प्रसन्नता पूर्वक अपने यहाँ आमन्त्रित करती हैं और उनका शुभाशीर्वाद प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील होती हैं। वह अपनी सरल और स्वाभाविक प्रकृति के कारण एक सामान्य लोक-नारी की भाँति किसी को भी सन्देह की दृष्टि से नहीं देखतीं। यहाँ तक कि वह अपने घर में आते समय अपरिचिता नारी पूतना पर भी किसी प्रकार की आशंका या अविश्वास नहीं करतीं। कृष्ण द्वारा पूतना वध एवं कालीय दमन को देखकर यशोदा कृष्ण के भविष्य के लिए सदैव भयातुर, चिन्तित एवं आशंकित ही रहती हैं कि कंस द्वारा प्रेरित कहीं कोई असुर उन्हें हानि न पहुँचा दे। सरल प्रकृति की होने के कारण ही माटी भक्षण प्रसंग के अन्तर्गत जब कृष्ण यशोदा को अपने मुख के भीतर तीनों लोकों की स्थिति दिखाते हैं तो भी वह केवल चकित भर होती हैं। वह इन अलौकिक घटनाओं की अलौकिकता की ओर तनिक भी ध्यान न देकर कृष्ण-स्नेह में खो जाती हैं।

जिस प्रकार कृष्ण के अति प्राकृत चरित्रों के सम्बन्ध में यशोदा का सरल मातृत्व लोक माता के रूप में अक्षुण्य बना रहता है उसी प्रकार कृष्ण की किशोर क्रीड़ाओं; जैसे माखन चोरी, पनघट लीला, चीरहरण और दानलीला आदि को देखकर और गोपियों द्वारा उनके प्रति उपालम्भों को सुनकर भी यशोदा अपने वात्सल्य स्नेह को नहीं छोड़तीं। फलस्वरूप वह अन्ध प्रेमी की भाँति सदैव कृष्ण

को एक नन्हा-सा बालक ही समझती हुई उनकी निर्दोषता और अबोधता में विश्वास करती हैं। यही नहीं वह सरल ग्रामीण नारी प्रकृति की होने के कारण कृष्ण के कुशल-क्षेम के साथ-साथ उनके शीघ्र ही बड़े हो जाने के लिए गिरि-गोवर्धन की परिक्रमा करने की मनौती भी मनाती हैं साथ ही उनके नजर आदि लगने पर जादू-टोना, मन्त्र आदि पर विश्वास व्यक्त करती हुई उसके उतारने का यत्न भी करती हैं। कृष्ण के प्रति इतना ममत्वपूर्ण स्नेह होने पर भी कभी-कभी जब वह उनकी बाल-सुलभ शैतानियों से खीझ उठती हैं या गोपियों के उपालम्भों को सुनते-सुनते ऊब जाती हैं तो कृष्ण को उन बुरी आदतों को छोड़ देने के लिए तरह-तरह से समझाती भी हैं।

यशोदा कितनी संवेदनशील हैं ? यह इसी बात से प्रकट हो जाता है जब वह राधा से पहली ही भेंट में उसके रूप, गुण और शील से प्रभावित हो मन ही मन यह विचार करने लगती हैं कि वर-वधू के रूप में कृष्ण और राधा की जोड़ी अच्छी बनेगी। कृष्ण यशोदा के सर्वस्व हैं। उनके पास रहने हुए वह किसी को कुछ नहीं समझती थीं। लेकिन वही कृष्ण जब मथुरा चले गये तो यशोदा उनकी मधुर स्मृतियों का स्मरण कर विलाप करने लगीं। कृष्ण सदैव अब उनके नेत्रों के सम्मुख छाये से रहने लगे, जिसके कारण उन्हें रात-रात नींद तक न आती।—(बुन्देली : १३२) यशोदा के इस एक करुण व्यंजक चित्र के अतिरिक्त लोक मानस ने मातृ-हृदय की वियोग वेदना गम्भीर मौन के द्वारा ही व्यक्त की है। फलस्वरूप कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात यशोदा फिर कभी उनके लिए व्यथित एवं विह्वल हमारे सामने नहीं आतीं।

इस प्रकार लोक जीवन के मातृत्व की प्रतीक के रूप में एक ओर जहाँ यशोदा अति स्वाभाविक, सरल, स्नेहशीला या यों कहें कि सहज लोक-स्तर के माँ के रूप में हमारे सम्मुख कृष्ण-कथा के अन्तर्गत आती हैं, वहीं जब वह कृष्ण के विवाह के पश्चात् सास के पद से सुशोभित होती हैं तो उनकी यह स्वाभाविकता एवं सरलता अपनी बहुओं (राधा और रुक्मिणी) के प्रति लेशमात्र भी नहीं रह जाती। वह जरा-जरा सी बात पर उन पर ताने मारती और व्यंग्य कसती हैं और उनके इस रूप का चरम वहाँ लक्षित होता है जहाँ वह राधा के कलेऊ माँगने पर उसे भाइयों की गालियाँ देते हुए थप्पड़ मारकर ढकेल भी देती हैं।

इस प्रकार यशोदा का चरित्र जहाँ लोकमाता के रूप में अत्यन्त सरल, स्वाभाविक एवं ममत्वपूर्ण व्यंजित हुआ है वहीं पुत्रवधुओं की सास बनने के पश्चात् उनमें कठोरता और हृदय हीनता की भावना घर कर जाती है। जैसा

कि लोक में प्रायः सास के चरित्र में पाया जाता है। इस प्रकार यशोदा का चरित्र कृष्ण भक्ति साहित्य की परम्परा से गृहीत और एक सीमा तक प्रभावित होते हुए भी इनके व्यक्तित्व का भावात्मक संघटन लोक-मानस के स्तर पर ही हुआ है।

२. भावात्मक स्तर

जैसा कि कहा गया है—लोकगीतों में अभिव्यक्त भावात्मक स्तर साहित्य के भावात्मक स्तर के समान रचयिता तथा पाठक से तटस्थ मनः-स्थिति की माँग नहीं करता। इनमें रचयिता और समाज का अन्तर भी रक्षित नहीं रह सकता। प्रत्येक बार गायक गीत के स्वरों में अपनी भावानुभूति के साथ अभिव्यक्ति की प्रक्रिया से गुजरता है और उपभोग का आस्वादन भी साथ ही करता है। परिणाम स्वरूप इनमें व्यंजित भाव लोक जीवन के सहज स्तर पर प्रतिष्ठित ही नहीं है, उसके यथार्थ जीवन में निरन्तर सम्बद्ध भी रहते हैं। इस कारण लोकगीतों की भावाभिव्यक्ति का समुचित अनुभव लोक-गीतों के वास्तविक वातावरण और संवेदन के प्रसंग में ही ग्रहण किया जा सकता है। काव्य में अभिव्यक्त सर्जनात्मक भावस्थितियों से यह संवेदन भिन्न है। इसमें जीवन का गहरा संदर्भ स्वीकृत है, जिसके बिना अभिव्यंजित भाव की सघनता को मापा ही नहीं जा सकता। दोनों की भावात्मक कोटियों का यह अन्तर इनकी सर्वथा भिन्न प्रक्रिया के कारण है। काव्यगत भावना मानवीय जीवन के व्यापक साधारणीकृत स्तर पर व्यंजित भी होती है और समाज द्वारा ग्रहण भी इसी आधार पर संभव है। पर लोकगीतों की भावना जीवन की वास्तविक एवं विशिष्ट स्थितियों से सम्बद्ध होकर व्यंजित होती है, अतः उसकी अभिव्यक्ति तथा अनुभावन एक साथ तो होता ही है, साथ ही उसमें जीवन की सघनतम संसक्ति (Involvement) अनिवार्य है। यही कारण है कि यहाँ कृष्ण कथा के अन्तर्गत व्यंजित भावात्मक स्तर को भावा-भिव्यक्ति के अर्थ में ही विवेचित किया जा सकता है, रसात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से इस पर विचार करना सम्भव नहीं है।

पारवारिक भाव स्थिति—लोक जीवन और उसकी भावनाओं का केन्द्र परिवार है। उसी केन्द्र पर जान पड़ता है, सारा लोक संचालित होता रहता है। साहित्य में परिवार के इस भाव-स्तर की प्रायः उपेक्षा की गई है, अनेक सूक्ष्म तथा कोमल तत्त्वों को साहित्य अपनी विशिष्टता के कारण भी ग्रहण नहीं कर सका है। इन तत्त्वों से लोकगीतों की मुक्त तथा स्वच्छंद भावना में अभिव्यक्ति का अवसर मिला है। इस परिवार के अन्तर्गत भावों के

अनेक सम्बन्धात्मक आधार हैं और इनके पारस्परिक प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिद्वन्दिता से लोकगीत परिव्याप्त रहते हैं। वस्तुतः इन सबके मूल में पारिवारिक सम्बन्धों का मौलिक स्नेह-भाव माना जा सकता है जो यथार्थ की भूमि पर अनेक रूप ग्रहण करता है।

लोक जीवन सम्मिलित परिवारों के आधार पर संगठित है और इन परिवारों में कई पीढ़ियाँ (प्रायः तीन पीढ़ियाँ) अनेक सम्बन्धों की स्थिति में एक साथ अपने भावात्मक वातावरण में अवस्थित रही हैं। फलस्वरूप जीवन की सहज और स्वाभाविक भावभूमि के कारण इन सम्बन्धों का भावात्मक आदान-प्रदान यथार्थ रूप मे ही चलता रहता है। इसी कारण पारिवारिक आत्मीयता, स्नेह, ममता, उदारता तथा उत्सर्ग आदि भावनाओं के साथ ईर्ष्या, द्वेष, कलह, प्रतिद्वन्दिता आदि भाव मिले-जुले हैं। लोकगीतों में भावात्मक संवेदन का यह ताना-बाना मुख्यतः माँ-पुत्री, सास-बहू, भाई-बहिन, पति-पत्नी, देवर-भाभी, ननद-भौजाई तथा पिता-पुत्री के सम्बन्धों पर बुना जाता है। इन मुख्य सम्बन्धों के अतिरिक्त दादा-दादी, ताऊ-ताई, फूफा-बुआ आदि अनेक ऐसे सम्बन्ध भी हैं जो अवसर तथा प्रसंग के अनुसार अपने भावात्मक आधार प्रस्तुत करते हैं। वस्तुतः इन अनेकानेक सम्बन्धों के मूल में पारिवारिक संगठन की एकसूत्रता की आत्मीय भावना ही कार्य करती है। यह पारिवारिक आत्मीय भावना जहाँ एक ओर स्नेह के अनेक रूपों में अभिव्यक्त होती है वहाँ दूसरी ओर इसी के आधार पर ईर्ष्या, द्वेष, प्रतिद्वन्द्विता का यथार्थ रूप भी मिलता है।

प्रस्तुत अध्ययन की सीमा कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों तक है। कृष्ण-कथा को लेकर परिवार के सभी पक्षों को विवेचित नहीं किया जा सकता; क्योंकि इस कथा की परिव्याप्ति लोक जीवन के, विशेषकर कुछ सम्बन्धों तक ही रही है। मुख्यतः कृष्ण का व्यक्तित्व एक विशिष्ट परम्परा से सम्बद्ध है, जिसमें वह मुख्यतः बालक और युवक हैं और इसी कारण लोकगीतों में कृष्ण के संदर्भ में अनेकानेक पारिवारिक सम्बन्धों की स्थिति स्पष्ट नहीं है। जन्म सम्बन्धी संस्कारों के गीतों में कृष्ण के जिन सम्बन्धियों की चर्चा हुई है, वहाँ उनकी स्थिति और उनकी भावना लोक की मूल प्रकृति के अनुकूल है। कृष्ण के दादा-दादी एवं ताऊ-ताई के बालकृष्ण को गोद में खिलाने अथवा उनके लिये बाजार से खिलौना लाने के आग्रह में लोक जीवन के पारिवारिक ममत्व की भावना का कोमल संकेत भर मिलता है। यही हाल कृष्ण की बहन और बुआ का है, जो अपने भाई और भतीजे के जन्म पर या बारात की घर से निकासी होने के वक्त उनकी आरती उतारती है और फिर अपने मनचाहे

नेग के लिये झगड़ती हैं। किस प्रकार वयोवृद्ध जन नवागत शिशु के प्रति स्नेहशील होते हैं और किस प्रकार वह उनके ध्यान के केन्द्र में रहता है, उसकी झाँकी भर यहाँ मिलती है।

लोकगीतों में भाई-बहन के नैसर्गिक प्रेम का व्यापक विस्तार हुआ है परन्तु कृष्ण के परम्परागत जीवन में बहन का विशेष महत्त्व नहीं माना गया है। इसी कारण बहन के रूप में सुभद्रा के स्नेह का विशेष विस्तार प्रस्तुत लोकगीतों में नहीं मिलता। फिर भी जन्म के अवसर पर उल्लसित होकर वह भाई के लिये मंगल कामना करती है। एक स्थल पर वह भाई की मंगल-कामना के लिये भ्रातृद्वितीया का व्रत भी रहती है। बहन का यही प्रेम अधिकार के रूप में भतीजे के जन्म के अवसर पर व्यक्त होता है। सुभद्रा कृष्ण के पुत्र जन्म पर अपने मनचाहे नेंग के लिये अपनी भाभी से आग्रह करती है और कृष्ण उसका पक्ष लेकर उसे उसकी इच्छित वस्तु दिलाते भी है।

—(ब्रज : २२४)

ननद-भौजाई और देवर-भाभी के सम्बन्ध को लेकर लोकगीतों में काफी व्यापक और सूक्ष्म भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है लेकिन कृष्ण-कथा में राधा के देवर न होने पर भी लोक-भावना के अनुसार एक देवर मात्र का उल्लेख आता है जो अपनी पति-वियुक्ता भाभी के प्रति उदासीन चित्रित हुआ है।—(बुन्देली : १७६)

लोक में इन पारिवारिक सम्बन्धों के अतिरिक्त सास और बहू का सम्बन्ध एक महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध है जो लोकगीतों में, सास अपने नियन्त्रण, कठोरता एवं बहू अपनी पीड़ा एवं असहाय होने की भावना को लेकर उपस्थित हुई है। कृष्ण-कथा के अन्तर्गत भी सास और बहू की स्थिति सहज रूप में प्रस्तुत कर दी गई है।

वात्सल्य और प्रेम के अन्तर्गत भाव-विस्तार—लोक मानस ने अपने पुत्र के जन्म पर अपनी भावनाओं, अपनी परिस्थितियों या यों कहें कि अपने समस्त हर्षोल्लास, उत्सव और नेगचार को कृष्ण-चरित्र की कथा कहने वाले गीतों के माध्यम से भी व्यक्त किया है। वह कृष्ण जन्म सम्बन्धी जिन गीतों द्वारा अपने आनन्द और उत्साह की अभिव्यक्ति करता है उससे जान पड़ता है कि मानों उसकी सुषुप्त भावनाएँ शिशु कृष्ण के रूप में अपने पुत्र के दर्शन मात्र से ही जागरित होकर स्वच्छंद गति से नृत्य कर उठी हों। जहाँ नंद-यशोदा, गोप-गोपियाँ तथा परिजनों, मालिन, तमोलिन, पटविन की हर्षव्यंजक मुखरता मानों लोक मानस के हर्षोद्रेक की साकार प्रतिमा हो।

इस आन्दोत्सव की एक सीमा वहाँ देखने को मिलती है जहाँ कृष्ण जन्म पर 'हर्ष' के आवेग में नंद तथा उनके दादा-दादी विविध वस्त्राभूषणों का दान करते हैं।—(ब्रज : ६) इस 'हर्ष' और 'उत्साह' के अतिरिक्त नंद-यशोदा के माध्यम से लोक-माता या पिता का वात्सल्य प्रेम के अन्य भावों द्वारा भी प्रकट हुआ है। कृष्ण जब मिट्टी खा लेते हैं तो यही ममतामयी माता उन पर 'क्रोध' प्रकट करती हुई साटी से मारने का भय दिखाती है और कहती हैं—

क्यों लाला तैंने माटी खाई, माखन को कबहूँ ना नाटी।
उगिलहु वेगि बदन ते माटी, नाहीं तो मारत हूँ साटी।

—(ब्रज : २४)

यदि यहाँ यशोदा लोक माँ की तरह वात्सल्य प्रेम से वशीभूत हो अपने पुत्र को एक बार क्रोध में डाँट भी देती है तो वही कभी उनके यमुना जल में गिर या कूद पड़ने पर पुत्र स्नेह के वशीभूत हो 'भय' और 'चिन्ता' से ग्रसित हो विलख-विलखकर रोती हुई वहाँ दौड़ी चली जाती हैं और कहती हैं—

काल को कलेवा मोरे लाल को धरो है,
अरे रामा कं कें काये न गये।—(बुन्देली : ४४)

इसी तरह शिशु प्रेम के अन्तर्गत जिन अन्य भावों का प्रकाशन लोक-मानस द्वारा व्यंजित हुआ है उनमें मुख्य है माता-पिता के रूप में नंद-यशोदा का अपने पुत्र कृष्ण के सुखी और निरापद जीवन के लिये 'अभिलषित' होना।—(ब्रज : १२) पुत्र का शीघ्र बड़े होकर विविध वस्तुओं को माँगने पर उसे पूरा करने की 'उत्सुकता'—(बुन्देली : १२) सबका मान रखने में समर्थवान् कृष्ण जैसा पुत्र पाकर 'गर्व'—(बुन्देली : ७) और उनकी दैनिक परिचर्या में सतत् 'उत्साह'।—(बुन्देली : २५, २७) इन भावों की अभिव्यक्ति द्वारा लोक गायक ने अपने मानवीय स्वभाव के सरलतम पक्ष की व्यंजना की है।

लोक ने यशोदा के माध्यम से माता के हृदय में अपने पुत्र के प्रति होने वाली वात्सल्य सुख की इस चरम अनुभूति को यद्यपि निरन्तर बनाये रखा है परन्तु कभी-कभी इस सुखानुभूति में व्याघात उत्पन्न करने वाली कुछ घटनाएँ स्वयमेव घटित हो ही जाती हैं; जैसे–शिशु कृष्ण द्वारा किये गये माखन चोरी के उपालम्भों को सुनते-सुनते जब यशोदा 'लज्जित' हो खीज उठती हैं तो वही अन्त में अपने पुत्र स्नेह के कारण इस चोरी की आदत को छोड़ देने के लिये कृष्ण को तरह-तरह से समझाती हुई कहती हैं—

नौ लख धेनु नंदबाबा के, नित नयो माखन होय।
बड़ो नाम तेरे नंदबाबा को, हँसी हमारी होय।
माखन की चोरी छोड़ि सांवरे, मैं समझाऊँ तोय।

—(ब्रज : ३०)

पनघट, चीरहरण और दानलीला आदि से सम्बन्धित कृष्ण के विरुद्ध गोपियों के बार-बार के उलाहने सुनकर यद्यपि यशोदा अपने सहज स्नेह को पलभर के लिये भी नहीं त्यागतीं, फिर भी उनके इस वात्सल्यजनित सुख में किंचित् व्याघात के फलस्वरूप 'क्षोभ' अवश्य उत्पन्न हो आता है। जिससे कभी उन्हें स्वयं गोपाल का 'भर्त्सना' करनी पड़ती है, तो कभी गोपियों के प्रति अविश्वास की स्थिति के कारण उनके उपालम्भों का युक्ति-युक्त उत्तर भी देती हैं :

जि बड़ी ग्वालिन लबरी ऐ, झबरी ऐ,
इन मोहन सूं झगरी ऐ।
मेरो कन्हैया कछू न जाने,
तू ग्वालिन धिगरी ऐ।
ओसन प्यास बुझै नहिं सुन्दरि,
बालक खेल परी ऐ।—(ब्रज : ७७)

फिर यदि माँ शिशु की कभी भर्त्सना करती है तो वही उसकी तनिक-सी अनिष्ट की आशंका मात्र से 'भय', 'शंका' और 'चिन्ता' से ग्रसित भी हो जाती है,—(बुन्देली : १८, ४६, ६४) परन्तु अक्रूर के साथ कृष्ण के मथुरा-गमन की घटना वात्सल्य के हर्ष-सुख का सर्वथा विपरीत रूप उपस्थित कर देती है। अब तो ब्रजवासियों के साथ-साथ नंद-यशोदा का वात्सल्य हृदय को संकुचित करने वाले 'विषाद', 'नैराश्य', 'मोह', 'ग्लानि' आदि भावों का अनुभव करता हुआ अन्त में घोर 'दैन्य' के रूप में प्रकट होता है।

इस प्रकार माँ और पुत्र के नैसर्गिक प्रेम को व्यंजित करने के लिये कृष्ण-कथा के माध्यम से जहाँ अनेकानेक भावों की अभिव्यक्ति हुई है वहीं लोक-मानस राधा और गोपियों के कृष्ण-प्रेम के माध्यम से उनके संयत एवं मुक्त-प्रेम के अन्तर्गत अनेक भावात्मक स्तरों को व्यंजित करता है।

प्रेम-सम्बन्धी जिन विविध सुखों की अभिव्यक्ति गोपियों और राधा के माध्यम से हुई है, उन्हें भाव विकास के आधार पर मुख्यतः तीन वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम वर्ग के अन्तर्गत वे भाव हैं जो पूर्वानुराग के रूप में सामान्य नारी की तरह गोपियों के मन में लोक-नायक कृष्ण के लिये व्यग्रता उत्पन्न करके उन्हें प्रेम-पथ पर अग्रसर करते हैं। इस प्रकार के कुछ

भाव गोचारण के अवसर पर देखने को मिलते हैं जहाँ गोपियों के मन में कृष्ण को देखने की उत्सुकता और आकुलता बनी रहती हैं और इसी उत्सुकता के कारण वे कहती हैं—

अरे मथुरा के वंशी वाले घरैं कब अइयो ।—(ब्रज : ४८)

इसके बाद दूसरे वर्ग में संयोग-वियोग सम्बन्धी वे भाव आते हैं जो प्रेम की तीव्रता और गहनता के सूचक होते हैं ।—(ब्रज : २०४) तथा अन्तिम वे हैं जो चिर वियोग के बाद गोपियों की गम्भीर विरह-व्यथा को व्यंजित करते हैं । ये हैं उद्धव को संबोधित करके कहे गये गोपियों के कथन और कृष्ण के लिये संदेश ।

गोपियों का पूर्वानुराग कृष्ण के प्रथम दर्शन से प्रारम्भ होता है । उनके मन पर कृष्ण के रूप का ऐसा प्रभाव पड़ता है कि वह एक साथ ही चकित, हर्षित और विकल हो जाती हैं तथा उन पर मुग्ध हो अपना तन-मन निछावर करने लगती हैं ।—(ब्रज : ४८ सें ५१ तक) परन्तु राधा में प्रेम का प्रादुर्भाव एक ही समय समान भाव सें रूप-दर्शन द्वारा उत्पन्न होता है । —(बुन्देली : ३४) इस प्रेम में प्रारम्भ से ही जैसे राधा के हृदय में उत्कंठा, विकलता, अधैर्य आदि मनोभाव जागृत हो जाते हैं । गोपियों के मन में एक ओर जहाँ कृष्ण के प्रति अनुरागजन्य उत्कंठा, विकलता और अधैर्य उत्पन्न होता है, वहीं दूसरी ओर लोक-लज्जा और संकोच से उत्पन्न किंचित् द्विधा और खिन्नता से उद्वेलित होकर वे समय-समय पर यशोदा को उलाहना भी देने जाती हैं ।

प्रेम का मनोविकार संकोच और आकुलता-सूचक अनेक भावों में होकर राधा-कृष्ण-मिलन प्रसंग में स्थिरता प्राप्त करने लगता है । किन्तु यहाँ भी लोक-लज्जा को मानने या न मानने के द्वन्द्व से राधा के मन में थोड़ा-बहुत अधैर्य बना ही रहता है । उसकी भावनाओं की विविधता और विचित्रता उसके प्रेम के गोपन द्वारा भी एकाध स्थल पर प्रकट हुई है ।—(ब्रज : ६१) राधा के मान, मनुहार और संयोग सुख का वर्णन करके लोक मानस ने रति-भावना की उस स्थिति का परिचय दिया है, जबकि प्रेमी अपने प्रेम-पात्र के प्रेम प्रतिदान के विषय में पूर्णतः आश्वस्त हो जाता है । राधा के साथ रति-सुख की यह एकाकी आनन्दानुभूति जैसे अपने व्यापक और सामूहिक रूप में हिडोला और होली की क्रीड़ाओं में प्रकट हुई है ।

कृष्ण के मथुरा गमन के पश्चात् गोपियों का प्रेम हृदय के जिन संकोच-पूर्ण दुर्बलता-सूचक मनोविकारों द्वारा प्रकट हुआ है, उनमें रति के संचारी दैन्य

की ही प्रधानता है। कृष्ण के मथुरा गमन के समय की क्षणिक दैन्यता एवं जड़ता —(ब्रज : १९४, १९९) के उपरान्त उनके हृदय पश्चात्ताप और आत्म-ग्लानि से भर जाते हैं और वे कह उठती हैं—

हमें छोड़ कां जाव ब्रजवासी।
जो तुम हमें छोड़ हरि जै हौं,
तज डारो प्रान गरे डारौं फाँसी।

—(बुन्देली गीत : १२९)

गोपियों के साथ-साथ राधा के प्रेम की यह दीनता गोपी विरह-वर्णन और स्वप्न सम्बन्धी गीतों—(ब्रज गीत : २०१, २०६) में प्रकट होती हुई उद्धव-गोपी संवाद में और अधिक तीव्रता के साथ व्यंजित हुई है। इन मनोभावों की व्यंजना के साथ-साथ लोक-जीवन में व्याप्त हास और विनोद की उत्फुल्लता और रसमत्ता वसन्तोत्सव के अवसर पर तो मिलती ही है, साथ ही उद्धव-गोपी संवाद के अन्तर्गत कृष्ण के जिस श्याम रंग पर गोपियाँ कभी खीझती थीं—वही अब उनके व्यंग्य का लक्ष्य बनकर कोयल, काग और भ्रमर की भाँति उनकी निष्ठुर प्रकृति का परिचायक भी हो जाता है। इसी प्रकार के व्यंग्य का संकेत कुब्जा के प्रति प्रकट किये गए गोपियों के भावों में भी मिलता है जहाँ वे उसे अपनी सौत कहती हुई उसके प्रति अपनी ईर्ष्या और असन्तोष की भावना प्रकट करती हैं।

कृष्ण के राधा और रुक्मिणी के साथ परिवार में संयत प्रेम का जीवन व्यतीत करते हुए जिन भावों की व्यंजना स्थल-स्थल पर लोक गायक ने की हैं, वे संक्षेप में इस प्रकार हैं—

रानी रुक्मिणी के मायके चले जाने पर कृष्ण की उनकी स्मृति में विकलता, नव दम्पति राधा-कृष्ण का हर्षित हो फाग खेलना, गोचारण से वापस आने पर पत्नी राधा से शीघ्र मिलने के लिए कृष्ण की उत्सुकता एवं अधीरता, तिलरी और मुरली चोरी पर पति-पत्नी में हास और व्यंग्य, परदेश वासी कृष्ण के विरह में राधा का व्यथित और उदास रहना, प्रिय मिलन की स्मृति आने पर उनका रो पड़ना, पति का कुशल समाचार मँगाने में राधा की विवशता, तोते द्वारा पत्र पाकर कृष्ण की आत्म-विस्मृति, कृष्ण का उत्सुक हो उससे घर का समाचार पूछना, यशोदा का राधा से रूठने पर कृष्ण को आश्चर्य, सौत तुलसा के प्रति राधा की ईर्ष्या।—(ब्रज : २२०, २४०, २४३; बुन्देली : १७१, १७६, १७७, १७९)

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह भी स्पष्ट हो जाता है

कि लोकगीतों में रस-निष्पत्ति का पूर्ण संयोजन नहीं हुआ है, जिसके परिणाम-स्वरूप विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों की स्थिति सांकेतिक ही मिलती है। साथ ही आलम्बन का चित्रण भी केवल उल्लेखात्मक शैली में ही जुटाया गया है। वस्तुतः जीवन की परिस्थितियों के संयोग से इनमें भावों को उद्दीप्त करने की शक्ति स्वयमेव आ गई है। फिर अनुभावों का अङ्कन भी कम ही हुआ है। इसका कारण यह है कि ये लोकगीत जीवन के सहज यथार्थ से अपनी अभिव्यक्ति के क्षणों में भी अविच्छिन्न रूप से बँधे रहते हैं। हाँ, अन्य अंगों के चित्रण की कमी के कारण संचारी भावों की स्थिति अवश्य मिलती है, जिसकी गीतों में सीधी और सरल व्यंजना हुई है।

३. रूप-सौन्दर्य चित्रण

जिस प्रकार मानव के हृदगत् भाव लोक-गायक की अभिव्यक्ति में स्वच्छन्द रूप से व्यंजित हो सके हैं, उसी प्रकार बाह्य प्रकृति के निरीक्षण के साथ मानव-सौन्दर्य के अनेक सहज-सुन्दर और सांकेतिक चित्र उसकी कल्पना में समाहित हैं। यह उसकी सौन्दर्य प्रियता की मुक्त प्रवृत्ति की ओर संकेत करती है।

रूप-सौन्दर्य के विषय में लोक गायक की परिकल्पना कृष्ण और राधा के उन रूप चित्रों से की जा सकती है जिसमें अवस्था और परिस्थिति-भेद के फलस्वरूप विविधता आ गई है। परन्तु ये गीत जीवन से इतने घनिष्ठ स्तर पर सम्बद्ध हैं कि रूप या प्रकृति के सांगोपांग संश्लिष्ट या परिपूर्ण रेखाओं में चित्रण की अपेक्षा इनमें नहीं रहो है। साहित्य के बिम्बविधान और आलम्बन तथा उद्दीपन विभावों के अंकन में इसकी आवश्यकता होती है। पर लोकगीतों में आलम्बन रूप, रूप-सौन्दर्य तथा उद्दीपन रूप, प्रकृति-सौन्दर्य लोक-भावना में प्रत्यक्ष विद्यमान रहता है। लोक-भावना इस प्रत्यक्ष और सम्पर्कित को केवल संकेतों, रेखाओं और विश्रृंखल बिम्बों में ग्रहण करके अधिकांश को कल्पना और प्रत्यक्ष में संवेदित करने में समर्थ हो जाती है। इन संकेतों में प्रत्यक्षानुभव की शक्ति, रेखाओं में तीखेपन की मार्मिकता और बिम्बों में कल्पना को उत्तेजित करने की शक्ति अवश्य रक्षित होती है।

लोक गायक ने कृष्ण के शैशव से लेकर कैशोरावस्था तक के अनेक रेखा-चित्र खींचने की कल्पनाएँ की हैं लेकिन वह लोक-शिशु के माध्यम से उनके शारीरिक सौन्दर्य को सदैव अपने सम्मुख पाने के कारण प्रायः उनके वस्त्रा-भूषणों के वर्णन में ही खो जाता है। इस प्रकार वह कृष्ण के शारीरिक **सौन्दर्य** का चित्रण न कर उनके नैसर्गिक सौन्दर्य को उद्दीप्त करने वाले आभूषणों एवं

परिधानों का उल्लेख करते हुए कहीं-कहीं संकेत भर कर देता है कि कृष्ण का शरीर श्याम है। इस साँवले रंग की यथार्थ भावना देने के लिए वह उनके शरीर की उपमा कभी वारिध अथवा कारी घटा से देता है—

गौर बरन की रानी राधिका, एजी श्याम वरन घनस्याम।
बिजुरी सी चमकें रानी राधिका, एजी बारिध से घनस्याम।

—(ब्रज : १४२)

साथ ही कृष्ण के श्याम रंग के विषय में गोपियों की व्यंग्योक्ति से भी व्यंजित होता है कि वह कोयल, काग और भ्रमर की भाँति काले थे। —(बुन्देली : १४७) परन्तु गोपियों का कृष्ण के प्रति आकर्षण और अनुराग पुनः यह प्रमाणित करता है कि वह इतने श्याम वर्ण के नहीं थे, जितना कि व्यंग्योक्ति द्वारा व्यंजित किया गया हैं।

लोक गायक ने किसी एक गीत में कृष्ण के सम्पूर्ण सौन्दर्य की कल्पना नहीं की हैं। वह यत्र-तत्र एकाध शब्दों द्वारा संकेत मात्र कर जाता हैं कि कृष्ण के नेत्र चंचल एवं रतनारे हैं।—(ब्रज : ४६) उनके गुलाबी कपोलों से गुलाब जैसे चू पड़ रहा हो।—(ब्रज : ४८) उनके बाल घूँघरवाले हैं। —(ब्रज : ४०) वे हंस की सी चाल से चलते हैं।—(ब्रज : ४०) और मन्द-मन्द मुसकराते हुए रसीली वाणी में बोलते हैं।—(ब्रज : ४६) उनके प्रत्येक अंग में काम का निवास है।—(ब्रज : ५०) जिसके सौन्दर्य से इन्द्र भी लज्जित हो जाता है।—(बुन्देली : ११)

लोक गायक की कृष्ण के सौन्दर्य के प्रति की गई यह कल्पना साहित्य में वर्णित कृष्ण के सौन्दर्य-चित्रण की तरह सफल नहीं कही जा सकती, पर इस सांकेतिक चित्रण मात्र से अनायास ही हमारे सम्मुख लोक नायक कृष्ण का रूप प्रत्यक्ष हो जाता है। इस प्रकार लोक गायक का विशेष आग्रह उसकी मानव-सौन्दर्य के यथार्थ प्रदर्शन में नहीं वरन् रूप-सौन्दर्य की व्यंजना मात्र में है। ठीक इसी प्रकार लोक गायक द्वारा गोपियों के सौन्दर्य के विषय में केवल थोड़े से सामान्य कथन मात्र हैं। वे चंचल युवतियाँ हैं। उनमें कोई क्षीण कटि वाली गोरी है तो कोई साँवरी। उनके नेत्र रसीले, कटीले एवं कज्जलयुक्त हैं। उनके गोरे भाल पर सिन्दूर की बिन्दी सुशोभित है। जिसे देखकर कृष्ण का मन रीझ उठता है।—(बुन्देली : ६८, ६६, ६२, ११८)

गोपियों के इस रेखाचित्र की तुलना में लोक-गायक ने राधा के सौन्दर्य का और भी कम स्थलों पर उल्लेख किया है, और जो संकेत दिया भी है उससे केवल यही चित्र उभरता है—गौर वर्ण राधा के नेत्र रसीले हैं। वह नीलम

फरिया पहने हुए जब झूला झूलती हैं तो श्यामल घन में बिजुरी-सी चमक उठती है। एक स्थल पर लोक-गायक ने राधा और कृष्ण के सौन्दर्य को एक साथ व्यंजित करते हुए कहा है—

पान तैं पतरी हरद तैं पियरी,
भौं पतरी सुत डार,
पैरैं नथ बुलरी।
कन्हैया फूल गुलाब राधे रंगा भरी।

सालू सरस रेंशमी लहंगा,
बिंदिया दियैं लिलार,
मोतिन मांग भरी।
कन्हैया फूल गुलाब राधे रंगा भरी।

इस प्रकार मानो सौन्दर्य के वर्णन में लोक-गायक ने जिन उपमानों की कल्पनाएं की हैं वे भी कवि-परम्परा युक्त नहीं, वरन् आकृतिसाम्य को दृष्टि में रखकर ग्रामीण वातावरण से ही ली गई हैं।

४. प्रकृति-परिकल्पना

लोकगीत लोक मानस की अभिव्यक्ति के रूप में जीवन की प्रक्रिया का अभिन्न अंग है। इस दृष्टि से लोकगीतों में काव्य के सौन्दर्य-बोध के स्थान पर जीवन—बोध प्रधान है और उसमें सौन्दर्य-बोध की परिकल्पना उसी सीमा तक आ पाई है, जिस सीमा तक वह जीवन की प्रक्रिया का भी अंग हैं। यही कारण है कि लोकगीतों में प्रकृति की प्रमुख दृष्टि सौन्दर्य-बोध की न होकर लोक जीवन में उसकी स्थिति से सम्बन्धित हैं और इस स्थिति में लोकगीतों की प्रकृति किसी रस की भूमिका में न आलम्बन है, न उद्दीपन, न उसके मानवीकरण की आवश्यकता है, न मानवीय भावारोप (आशा, निराशा, उल्लास, विषाद् आदि की मनःस्थिति में) की, न वह मानव सहचरी के रूप में अंकित होती है, और न कवि को जीवन की अनन्त प्रेरणा देने वाली शक्ति के रूप में।

सत्य तो यह है कि लोक गायक की जीवन-प्रक्रिया में उसका गीत और प्रकृति दोनों एक साथ उसके अंग के रूप में उपस्थित होते हैं। यही कारण है कि लोकगीतों में प्रकृति का सांकेतिक चित्रण भर मिलता है, चाहे पृष्ठ-भूमि के रूप में उसका प्रयोग किया गया हो अथवा वातावरण के निर्माण के लिए, चाहे भावात्मक व्यंजना की दृष्टि से हो अथवा सहचरण भावना की दृष्टि से।

वस्तुतः प्रयोग के रूप में लोकगीतों में प्रकृति की परिकल्पना का प्रश्न नहीं उठता।[1]

जहाँ तक ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में प्रकृति-परिकल्पना का प्रश्न है, वहाँ यह उल्लेखनीय है कि वहाँ की प्रकृति ने वहाँ के लोकगीतों की भावना को कृष्ण-कथा के माध्यम से जिस सीमा तक संवेदित किया है, उसी सीमा तक वहाँ के (कृष्ण-कथा सम्बन्धी) लोकगीतों में उसे स्थान भी मिल सका है। यदि इसके विपरीत कहीं केवल वस्तु या स्थिति का आधार प्रस्तुत करने के लिए अथवा देश, काल की स्थिति का भान कराने के लिए—प्रकृति के कोई ऐसे पूर्ण चित्र आ भी गये हैं तो उसे ब्रज या बुन्देलखण्ड की प्रकृति का वास्तविक रूप नहीं कहा जा सकता।

यद्यपि शिष्ट संस्कृति के विकास के साथ मैदान के वन-उपवन तथा लताकुंज नष्ट-भ्रष्ट कर दिये गये हैं, फिर भी कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों में वनों, उपवनों या कुंजों की स्मृति रक्षित है तथा जिसका सांकेतिक उल्लेख या तो कृष्ण-कथा सम्बन्धी किसी कथा, घटना अथवा स्थिति की पृष्ठभूमि के रूप में हुआ है अथवा किसी परिस्थिति के वातावरण के निर्माण के लिये; जैसे—दधि बेचन जाती हुई गोपियाँ सरोवर के तट पर खजूर एवं महुआ के पेड़ की छाया में गाय चराते हुए कृष्ण से तकरार करती हैं।

—(बुन्देली : ६७)

प्रभात का वर्णन कृष्ण को जगाने के सम्बन्ध में केवल प्रसंगवश एक स्थल पर हो गया है, जहाँ यशोदा कृष्ण को जगाती हुई कहती हैं—

प्यारे नन्दलाल उठो। सूर्य निकलने से भोर हो गया है। हवा चल रही है। चिड़ियाँ गा रही हैं और मोर नृत्य कर रहे हैं।.........पक्षी चुगने के लिये उड़ गये। गाएँ द्वार पर खड़ी रंभा रही हैं।........

(ब्रज : ३२, ३३, ३४)

किन्हीं-किन्हीं लोकगीतों में लोक गायक ने वातावरण में भावना के अनुकूल पृष्ठभूमि भी व्यंजित की है; जैसे—

मोहन बन्ना आयो बगिया में, बाग की खिल रही कली-कली।
कोई कली हरनाम जपत है, कोई जपै सिव हरी-हरी॥

—(ब्रज : २३७)

---

१. विशेष विवरण के लिय देखिये : **"प्रकृति और काव्य"**—डा० रघुवंश।

यहाँ बन्ना रूप में कृष्ण के आगमन पर बाग की समस्त कलियाँ हर्षित हो जैसे खिल उठी हैं।

ब्रज के गीतों में यमुना के प्रति विशेष आकर्षण है, क्योंकि इस नदी ने वहाँ के जन-जीवन पर अमिट छाप डाली है। फलस्वरूप लोकगीतों में भी यमुना एवं उसका तट जीवन की विविध स्थितियों एवं भावनाओं से संवेदित है—

जमना पे आ जा रे कन्हैया।
जमना किनारे तुलसी को बिरवा, पूजा करा जा रे कन्हैया।
जमना किनारे गउवें बहुत हैं, गउवें चरा जा रे कन्हैया।
जमुना किनारे ग्वाले बहुत हैं, माखन लुटा जा रे कन्हैया।
जमुना किनारे सखियाँ बहुत हैं, रास रचा जा रे कन्हैया।

—(ब्रज : ११०)

यही नही, इस जीवन के उल्लास और भावाकुलता के अनुकूल ही अनेक स्थलों पर प्रकृति का चित्रण है। कृष्ण और गोपियों के हिडोला सुख एवं रासलीला की रंग-स्थली यमुना तट ही है। सम्भवतः इसी परम्परा के प्रभाव से सरिता पुलिन प्रायः लोकगीतों में क्रीड़ा स्थली के रूप में चित्रित होने के साथ ही पति-वियुक्ता पत्नी की विविध विचारधाराओं की केन्द्र-स्थली भी हो चली है—

आगू आगू सूरज पीछू रानी तुलसा, ठाड़ी जमुनाजी के तीर मोरे लाल।
ठाड़ी तुलसा मन पछता रहीं, कौने बिधि पार उतरिये मोरे लाल।
नइया के धोके एक मुरदा बहत है, वाई बिधि पार उतरिये मोरे लाल।
....

—(बुन्देली : १८०)

यहाँ यमुना तट पर तुलसादेवी की अवतारणा लोक कल्पना के अनुकूल है, क्योंकि लोक-भावना मे देश, काल एवं इतिहास—सभी उसकी मुक्त प्रकृति के आधार पर ग्रहण होते हैं। इसी कथन के स्पष्ट करने के लिए एक उदाहरण और प्रस्तुत किया जा सकता है। जहाँ लोक-मानस ने देश, काल एवं इतिहास की चिन्ता न करके कृष्ण जन्म के पूर्व यशोदा और देवकी को यमुना तट पर एक साथ पानी भरते हुए चित्रित किया है।—(बुन्देली : १)

लोकगीतों मे विविध वृक्षों का अंकन भूमिका और वातावरण प्रस्तुत करने के लिए स्थल-स्थल पर हुआ है। इन वृक्षों में यमुना तट पर कदम्ब का उल्लेख विशेष हुआ है, जिस पर झूला डालकर कृष्ण और राधा अपनी सखियों के साथ झूला झूलते हैं। तुलसी के प्रति लोक-गायक के मन में देवी

तुल्य श्रद्धा है। इसी कारण रुक्मिणी कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिए उसकी पूजा और आराधना करती हैं।—(ब्रज : २१५)

इसी प्रकार काल के विविध रूप तथा ऋतु-परिवर्तन के केवल संकेत मात्र ही लोकगीतों में मिलते हैं; क्योंकि लोक-जीवन काल और ऋतुओं के साथ अपने सारे क्रम को परिचालित और भावनाओं को स्पन्दित पाता है। वे उसके साथ अभिन्न हो गई है। इसी कारण उनके संकेत मात्र से इस जीवन की भूमिका प्रस्तुत हो जाती है। चिड़ियों के बोलने के संकेत से प्रातः की भूमिका हो जाती है। रिमझिम-रिमझिम मेंह बरसने और बिजली के चमकने से सावन-भादों के मेघाच्छादित आकाश की कल्पना सन्निहित हो जाती है।—(ब्रज : ११८) इस प्रदेश में वर्षा और वसन्त—दो ऋतुयें अधिक आकर्षक हैं, इनमें भी वर्षा भावमय पृष्ठभूमि के रूप में सावन के गीतों द्वारा अधिक उपस्थित होती है और वसन्त भावोद्वेलन के उद्दीपन के रूप में होली एव फाग के गीतों द्वारा। वर्षा ऋतु के चित्र में स्थानगत रूप-रंगों की कल्पना वातावरण का निर्माण अवश्य करती है; परन्तु इस समस्त चित्र-योजना में पति संयुक्ता एवं वियुक्ता नायिका की मनःस्थिति का रूप प्रत्यक्ष हो उठता है। यह अदृश्य समानान्तर भावना प्रकृति को आलम्बन एवं उद्दीपन रूप के निकट पहुँचा देती है, जिसके कारण लोक-गायक संयोग के अवसर पर प्रकृति-सौन्दर्य की कल्पना इस प्रकार करता है—

सावन आ गया। जमुना किनारे कदम्ब वृक्ष पर झूले पड़ गये। वन और बाग के फूल खिल उठे। ब्रज में चतुर्दिक हरीतिमा छा गई है। नदी किनारे के उठते हुए मेघ देखते-देखते मूसलाधार वृष्टि करने लगे। दादुर, मोर और पपीहे बोलने लगे। कोयल क्यों चुप रहती, वह भी कूक उठी। पुरवैया की शीतल हवा झकोरे लेती हुई बह चली। बागों में झूला झूलते हुए गोपी-ग्वाल भींग गये।—(ब्रज : १३१, १३५, १४१)

यही सावन यदि विरहियों के मिलन पर सुखद वातावरण की सृष्टि करता है तो वियोग के समय उनसे सामंजस्य भी जैसे स्थापित कर लेता है। अतः विरहिणी प्रिय वियोग में कहती है—

हे घनश्याम ! यह सावन की अन्धकारपूर्ण रात्रि, दूजे नन्हीं-नन्हीं वर्षा की पड़ती हुई फुहार, और तीजे पवन की झकझोर मुझे तुम्हारे लिए विकल किये दे रही है। इधर बादलों की घनघोर घटा उमड़ उठी है, उधर पपीहे थेरी बाग में पी-पी की रट लगाये हुए हैं। वन में मोर कूज रहे हैं। आम के वृक्ष पर बैठी कोयल भी निराले ढंग से आज शोर कर रही है। पर यह तुम्हारी अभागिन राधा—वह तो घर बैठी रो रही है, क्योंकि उसके प्रियतम नन्दकिशोर

घर नहीं आये। अतः हे प्रियतम ! अब तो घर आओ। देखो, उमड़-घुमड़ कर बादल आकाश पर चढ़ आये है। बिजुरी चमक रही है। नन्हीं-नन्हीं बूंदें भी पड़ने लगीं, जिससे मेरी पचरंगी सारी भीग गई। इधर मथुरा और उधर गोकुल नगरी है। बीच में जमुना वेग से हिलोरें लेकर बह रही है। मैं अब क्या करूँ ?—(ब्रज : १६३, १६४)

अभी तक प्रकृति की विविध परिकल्पनाओं का पृष्ठभूमि और व्यापक वातावरण के रूप मे विवेचन किया गया है। यद्यपि इस प्रकार के प्रकृति संकेतों और चित्रों में अनेक बार कोई-न-कोई व्यंजना सन्निहित हो गई है। पर जीवन से अभिन्न होकर प्रस्तुत होने के कारण प्रकृति के विविध उपकरणों, पात्रों, स्थितियों और दृश्यों में मानवीय जीवन और भावना की प्रत्यक्ष व्यंजना अधिक मार्मिक रीति से सन्निहित हो गई है। जैसे निम्न गीत में गोपियों के वियोग की व्यंजना नदियों की धाराओं में ही निहित हो गई है—

झांझर नदिया नाव पुरानी, पवन चले झकझोर रे।
बीच भंवर मोरी नाव पड़ी है, तुम ही लगाओ पार रे।
....

—(बुन्देली : १३६)

सहचरण की प्रवृत्ति के कारण प्रकृति के विभिन्न रूप अनेक सम्बन्धों में उपस्थित होते है। इस स्तर पर वे कभी सखा, सहचर या दूत भी हो जाते हैं। लोकगीतों की वियोगिनी पशु-पक्षियों से अपने सुख-दुःख की बात कहती है और सहचरण की भावना से प्रेरित होकर उसी के द्वारा प्रिय के प्रति अपना सन्देश भी भेजती है—

चिठियां लिखि के सुअना खों दे दई,
सुअना गओ परदेस मोरे लाल।
स्वामी के आंगन लौंगन बिरछा,
सुअना बैठो जाय मोरे लाल।
मायें से आये जो किसन कन्हैया,
चिठियां दई है छुटकाय मोरे लाल।

—(बुन्देली : १७६)

लोकगीतों की भावधारा में इस प्रकार कागा या तोता बोलता है और कार्य करता है। फलस्वरूप जन-गायक उसके चरित्र में मानवीय गुणों का आरोप करता है। विरह की स्थिति में नायिका इसी आत्मीयता से प्रभावित हो बिजली से प्रिय के देश मे जाकर चमकने की प्रार्थना करती है—

बिजली कड़के मोय डर लागे, बरसन लागे वे तो मूसलधार।
जा चमक बिजली वा मधुवन में, सोवत हुंगे कहीं नन्दलाल।

—(ब्रज : १९८)

मानव के हृदय में प्रकृति के प्रति जो सहानुभूति की स्थिति है, वही अपने दुःख-सुख में प्रकृति से समान व्यवहार की आशा करती है। फलस्वरूप वह प्रकृति को उसी भावना से युक्त समान आचरण करता हुआ पाता है। साहित्य में चातक, पपीहा और चकोर आदि का प्रेम—उदाहरण माना गया है। लोकगीत की वियोगिनी अपनी व्यथा में इन पक्षियों को समान रूप से उद्वेलित पाती है।—(ब्रज : १९७)

लोकगीतों के सहज जीवन के सक्रिय रूप में प्रकृति उद्दीपन विभाव के अन्तर्गत भी स्वीकार की जा सकती है। लोक मानस प्रकृति को अपने भावावेश के स्तर पर सर्वत्र ग्रहण करता है, पर अन्यत्र प्रकृति के प्रति उसका भाव समक्षता अथवा सहचरण का रहा है। इसी स्तर पर वह लोक-जीवन को अनेक भावात्मक क्षणों में उद्दीप्त भी करती है। फलस्वरूप अधिकतर ऋतु सम्बन्धी परिवर्तनों और रूपों से मानवीय भावों को उत्प्रेरित और अधिक संवेदित अंकित किया गया है। लोकगीतों में ऋतुओं के वर्णन के स्थान पर बारहमासों का प्रचलन अधिक है तथा ऋतु-विषयक प्रसंगों के अन्तर्गत होली, हिंडोला, कजली आदि को भी लिया गया है।

इस प्रदेश में वर्षा और वसन्त—दोनों ही उल्लास की ऋतुएँ हैं, दोनों में प्रकृति शृङ्गार करती है और इसी कारण मानवीय भावों को उद्दीप्त करने में इन ऋतुओं का सहयोग भी अधिक है। ब्रज और बुन्देली कृष्ण-कथा के अन्तर्गत बारहमासों को बहुत कम स्थान मिला है; और जो हैं उसमें सामान्य विरहिणी की भावना के साथ मासों का प्रत्यावर्तन ही अंकित है। विरहिणी राधा अपनी विरह-वेदना एवं कष्टों का उल्लेख करती हुई अपनी किसी सखी से कहती है—

आषाढ़ मास में बादल उमड़-घुमड़ कर गर्जन करने लगे तथा वन में मोर कूज-कूजकर शोर मचाने लगे। सावन में वर्षा की अधिकता से चतुर्दिक हरियाली छा गई है लेकिन भादों की घनघोर अन्धकारपूर्ण रात और उस पर से आकाश में बिजली की चमक मेरे हृदय को भयभीत कर रही है। क्वार के लगते ही आकाश निर्मल हो चला और चाँदनी छिटक गई। कार्तिक आया कि जलाशय के गदले जल भी निर्मल हो गये। लेकिन हे सखि! श्याम न आये। इसी कारण मुझे बड़ी चिन्ता हो रही है। अगहन आते ही बुआई-जुताई भी प्रारम्भ हो गई, फिर भी वह न लौटे। अब तो उनके आने में सन्देह होने के कारण मेरा हृदय धैर्य धारण नहीं करता। अगहन बीतते ही पूस की कठोर ठण्ड और तुषार

की अधिकता मुझे त्रस्त करने लगी। माघ तो मानों अपने साथ वसन्त ही लेकर आया है और फिर फागुन इसमें तो होली की धूम मच गई लेकिन मैं, हे सखि ! गिरधारी के बिना किसके साथ होली खेलूँ ? किस पर रंग डालूँ ? चैत लगा कि अपने चतुर्दिक वन में फूले हुए टेसू को देखकर चिन्ताकुल हो उठी। वैसाख आते ही हवा ऊष्ण हो चली जो जेठ की खरी दुपहरिया में अग्नि की तरह शरीर को जला-जलाकर व्याकुल करने लगी।—(बुन्देली : १३८, १४१)

इस प्रकार वर्ष भर के कालगत परिवर्तनों का संकेत भर देकर लोक-गायक ने अपने मन की पीड़ा और चिन्ता की व्यंजना की है। इसी तरह वह एक अन्य बारहमासे में लोक-जीवन के उल्लास एवं कुछ प्रमुख कृत्यों का उल्लेख भी संकेत रूप में करता है—

जेठ राधी दिन जो कटिहौ,
अषढ़ा में मंडल छवैहों मेरी राधी।
सावन राधी झूलें हिंडोला,
भादों में रैन अंधेरी मेरी राधी,
क्वार में राधी पितरन पानी,
अरे कातिक सुरही खेलै मोरी राधी।

—(बुन्देली : १७०)

उपर्युक्त बारहमासे में व्यक्त की गई भावना सामान्य लोकगीतों में आये बारहमासों की मूल भावधारा के समान ही है। इस प्रकार लोक-जीवन से प्रकृति का रूप ऐसा हिलमिल गया है कि वहाँ जीवन और प्रकृति में कोई विभाजन रेखा नहीं खींची जा सकती। इसी स्पष्ट विभाजन रेखा के अभाव में इन लोकगीतों की भावधारा में प्रकृति का रूप मिलकर उद्दीप्त करता जान पड़ता है।

५. आदर्श और यथार्थ की परिकल्पना

यदि साहित्य को किसी समाज के सांस्कृतिक प्रयत्नों एवं उपलब्धियों का लेखा कहा जाय तो लोक-साहित्य को लोक जीवन एवं उससे अभिन्न सम्पूर्ण लोक संस्कृति का दर्पण कहना अनुचित न होगा। जिसमें लोक जीवन और समाज के विकास का इतिहास, या यों कहें कि मानव जीवन के समस्त आचार-बिचार और रीति-रिवाज अपने वास्तविक रूप में छिपे हुए हैं; और क्योंकि मानव जीवन में हर्ष और विषाद, उन्नति और अवनति आदि सभी कुछ हैं। इसलिये मानव जीवन की इन प्रवृतियों एवं भावनाओं का चित्रण करने वाले जन-साहित्य लोक-साहित्य में सुन्दर और असुन्दर, सत्य और असत्य आदि सभी भावनाओं को प्रश्रय मिला है।

कृष्ण-सम्बन्धी ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में उपर्युक्त बातों का चित्रण प्रायः पारिवारिक जीवन एवं सामाजिक सम्बन्धों के वर्णन में हुआ है। विविध संस्कारों पर गाये जाने वाले मांगलिक गीतों में हर्ष और विषाद दोनों को स्थान मिला है। यद्यपि हर्ष के चित्रण में प्रायः अतिरेक और विषाद के चित्रण में प्रायः वास्तविकता या यथार्थता की भावना को स्थान मिला है। किन्तु इतना होने पर भी कलात्मक साहित्य के अन्य उपकरणों की भाँति लोकगीतों के आदर्श और यथार्थ, कल्पना की अपेक्षा अनुभूति की ओर अधिक झुके हुए हैं। यद्यपि यहाँ परम्परा से प्रभावित रीतिकालीन कवियों की भाँति राधा-कृष्ण की जीवन लीला को लेकर भक्ति एवं शृंगार की आड़ में लोक-मर्यादा की सीमाओं का अतिक्रमण करने का प्रयत्न नहीं दीखता। लोकगीतों का प्रत्येक परिवार—नंद और यशोदा का सुखद परिवार है। फलतः समाज की प्रत्येक माता 'यशोदा' और पिता 'नंद' हैं जो अपने पुत्र 'कृष्ण' को जन्म देकर अपने जीवन को आनन्द और हर्षोल्लास में व्यतीत करने की कल्पना करते हैं।

पुनः लोकगीतों के संसार में दैनिक जीवनोपयोगी सामग्री भी सामान्य नहीं, वह यहाँ अपने उत्कृष्टतम रूप में व्यवहृत की जाती है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि जहाँ लोकगीतों में सुखी समाज के धन-धान्य, ऐश्वर्य और विभूति के वर्णन हैं वहीं कठिन गरीबी, ननद-भावज, सास-बहू और सपत्नियों के शाश्वतिक विरोध में चित्रण उसने कुछ उठा रखे हों। अतः जहाँ समाज के आनन्द पक्ष के चित्रण में अतिरेक की भावना व्याप्त है, वहीं लोक जीवन का यथार्थ चित्र भी समान रूप से ज्योतित है।

फिर एक ओर जहाँ कृष्ण-कथा के माध्यम से लोक गायक प्रतीकात्मक ढंग से अपने परिवार को नंद-यशोदा के परिवार के रूप में कल्पित कर अपने हर्षोल्लास को प्रकट करता है, वहीं दूसरी ओर वह पुत्र-वधू के रूप में राधा और रुक्मिणी की कल्पना कर उनके प्रति किये गये सास यशोदा के दुर्व्यवहारों की झाँकी भी प्रस्तुत करता हुआ अपने समाज का वास्तविक चित्र ही खींच देता है। इस प्रकार जहाँ लोक गायक दुष्टा सास के दुर्व्यवहारों की झाँकी प्रस्तुत करना नहीं भूलता, वहीं वह सम्भवतः इसके प्रभाव से प्रभावित पुत्र-वधू को भी बदला लेने की भावना से प्रभावित दिखाते हुए नहीं चूकता। कहीं-कहीं यह भी उल्लेख मिलता है कि पुत्र-वधू पुत्र प्रसव के पश्चात् स्वार्थ-परता की भावना से अपनी ननद को नेग देने के डर से नहीं बुलाती। और जब वह (ननद) बिना बुलाये ही भाई के घर आ जाती है तो भाभी सीधे मुँह उससे बात भी नहीं करती। समाज के इन कठोर सत्यों को लोक गायक

अनदेखा नहीं करता। अतः वह उसको अपने गीतों के माध्यम से यथार्थ रूप में व्यंजित कर देता है। लोक गायक की इसी यथार्थवादी प्रवृत्ति ने कृष्ण-कथा को भी अपने ही रंग में रंग लिया है।

६. काव्य शिल्प : अलंकार

लोक गायक सहज स्रष्टा होता है। वह अपनी भावाभिव्यक्ति में साहित्य शास्त्रियों द्वारा निर्धारित सुरुचि और शैली का अनुकरण करता हुआ अपनी कल्पना या व्यंजना को प्रसाद और माधुर्य आदि गुणों से युक्त करने की चेष्टा नहीं करता; या यों कहें कि वह कभी शास्त्र की अपेक्षा नहीं रखता। उसकी प्रेरणा का प्रत्येक पद स्वोद्भूत होता है। संस्कार और लोक-जीवन की भाव-भूमि तथा इन सब की दीर्घ परम्परा अवश्य उसकी प्रेरणा में प्राण की भाँति व्याप्त होती है, जिसकी कसौटी कलात्मक साहित्य से सर्वदा भिन्न है। फिर लोक गीत हृदय की वाणी होने के साथ-साथ समाज की चेतना और अनुभूति पर आधारित है, जिसमें बुद्धि की अपेक्षा परम्परा का प्राधान्य होता है। इसी कारण लोकगीतों में कला-पक्ष का वह रूप नहीं मिलता, जो कलात्मक साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। परन्तु जहाँ तक इनकी मर्मस्पर्शी भावना, आलम्बन और अभिव्यक्ति का प्रश्न है, लोकगीतों में मुक्त प्रकृति और स्वच्छंद अभिव्यक्ति के कारण काव्य-कौशल और शिल्पगत विशेषताओं का महत्त्व नहीं होता। इस कारण न तो लोकगीतों में अलंकारों का सचेष्ट और शिल्पगत प्रयोग मिलेगा और न प्रकृति के विविध उपमानों का प्रयोग ही। फिर भी जो अलंकारिक प्रयोग आ गये हैं, वे सहज भावाभिव्यक्ति के अंग के रूप में हैं। यही कारण है कि इन गीतों में सादृश्य मूलक अथवा अधिक से अधिक गम्यौ-पम्याश्रय अलंकारों का रूप देखा जा सकता है। जैसे—

कन्हैया फूल गुलाब राधे रंगा भरी।
पान तें पतरी हरद तें पियरी,
भौं पतरी सुत डार,
पैरें नथ बुलरी । कन्हैया०

यहाँ राधा पान के समान पतली, हरद के सदृश पीतवर्णा हैं तथा उनकी भौहें झुकी हुई कोमल डार के सदृश हैं। इस प्रकार इन पंक्तियों में रूप और भाव—दोनों स्तर के सौन्दर्य-बोध को व्यंजित किया गया है।

फिर लोकगीतों में उपमानों तथा अप्रस्तुतों की योजना किसी काव्या-त्मक दृष्टि से न होने के कारण अलंकारों की स्थिति अनेक बार अस्पष्ट ही रहती है। जहाँ तक प्रकृति-सम्बन्धी उपमानों के आधार पर ये प्रयोग हुए हैं,

उनमें सादृश्य साधर्म्य और बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव प्रधान है। अतः अर्थातंरन्यास और उदाहरण के स्थान पर दृष्टान्त और प्रतिवस्तूपमा की स्थिति अधिक झलकती है। पुनः जहाँ रूपक की झलक मिलती है वहीं यह भी उल्लेखनीय है कि ये कभी भी सांग नहीं हो पाये हैं। आरोप का क्रम प्रारम्भ करके उसका सम्पूर्ण निर्वाह नहीं किया गया है। इसका कारण सम्भवतः यह है कि भावाभि-व्यक्ति की सघनता के उन्मेष में काव्यशिल्प की चेतना उसके (लोक गायक) लिये गौण हो जाती है।

छंद विधान—लोकगीत वस्तुतः वन्य कुसुम की भाँति मुक्त वातावरण में उत्पन्न होते और उसी में विकसित भी होते रहते हैं। इसीलिये इनमें पूर्ण-रूपेण भाव, भाषा, अलकार एवं पिंगल आदि की स्वतन्त्रता पाई जाती है। अपढ़ लोक गायक अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति करते समय छंदशास्त्र के नियमों को याद करके नहीं बैठता और न जगण-मगण आदि की भूल-भुलैया में ही पड़ता है। उसके निष्कपट हृदय में जो भावधारा अनायास ही हिलोरें लेती है, उसे वह स्वांतः सुखाय किसी-न-किसी राग के माध्यम से गा उठता है चाहे वह सदोष ही क्यों न हो। यही कारण है कि लोकगीतों में छंद विधान का कोई नियम नहीं लक्षित होता। वस्तुतः ये गीत लय और संगीत पर ही आश्रित होकर व्यक्त होते हैं। इस कारण यदि यह कहा जाये कि इन लोकगीतों में शास्त्रीय छंद विधान के स्थान पर 'ध्वन्यात्मक छंद' को स्थान मिला है तो कोई अत्युक्ति न होगी।

(आ) लोकगीतों में सांस्कृतिक तत्त्व

लोक संस्कृति और शिष्ट संस्कृति की दृष्टियों में मौलिक अन्तर है। शिष्ट संस्कृति विशेष युगों की वैयक्तिक उपलब्धियों से सम्बद्ध हैं। उसमें व्यक्तिगत प्रयत्नों के सारवान् तत्त्व मानवीय अर्थवत्ता को सिद्ध और निष्पन्न करते रहते हैं। परन्तु लोक संस्कृति एक ऐसा प्रवाह है जिसमें मानव जाति की आदिम वासनाओं, भावनाओं और संस्कारों के आधार पर ही शिष्ट-परम्पराओं में अग्रसर होने वाली मानवीय संस्कृति के विभिन्न तत्त्व सन्निहित होते जाते हैं। किसी प्रदेश की स्थानीय लोक संस्कृति उस क्षेत्र के लोक मानस के आधार पर ही संघटित होती है जिसमें व्यापक मानवीय भावनाओं का आदिम रूप, उस विशिष्ट मानव समूह के मानस में अपने परम्परागत संस्कार और समवर्तिनी शिष्ट परम्पराओं के नानाविध संस्कार एक साथ ही प्रति-घटित होते हैं।

ब्रज तथा बुन्देली लोकगीतों में कृष्ण कथा इन क्षेत्रों के लोक मानस पर इसी सांस्कृतिक चेष्टा के रूप में अभिव्यंजित है। कृष्ण कथा वस्तुतः

भारतीय संस्कृति (शिष्ट) की चेतना से कई स्तरों पर सम्बद्ध रही है। भारतीय धर्म, दर्शन, साधना और साहित्य में इसका सहयोग महत्त्वपूर्ण है। मध्य युग के भक्ति आंदोलन के विश्वास तथा साधनापरक पक्षों से इसका निकटतम सम्बन्ध रहा है। पुनः भक्ति आन्दोलन का प्रस्तुत क्षेत्रों से भी गहरा सम्बन्ध रहा है। इस कारण कृष्ण कथा एक ऐसा तत्त्व हो सकता है जिसके माध्यम से शिष्ट तथा लोक संस्कृति की संचरण पद्धति के मौलिक अन्तर को देखा जा सकता है। भक्ति आन्दोलन ने जिस सीमा तक लोक संस्कृति की परम्परा को प्रभावित किया है, और किस प्रकार इस प्रभाव के होते हुए भी यह लोक मानस की आदिम भावनाओं से संचरणशील हो रही है, इसका प्रत्यक्ष रूप कृष्ण कथा की इस अभिव्यक्ति में व्यंजित है।

कृष्ण कथा में भक्ति आन्दोलन के अन्तर्गत लीलातत्त्व और श्रृंगारिक भावना को समान महत्त्व प्राप्त हुआ था। वस्तुतः दार्शनिक चिन्तन के क्षेत्र में लीला की कल्पना या माधुर्य भक्ति, विशिष्टाद्वैत या शुद्धाद्वैत जैसे सूक्ष्म सिद्धान्तों पर प्रतिष्ठित है, पर साधना तथा साहित्य से इस परिकल्पना की व्यापक स्वीकृति लोक भावना के आधार पर ही हुई थी। माधुर्य भावना और रासलीला में मानवीय यौवन तथा प्रेम के आवेग तथा आवेशपूर्ण मांसल एवं प्रत्यक्ष आकर्षण को स्वीकार्य किया गया है—उदात्त तथा आध्यात्मिक अर्थ और व्यंजनाओं से समुचिता करके। यही कारण है कि काव्य की कृष्ण कथा लोक गीतों की भावाभिव्यक्ति के स्तर पर अपनी सहजता, मुक्ति और स्वच्छन्दता की समान भावभूमि पर प्रतिष्ठित लगती है। इसलिए इन दोनों स्तरों पर कृष्ण कथा के सांस्कृतिक संदर्भ को सूक्ष्म अन्तर के आधार पर अलग किया जा सकता है। भक्ति साहित्य के अन्तर्गत कृष्ण कथा में प्रेम के जिस स्तर पर भक्ति की परिकल्पना और साधना को प्रतिष्ठित किया गया है, किंचित् सतर्कता के अभाव में लोक की कृष्ण कथा के प्रेम तत्त्व में उसी स्तर का भ्रम होना सम्भव है। पर जैसा चरित्रों तथा भावनाओं के विवेचन के अन्तर्गत कहा जा चुका है कि लोकगीतों की भावभूमि लोक मानस पर ही प्रतिष्ठित है, अतः इसी प्रसंग में यह भी कहा जा सकता है कि इन गीतों में प्रस्तुत कृष्ण कथा में व्यंजित धर्म, विश्वास, भक्ति के समस्त तत्त्व भक्ति परम्परा से एक सीमा तक ही प्रभावित हैं और उनमें लोक परम्परा का आधार विशेष रूप से स्वीकृत है।

१—लोक धर्म और विश्वास

लोक धर्म और लोक विश्वास में व्यापक मानवीय भावनाओं, प्रवृत्तियों तथा अर्न्तवृत्तियों का आधार सदा बना रहता है, शिष्ट परम्परा का संस्कार

और वैशिष्ट्य उसकी अपनी विशेषता कभी नहीं हो सकती। यही कारण है कि लोक सदा धर्म को विश्वास तथा अन्धविश्वास की विशिष्ट भावना से स्वीकार करता है, जिसमें श्रद्धा, आतंक, पूजा—एक साथ विद्यमान रहते हैं। अपने स्वार्थ, हित, रक्षा की भावना से प्रेरित इसकी श्रद्धा, पूजा, भजन, कीर्तन लोक, धर्म और विश्वास के रूप हो जाते हैं। यह अवश्य है कि यह कृष्ण-कथा लोक की लम्बी परम्परा से भारतीय जीवन की अन्य सांस्कृतिक धाराओं से सम्बद्ध रही है और इस कारण धर्म तथा विश्वास के सांस्कृतिक तत्त्वों को भी उसकी मौलिक भावना के अन्तर्गत परिलक्षित किया जा सकता है।

कृष्ण-कथा लोक-जीवन के स्तर पर उससे अभिन्न हो जाती है और इस स्तर पर उसके अन्तर्गत परिस्थिति और संस्कार के अनुसार विविध देवी-देवताओं की पूजा, मानता को स्वीकार किया गया है, और अनेक लौकिक विधि-विधानों का समावेश हो गया है। इस दृष्टि के लोक धर्म की भावना ने इन लोकगीतों के निर्माण में पृष्ठ भूमि का काम किया है। और सम्भवतः इस साहित्य के चिरस्थायी एवं लोकप्रिय होने के विविध कारणों में से एक कारण यह भी हो सका है।

कृष्ण सम्बन्धी लोकगीतों, बिशेषकर भजन या भजन की कोटि में आने वाले गीतों के अध्ययन से ही लोक की धार्मिक विचारधारा, भक्ति-भावना और विश्वासों तथा अन्धविश्वासों का पता चलता है कि जिसमें शिव, सूर्य, इन्द्र, गोवर्धन, तुलसी, गंगा, यमुना, भूत-प्रेत की पूजा मानता का उल्लेख मिलता है। ब्रज और बुन्देली क्षेत्र बहुत विस्तृत हैं, जहाँ अनेक मतावलम्बी और उनके अनेक देवी-देवता मिलते हैं; परन्तु बुन्देली क्षेत्र की अपेक्षा ब्रज में कृष्णोपासक अधिक हैं। इसी कारण कृष्ण की कथा को लेकर इस क्षेत्र में भजन, गीत संख्या में अधिक मिलते हैं।

धर्म और विश्वास का स्वरूप—इन लोकगीतों में व्यञ्जित विश्वासों और अन्धविश्वासों का स्वरूप बहुत व्यापक क्षेत्र के विभिन्न तत्त्वों से संघटित हो सका है। इसकी परिधि के अन्तर्गत आदिम प्रकृति प्रतीक पूजकों की वृक्ष, पर्वत आदि की पूजा तथा वैदिक प्रकृति देवताओं, सूर्य, इन्द्र आदि पर विश्वास से लेकर पौराणिक कर्मकांड, संस्कार और मध्ययुगीन भक्तिपरक श्रद्धा तथा समर्पण के अनेक स्तर एक साथ वर्तमान हैं।

गोवर्धन धारण लीला-सम्बन्धी गीतों से ऐसा विदित होता है कि इन्द्र गोकुल वासियों के सर्वमान्य कुलदेव रहे हैं। इन्द्र द्वारा की गई वर्षा के फलस्वरूप इन्हें दधि, दूध, अन्न-धन और पुत्र-सुख प्राप्त होता था। साथ ही वे ब्रज की रक्षा भी करते थे।—(ब्रज : ८५) परन्तु इन्द्र के व्यक्तित्व में प्रकृति-

परक देवत्व की अपेक्षा गोवर्धन का प्रकृति प्रतीक लोक मानस के अधिक निकट ठहरा है। गोवर्धन प्रसंग को लेकर इन्द्र और विष्णु की प्रतिद्वन्द्विता से दो जातियों के विश्वास स्तर के संघर्ष का व्यंजित होना एक अलग बात है। पर लोक में गोवर्धन की प्रतिष्ठा, उसकी पूजा से मनोवांछित अभिलाषाओं की पूर्ति लोक-मानस के आदिम संस्कारों की धारावाहिक परम्परा से घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध रहने का प्रमाण है।—(बुन्देली : १२)

इस वैदिक देवता इन्द्र के अतिरिक्त रुक्मिणी मंगल सम्बन्धी गीत में शिव और देवी की मान्यता और आराधना का भी उल्लेख मिलता है। जिसमें व्यक्त हुई भावना से प्रतीत होता है कि शिव पूजन से इच्छित वर की प्राप्ति एवं देवी के वरदान से मनोवांछित वैवाहिक सम्बन्ध की स्थापना में सहायता मिलती है।—(ब्रज : २१५) इस प्रकार शिव तथा देवी की लोक में मान्यता फलदायिनी शक्तियों का मूल स्रोत सम्भवतः आर्यों के पूर्व का है, पर यह पौराणिक कल्पनाओं को स्पर्श करता हुआ ही लोक मानस पर अवतरित हुआ है।

पुनः तुलसी पूजन से हरि (प्रिय) के मिलन की बात का चित्रण ब्रज के एक गीत (२०६) में बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। तुलसी का पौदा बड़ा पवित्र माना जाता है। स्त्रियाँ कातिक मास में विशेष रूप से इसकी पूजा करती हैं तथा इनकी स्तुति में गीत गाती हैं जिसमें हरि (कृष्ण) तुलसा विवाह का भी उल्लेख रहता है।—(बुन्देली : १७८) तुलसा के प्रति लोक की श्रद्धा और विश्वास में भी इसी प्रकार आदिम प्रकृति प्रतीकवाद और पौराणिक पूजा-भाव का संयोग देखा जा सकता है।

कातिक या पुरुषोत्तम मास का महीना भगवान् विष्णु (कृष्ण) को अत्यधिक प्रिय होने के कारण ब्रज और बुन्देलखण्ड की धार्मिक प्रवृत्ति की नारियों के लिये समान रूप से महत्त्व रखता है। इस मास में कृत्तिका अस्त होने से पूर्व अरुणोदय काल में सरोवर स्नान एवं राई दामोदर (राधा-कृष्ण) की पूजा और उनके नामों तथा लीला कथाओं का गायन इनके लिये बड़ा माहात्म्य रखता है। क्योंकि इस मास में कृष्ण-राधा का व्रत एवं पूजन करती हुई जो स्त्रियाँ सात्त्विक जीवन व्यतीत करती हैं वे पौराणिक कथाओं के मतानुसार मृत्यु के उपरान्त बैकुंठ लोक जाकर भगवान् कृष्ण के समीप रहने का सौभाग्य प्राप्त करती हैं। अतः जीवन-मुक्ति लाभ के लिये वे सम्पूर्ण कार्तिक मास में नित्य नियमानुसार ब्रह्मवेला में उठती हैं और किसी पनघट या जलाशय को स्नानार्थ आते-जाते समय सामूहिक रूप में कृष्ण-राधा की लीला कथाओं का और उसमें भी प्रमुख रूप से विरहपूर्ण गीतों को बड़े मधुर स्वर में गाती

जाती हैं। इन गीतों में भक्त कही जाने वाली स्त्रियाँ स्वयं को गोपी या राधा भाव से कृष्ण को प्रेमी या प्रियतम के रूप में देखने और पाने की अभिलाषा प्रमुख रूप से व्यक्त करती हैं—

कब मिलिहो गोपाल लाल अब
कब मिलिहो गोपाल।—(बुन्देली : १३२)

इन क्षेत्रों से मध्य युग में भक्ति आन्दोलन की वेगवती धारा प्रवाहित हुई है और इसका प्रभाव भक्ति, समर्पण, प्रेम के रूप में इन गीतों में देखा जा सकता है। परन्तु भक्ति के साथ-साथ पौराणिक व्रत-पूजा की धार्मिक वृत्ति और माधुर्य भक्ति में लोकपरक प्रेम का आवेग भी सम्मिलित हो गया है।

साथ ही इन ब्रज तथा बुन्देली लोकगीतों द्वारा यह भी प्रतीत होता है और जैसा कि ऊपर भी लिखा जा चुका है कि ग्रामीण एवं अशिक्षित ब्रज एवं बुन्देलखण्ड वासियों का ज्योतिष के प्रति आस्था, आशीर्वाद में विश्वास, जादू-टोना, तंत्र-मंत्र व नजर लगने, नजर को राई-नोन से उतारने, सयानों से हाथ दिखाने, कौआ आदि जीव-जन्तुओं की शकुन-अशकुन सूचक क्रियाओं आदि अनेक बातों में विश्वास है।

पुनः इस प्रकार के धर्म और लोक-विश्वासों के ताने-बाने में बुनी ग्रामीण जनता जीवन को क्षणभंगुर समझती हुई बात-बात में कर्म और भाग्य की दुहाई देती है। वह जगत में विषमता का कारण पूर्वजन्मों के कर्मों का फल बताती है।—(बुन्देली : १५२) और अपने इसी विश्वास के कारण वह अपनी जीवन रूपी नौका भगवान् के ही आधीन छोड़ देती है—

गहरी नदिया नाव झंझोरी, अधवर भंवर गई।
खेई है तो पार लगाय दै, नहीं तो जात बही।
—(ब्रज : २१४)

लोक की इस भावना में भारतीय संस्कृति की छाप ही परिलक्षित होती है।

२—भक्ति-भावना

जैसा कहा गया है, इन क्षेत्रों में भक्ति आन्दोलन का पर्याप्त प्रभाव माना जा सकता है। परन्तु लोक सम्पूर्ण सांस्कृतिक आन्दोलन को अपने लोक-मानस के व्यापक स्तर पर ग्रहण करता है। अतः भक्ति आन्दोलन ने भक्ति के विविध स्वरूपों की जो विशिष्ट योजना की थी, उसको उन निश्चित और साधनात्मक स्तरों पर लोक-जीवन में प्रतिघटित नहीं देखा जा सकता। इसके अतिरिक्त यहाँ भक्ति-भावना में पौराणिक संस्कार, कर्मकांड, पूजा-भावना, माहात्म्य फल

का समावेश हो गया है। और माधुर्य भक्ति प्रेम के लोकपरक उद्दाम तथा आवेगपूर्ण रूप से प्रभावित है, विरह की भावना में मार्मिकता अवश्य आ गई है।

यद्यपि भक्ति भावपूर्ण गीतों को छोड़कर अधिकांश गीतों में कृष्ण और राधा एक सामान्य नायक और नायिका के रूप में व्यंजित हुए हैं, फिर भी लोक-मानस अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति इन्हीं लोक नायक और नायिकाओं के माध्यम से या परिस्थिति के अनुसार स्वतन्त्र कथा प्रसंगों की सृष्टि कर उसके द्वारा प्रकट करता है। हो सकता है कि ऐसे कुछ गीतों की रचना के पीछे अवसर विशेष को दृष्टि में रखकर लोक मानस की भक्ति भावना की पृष्ठ-भूमि हो, लेकिन भावाभिव्यक्ति के स्तर और दृष्टि के आधार पर यह भी कहा जा सकता है कि इनके पीछे भक्ति भावना की प्रत्यक्ष प्रेरणा कार्य नहीं कर रही है।

एक स्तर पर भक्ति या भजन की कोटि में आने वाले समस्त कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों में नायक कृष्ण के रूप में अवतारधारी ईश्वर की लीलाओं का वर्णन ही इन गीतों के द्वारा किया गया जान पड़ता है, जब कि भावबोध की दृष्टि से स्थिति इससे भिन्न है। यद्यपि लोकगीतों सें लोक गायक ने कृष्ण द्वारा पूतना वध, कालिय दमन और दुष्ट कंस का वध कराके परोक्ष रूप में उनकी भक्तवत्सलता ही प्रमाणित की है, फिर भी उसने अपने इन गीतों सें ऐसे उद्धार कार्यों का स्थान गौण ही रखा है क्योंकि ये प्रसंग उसकी मानसिक प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं पड़ते। फिर भी इस प्रकार के जो प्रसंग आ गये हैं उन्हें भक्ति साहित्य का प्रभाव ही माना जाना चाहिये।

लोकगीतों में कृष्ण की कुछ अद्भुत लीलाएँ भी वर्णित हैं, जिन्हें वे सामान्य ढंग से सम्पन्न कर देते है। जो सम्भवतः उनकी ईश्वरीय शक्ति का परिचय देती हैं; जैसे—कंस की दासी कुबरी कुब्जा का कूबड़पन दूर करना, गोवर्धन धारण द्वारा इन्द्र का मान-मर्दन तथा अपनी माया के बल से ब्रह्मा द्वारा हरण किये गये ग्वाल-वालों एवं बछड़ों की पुनः सृष्टि कर उनके भ्रम को मिटाना, या जब वह मिट्टी खा लेने पर माता यशोदा को अपना मुँह दिखाकर अपनी अलौकिकता की सूचना देते हैं—

एक दिना हरि ब्रज-रज खाई,
तीन लोक रचनाय।—(ब्रज : २३)

पर इन प्रसंगों को बहुत-कुछ परम्परा या कौतूहल वृत्ति के माध्यम से ग्रहण किया गया है। इनके प्रति न लोक का विशेष आग्रह है और न ईश्वरत्व का महत्त्व प्रतिपादित होता है।

पुनः भक्ति सम्बन्धी लोकगीतों में जहाँ लोक-मानस ज्ञान, वैराग्य, जप-तप, यज्ञ और योग आदि के प्रति उदासीनता प्रकट करता है वहीं यह मानों लोक नायक के रूप में कृष्ण की रूप-माधुरी एवं लीला व्यापारों की व्यंजना में तल्लीन भी दीख पड़ता है। लेकिन ऐसे स्थल बहुत कम हैं और जो हैं भी, वे भी भक्ति साहित्य से प्रभावित प्रतीत होते हैं, क्योंकि कृष्ण-कथा सम्बन्धी अधिकतर गीतों में कृष्ण एक सामान्य लोक नायक के रूप में ही आये हैं।

३—लोक-जीवन

(अ) सामान्य जीवन-चित्रण

(क) आवास—कृष्ण काव्य के अन्तर्गत आने वाले प्रकृति प्रांगण के निवासी ग्रामीणों के आवास यद्यपि उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार विभिन्न स्तरों के हैं, परन्तु लोकगीतों में सुदामा की मड़ैया के अतिरिक्त किसी निर्धन ग्रामीण की फूस की झोंपड़ी की चर्चा नहीं आई है।—(बुन्देली : १६०) लोक-गायक ने सामान्य रूप से सबके आवासों को भव्य भवनों के रूप में ही चित्रित किया है। उसने घर की ऊँची छतों को अटारी कहा है जिसके चारों ओर कूंगरे होते हैं जो देखने में सुन्दर प्रतीत होते हैं।—(ब्रज : १७३) घरों के चारों ओर झरोखे होते हैं। कुछ आवासों में ध्वजा अथवा पताका आदि के फहराने की बात भी कही गई है।—(बुन्देली : १११) लोकगीतों में वर्णित आवास सम्बन्धित यह स्थिति केवल आदर्शीकरण मात्र हैं, क्योंकि लोक मानस इनकी तथा सामान्य जीवन से सम्बन्धित अन्य वस्तुओं की—उनके आदर्श रूप में ही कल्पना करता है। यही कारण है कि उसके खान-पान, वस्त्र, शृङ्गार प्रसाधन एवं दैनिक उपयोग की चीजें भी अपने आदर्श रूप में व्यंजित हुई हैं।

(ख) खानपान—ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में तीन समय के भोजनों का उल्लेख मिलता है—प्रातःकालीन कलेऊ, दोपहर के भोजन और रात की ब्यारी। प्रातःकालीन कलेवे में जलेबी, दधि-दूध, माखन-रोटी और मिश्री को; दोपहर के भोजन में खांड की खीर, छाछ और फेनी—इन तीन नई सामग्रियों को; और रात्रि के भोजन पर खाजा आदि कुछ अन्य चीजों का ग्रहण किया जाता है। समाज में प्रचलित इन विविध प्रकार के खाद्य पदार्थों का उल्लेख जो लोकगीतों में हुआ है, वे प्रायः विविध संस्कारों तथा सुअवसरों पर विशेषकर बनाये जाते हैं। वैसे प्रतिदिन के भोजन में दूध, दही और माखन के प्रयोग का प्रायः उल्लेख मिलता है।

मसालों के अन्तर्गत राई और नमक का उल्लेख हुआ हैं जिसका उपयोग शिशु की नजर झाड़ने के लिये किया गया है।—(बुन्देली : १५) इसके

अतिरिक्त हरदी को दही में मिलाकर परस्पर छिड़कने की बात कही गई है। पेय पदार्थों में दूध और शीतल जल को प्रमुख स्थान मिला है। गंगाजल सदैव पवित्र और उत्तम माना गया है। भोजन के पश्चात् पान खाने और खिलाने का प्रचलन है। पलंग पर बैठकर पान खाना—रईसी ठाट में गिना गया है।

—(बुन्देली : ११२)

(ग) **वस्तु**—कृष्ण कथा के गीतों में किसी बालिका के अभाव में उसके वस्त्रों की कहीं भी चर्चा नहीं आई है। शिशु के रूप में कृष्ण के कुछ ही वस्त्रों का उल्लेख यत्र-तत्र हुआ है; वे हैं—झिलमिल कुरता, टोपी और कमर में पीताम्बर। पुरुष वर्ग द्वारा प्रयुक्त उन्हीं वस्त्रों की चर्चा प्रायः हुई है जिसे सामान्य भारतीय जनता दीर्घकाल से धारण करती आई है, वे हैं—कम्बल, पगड़ी, झगा। स्त्रियाँ भी प्रायः उन्हीं परम्परित परिधानों को धारण करती हैं; जैसे—दखिनी चीर, चोलना, फरिया, चूनर, कंचुकी, लंहगा, सुरंग और पचरंगी सारी। क्योंकि ब्रज और बुन्देलखण्ड की नारियों का रंग-विरंग वस्त्र धारण करने का शौक बड़ा प्राचीन हैं; और इसी बात का उल्लेख उनके गीतों में भी मिलता है।

(घ) **श्रृङ्गार प्रसाधन**—नारी शृंगार के सोलह अंग बताये गये हैं, जिनमें से प्रायः ग्रामीण स्त्रियाँ कुछ का ही उपयोग करती हैं। माताएँ शिशु को स्नान कराने से पूर्व सदैव उबटन लगाती हैं। तत्पश्चात् स्नान के लिये ऋतु के अनुसार शीतल और उष्ण जल की व्यवस्था करती हैं। स्त्रियाँ सामान्यतः बालों में तेल डालकर चोटी गूँथती हैं। विरहिणी स्त्रियाँ अपने केश खुले हुए बिना तेल डाले रहती हैं, जिसके कारण उनमें लटें बँध जाती हैं। इनके अतिरिक्त सभी स्त्रियाँ बालों की चोटी करते समय माँग निकालती हैं। जिसे मोतियों से भरने की बात कही गई है। कुछ स्त्रियाँ अपनी माँगें सिन्दूर से भी भरती हैं। नेत्रों में अंजन या काजल लगाने की परम्परा बड़ी प्राचीन होने के साथ-साथ आज भी प्रचलित है। पैरों में महावर स्वयं लगाने या नाइन से लगवाने की बात का भी उल्लेख हुआ है, क्योंकि शृंगार के अन्तर्गत इसका भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। माथे पर बिंदिया और पैर तथा हाथ में मेंहदी रचाने का प्रचलन काफी प्राचीन है। सुगन्धित द्रव्यों में केसर, चोवा और चन्दन छिड़कने का वर्णन विवाह और होली आदि के अवसरों पर प्रायः हुआ है।

—(ब्रज: २३६)

ब्रज और बुन्देली क्षेत्र के स्त्री-पुरुष सदैव से आभूषण प्रेमी रहे हैं और कभी-कभी तो आभूषण ही उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति के द्योतक

भी मान लिये जाते हैं। फलस्वरूप अनेक गीतों में विविध प्रकार के आभूषणों का उल्लेख हुआ है जो उनक आभूषण प्रियता का ही संकेत करता है। यद्यपि ये आभूषण सोने के बने होते थे या चाँदी के, इसका संकेत कहीं नहीं हुआ है। लोकगीतों में पुरुषों में मुख्यनया कृष्ण के आभूषणों की चर्चा है, अतएव इनमें से कुछ को पुरुषों के आभूषण के साथ-साथ बालक के आभूषण भी कहना चाहिए। जो ये हैं—मुकुट, कुंडल, कण्ठी, कडुला, मोतियों की माला, बाजूबंद, करधनी और झांझन। लोक गायक ने एक गीत में स्त्रियों के सोलह आभूषणों का उल्लेख किया है—

माथे बीच हरउबी सोहे, बैंदा की छबि न्यारी।
कान रवारे तरकुला सोहे, झुमकन की छबि न्यारी॥
नाक चुनीं नकबेसर सोहे, झुमकन की छबि न्यारी।
कंठ मनी सिर दुलरी सोहे, मुहरन की छबि न्यारी॥
बाँह बरा बाजूबंद सोहे, कंकन की छबि न्यारी।
हाथ रवारे गजरा सोहे, बंगलिन की छबि न्यारी॥
पाउन जेर घुंगरिया सोहे, पायल की छबि न्यारी।
दस उंगरिन दसमुहरी सोहे, बिछियन की छबि न्यारी॥

—(बुन्देली : ६६)

इन आभूषणों के अतिरिक्त कुछ और के भी नाम यत्र-तत्र आये हैं जो उनकी आभूषण प्रियता की भावना की ओर ही संकेत करते हैं।

(च) दैनिक उपयोग की वस्तुएँ—इस वर्ग में आने वाली वस्तुओं में से मुख्य हैं—इंडुरी, झारी, कमोरी, गागर, कलश, मटकी, मथानी, दोहनी और थार। बैठने और सोने के उपकरणों में चौकी, पटुली, पलंग और झालरदार तकियों का उपयोग किया जाता है।

लोक गायक ने जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है, सामान्य जीवनोपयोगी सम्बन्धी जिन वस्तुओं की चर्चा की है, वे प्रायः अपने उत्कृष्टतम रूप में ही आयी हैं। और इसका कारण है—उनमें प्रायः इन चीजों को इनके उत्कृष्टतम रूप में प्राप्त करने की लालसा का बना रहना।

(आ) पारिवारिक जीवन-चर्या

कृष्ण कथा सम्बन्धी ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में लोक द्वारा कल्पित यशोदा का परिवार एक संयुक्त परिवार है जहाँ धीरे-धीरे उसका विस्तार होता है। जिसमें पिता-पुत्र, सास-बहू, देवर-भाभी, ननद-भौजाई, पति-पत्नी आदि

स्थायी सदस्य हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य सम्बन्धी भी हैं, जिनका केवल उल्लेख मात्र हुआ है।

परिवार में रहते हुए यदि पति पत्नी के साथ हर्ष और उल्लास, व्यंग्य और विनोद में अपना जीवन व्यतीत करता है।—(बुन्देली : १००) तो कभी वही अपनी माता के नव-वधू पर जरा-सी बात पर रूठ जाने पर उसको स्वयं ही उसके मायके जाकर पहुचा आता है और पुनः कुछ काल बाद बुलाने का आश्वाशन देने पर भी सोचता है यदि पत्नी मर जायगी तो दूसरी कर लूँगा लेकिन अपनी माता को कहाँ पा सकूँगा ? अतः वह अपनी माँ के स्नेह के सम्मुख अपनी विवाहिता पत्नी को भी सदैव के लिए छोड़ देने को तैयार हो जाता है।—(बुन्देली : १७६)

पुनः परिवार में रहते हुए यदि पति-पत्नी में किसी बात पर कहा-सुनी हो जाती है तो प्रायः पति अपनी पत्नी से रूठकर परदेस चला जाता है। अनेक मासों के बीत जाने पर भी जब पति अपनी पत्नी की कुशलता नहीं ज्ञात करता तो पत्नी ही किसी प्रकार पति के पास अपना विरहपूर्ण संदेश भेजती है, जिसे पढ़कर वह अपने घर वापस लौट आता है।—(बुन्देली : १७५)

प्रायः ससुराल में सभी बहुओं को कष्ट सहन करने पड़ते हैं; और जिसका मूल कारण होता है—वधू के प्रति सास की हीनता की भावना या अपनत्व की भावना का अभाव। जिसके कारण वह अपनी पुत्रवधू को शृंगार किये हुए कभी फूटी आँखों भी नहीं देखना चाहती। अतः अवसर पाते ही वधू के शृंगार पर व्यंग करती हुई कहती है कि—तुम्हारे माँ-बाप ने क्या-क्या आभूषण गढ़ा दिये हैं जो इस तरह सजी हुई फिर रही हो ? लेकिन शान्ति और सौम्यता की प्रतिमूर्ति पुत्रवधू इसका उत्तर कठोरता या व्यंग्य से न देकर बड़ी ही शिष्टता से देती है कि—हे सास जी, मुझे आभूषणों की लालसा नहीं। परिवार के सब सदस्य ही मेरे लिये आभूषण हैं, मेरे शृंगार तुल्य हैं।

—(बुन्देली : १७३)

यह तो लोक की सास के रूप का एक ही पक्ष है। उसके स्वभाव का दूसरा पक्ष वह है, जिसमें वह और भी अधिक पुत्र-वधू के प्रति कठोर एवं उग्र प्रदर्शित की गई है। सास प्रातः उठते ही वधू से घर का कार्य लेना आरम्भ कर देती है। घर की सफाई के पश्चात् जूठे बर्तन मलबा कर फिर पनघट से पानी भर लाने की आज्ञा देती है। लेकिन इतना कार्य कर लेने पर भी जब पुत्र-वधू सास जी से कुछ अपने लिये जलपान माँगती है तो वह उसे पुनः कुछ नये कार्य करने को बता देती है। बेचारी वधू के इतना परिश्रम करने के पश्चात् भी सास उसे ठीक से कलेवा न देकर ऊपर से तरह-तरह के ताने मारती

हुए उसे भाइयों की गालियाँ देती है और फिर दो-चार हाथ मारकर धकेल भी देती है। अतः वधू बेचारी क्या करे ? वह रोते-कलपते अपनी कोठरी में जा पड़ती है। सायंकाल जब उसका पति घर लौटता है तो पत्नी के इस तरह दुःखी होने का कारण पूछता है और फिर अपनी माता से कुछ कहने-सुनने की कौन कहे, अपनी पत्नी को ही उल्टा-सीधा समझा कर मनाता है।

—(ब्रज : २४२)

यह तो सास के बहू के प्रति किये गये अन्याय, और इस अन्याय के प्रति पति की उदासीनता का चित्रण मात्र है। लेकिन जब इस त्रस्त वधू को कोई सुअवसर मिलता है तो वह सास से बदला लेने में असमर्थ होती हुई भी उसकी पुत्री से ही कुछ सीमा तक बदला ले लेना चाहती है। और होता यह है कि जब उसके पुत्र होता है तो वह अपनी ननद को इसकी सूचना भी नहीं भेजती। लेकिन ननद है कि वह नेग लेने के लालच से बिना बुलाये ही अपने मायके या अपने भाई के घर आ पहुंचती है। और तब उसकी भाभी पुत्र-जन्म से गर्वान्वित हो एवं नेग देने के भय से उससे सीधे मुँह बात भी नहीं करती। लेकिन जब नेग लेने-देने का समय आता है तो बहिन अपने भाई के सहयोग से अपनी मनचाही वस्तु प्राप्त ही कर लेती है।—(ब्रज : २२४) क्योंकि ननद अपनी भावज के व्यवहार से तो असंतुष्ट हो जाती है; परन्तु अपने भाई से नहीं। अतः भाई भी अपनी बहिन के सुख-संतोष का विशेष ध्यान रखता है।

प्रथम विवाहिता पत्नी की अपने सौत के प्रति सदैव क्रूरता और कठोरता का व्यवहार समाज एवं परिवार में देखा गया है। बिवाहिता कभी नहीं चाहती कि उसकी सौत उसके पति के प्रेम को पा सके। अतः वह सदैव उसे सौत कहकर उसका अपमान करती है और अपने पति से कहती है कि वह उसे घर से बाहर निकाल दे।—(बुन्देली : १७९, १८०)

पुनः इस पारिवारिक जीवन में माता और पिता की अपने शिशु के प्रति प्रकट की गई स्नेह भावना से तो लोकगीत ओत-प्रोत हैं ही, साथ ही अपनी पुत्री के प्रति व्यक्त किये गये स्नेह की जो झाँकी विवाह के पश्चात् विदाई के गीतों द्वारा मिलती है वह भी कम मार्मिक नहीं। यद्यपि इन गीतों में माता-पिता की अपनी पुत्री के प्रति असीम स्नेह की भावना ही परिलक्षित होती है, लेकिन समाज के साथ-साथ लोकगीतों के संसार में पुत्री के विवाह के अतिरिक्त किसी अन्य संस्कार का कोई उल्लेख नहीं मिलता जिससे पिता-पुत्री या माता-पुत्री के निश्छल प्रेम की व्यंजना हो सके। पुत्री के विवाह के लिये उसके पिता को और कभी-कभी उसके भाई को कितनी चिन्ता और कठिनाइयों का सामना

करना पड़ता है, यह किसी से छिपा नही। इसी की थोड़ी-सी झलक रुक्मिणी-मंगल सम्बन्धी ब्रज : २१८ में भी देखी जा सकती है।

प्रेम के सम्बन्ध में अपनी सीमाओं के अन्तर्गत लोकगीतों में उन्मुक्त और स्वच्छन्द प्रेम के साथ-साथ वर्जित प्रेम का भी उल्लेख मिलता है। परन्तु भारतीय जीवन में उन्मुक्त प्रेम को कभी स्वीकृति नहीं मिल सकी। यही कारण है कि शिष्ट समाज के अन्तर्गत प्रेम, विवाह के पश्चात् ही स्वीकार किया गया हैं। शायद इसीलिये लोकगीतों में राधा-कृष्ण के वैयक्तिक प्रेम की परिणति विवाह के पश्चात् ही स्वीकार की गई है।—(बुन्देली : ८३ से ८६)

(इ) सामाजिक जीवन-चित्रण

संस्कारों की स्थिति—भारत में सोलह संस्कारों से जीवन को संस्कृत करने का आदेश तथा आदर्श रहा है। इन सोलह संस्कारों में से तीन सबसे प्रमुख हैं—जन्म, विवाह और मृत्यु। जो जीवन की अवतारणा से प्रकृत सम्बन्ध रखते हैं। इनमें से प्रथम दो साधारणतः आनन्द और प्रसन्नता के अवसर हैं, और अन्तिम शोक का। यही कारण है कि पहले ही दो संस्कारों पर विशेष गीत प्राप्त होते हैं, जिनमें विविध लोकाचारों का उल्लेख हुआ मिलता है।

वैसे शास्त्र विहित मांगलिक कृत्य या संस्कार जन्म के पूर्व से ही प्रारम्भ हो जाते हैं परन्तु सम्भवतः कृष्ण के माता देवकी की कोख से कंस के बन्दीगृह में जन्म लेने के कारण 'जन्ति' क कृष्ण-कथा सम्बन्धी लोकगीतों में उनके प्रारम्भिक संस्कारों का उल्लेख नहीं मिलता। अतः जिन चार शास्त्र विहित संस्कारों का उल्लेख लोकगीतों में हुआ है, वे हैं—जातकर्म, नामकरण, अन्नप्राशन और विवाह। इन संस्कारों से मिलते-जुलते लोक में कुछ अन्य लोकाचार भी अत्यन्त निष्ठा और उत्साह से मनाये जाते हैं, जैसे छठी। अतः इसकी भी यहां संस्कारों के साथ चर्चा की गई है।

जन्म—ब्रज और बुन्देली के उन गीतों में जिसमें कृष्ण जन्म का उल्लेख हुआ है, वे सब जन्ति गीत की कोटि में नहीं रखे जा सकते, फिर भी उन गीतों की सामान्य भावधारा जन्ति गीतों के ही समान है।

—(ब्रज : १२; बुन्देली : ४, ८, ११)

लोक में पुत्र के जन्मते ही सोहर अथवा सोहिले होने लगते हैं तथा एक ओर जहां पुत्र के जन्म के हर्ष पर द्वार पर बाजे बजने का उल्लेख मिलता है वहीं दूसरी ओर नवजात शिशु के नाल-छेदन के लिये दाई बुलाने की शीघ्रता भी व्याप्त रहता है।—(ब्रज : ३) दाई आकर बच्चे का नाल-छेदन करती है। उसे स्नान कराकर सूप में लिटाती है तथा उसके ऊपर आखत डालती है।—

(बुन्देली : ५) इन सब प्रारम्भिक क्रियाओं के बदले वह अपना नेग चाहती है।
—(ब्रज : ५)

इधर यह कार्य समाप्त नहीं होने पाता कि उधर नाई द्वारा बालक के जन्म की सूचना उसके नाना, मामा, तथा अन्य सगे-सम्बन्धियों के यहाँ भेजने के लिये रोचन की व्यवस्था की जाती है। यदि जच्चा अपनी ससुराल में रहती है तो उसकी ससुराल का नाई उसके पिता के घर जाता है और उस घर के प्रधान व्यक्ति के मस्तक पर हल्दी, अक्षत तथा दही का टीका लगाकर फिर उसको पुत्र-जन्म की सूचना देता है। किन्तु जब जच्चा अपने मायके में रहती है तो वहाँ का नाई उसकी ससुराल जाकर वहाँ के प्रधान व्यक्ति के मस्तक पर रोचन लगाकर पुत्र जन्म की खबर देता है।—(ब्रज : २२१)

रोचन भेजने के पश्चात् जच्चा की सास शीघ्र ही अपनी बहू के पीने के लिये चरुआ तैयार करने में संलग्न हो जाती है। चरुआ रखा गया कि ननद ने उस चरुए के घड़े पर गोबर से सातिये या स्वास्तिक रखा। इस शुभ शकुन के उपलक्ष में ननद को नेग मिलता है।—(ब्रज : २२३)

इन नेग आदि अवसरों पर गाये जाने वाले गीतों के अतिरिक्त नित्य-प्रति जच्चा के घर उसके पास-पड़ौस की चिर परिचित स्त्रियाँ आ-आकर बधाई गीत गाती हैं। इन आने वाली स्त्रियों में परिजन भी होती हैं, जो अपने साथ मांगलिक वस्तुएँ लाती हैं; जैसे—मालिन आम के पत्तों का वन्दनवार बनाकर लाती है तो तमोलिन पान का बीड़ा और पटविन गदका पोंचो। ये सब अपने-अपने मांगलिक भेंटों के बदले में अपना मनचाहा उपहार प्राप्त करना चाहती हैं। और फिर इन्हें इनकी इच्छित वस्तु भेंट भी की जाती है, जिसे प्राप्त कर ये जच्चा तथा बच्चा को शुभाशीष देती हुई अपने-अपने घर लौट जाती हैं।—(ब्रज : ७) यहीं नहीं, जच्चा और बच्चा की सुख-शान्ति के लिये उसके सास ससुर अपनी शक्ति भर दान दक्षिणा भी नित्य प्रति बाँटते हैं, जिससे कि कोई भी नेग माँगने वाला रिक्त हस्त वापस न लौट जाये।—(ब्रज : ४)

छठी—बालक के जन्म का छठवाँ दिन या जब भी शुभ मुहूर्त निकले, लगते ही लोकप्रथा के अनुसार वह दिन गृह-शुचि और जच्चा-बच्चा के स्नान का दिन निर्धारित किया जाता है। यह दिन साधारणतः छठी के नाम से पुकारा जाता है। छठी भाग्य देवी समझी जाती हैं। स्त्रियों का विश्वास है कि छठी का पूजन करने से शिशु स्वस्थ रहता है और उसका भाग्योदय होता है। यही कारण है कि लोक में न जाने कब से इस प्रथा का पालन होता आ रहा है। इस दिन समस्त घर लीप-पोतकर साफ कर दिया जाता है। अब घर के

अन्य लोग भी शिशु व उसकी माता के पास आ-जा सकते हैं। नाइन घर-घर जाकर सभी स्त्रियों को छठी पूजन में सम्मिलित होने के लिये बुलावा देती है। धीरे-धीरे गाँव भर की स्त्रियाँ इकट्ठी होने लगती हैं। मालिन द्वार पर वन्दनवार बाँध देती है जहाँ विविध प्रकार के बाजे प्रातः से हो बजते हैं। वन्दनवार बाँधकर मालिन गोबर से आँगन लीपती और चौक पूरती है। जल से भरा हुआ एक कलश और पटा उस चौक में रखा जाता है। इस व्यवस्था के हो जाने पर जच्चा को स्नान कराया जाता है और फिर उसको उसके पति के साथ चौक में बैठाया जाता है। मंगल गीतों के गायन के साथ ही उन पर साटी का अक्षत डाला जाता है। तत्पश्चात् बालक की बुआ और बहिन जच्चा-बच्चा की आरती उतारती हैं और फिर अपना मनचाहा नेग पाने के लिये झगड़ती हैं, जिसके मिलते ही छठी-पूजन का कार्य समाप्त होता है।

जन्म के सातवें दिन या छठी के बाद जब ननद बच्चे के लिये कुर्ता-टोपी लाती है तो ब्रज में 'जगमोहन लुगरा' नाम का एक विशेष गीत गाया जाता है जिसमें ननद-भौजाई की बदन का उल्लेख रहता है।— (ब्रज : २२४)

नामकरण—छठी व जगमोहन लुगरा समाप्त हो जाने के बाद जन्म के आचारों में अन्तिम 'नामकरण संस्कार' का दिन होता है जिसे साधारण भाषा में 'बरही' कहते है। यह संस्कार साधारणतः शिशु जन्म के बारहवें दिन होता है। इस दिन पुनः घर लीपा-पोता जाता है तथा नवजात शिशु एवं उसकी माँ को स्नान कराया जाता है। आँगन में चौक पूरे जाने के पश्चात् दोनों बाहर निकलते हैं। पुरोहित को बुलाया जाता हैं, जो आकर यज्ञ आदि करता हैं और ग्रह नक्षत्र शोधकर बालक का नाम रखता है। प्रसूति काल के पश्चात् इसी दिन नवजात शिशु की माँ सोलहों श्रृंगार से विभूषित होती है। इसी दिन उसके मायके से तरह-तरह की वस्तुएँ भी आती हैं जिसमें विशेषकर जच्चा और बच्चा के लिय कपड़, मिठाई, आभूषण तथा खिलौने आदि होते हैं। इस संस्कार के साथ ही जन्म संस्कार की धूमधाम समाप्त हो जाती है।—(ब्रज : १३)

अन्नप्राशन—शिशु के प्रायः छह महीने के हो जाने पर वह संस्कार मनाया जाता है। इस दिन मालिन द्वार पर वन्दनवार बाँधती है तथा नाइन घर-घर जाकर सबको इस सुअवसर पर आने के लिये आमन्त्रित करती है।

---

१. 'जगमोहन' नामक एक ऐसा ही भावपूर्ण गीत विजनौर जिले के गाँवों में भी पुत्र जन्म के अवसर पर गाया जाता है। खड़ीबोली का यह गीत ब्रज गीत की तुलना में काफी बड़ा है। विशेष विवरण के लिये देखें—श्री विष्येन्द्र कुमार माथुर का 'जगमोहन' शीर्षक लेख (विशाल भारत, अप्रैल १९५१)।

मंगल चौक पूरकर उसके बीच पटा और उसी के पास थाली में खीर तथा पानी रखा जाता है। घर का पुरोहित इसी समय आकर मन्त्रोच्चारण करता है तथा बड़ी-बूढ़ी स्त्रियाँ शिशु को खीर चटाती हुई बधाई गीत गा उठती हैं।

विवाह संस्कार—जन्म के पश्चात् विवाह संस्कार ही सबसे महत्त्वपूर्ण संस्कार होता है। जिसमें जन्म-संस्कार के अनुरूप ही कुछ आचार तो वैदिक अथवा शास्त्रोक्त प्रणाली से पुरोहित या पण्डित द्वारा सम्पन्न कराये जाते हैं और कुछ लौकिक होते हैं जिन्हें घर की स्त्रियाँ स्वयं ही कर लेती हैं। ऐसे आचारों की संख्या वैदिक आचारों की तुलना में अधिक होती हैं।

विवाह संस्कार का बीजारोपण पक्की या वरिक्षा से होता है, जबकि कन्या पक्ष वाले को अपनी पुत्री के योग्य उपयुक्त घर और वर मिल जाता है तो ग्रह नक्षत्र आदि ठीक होने पर विवाह का बीजारोपण कर दिया जाता है। इसके बाद पीली चिट्ठी या लगुन पत्रिका वर के यहाँ आती है। इसी समय से विवाह सस्कार का मंगलाचार विधिवत् वर तथा वधू पक्ष की ओर से आरम्भ हो जाता है।—(ब्रज : २१८) लगुन पत्रिका के अनुसार तेल आदि चढ़ने के बाद रतजगे में रात भर गीत गाये जाते हैं। इसी दिन प्रातः हो जाने पर भी गीतों के गाये जाने का क्रम नहीं तोड़ा जाता। ऐसे गीतों में तुलसा एवं दातुन गीत मुख्य हैं।—(ब्रज : २०६, २२०)

वैदिक रीति से पाणिग्रहण संस्कार के सम्पन्न हो जाने पर उसी दिन संध्या को बारातियों को पंगत या ज्योनार कराया जाता है। इस अवसर पर ज्योनार या गारी गीत अवश्य गाया जाता है जिसमें वर के सगे-सम्बन्धियों को प्रायः विविध प्रकार की गाली दी जाती हैं।—(बुन्देली : १६७) बारात आगमन के प्रायः तीसरे दिन बारात के साथ लड़की विदा कर दी जाती है।—(ब्रज : २६०) इस विदाई के साथ ही विवाहोत्सव के मुख्य कार्यक्रम कन्य पक्ष में समाप्त हो जाते हैं।

सामाजिक पर्वोत्सव एवं त्योहार—कृष्ण कथा सम्बन्धी ब्रज और बुन्देली लोकगीतों में आये हुए लोक प्रचलित पर्वोत्सवों को स्थूल रूप से तीन ऋतूत्सवों में विभाजित किया जा सकता है; जैसे—वर्षा में हिंड़ोला, शरद् में रास और शिशिर में होली। इनमें से हिंडोला और होली का वर्णन लोकगीतों में विस्तार के साथ मिलता है। ब्रज में आज भी यमुना पुलिन पर हिडोलना पड़ जाता है और उस पर प्रायः गोपी या ग्वाल या ग्रामीण युवक और युवतियाँ मिलकर झूलती हुई सावन के सरस गीत गाती हैं, जिसमें प्रायः राधा-कृष्ण के झूला-झूलने का उल्लेख रहता है।

यों तो हिन्दू जाति वर्ष भर त्योहार मनाया करती है, परन्तु उसके चार त्योहार प्रमुख हैं—रक्षाबन्धन, दशहरा, दिवाली और होली। लेकिन कृष्ण कथा सम्बन्धी लोकगीतों में अन्य त्योहारों की अपेक्षा फाग को ही उल्लास और उमंग का त्योहार होने के कारण सर्वप्रमुख स्थान मिला है। फिर ब्रज में तो सभी स्त्री-पुरुष बड़ी स्वच्छन्दतापूर्वक आपस में मिलकर फाग खेलते हैं। दोनों ही वर्ग एक-दूसरे पर रंग, गुलाब, अबीर, चोवा, चन्दन, अरगजा इत्यादि डालते हैं। होली के उल्लास में केवल इन्हीं का उपयोग होता हो ऐसा नहीं वरन् बरसाने में बाँसों की मार आज भी गोपियों द्वारा गोपों पर पड़ती है।—(ब्रज : १७०) समाज के समस्त बन्धन इस अवसर पर ढीले हो जाते हैं। गोपियाँ लोक लाज, कुल धर्म आदि को त्याग कर मदमाती हो गोपों के साथ होली खेलती हैं तथा जी भर कर रंग खेलने के बाद वे उनके घर फगुआ भी माँगने जाती हैं।—(ब्रज : १८६) वाद्य यन्त्रों के रूप में इस अवसर पर मृदंग, झाँझ, ढप एवं मंजीरा लोगों को उत्साहित करने के लिये बजाये जाते हैं।—(ब्रज : १५८)

होली और हिंडोला के बाद ब्रज में सामूहिक उत्सव के रूप में गोवर्धन पूजा का उल्लेख मिलता है, जो ब्रजवासियों की प्रकृति पूजा की भावना की ओर संकेत करता हैं।—(ब्रज : ८५, २४६-५; २४७-३)

मनोविनोद के साधन—लोक गीतों में वर्णित मनोविनोद के समस्त साधनों को तीन वर्गों में बाँट सकते हैं—प्रथम बालकों के खेलों में गेंद-बल्ला, भौंरा, चकई, और वंशीवादन प्रमुख हैं।—(ब्रज : ३८, ४२, ६१, ८२) युवकों एवं सामूहिक मनोविनोद के साधनों में मल्लयुद्ध, नटलीला, रास और जल विहार आते हैं।—(ब्रज : १०६) फिर जन्म, विवाह एवं पर्व त्योहारों के अवसरों पर प्रसन्नता प्रकट करने के लिए ग्रामवासी विविध प्रकार के वाद्य यन्त्रों का भी उपयोग करते हैं, जिनमें ताल-मृदंग, झाँझ-ढप, बीन-वेणु प्रमुख हैं।—(ब्रज : १६०)

सामान्य सामाजिक स्थिति—**बुन्देलखण्ड** की अपेक्षा ब्रज के ग्रामीण समाज में सदैव नारी स्वच्छन्द रूप से विचरण करती रही है। वही विशेष रूप से घर में रहकर भोजन बनाती तथा दूध-दही आदि बेचने नगरों में जाया करती है। सम्भवतः पुरुष वर्ग यह कार्य नहीं करता। वह कदाचित् कृषि-कार्य और बालक गोचारण करते हैं; क्योंकि उनकी आजीविका का साधन विशेषकर पशु-पालन हो रहा है।

कृष्ण कथा सम्बन्धी लोकगीतों में प्रसंगवश कुछ ऐसे भी उल्लेख हुए हैं जिनसे समाज की नैतिक अवस्था पर भी किंचित् प्रकाश पड़ता है। ब्रज के

निवासियों का जीवन एक प्रकार का वर्गगत जीवन रहा है, जिसमें लड़कियों को भी सम्भवतः लड़कों की तरह बाहर घूमने-फिरने की पूरी स्वच्छन्दता रही है। जिसके कारण गाँव के किशोर और युवक यमुना स्नान करते, पानी भरते अथवा दधि बेचने जाते समय या फिर होली के सुअवसर पर उनके साथ छेड़-छाड़ करने के अवसर ढूँढ ही लेते रहे हैं। यद्यपि इन छेड़छाड़ों के विरुद्ध लोगों में चर्चा अवश्य होती रही है फिर भी व्यवहार में यह सब चलता रहा है। इतना सब होने पर भी जन-साधारण में आत्मीयता, बा यों कहें कि मानवता एवं सहिष्णुता की भावना कूट-कूटकर भरी है, जिसका ज्वलंत प्रमाण यह है कि आज भी वहाँ या यों कहें कि समस्त उत्तर भारत के नर-नारी अपने पुत्र को कृष्ण मानते हुए उसका उसी उच्च भावना से लालन-पालन करते हैं।

संक्षेप में, लोकगीतों में वर्णित ब्रज और बुन्देलखण्ड की लोक संस्कृति का यह दिग्दर्शन मात्र है। आज समय के प्रभाव से धीरे-धीरे बहुत-सी प्राचीन प्रथाओं का लोप होता जा रहा है और बहुत से नवीन रीति-रिवाजों का जन्म हो रहा है। वास्तव में ये सब प्रथाएं एवं प्रचलन ही लोक संस्कृति के बाह्य रूप हैं, इन्हीं के पीछे संस्कृति के मूल रूप की झांकी मिलती है।

७

लोक-तात्त्विक दृष्टि और कृष्ण-कथा

हमारे देश की संस्कृति जिन उपकरणों से मिलकर बनी है, उसमें कृष्ण-वार्ता और कृष्ण-कथा का अद्वितीय स्थान है। मूर्ति, स्थापत्य, चित्र, साहित्य और संगीत ही नहीं—वस्त्र, आभूषण, प्रसाधन, भोजन और मनोरंजन के विविध रूप और प्रकार भी कृष्ण के अद्‌भुत व्यक्तित्व और उनके प्रति लोक-मन की अनुरागमयी पूजा भावना से प्रभावित हुए हैं। यह प्रभाव १५-१६वीं शताब्दी ईसवी से जितना गहरा लोकव्यापी होता गया है, कदाचित् पहले उतना नहीं था। उसी समय उसका रूप पूर्णतया धार्मिक हो गया और वह भाषा साहित्यों का प्रधान विषय बनकर इतना विविध रूप हो गया कि हमारे जीवन का कोई अंग उससे अछूता न बचा। परन्तु कृष्ण वार्ता का उससे पहले भी संस्कृति और साहित्य में कम महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं था। वस्तुतः उसकी परम्परा अत्यन्त प्राचीन है और इसी कारण सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन की प्रेरक शक्तियों में उसका इतना महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।[1]

वस्तुतः लोकवार्ता तत्त्व केवल मौलिक दृष्टि से ही तथाकथित उदात्त साहित्य को पृष्ठभूमि ही नहीं प्रदान करता, वह साहित्य के अभिप्रायों का

---

१. 'हिन्दी साहित्य' (भाग २) के अन्तर्गत 'कृष्ण-भक्ति साहित्य'
—डा० ब्रजेश्वर वर्मा, ।

भी बीज अथवा केन्द्र होता है। प्रत्येक साहित्य किन्हीं अभिप्रायों के आधार पर खड़ा होता है। ये अभिप्राय जन मानस में ही धर्मगाथा का रूप ग्रहण कर धार्मिक आस्था का अवलम्बन बन जाते हैं। राम और कृष्ण भारतीय वाङ्मय के ऐसे प्रबल अभिप्राय हैं जो अनेक नामों और रूपों से साहित्य में व्याप्त हैं। कृष्ण, नारायण, वासुदेव, गोपाल आदि एक ही व्यक्तित्व नहीं, कई व्यक्तियों के सम्मिलित रूप हैं, जो लोक मानस के ही प्रदान किये हुए हैं। किन्तु जैसे राम की मूल कथा भारत से बाहर भी व्याप्त है, उसी प्रकार कृष्ण की कथा को भी हम केवल भारत में ही नहीं पाते। यूनानी पुराण में ज़ियस के जन्म की कथा क्या कुछ ही रूपान्तर से कृष्ण-कथा नहीं है?[1]

इससे यह बात और भी भली प्रकार सिद्ध हो जाती है कि कृष्ण की कथा का लोकवार्ता से घनिष्ट सम्बन्ध है। कृष्ण एक संसृष्ट व्यक्तित्व है। इस बात की पुष्टि श्रीमद्भागवत के उस श्लोक से भी होती है जिसमें कृष्ण द्वारा पूतना वध किये जाने के पश्चात् माता यशोदा केशव, गोविन्द, मधुसूदन और माधव आदि देवताओं से प्रार्थना करती हैं कि वे कृष्ण के विभिन्न अंगों की रक्षा करें।[2] यद्यपि ये चारों नाम आज कृष्ण के ही पर्यायवाची हैं, फिर भी ऐसा प्रतीत होता है कि श्रीमद्भागवत की रचना काल तक ये विभिन्न नाम विभिन्न देवताओं के थे। यह संसृष्टि लोकवार्ता की ही देन है, क्योंकि लोकमेघा समान धर्मा व्यक्तियों को एक में मिला देने में अत्यन्त कुशल होती है।

पातंजलि के महाभाष्य में कृष्ण और कंस प्रकृति के पोषक और विनाशक प्रभावों के रूप में आये हैं। कृष्ण नाम के कोई ऐतिहासिक व्यक्ति हुए हों अथवा नहीं, पर ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्ण के अद्भुत कर्म वैदिक देवताओं की वन्दना के ही रूपक हैं। वैदिक काल में कृष्ण नाम के परमेश्वर की पूजा होती थी या नहीं, परन्तु वैदिक वाङ्मय का प्रत्येक अध्ययनकर्त्ता 'विष्णु' शब्द से अवश्य परिचित है। वेद के अनेक मन्त्रों में विष्णु का उल्लेख है। पुराण कृष्ण को विष्णु का अवतार मानता है। परन्तु यह मान्यता उन्हें कब प्राप्त हुई, इसका ठीक निर्णय करना असम्भव हैं? फिर भी डा० हेमचन्द्र राय चौधरी का अनुमान है कि सम्भवतः तीसरी शताब्दी ई० पूर्व से वासुदेव कृष्ण और विष्णु की अभिन्नता की भावना उत्पन्न हुई, और जो आज तक

---

१. **मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक-तात्त्विक अध्ययन**—डा० सत्येन्द्र, पृ० ५१-५२।

२. **श्रीमद्भागवत**, दशम स्कन्ध, अध्याय ६, श्लोक : २२ से २५।

सर्वमान्य है। लेकिन इस अभिन्नता के बीच एक बात अवश्य खटकने वाली है, वह यह कि श्रीकृष्ण के आलौकिक कृत्यों का तथा उनकी अलौकिक दशा का यद्यपि जहाँ भी वर्णन किया गया है उसमें विष्णु के गुणों का आरोप है, परन्तु कहीं भी कृष्ण को विष्णु नाम से नहीं पुकारा गया है। जहाँ कृष्ण के नामों की गिनती भी की गई है, वहाँ भी विष्णु नाम नहीं आया है।[१] खैर जो भी हो, ऋग्वेद में हमें ऐसे अनेक मन्त्र मिलते हैं जिनमें कृष्ण तथा उनसे सम्बन्धित अनेक नाम; जैसे—गो, वृष्णि, राधा, व्रज, गोप, अहि, कालीनाग, वृषभानु, रोहिणी और अर्जुन आदि मिलते हैं। इनमें से कुछ मन्त्र निम्नलिखित हैं—

१—**स्तोत्रं राधानां पते**।—ऋ० १।३०।२६

२—**गवामय ब्रजं वृधि**।—ऋ० १०।१०।१

३—**दास पत्नी अहिगोपा अतिष्ठत**।—ऋ० १।३२।११

४—**त्वं तुचक्षा वृषभानु पूर्वी कृष्णस्वाम्ने अरुषोविभाहि**।

—अथर्व० १।१५।३

५—**तमे तदाधार यः कृष्णासु रोहिणीसु**।—ऋ० ८।९३।१३

६—**कृष्णरूपाणि अर्जुनाविवो मदे**।—ऋ० १०।-१।३

इन मन्त्रों में जो नाम आये हैं, उनका यद्यपि गोपाल कृष्ण की कथा से कोई सम्बन्ध नहीं है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि जिस प्रकार वैदिक कृष्ण का सम्बन्ध महाभारत के कृष्ण से जोड़ दिया गया, उसी प्रकार इन सभी नामों का उपयोग जो वेदों में अपना विशिष्ट अर्थ रखते हैं, पौराणिक युग में कृष्ण के साथ सम्बद्ध कर लिया गया।

ऋग्वेद में एक शीघ्रगामी असुर कृष्ण का उल्लेख है, जो अंशुमती नदी के तट प्रदेश में एक गूढ़ स्थान में रहते हुए एक बार इन्द्र के विरुद्ध अपने १०,००० सैनिक लेकर युद्धार्थ खड़ा हुआ था। तब इन्द्र ने मुरुद्गणों का आह्वाहन करके वृहस्पति की सहायता से जिसकी काली त्वचा उखाड़ कर वध किया था तथा जिसकी समस्त सेना का संहार कर जला दिया था।[२] अन्य वैदिक मन्त्र में ५०,००० कृष्णों का उल्लेख है। ये सभी इन्द्र द्वारा मार डाले गये थे। साथ ही इन्द्र ने ऋजिश्वा राजा के साथ हो कृष्णासुर की गर्भवती स्त्रियों का भी वध कर दिया था, क्योंकि यह अभीष्ट था कि कृष्णों का वंश समूल नष्ट हो जाये।[3]

---

१. केवल 'कृष्ण सहस्र नाम' के अन्तर्गत ही 'विष्णु' नाम से कृष्ण को पुकारा गया है।

२. ऋ० ८।६।१३-१५९ ३. ऋ० १।१०१।१

ब्राह्मण काल में यज्ञ के आधार पर विष्णु से इन्द्र पिछड़े। भले ही वे विष्णु उपेन्द्र बने रहे परन्तु यज्ञ शैथिल्य के उपरान्त विष्णु जब कृष्ण या महेन्द्र बने, तब इनमें वैदिक इन्द्र विरोधी असुर कृष्ण के बीज के साथ वैदिक देवताओं के अन्य समस्त गुणों के सहित इन्द्र के गुण भी सम्भवतः प्रस्तुत हो गये। या यों कहें कि पुराण प्रसिद्ध कृष्णाख्यान में कृष्ण के सम्मुख वैदिक देवता इन्द्र को जो हीन और निर्वीर्य चित्रित किया गया है, उसे इस वैदिक कृष्णासुर के संदर्भ की प्रतिक्रिया समझा जाये तो असंगत न होगा। जिसके कारण सम्भवतः वही कृष्ण हरिवंश पुराण में इन्द्र का विरोध करते हुए कहने लगे—"ब्राह्मण ऋचाओं का यज्ञ करते हैं, कृषक हल का यज्ञ करते हैं, हम गिरि पर्वत का यज्ञ करेंगे। हमें वन और गिरि की पूजा करनी चाहिए। देवता भले ही इन्द्र की पूजा करें, हम तो पर्वत की पूजा करेंगे। मैं तो बलात् गायों की पूजा निश्चय ही कराऊँगा।" इस प्रकार पुराणों में कृष्ण के ऐश्वर्य और वीर्य की जितनी उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई, उसी अनुपात से इन्द्र की हीनता भी बढ़ती गई और भागवत तक आते-आते इन्द्र इतने हीन हो गये कि भाषाओं के वैष्णव कवियों ने भक्ति साहित्य में उन्हें सरलता से निकृष्टता की पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया।

इस प्रकार अवैदिक प्रवृत्ति ने वैदिक प्रवृत्ति को अपने में समा लिया और तब उसे परास्त कर दिया। एक देवता के प्रमुख गुणों का आरोप दूसरे देवता पर करने की यह प्रवृत्ति स्वयं वेद में विद्यमान मिलती है।[1] और सम्भवतः इसी प्रवृत्ति के अनुसार इन्द्र के गुण पहले विष्णु में उपेन्द्र भाव से आये, फिर वही विष्णु जब पूर्ण रूप से कृष्ण रूप में अवतरित हुए तो इन्द्र के पराक्रम की सम्भवतः समस्त घटना उसी के अनुरूप कृष्ण पर घटित हुई। जैसा कि हम देखते भी हैं कि संहिता काल में विष्णु सर्वप्रथम एक साधारण देवता के रूप में ही हमें दीख पड़ते हैं। ऋग्वेद के कई स्थलों पर वे एक आदित्य मात्र समझे जाते हैं और दिन भर की यात्रा को केवल तीन पगों में ही पूरी कर देने के कारण आर्य लोग उन्हें महत्व देते तथा उनका यशोगान करते जान पड़ते हैं।[2] परन्तु इससे अधिक महत्त्वपूर्ण प्रसंग वह हैं जहाँ पर विष्णु को इन्द्र का योग्य सहायक (इन्द्रस्य युज्यः सखा)[3] माना गया है अथवा जहाँ-

१. वैदिक मइथालाजी : ए० ए० मैक्डोनल, पृ० १५-१६
२. ऋग्वेद : १।२२।१७-१८
३. ऋग्वेद : १।२२।१९

जहां इन्द्र के साथ ही उनकी भी वीरता एवं पराक्रम की प्रशंसा समान रूप से की गई है।[1] कभी-कभी उन्हें इन्द्र से बड़ा भी स्वीकार किया गया है।[2] इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि वैदिक काल में ही देवताओं के राजा इन्द्र, विष्णु की प्रतियोगिता में नीचा देखते हुए से जान पड़ते हैं और देवेन्द्र का पद एक प्रकार से क्रमशः छिन जाता हुआ इन्द्र के हाथ से निकल कर विष्णु के पास पहुँच गया है। अन्त में विष्णु की विजय यहाँ तक हुई कि बहुत कुछ 'इन्द्र सूक्त' के ही समान एक 'विष्णुसूक्त' की भी रचना कर दी गई और इन्द के लिये प्रयुक्त अनेक महत्ता सूचक शब्द विष्णु के भी विषय में प्रायः ज्यों के त्यों व्यवहृत होने लगे। उदाहरणार्थ—"यह भली प्रकार सिद्ध किया जा सकता है कि विष्णु के हरि, केशव, वासुदेव जैसे नामादि पहले इन्द्र के ही लिये प्रयुक्त होते थे अथवा इन्द्र सम्बन्धी किसी वस्तु को सूचित करते थे, जो धीरे-धीरे विष्णु के कई नामों एवं उपाधियों के आधार बन गये।"[3]

कृष्ण कथा का मूल लोक कथा है, इसकी पुष्टि इससे भी होती है कि पुराण प्रचलित कृष्ण कथा का एक रूपह में बौद्ध 'घत जातक' में भी मिलता है, जिसे भगवान् बुद्ध ने जेतवन में सुनाया था। कथा संक्षेप में इस प्रकार है—

उत्तरापथ में कंस भोग के असितंजन नगर के राजा मकाकंस के दो पुत्र थे—कंस और उपकंस तथा एक पुत्री देवगर्भा थी। लड़की के जन्म के दिन ज्योतिषी ने यह भविष्यवाणी की कि इसकी कोख से जन्म लेने वाला पुत्र कंस गोत्र और कंस वंश का नाश करेगा। राजा मकाकंस की मृत्यु के पश्चात् कंस राजा हुआ, जिसने पूर्व भविष्यवाणी से भयभीत हो अपनी बहिन को अविवाहित ही अपने महल के एक नवीन प्रासाद में रखा और नंदगोपा और उसके पति अंधकवेणु को क्रमशः देवगर्भा की दासी और पहरेदार नियुक्त किया। इसी समय उत्तर मथुरा में महासागर का ज्येष्ठ पुत्र सागर राजा हुआ और उपसागर उपराजा। उपसागर ने एक दिन अपने बड़े भाई के अन्तःपुर में कुछ धृष्टता की, अतः पकड़े जाने के भय से वह अपने मित्र उपकंस के यहाँ चला गया।

उपसागर के असितंजन नगर पहुँचने पर उपकंस के बड़े भाई कंस ने उसे बहुत वैभव दिया। यहाँ रहते हुए एक दिन उपसागर ने राज प्रासाद में देवगर्भा को देखा तो उसके विषय में सब बातें ज्ञात कर वह उसके प्रति

---

१. ऋग्वेद : ६।६६ २. ऋग्वेद : ७।९९

३. दि भक्ति कल्ट इन ऐंशेन्ट इण्डिया : वी० के० गोस्वामी, पृ० १०१।

आसक्त हो गया। और जब देवगर्भा ने अपनी दासी नंदगोपा द्वारा उपसागर को मथुरा के राजा महासागर का पुत्र होना ज्ञात किया तो वह भी उस पर आसक्त हो गई। अतः उपसागर ने नंदगोपा को कुछ द्रव्य देकर अपनी तरफ मिलाया और फिर एक रात वह उसकी सहायता से देवगर्भा के प्रासाद में जा पहुँचा। वहाँ उपसागर ने देवगर्भा के साथ सहवास किया, जिससे उसे गर्भ रह गया। आगे चलकर जब देवगर्भा का गर्भवती हो जाना प्रकट हो गया तो उसके भाइयों ने नंदगोपा से सारी घटना जाननी चाही। नंदगोपा ने भयभीत हो अभयदान की याचना कर सारा भेद प्रकट कर दिया। अतः कंस और उपकंस ने यह निश्चय किया कि वे अपनी बहिन को मारेंगे नहीं, और न उसकी होने वाली पुत्री को ही नष्ट करेंगे। हाँ, यदि उसने पुत्र को जन्म दिया तो उस पुत्र को अवश्य वे मार डालेंगे। ऐसा विचार कर उन्होंने देवगर्भा को उपसागर को दे दिया।

समय बीता। देवगर्भा ने अंजन देवी नामक एक पुत्री को जन्म दिया। अब उपसागर अपनी पत्नी और पुत्री के साथ कंस द्वारा पुत्री जन्म पर दिये गये गोवड्ढमान नामक गाँव में जाकर रहने लगे। संयोगवश देवगर्भा को पुनः गर्भ ठहरा और उसी दिन नंदगोपा को भी। अतः समय बीतने पर एक ही दिन नंदगोपा ने पुत्री को और देवगर्भा ने पुत्र को जन्म दिया। देवगर्भा ने पुत्र के मारे जाने के भय से उसे छिपाकर नंदगोपा के पास भेज दिया और उसकी पुत्री माँगकर अपने भाई कंस और उपकंस के पास पुत्री होने की सूचना भेजी। भाइयों ने पुनः पुत्री होने की सूचना पाकर उन्हें उसे पालन करने की आज्ञा दी। इस प्रकार देवगर्भा ने दस पुत्रों को और नंदगोपा ने दस पुत्रियों को जन्म दिया। दसों पुत्र नंदगोपा के पास बड़े होते रहे और पुत्रियाँ देवगर्भा के पास। इस भेद को कोई नहीं जान सका। देवगर्भा के ज्येष्ठ पुत्र का नाम वसुदेव पड़ा। फिर क्रमशः बलदेव, चन्द्रदेव, सूर्यदेव, अग्निदेव, वरुणदेव, अर्जुन, घतपंडित और अंकर हुए। बड़े होने पर ये सब अंधक वेणु दस पुत्र—दस दुष्ट भाई के नाम से प्रसिद्ध हुए।

कालान्तर में दसों भाइयों ने शक्ति-बल से युक्त हो डाके डालने आरम्भ कर दिये। वे राजा के लिये जाती हुई भेंट को लूट लेते। इनके इस तरह के उपद्रव से त्रस्त होकर प्रजा ने राज दरबार में शिकायत की। राजा कंस ने अंधकवेणु को बुलाकर जब डराया धमकाया तो उसने अभयदान की याचना कर सारा भेद खोल दिया कि देव! वे मेरे पुत्र नहीं, उपसागर के पुत्र हैं। यह सुनकर राजा कंस डर गया। अतः उसने अपने अमात्यों से इन्हें पकड़वाने

के बारे में पूछा तो अमात्यों ने बताया—देव ! ये सब मल्ल हैं अतः नगर में कुश्ती कराकर इन्हें कुश्ती मंडप में आने पर पकड़वा कर सरवा सकते हैं। यह सुनकर राजा ने चाणूर और मुष्टिक—दो मल्लों को नगर में भेजकर मुनादी करा दी कि आज से सातवें दिन नगर में कुश्ती होगी।

सातवें दिन समस्त तैयारियाँ हो जाने पर राजा के दोनों मल्ल कुश्ती मंडप में आकर गर्व से घूमने लगे। दसों भाइयों ने मथुरा नगर में आकर धोबी, गंधियों एवं मालियों की दूकानें लूटीं और अपने शरीर को अलंकृत कर गर्व से वे झूमते हुए कुश्ती मंडप में प्रविष्ट हुए। बलदेव ने आते ही दोनों मल्लों को मारकर अखाड़े के बाहर गिरा दिया। मुष्टिक ने मरते-मरते संकल्प किया 'यक्ष होकर तुझे खाऊँगा।' इस प्रकार अपने मल्लों को मरते देखकर राजा कंस सभीत हो यह कहते हुए उठा—"इन दुष्ट भाइयों को पकड़ो।" उसी समय बलदेव ने चक्र घुमाकर कंस और उपकंस—दोनों भाइयों को सिर काट कर गिरा दिया। जनता भयभीत हो—उनके पाँव पड़ने लगी।

इस प्रकार दोनों मामाओं को मारकर, असितंजन नगर का राज्य ले एवं अपने माता-पिता को वहीं रख दसों भाई सारे जम्बू द्वीप का राज्य लेंगे, ऐसा विचार कर वहाँ से निकल पड़े। प्रथम अयोध्या को नष्ट कर और वहाँ के राजा कालसेन को अपने अधिकार में कर, वे द्वारावती जा पहुँचे। नगर पर अनुध्याधिकार था। अतः उसकी रक्षा करने वाले यक्ष की चतुराई से वे जब उस नगर पर अधिकार न कर सके तो सब कृष्णद्वैपायन के पास गये और प्रणाम कर उनसे द्वारावती पर अधिकार करने के लिए उपाय पूछे। अतः तपस्वी ने उन्हें नगर पर अधिकार करने के लिये प्रथम यक्ष से मिलने को कहा।

तपस्वी को नमस्कार कर दसों भाई यक्ष के पास आये और द्वारावती पर अधिकार करने की समस्त विधि उससे ज्ञात कर एक रात नगर में घुस गये तथा राजा को मारकर उस पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार उन्होंने जम्बू द्वीप के त्रेसठ हजार नगरों के समस्त राजाओं को चक्र से मारकर द्वारावती में रहते हुए राज्य को दस हिस्सों में बाँट लिया। (इसके पश्चात् की शेष कथा भी पुराण प्रचलित कथा से मिलती-जुलती आगे बढ़ती जाती है।)[1]

वासुदेव कृष्ण की कथा का यह विकसित रूप सिद्ध करता है कि घत-जातक की यह कथा लोककथा के रूप में रामायण तथा महाभारत काल तक

---

१. सम्पूर्ण कथा के लिए देखिये—"घत जातक" (जातक, भाग ५), अनुवादक : भदन्त आनन्द कौशल्यायन।

अवश्य प्रचलित हो गई थी। इस कथा के लोक प्रचलित होने की पुष्टि इससे भी होती है कि इस कथा का उल्लेख कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में भी हुआ है, जहाँ वृष्णिकुल के स्थान पर वृष्णियों के किसी संघ की चर्चा की गई है तथा जिसमें कहा गया है कि "………वृष्णि संघ वाले द्वैपायन के विरुद्ध चेष्टा करने से विनष्ट हो गये।"[१]

कालान्तर में इस कथा के कई रूपान्तर समय-समय पर हुए होंगे और इनमें से जो जिसे मिला, उसका उपयोग उसने अपनी रुचि और दृष्टि से किया। साथ ही कृष्ण की जो कथा आज हमें मिलती है उसमें पूर्व के विविध कृष्णों के वृत्तों का भी आधार दिखाई पड़ता है। ऋग्वेद के ८वें मंडल के ९६वें सूक्त में असुर कृष्ण एवं उसके १०,००० अनुयायियों का उल्लेख है जो अंशुमती नदी के किनारे इन्द्र से लड़ा था। यह लुटेरा होने के साथ-साथ आर्य विरोधी भी था। छांदोग्य उपनिषद्[२] मे घोर आंगिरस के शिष्य देवकी पुत्र कृष्ण का उल्लेख है, जिसके विषय में कहा गया है कि गुरु ने उन्हें ऐसा मन्त्र दिया कि उन्हें फिर ज्ञान की पिपासा नहीं हुई तथा उन्हें यज्ञ की ऐसी सरल रीति बताई कि जिसकी दक्षिणा—तप, दान, आर्णव, अहिंसा और सत्य थी। वैदिक कृष्ण के व्यक्तित्व के साथ अहिंसा, सत्य आदि का सम्बन्ध होना उन्हें गीता के उपदेष्टा और भागवत धर्म के पूज्य कृष्ण के अत्यन्त निकट ले जाता है। एक अन्य वैदिक मन्त्र में ५०,००० कृष्णों का उल्लेख है, ये सभी इन्द्र द्वारा मार डाले गये थे। इनकी गर्भवती स्त्रियों तक को नहीं छोड़ा गया था, क्योंकि यह अभीष्ट था कि इनका वंश समूल नष्ट हो जाये। इस वर्णन का संकेत उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश में हुए श्वेत वर्ण आदिम आर्यों और कृष्ण वर्ण अनार्यों के युद्ध की ओर है। महाभारत से कृष्ण के ऐतिहासिक व्यक्तित्व की सूचना मिलती है कि वे प्रारम्भ में मूलतः शूरसेन प्रदेशीय वृष्णि-वंशी सात्वत जातीय, पशु-पालक आभीरों के कुलदेव थे, जिनके क्रीड़ा कौतुक की कथायें मौखिक रूप में लोक प्रचलित थीं।

इस प्रकार वर्तमान कृष्ण कथा में कृष्ण इन्द्र विरोधी हैं। कृष्ण आश्रम के अंतेवासी हैं। सांदीपन के यहाँ वे देवकी पुत्र हैं। कृष्ण दस्यु है, दस हजार उनके अनुयायी हैं जिसका रूपान्तर बौद्ध घत-जातक में है। कृष्ण यहाँ दस्यु हैं, वे राजा कंस के लिए आती हुई भेंट को लूट लेते हैं। दस हजार उनके अनुयायियों की संख्या उनके दस दुष्ट भाइयों के रूप मे रह गई है। कृष्ण

१. **"दि अर्थशास्त्र ऑफ़ कौटिल्य"**—शामा शास्त्री, पृ० १२-१३।
२. **छांदोग्य उपनिषद्** : ३।१७।४-६

द्वैपायन ऋषि की भविष्यवाणी के अनुसार कृष्णों का नाश दुर्वाशा के शाप से यादव वंश के समूल नाश का ही पूर्व रूप है। लेकिन एक बात यहाँ ध्यान देने की अवश्य है कि सम्भवतः महाभारत या पुराणों ने कृष्ण के जिस चरित्र को विकसित किया है वह ऐतिहासिक वासुदेव कृष्ण से भिन्न है। इसी कारण उन्हें बार-बार यह बताने की आवश्यकता हुई कि यही कृष्ण वासुदेव कृष्ण हैं, यही द्वितीय वासुदेव हैं, क्योंकि महाभारत और पुराणों में कृष्ण द्वारा करुष देश के चेदि वंशीय राजा पौंड्रक वासुदेव 'पुरुषोत्तम' और करवीरपुर के राजा शृगाल को मार कर अपना एकमात्र वासुदेवत्व प्रमाणित करने का उल्लेख है। हरिवंश तथा अन्य पुराणों में कृष्ण के राजसी वैभव-विलास का ऐश्वर्यपूर्ण जो चित्रण मिलता है वह लोक प्रचलित 'महाउमग्ग जातक' के उस कथा संकेत की पुष्टि करता है, जिसमें कहा गया है :

आत्थि जम्बावती नाम माता सिब्बिस्स राजिनो,
सा भारिया वासुदेवस्स कण्हस्स महेसी सिया।

अर्थात्—सिवि राजा की माता जम्बावती नाम की (चण्डालिनी) है। वह कृष्णायन (गोत्र) के (दस भइयों में वड़े भाई) वासुदेव की प्रिय भार्या हुई।[1]

लोक-गाथाओं में इतिहास का जो पुट मिलता है, वह सब लोकवार्ता का ही सहायक है, जो अपनी ऐतिहासिकता खो बैठा है। उदाहरण के लिये सूर के कृष्ण-चरित्र और तुलसीदास के राम-चरित्र को ही लिया जा सकता है, जो धर्म के माध्यम बने। पर वे लोकवार्ता से परिपूर्ण भी हो गये। कृष्ण और राम के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों और उनके आदर्श पर भारतीय विद्वानों में जो चर्चा चलती रही, उससे यह भले ही न कहा जा सके कि राम और कृष्ण मात्र, काल्पनिक व्यक्तित्व हैं, पर इतना तो निःसंकोच कहा जा सकता है कि इनकी कथाओं में सामयिक आवश्यकताओं तथा लोकवार्ताओं के प्रभाव से अनेक परिवर्तन हुए हैं, और अब उनके कृत्यों में जो आद्भुत्य है वह बहुत कुछ लोकवार्ता की देन है।

पुनः लोक कथाओं में, विशेषकर ब्रज और बुन्देली में यद्यपि अनेक देवी-देवताओं का उल्लेख हुआ है परन्तु एक बात अत्यन्त उभर कर आती है कि किसी भी कथा में कृष्ण या कृष्ण-कथा नहीं आती हैं। हाँ, बुन्देलखंड से प्राप्त होने वाली सन्तान सप्तमी व्रत की कथा में कृष्ण स्वयं धर्मराज युधिष्ठिर से अपने जन्म के पूर्व का वर्णन परोक्ष रूप में करते हुए कहते हैं—मेरे जन्म लेने से पहले एक बार मथुरा में ऋषि लोमश जी आये थे। मेरे माता पिता ने

१. जातक : खंड ६, पृ० ४६३।

उनकी जब विधिवत् पूजा एवं प्रार्थना की, तब लोमश जी ने उनके हृदय में व्याप्त पुत्र क्षोभ को ज्ञात कर उनसे भी संतान सप्तमी व्रत के माहात्म्य को समझाते हुए कहा था—"हे देवकी मैं जानता हूँ कि कंस ने तुम्हारे कई पुत्रों को जमते ही मार डाला है, इस कारण तुम पुत्र शोक से दुःखी रहती हो। अतः इस दुःख से मुक्ति पाने के लिये तुम अब संतान सप्तमी व्रत का पालन करो। यह पुत्र शोक से तुम्हें मुक्त करेगा। इस प्रकार हे युधिष्ठिर इस व्रत के विधिवत् पालन करने से मैंने देवकी के गर्भ से जन्म लिया।"

इस तरह लोक कथाओं में देवी-देवताओं का वह दिव्य एवं ओज-पूर्ण रूप नहीं मिलता जो धर्मगाथाओं में दिया हुआ है। परन्तु उनके कार्यों में विलक्षणता तो है, वे अपने व्यक्तित्व में बहुत ही साधारण व्यक्ति के रूप में आये हैं। इसी प्रसंग में यह भी उल्लेखनीय है कि विद्वानों के एक सम्प्रदाय ने धर्मगाथाओं के अन्तर्गत कृष्ण लीला के कुछ विशिष्ट अंशों को सूर्य, चंद्र, तूफान जैसे किसी प्राकृतिक व्यापार का रूपक सिद्ध किया है। ऐसे विद्वानों में भारतीय विद्वान् डा० उदयनारायण सिंह और श्री त्रिवेणी प्रसाद सिंह भी हैं जो कृष्ण लीला को वेदांग ज्योतिष के अनुसार आकाश स्थित राशिचक्र में सूर्यदेव का एक वर्ष का परिभ्रमण मानते हैं। डा० सिंह 'आर्य भटीयम्' की भूमिका में लिखते हैं—"श्रीकृष्ण नाम से कोई व्यक्ति अवतीर्ण हुए, जब यह स्वीकार्य कर लिया गया और वे अवतार कहकर माने भी गये, तब उनके जीवन के साथ विष्णु या सूर्य (वेद में विष्णु और सूर्य एक ही माने गये हैं) की लीला मिश्रित कर देना असम्भव नहीं।........चाहे जिस भाव से देखा जाये, श्रीकृष्ण की बाल्य लीला को ऐतिहासिक कहकर मानना बहुत कठिन है, क्योंकि बाल-लीला में नाना प्रकार के आध्यात्मिक वर्णन भी हैं।"

डा० सिंह इस प्रकार राधा जन्म, कृष्ण जन्म, पूतना बध, शकट भंजन यमलार्जुन उद्धार, वक्र वध, कालिय दमन, चीरहरण और रास लीला की कथाओं को वेदांग ज्योतिष के अनुसार सूर्य लीला के ही अंश मानते हैं। अपने इसी मत की पुष्टि में कि अदिति नंदन 'आदित्य देव' और देवकी नन्दन 'कृष्ण' एक ही हैं, वे कहते हैं—'क्या हरिवंशकार और ब्रह्मवैवर्तकार ने क्रमशः कहा नहीं है—'अदितिर्देवकी ह्यभूत' और 'देवमाता च देवकी'; अर्थात अदिति ही देवकी और आदित्य देव ही देवकी नन्दन हैं।'[1]

पुनः पौराणिक रूपक के अनुसार कृष्ण की दो लीलायें—पूतना वध

---

१. देखिये प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के लेखक का लेख 'कृष्ण की ब्रजलीला वस्तुतः सूर्य लीला है' [सरस्वती (मासिक), अक्टूबर १९६३]।

और कालिय दमन लीला, क्रमशः इस प्रकार श्री त्रिवेणी प्रसाद सिंह ने स्पष्ट की हैं :—

पूतना का दुग्धपान इन्द्र द्वारा मेघों का दोहन है तथा मरी हुई पूतना का विशाल शरीर इन्द्र द्वारा मारे गये वृत्र का जल रूपी विशाल शरीर है जो पृथ्वी पर फैल जाता है। इसी प्रकार कालिय-दमन स्पष्ट ही इन्द्र द्वारा सर्पाकार जल निवासी 'अहि' वृत्र का वध है, जिसे मारने के कारण इन्द्र अहि-गोपा अर्थात् अहि से रक्षा करने वाले कहलाये।[1]

जहाँ तक हिन्दू पुराणों के अन्तर्गत हरिवंश, विष्णु, भागवत एवं ब्रह्म-वैवर्त आदि पुराणों का सम्बन्ध है, इन पुराणों में कृष्ण की कथा को अधि-काधिक महत्व मिला है। परन्तु इनमें भी भागवत की कथा ही सबसे विस्तृत और सांगोपांग तथा व्यवस्थित कही जा सकती है। इन रचनाओं से ऐसा प्रतीत होता है कि कृष्ण की कथा इनके रचना काल में मौलिक रूप में लोक में प्रचलित थी जिसका पुराणों में धार्मिक रूपक की भाँति उपयोग होने लगा तथा जो क्रमशः बढ़ता चला गया और नये-नये कवियों की कल्पना समय-समय पर उनमें नये-नये प्रसंग और संदर्भ जोड़ती गई। यद्यपि प्राचीन पुराणों में केवल भागवत में ही गोपाल कृष्ण की जन्म से लेकर द्वारिका प्रवास तक की कथा सम्यक् रूप से वर्णित की गई है; और साथ ही जिसमें कृष्ण के ऐश्वर्य और माधुर्य रूपों का भी अद्भुत मिश्रण हुआ है। परन्तु इतना होने पर भी यह उल्लेखनीय है कि इसमें राधा का नामोल्लेख तक नहीं हुआ है। यद्यपि इसकी रचना के पूर्व लोक साहित्य (लोकगीत और लोक कथाओं) में कृष्ण के अनेक आख्यान चलते रहे होंगे, यह बात मध्यकाल में निर्मित देश भाषा काव्य से भली-भाँति प्रमाणित होती है।

संस्कृत में राधा-कृष्ण सम्बन्धी प्रथम एवं व्यवस्थित काव्य रचना जयदेव का 'गीत गोविन्द' है (रचना काल ११६३ ई० के आस-पास), जो भक्ति और शृंगार का अनुपम माधुर्य मंडित गीति काव्य है। अनुमान है कि कवि को इसकी रचना की प्रेरणा राधा-कृष्ण सम्बन्धी लोकगीतों तथा लोक प्रचलित आख्यानों से ही मिली होगी। इसी लोक परम्परा की देश भाषा में सबसे पहली साहित्यिक अभिव्यक्ति १४-१५वीं शताब्दी में विद्यापति के मैथिल पदों में हुई, जिसने राधा-कृष्ण की प्रेमलीला को लोक साहित्य से उठाकर जन भाषा के शिष्ट साहित्य के पद पर प्रतिष्ठित किया। परन्तु महाभारत और पुराणों में वर्णित कृष्ण कथा का ऐश्वर्य और पराक्रमपूर्ण चरित ललित

---

१. **हिन्दू धार्मिक कथाओं के भौतिक अर्थ**—श्री त्रिवेणीप्रसाद सिंह, पृ० १०४।

साहित्य का विषय नहीं बन सका। कदाचित् इसका कारण यह है कि कृष्ण की मधुर और ललित कथायें ही लोकगीतों और लोककथाओं के माध्यम से अधिक प्रचलित थीं और वही लोक मानस को अधिक मुग्ध करती रही थीं।

जहाँ तक हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य का सम्बन्ध है, उसका साहित्य भागवत या ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि किसी भी पुराण में वर्णित कृष्ण-कथा की लीलाओं में बँधा नहीं है। उसने अपनी भावना की पोषक सामग्री लेने में पुराणों की अपेक्षा लोक साहित्य से कहीं अधिक स्वच्छन्दता पूर्वक सामग्री ग्रहण की है। फिर स्वयं कृष्ण भक्त कवियों की उर्वर कल्पना शक्ति भी नये-नये प्रसगों की उद्‌भावना करने में कदाचित् लोक मानस से पीछे नहीं रही है, जिसके फलस्वरूप सूरसागर में ही पनघट लीला, दान लीला, हिंडोला और फाग लीला जैसे अनेक नवीन कथा प्रसंगों की उद्‌भावना हुई है, जिनका सूर पूर्व कृष्ण साहित्य में सम्भवतः उल्लेख तक नहीं।

८

अभिप्रायों का अध्ययन
और
उनकी परम्परा की स्थापना

भारतीय कथा साहित्य के समस्त स्रोतों का मूल स्रोत लोकवार्ता में ही विदित होता है। अतः प्रत्येक अभिप्राय का जन्म लोक क्षेत्र में ही हुआ था और वे अभिप्राय अथवा कथानक रूढ़ियाँ अपने स्वभाव के अन्दर भी लोक मानस का तत्त्व छिपाये हुए हैं।[1]

भारतीय साहित्य में जितने भी अभिप्राय मिलते हैं, वे सभी प्रधानतया दो प्रकार के हैं : एक लोक विश्वास पर आधारित, और दूसरे कवि कल्पित। परन्तु जहाँ तक कृष्ण कथा सम्बन्धी लोकगीतों में अभिप्रायों के मिलने का प्रश्न है, वहाँ यह स्पष्ट है कि इनमें बहुत कम अभिप्रायों को स्थान मिल सका है, क्योंकि लोकगीत मूलतः भाव प्रधान मुक्तक गीत हैं। फिर भी यत्र-तत्र जो अभिप्राय स्वयमेव आ गये हैं, उनकी हिन्दी साहित्य में परम्परा खोजने का यहाँ किंचित् प्रयास किया गया है।

(१) **अपने प्रिय पात्र अथवा वस्तु का किसी अन्य में साम्य देखकर पूर्व स्मृतियों का उदय एवं उसके प्रति आदर भावना**—यह अभिप्राय भारतीय कथा साहित्य में बड़ा ही व्यापक है। प्रायः किसी प्रिय भोज्य

---

१. **मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोकतात्त्विक अध्ययन**—डा० सत्येन्द्र, पृ० ४८०।

पदार्थ को खाते समय या अचानक किसी पदार्थ विशेष को देखकर उस वस्तु विशेष से सम्बन्धित कुछ व्यक्ति या विस्मृति के गर्त में दबी हुई कुछ प्राचीन परन्तु कोमल स्मृतियाँ जाग उठती है। फलस्वरूप वह व्यक्ति भाव विभोर हो पूर्व परिचितों या सम्बन्धियों से कभी-कभी मिलने के लिये व्यग्र हो उठता है। कभी-कभी नायक या नायिका को भी उनकी प्रिय वस्तुएँ दिखाकर उनकी पूर्व स्मृतियों को जाग्रत करने का प्रयत्न किया जाता है। इसी अभिप्राय का उपयोग बुन्देली गीत : १५३ में भी स्वयमेव हो गया है, जिसमें गोपियाँ उद्धव द्वारा मथुरावासी कृष्ण को अपनी याद दिलाने के लिये उनकी बचपन की प्रिय वस्तुओं को उन्हें दिखाने की प्रार्थना करती हैं। यही अभिप्राय ब्रज गीत : २१५ में भी एक अन्य रूप में आया है, जहाँ रुक्मिणी काली घटा को श्याम के अनुरूप मानकर नित्य उसे प्रणाम करती है।

(२) अभिभावक द्वारा कन्या का विवाह किसी व्यक्ति के साथ निश्चित करना किन्तु कन्या का उसे न चाहना, फलस्वरूप नायिका द्वारा नायक को संदेश भेजना, नायक का नायिका के उक्त सम्बन्ध में बँधने से किंचित् पूर्व ही उसका अपहरण करना—इस प्रकार की कथारूढ़ि का उल्लेख 'पृथ्वीराज रासो' के अन्तर्गत पृथ्वीराज शशिव्रता विवाह के अन्तर्गत मिलता है। शशिव्रता के रूप सौंदर्य का वर्णन पृथ्वीराज एक नट के मुख से सुनता है। नट से ही पृथ्वीराज को यह भी पता चलता है कि कन्नौज के राजा जयचन्द के भतीजे के साथ शशि-व्रता का विवाह होना निश्चित् हुआ है, किन्तु कन्या उसे नहीं चाहती है। यही अभिप्राय (ब्रज गीत : २१८ में) कृष्ण रुक्मिणी विवाह प्रसंग में भी घटित होता है, जहाँ एक ओर रुक्मिणी के पिता एवं भाई उसका विवाह शिशुपाल से करने के लिये प्रयत्नशील है, वहीं दूसरी ओर रुक्मिणी द्वारिकावासी कृष्ण के पास संदेश-भेजती है कि वह कुंडिनपुर आकर शिशुपाल के हाथों पड़ने से उसे बचा लें। कृष्ण कुंडिनपुर आते हैं और विवाह के कुछ पूर्व ही रुक्मिणी को हर ले जाते हैं।

(३) आकस्मिक आपत्ति से बचने या लोगों को आश्चर्यान्वित करने के लिये नायक द्वारा रूप अथवा लिंग परिवर्तन—इस भारतीय अभिप्राय का प्रयोग कृष्ण की माखन चोरी लीला के अन्तर्गत कई बार देखने को मिलता है, जहाँ कृष्ण गोपियों द्वारा माता यशोदा के पास पकड़ कर लाये जाने पर तथा उनके उलाहनों को असत्य प्रमाणित करने के लिये कभी शिशु रूप धारण कर भूला भूलने लगते हैं तो कभी लड़की का रूप धारण कर गोपियों को आश्चर्य चकित कर देते हैं।—(बुन्देली : २२; ब्रज : २८)

(४) **ईश्वर का अवतार लेने के लिये ज्योति के रूप में अपनी भावी माता के गर्भ में प्रवेश करना**—इस अभिप्राय का उल्लेख प्रायः ईश्वर के पृथ्वी पर अवतार लेने की कथा में मिलता है। भगवान् बुद्ध के जन्म लेने के पूर्व ही उनकी माता ने स्वप्न में देखा था कि आकाश से एक ज्योति पुंज आई और उनके गर्भ में प्रविष्ट हो गई। ऐसे ही अभिप्राय का उल्लेख बुन्देली गीत : २ में हुआ है, जहाँ आकाश से एक ज्योति उतर कर देवकी के उदर में प्रविष्ट कर जाती है जिसके पश्चात् कृष्ण का जन्म होता है।

(५) **ईश्वरीय लीला देखने के लिये देवताओं का पृथ्वी पर आना या लालायित होना**—इस अभिप्राय का प्रयोग पुराणों में बहुधा देखने को मिलता है और संभवतः इसी के परिणाम स्वरूप इस अभिप्राय का उपयोग लोकगीतों में भी हो गया है। उदाहरण स्वरूप बुन्देली गीत : १२२ को लिया जा सकता हैं, जिसमें कृष्ण की फाग लीला में सम्मिलित होने के लिए समस्त देवगण पृथ्वी पर आते हैं और होली के रंग में रंग कर वापस जाते हैं।

(६) **छद्म वेश धारण कर प्रेमी नायक या खलनायक का नायिका के पास जाना अर्थात् चौर्य प्रेम**—रामचरितमानस में या यों कहें कि राम-कथा में रावण छद्मवेश में सीता के पास भिक्षा माँगने आता है और राम लक्ष्मण की अनुपस्थिति में उन्हें ले जाता है। इसी से मिलता-जुलता अभिप्राय लोकगीतों में भी कई बार आया है, जहाँ नायक या प्रेमी प्रेमाधिक्य के कारण या नायिका को छलने के लिये छद्म रूप धारण कर उससे मिलने जाता है। ऐसा ही उल्लेख कृष्ण के विषय में भी मिलता है जहाँ वह विविध छद्मवेश धारण कर नायिका राधा से मिलने उसके गाँव जाते हैं।—(ब्रज : १००, १०४)

(७) **जल में गिरकर नागलोक में जाना**—इस तरह का अभिप्राय महाभारत में भी आया है, जहाँ भीम से विकल होकर कौरवों ने उन्हें विष खिलाकर गंगा में डाल दिया था, जिसके परिणाम स्वरूप भीम नाग लोक में जा पहुँचे थे, और वहाँ जगने पर सर्पों को खूब मारा था। ऐसे ही अभिप्राय का उल्लेख कृष्ण कथा के उन गीतों में भी हुआ है जहाँ कृष्ण यमुना में कूदकर नाग लोक जा पहुचते हैं और वहाँ कालिय नाग को नाथ कर ऊपर आ जाते हैं।—(ब्रज : ४६, ४७)

(८) **दासी का नायक या राजा से प्रेम**—लोक कथाओं एवं लोक गाथाओं की भाँति कृष्ण कथा सम्बन्धी लोकगीतों में भी इस कथानक रूढ़ि का उल्लेख मिलता है, जहाँ कंस की दासी कुब्जा कृष्ण के स्नेह और प्रेम की अधिकारिणी बनती है।—(ब्रज : १८९)

(९) नायक या नायिका के आगमन से सूखे वन, बाग आदि का हरा-भरा हो जाना—यह भारतीय अभिप्राय मुनि कनकामर द्वारा रचित 'करकंडु-चरित' में भी मिलता है जहाँ रानी के पहुँचते ही सूखा बाग लहलहा उठता है। ऐसे ही अभिप्राय का उपयोग स्वयमेव ब्रज के विवाह गीत : २३१, २३२ में भी हो गया है। जहाँ और जिस ओर भी दूल्हा कृष्ण जाते हैं वहीं मार्ग में पड़ने वाले सूखे बाग हरे-भरे हो जाते है और निर्जल कुँआ शीतल जल से भर जाता है।

(१०) नायक द्वारा मत्त गज को वश में किया जाना—वीर कवि द्वारा रचित 'जम्बुसामि चरिउ' में एक स्थल पर उल्लेख हुआ है कि नायक ने मत्त गज को वश में कर लिया। ऐसे ही कृष्ण ने कंस के दो मतवाले हाथियों में से एक को वश में करके मार डाला था।—(बुन्देली : १३८)

(११) नायक या नायिका का एक-दूसरे की ओर उनके रूप-गुण श्रवण द्वारा आकृष्ट होना—इस मनोवैज्ञानिक अभिप्राय का उपयोग 'पृथ्वीराज रासो' में पद्मावती, शशिव्रता और संयोगिता—तीनों के विवाहों में कवि ने पूर्वानुराग के रूप में स्वीकार किया है। शुक के मुख से पृथ्वीराज के रूप और गुण की प्रशंसा सुनकर पद्मावती उनके प्रति आकृष्ट होती है। संयोगिता और पृथ्वीराज का भी एक-दूसरे की ओर आकर्षण शुक-शुकी के मुख से एक-दूसरे का रूप-गुण सुनकर ही होता है। इसी तरह कथासरित्सागर की भी कई कहानियों में नायक-नायिका एक-दूसरे का रूप-गुण सुनकर आकृष्ट होते हैं और तदनुसार प्राप्ति का उद्योग करते हैं। यथा—कथासरित्सागर का नायक नरवाहनदत्त एक तापसी के मुख से समुद्र पार कर्पूरसम्भव देश की कन्या कर्पूरिका का रूप-गुण वर्णन सुनकर उसकी ओर आकृष्ट होता है और अपने मित्र गोमुख के साथ नायिका की खोज में निकल पड़ता है। यही रुक्मिणी के कृष्ण के प्रति होने वाले आकर्षणजन्य प्रेम के सम्बन्ध में भी कहा जा सकता है।—(ब्रज : २१५)

(१२) निर्जन स्थान में नायक का किसी रूपसि को देखकर उसकी ओर आकृष्ट होना तथा कालान्तर में उन दोनों में प्रेम या विवाह—इस लोक प्रचलित अभिप्राय को स्पष्ट करने के लिए राम और सीता, शकुन्तला और दुष्यन्त, पुरुरवा और उर्वशी, तथा चतुर्भुज दास की 'मधुमालती' में मधुमालती और मनोहर के प्रथम दर्शन में आकर्षण और पुनः उनमें प्रेम या विवाह हो जाने की बात कही जा सकती है। कृष्ण-कथा में भी ऐसा ही हुआ है, जहाँ कृष्ण यमुना तट पर एक दिन एकान्त में राधा को देखते हैं और उसकी ओर

आकृष्ट हो उससे उसका परिचय प्राप्त करने लगते हैं। यही परिचय धीरे-धीरे दोनों को अन्त में प्रणय-सूत्र में आबद्ध कर देता है।—(बुन्देली : ३४)

(१३) **निर्धन व्यक्ति का चमत्कारिक ढंग से धनी किया जाना**—'अति-प्राकृत दृश्य द्वारा लक्ष्मी प्राप्ति' के समान ही 'वरदानादि' द्वारा अथवा पशु-पक्षियों द्वारा धन प्राप्ति सम्बन्धी एक अत्यन्त प्रचलित अभिप्राय है। प्रायः कथाओं में निर्धन व्यक्ति अलौकिक ढंग से धन प्राप्त करते हैं। कभी-कभी सम्पन्न व्यक्तियों को भी इस प्रकार सुवर्णादि की प्राप्ति होती हैं।

निर्धन सुदामा को कृष्ण ने चमत्कारिक ढंग से ही ऐश्वर्य सम्पन्न किया था। जिसका उल्लेख पुराणों के साथ-साथ लोकगीतों की कृष्ण-कथा में भी मिलता है।—(ब्रज : २२५; बुन्देली : १६०)

(१४) **पक्षियों द्वारा संवाद भेजना अथवा मँगाना**—भारतीय साहित्य में मानवेतर प्राणियों द्वारा विरही या विरहिणी का अपने प्रिया या प्रिय के पास संदेश भेजने या मँगाने का उल्लेख बहुत प्राचीन काल से मिलता चला आ रहा है। महाकवि कालिदास के काव्य 'मेघदूत' में यक्ष मेघ को ही अपना दूत बनाकर अपनी प्रिया के पास अलकापुरी सन्देश भेजता है। वेदान्त देशिक के 'हसदूत' में हंस सीता के पास राम का सन्देश ले जाता है। इसी प्रकार रूप गोस्वामी के 'हंसदूत' में हंस राधा का प्रणय सन्देश कृष्ण के पास ले जाता है। जायसी के 'पद्मावत' में विरहिणी नागमती हंस और कौए से प्रिय रत्नसेन के पास सन्देश ले जाने की प्रार्थना करती है। नूर मुहम्मद की 'इन्द्रावती' में सुवा राजकुंवर के बंदी होने का समाचार इन्द्रावती के पास ले जाता है। इसी प्रकार शेख़ रहीम के 'भाषा प्रेमरस' में भी पक्षी ने ही सहपाल गुरु को प्रेमा की माँ के वन में रुदन करने का समाचार दिया है। इसी कोटि का एक अभिप्राय बुन्देली गीत : १७६ में भी द्रष्टव्य है, जहाँ राधा प्रियतम द्वारा पाले गये पर्वत्ता सुआ को संदेशवाहक बनाकर परदेश वासी कृष्ण के पास अपना विरहपूर्ण समाचार भेजतीं हैं।

(१५) **पशु-पक्षी विशेष के बोलने से भावी शुभ-अशुभ अथवा आपत्ति की सूचना**—कई लोक-कथाओं में भावी आपत्ति की सूचना और उसके निवारण का उपाय भी बताया गया है। प्रायः यह सूचना तोते के द्वारा या अन्य किसी पक्षी द्वारा हमें मिलती है। 'कथा सरित्सागर' में भी यह अभिप्राय मिलता है। और यही बुन्देली गीत : १७८ में भी आया है जहाँ प्रातः ही मुडेरे पर कौआ के बोलने से तुलसा किसी प्रिय व्यक्ति के आगमन या किसी नवीन घटना के घटित होने की कल्पना करतीं हैं।

(१६) पशु-पक्षियों का मानव के साथ वार्त्तालाप एवं उनके प्रश्नों का उत्तर देना—भारतीय लोक कथाओं के साथ-साथ इस अभिप्राय का हिन्दी प्रेमाख्यानों में भी यत्र-तत्र उपयोग किया गया है। पद्मावत में हीरामन तोता पूर्ण पंडित ही है। इसी प्रकार का अभिप्राय बुन्देली गीत: १७८ में मिलता है, जहाँ तोता कृष्ण को उनकी पत्नी राधा की विरहावस्था का समाचार देता है।

(१७) पहुँचे हुए सिद्धों के चमत्कार—अन्य अभिप्रायों की भाँति इस अभिप्राय का भी भारतीय लोक कथाओं में बहुलता से उपयोग किया गया है। उदाहरण स्वरूप हिन्दी प्रेमगाथा के अन्तर्गत यूसुफ जुलेखा को नबी याकूब ने आशीर्वाद देकर जुलेखा को युवती बना दिया था। 'ढोला मारू रा दूहा' में योगिनी के अनुरोध पर योगी ने अभिमन्त्रित जल छिड़क कर मारवणी को जीवित कर दिया था। इसी प्रकार बालयोगी शिव ने अपना हाथ रोते-मचलते हुए कृष्ण के ऊपर फेरकर उन्हें तत्काल चुप कर दिया था।—(ब्रज : १६)

(१८) प्रिय-प्राप्ति के लिए शिव-पार्वती पूजन—अन्य अभिप्रायों की तरह प्रिय अथवा प्रिया की प्राप्ति के लिये शिव-पार्वती पूजन और उनके द्वारा मनोरथ-सिद्धि का वरदान भारतीय साहित्य का बहुत पुराना और चिरपरिचित अभिप्राय है। प्रिय-प्राप्ति के लिये शिव-पार्वती पूजन का अभिप्राय शशिव्रत के विवाह के प्रसंग में आवा है। 'रामचरितमानस' में सीता जी भी गौरी पूजन के लिए जाती हैं और 'लीलावई कहा' में भानुमती भी प्रिय की प्राप्ति के लिए भवानी की आराधना करती है। इसी प्रकार कृष्ण-कथा के अन्तर्गत रुक्मिणी भी देवी मन्दिर में कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिए पूजा करने जाती हैं।—(ब्रज : २१८)

(१९) प्रिय वियोग में पूर्व स्मृतियों का उदय—यह तत्त्व बड़ा ही प्रमुख और सर्वज्ञात है। माताएँ पुत्र वियोग और पत्नी पति विछोह दुःख में जब डूब जाती हैं तो प्रायः संयोग सुख की सुखद स्मृतियाँ करवटें लेने लगती हैं और फिर वे उन बीती हुई बातों की याद में अपनी मनःस्थिति खो बैठती हैं। ऐसे अवसरों पर उन्हें विक्षिप्त की संज्ञा देना ही उचित प्रतीत होता है। कृष्ण कथा सम्बन्धी ब्रज और बुन्देली के उन गीतों में, जिनमें विरहिणी राधा या यशोदा को कृष्ण की पूर्व-स्मृतियाँ जाग्रत होकर और भी अधिक व्यथित करती हैं, इसके लिए उदाहरण स्वरूप उपस्थित की जा सकती हैं।

—(ब्रज : १९९; बुन्देली : १२०, १४०)

(२०) बाँसुरी के प्रभाव से नृत्य या किसी को अपने वश में करना—लोक-कथाओं में ऐसी बाँसुरी प्रायः साधू, जिन्न अथवा सिद्ध-योगी या महात्मा

के पास ही होती है, जिसके बजाने से सुनने वाले मन्त्र-मुग्ध हो नाच उठते हैं। ऐसी ही एक बाँसुरी कृष्ण के पास थी, जिसके बजाने से गोपियाँ गृह कार्य छोड़कर कृष्ण के दर्शन के लिए विकल हो उठती थीं; और यहाँ तक कि एक बार राजा इन्द्र भी यमुना तट पर कृष्ण के वंशी वादन को सुनने के लिए लालायित हो उठे थे।—(बुन्देली : ४६)

(२१) **मन्दिर में पूजा के लिए आई हुई कन्या का आत्महत्या करने की धमकी देना तथा नायक द्वारा उसका अपहरण**—प्रेम सम्बन्धी यह एक प्राचीन भारतीय अभिप्राय है जो महाभारत से ही प्रयुक्त होता आ रहा हैं। यह कन्या-हरण का अभिप्राय रासोकार को इतना प्रिय है कि पद्मावती, शशिव्रता एवं संयोगिता--तीनों के विवाहों के प्रसंग में उसने इसका उपयोग किया है। पद्मावती शिवालय में मिलने की पूर्व सूचना पृथ्वीराज के पास भेज देती है। फलस्वरूप पूर्व सूचना के अनुसार तैयार पृथ्वीराज मन्दिर से बाहर निकलते ही पद्मावती को घोड़े पर बिठाकर दिल्ली की ओर चला देता है। यादवराज विजयपाल को सूचना मिलती है, युद्ध होता है और युद्धों में यादवराज पराजित हो जाता है। दूसरी ओर शशिव्रता स्वयं तो हरण किये जाने का प्रस्ताव नहीं रखती, किन्तु जयचन्द के भतीजे से विवाह किये जाने पर आत्महत्या कर लेने की धमकी अवश्य देती है। ऐसी ही स्थिति रुक्मिणी की भी थी, जो देवी मन्दिर में आत्महत्या कर लेना चाहती है, लेकिन पूर्व सूचना के अनुसार जिसे कृष्ण वहाँ से उसे अपहरण कर द्वारिका चल देते हैं। सम्भवतः इसी आदर्श का रासोकार ने अनुकरण भी किया है।—(ब्रज : २१८)

(२२) **महापुरुषों के अवतार लेने पर आकाश से सुमन वृष्टि**—भारतीय पौराणिक साहित्य में प्रायः समस्त अवतारों के अवसर पर अथवा देवी-देवताओं के आकस्मिक रूप से प्रकट होने पर आकाश से सुमन वृष्टि हुई है। सम्भवतः इसी परम्परा के फलस्वरूप लोकगीतों में भी कृष्ण के जन्म लेने पर आकाश से देवगण फूलों की वर्षा करते हैं।—(बुन्देली : २)

(२३) **सद्यजात शिशु का किसी अन्य द्वारा पालन-पोषण**—यह लोक प्रचलित अभिप्राय भारत ही नहीं वरन् अन्य देशों में भी पाया जाता है। यूनानी पुराण में शिशु ज़ियस को उसकी माता रहीआ ने अपने क्रूर पति द्वारा मार डाले जाने के भय से क्रीट द्वीप की एक गुफा में छिपा दिया था, जहाँ अमलथिया नाम की एक बकरी ने उसका पालन किया था। यहाँ तो शिशु का मानवेतर प्राणी ने लालन-पालन किया। लेकिन भारतीय साहित्य में ऐसे कई उदाहरण मिलेंगे जहाँ नव-जात शिशु को मानव ने ही पाला है।

कुन्ती पुत्र कर्ण को जिसे कुन्ती ने कौमार्यावस्था में ही जन्म दिया था, धृतराष्ट्र के सूत दम्पति अधिरथ और राधा ने पाला-पोषा था। इसी प्रकार नवजात कन्या शकुन्तला को विश्वामित्र ने पाला था। यह अभिप्राय कृष्ण के सम्बन्ध में भी मिलता है, जहाँ उन्हें उनके माता-पिता वसुदेव देवकी ने न पालकर उनके मित्र नन्द और यशोदा ने पाला था।—(बुन्देली : १, ५)

(२४) **स्वप्न में प्रिय या प्रिया का दर्शन और उसके पश्चात् विरह**—स्वप्न में प्रिय या प्रिया को देखने का यह मनोवैज्ञानिक अभिप्राय भारतीय प्रेम कथाओं में प्रायः मिलता है। 'कनकावती' में परमरूप ने स्वप्न में अपनी प्रिया कनकावती को देखा था। जुलेखा ने यूसुफ को स्वप्न में देखा था। 'रसरतन' में सोमा ने रम्भा को स्वप्न में देखा था और 'ढोला मारू' में मारवणी ने स्वप्न में ढोला को देखा था, लेकिन आँख खुलने पर सभी विरह सन्तप्त हो उठे थे। इसी प्रकार कृष्ण वियोगिनी राधा के साथ-साथ गोपियों ने भी कृष्ण को स्वप्न में देखा, उनके साथ स्वप्न लोक में कुछ देर रहीं परन्तु आँख खुलने पर कहीं कुछ न पाकर विरहाकुल हो रो उठीं।

—(ब्रज : २०१, २०६; बुन्देली : १३५)

(२५) **स्त्रियों का पुरुषों द्वारा छले जाने पर उनसे छः महीने के लिए आन लेना**—स्त्रियाँ कभी छलबल से ऐसे व्यक्तियों के हाथ में पड़ जाती हैं जो उनके पति नहीं होते, लेकिन वे उन स्त्रियों से विवाह करने के लिए सदैव उत्सुक बने रहते हैं। ऐसी स्त्रियाँ ऐसे व्यक्तियों से छले जाने पर प्रायः छः महीने की अवधि के लिए आन ले लेती हैं कि वह उनकी बहिन और वह उनके भाई या वे एक-दूसरे के पति-पत्नी हुए। 'कथा सरित्सागर' के छठे लम्बक की २८वीं कथा 'राजकुमार और सौदागर के पुत्र की कहानी' में राजकुमारी छः महीने की अवधि माँगती है। ऐसी ही अवधि कृष्ण द्वारा छले जाने पर चन्द्रावलि भी उनसे माँगती है।—(बुन्देली : ८०)

उपसंहार

'कृष्ण' भारतीय वाङ्मय के ऐसे अभिप्राय हैं, जो अनेक नामों और रूपों में साहित्य में व्याप्त है और यह लोक मानस का ही प्रदान किया हुआ कई व्यक्तियों का सम्मिलित रूप है। अतः कृष्ण की कथा का लोकवार्ता से घनिष्ठ सम्बन्ध है।

महाभारत से कृष्ण के जिस ऐतिहासिक व्यक्तित्व की सूचना मिलती है, उससे विदित होता है कि आरम्भ में वे मूलतः शूरसेन प्रदेशीय, वृष्णि वंशी सात्वत जातीय पशु पालक आभीरों के कुलदेव थे, जिनके क्रीड़ा-कौतुक की मनोरंजक कथाएँ मौखिक रूप में लोक-प्रचलित थीं—जिसमें समय-समय पर सामाजिक आवश्यकताओं तथा लोकवार्ताओं के प्रभाव से अनेक परिबर्तन होते रहे हैं और अब उनके कृत्यों में जो आद्भुत्य है, वह बहुत-कुछ लोकवार्ता की देन है।

लेकिन इतना होते हुए भी ब्रज की लोक कथाओं में यद्यपि अनेक देवी देवताओं का उल्लेख हुआ है, पर एक बात अत्यन्त उभर कर आती है कि किसी भी कहानी में कृष्ण या कृष्ण-कथा नहीं आई है।[1] यही बुन्देली लोक कथाओं के बारे में भी कही जा सकती है। इसके साथ ही एक बात और उल्लेखनीय है कि महाभारत और पुराणों में वर्णित कृष्ण का ऐश्वर्य और

१. **ब्रजलोक साहित्य का अध्ययन**—डॉ० सत्येन्द्र, पृ० ६।

पराक्रमपूर्ण रूप ललित साहित्य का विषय नहीं बन सका। कदाचित् इसका कारण यह है कि कृष्ण की मधुर और लौकिक कथाएँ ही लोक साहित्य के माध्यम से अधिक प्रचलित थीं और वे ही लोक मानस को अधिक मुग्ध भी करती रही हैं। इसका स्पष्ट प्रमाण आज भी ब्रज और बुन्देली गीतों में पाई जाने वाली कृष्ण-कथा है, जिसमें रुक्मिणी हरण एवं कृष्ण रुक्मिणी विवाह; रुक्मिणी पुत्र (प्रद्युम्न) जन्म और सुदामा दारिद्रय भंजन के अतिरिक्त कृष्ण के ऐश्वर्य और पराक्रमपूर्ण चरित्र से सम्बन्धित कोई गीत नहीं मिलता।

इसी प्रसंग में यह भी उल्लेख कर देना असंगत न होगा कि एक ओर जहाँ महाभारत और पुराणों में कृष्ण के ऐश्वर्य और पराक्रमपूर्ण चरित्र को विस्तार मिला है, वहीं उनमें विष्णु के अवतार. कृष्ण-तुलसा के विवाह और उनके पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित कथा प्रसंगों का नितान्त अभाव है। हाँ, कुछ संकेत मात्र 'देवी भागवत् पुराण' के ९वें स्कंध में अवश्य मिलता है। लेकिन बुन्देली लोकगीतों में कृष्णन्तुलसा की कथा से सम्बन्धित अनेक गीत मिलते हैं जो कृष्ण-कथा में एक नवीन सूत्र जोड़ने में समर्थ होने के कारण उल्लेखनीय हैं।

जहाँ तक लोकगीतों की कृष्ण-कथा का सम्बन्ध है, वह श्रीमद्भागवत्, ब्रह्मवैवर्त आदि किसी भी पुराण में वर्णित कृष्ण-कथा की लीलाओं से बँधी नहीं है। उसको अपनी भावनाओं की पोषक सामग्री स्वयं लोक से ही समय-समय पर उद्भूत की गई नई कल्पनाओं और प्रसंगों से मिलती रही है, जिसने आगे चलकर हिन्दी कृष्ण भक्ति साहित्य को प्रेरणा और स्वरूप देने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

द्वितीय खण्ड

कथा क्रम से प्रस्तुत

गीत-संग्रह

लोकगीतों का वर्गीकरण

(क) ब्रज लोकगीत

१. **संस्कारों के गीत** : ३ से ११ तक, १३, १७, १६, २३, ३७, ३८, २२१, २२२, २२३, २२४।

२. **मंगल गीत या विवाह गीत** : ४१, ६०, २०६, २१६, २१८, २१६, २२०, २२६, २३०, २३१, २३२, २३३, २३५, २३६, २३७, २३८, २३६, २४३।

३. **व्रतों के गीत** : (i) देवी के गीत, (ii) न्यौरता और यमद्वीतिया का गीत : १८, ३३, ६०, १२४, १२६।

(iii) कार्तिक गीत : ३२, ३४, ३६, ४५, ४७, ५३, ५५, ५६, ५७, ५८, ५६, ६३, ७३, ८०, ८४, १००, १०४, १०६, १०७, १०८, ११३, १२०, १२५, १८६, १६१, १६६, १६६, २०४, २०५, २०७, २२६, २२७, २२८, २४२ अ।

४. **ऋतु या मासों के गीत** : (i) सावन गीत : २१, २२, ७६, ८४ अ, ८६, ११८, ११६, १२१, १३० से १४४ तक, १६५, १६७, १६८, २०२।

(ii) होली : ३०, ७८, ६६, १५१, १५२, १५३, १५७, १५८, १५६, १६०, १६२, १६५, १६६ से १८७ तक, १६३, १६४, २००, २१३, २३४, २४०, २४१।

(iii) रसिया : १२, २४, ४२, ४३, ४४, ४६, ४६, ६२, ८२, ८७, ६३, ६४, ६५, १०५, ११५, १२३, १५०, १५४, १५५, १५६, १६१, १६३, १६४, २०१, २०८, २१२।

५. **जातियों के गीत** : २१७, २४४, २४५, २४६।

६. **सायायिक या विविध गीत** : (i) ख्याल : ९, ७६, १०६।

(ii) बालकों के गीत : ३५, ३६, ६७।

(iii) नृत्य गीत : ६५ से ७१ तक, ११०, १२६।

(iv) भजन : २६, २६, ३१, ४०, ४८, ५०, ५१, ८३, ८५, १०१, १०२, १०३, १२२, १४७, १६०, १६२, २०३, २०६, २१०, २११, २१४, २१५, २२५, २४२।

(ख) बुन्देली लोकगीत

१. संस्कारों के गीत : ५, ६, ७, ६, १०, १३, १४, १५, २२, २७।

२. मंगल गीत या विवाह गीत : १६, १६८, १७२, १७५, १७६, १७७।

३. व्रतों के गीत : कार्तिक गीत : १२, २४, २५, ३०, ३५, ४३, ५०, ५२ से ५७ तक, ६१, ६३, ६४, ६६, ७१, ६०, ६५, १०७, १२६ से १३४ तक, १३६, १५०, १५६, १६०, १६२, १६४, १६६, १६६, १७८।

४. ऋतु या मासों के गीत : (i) सावन गीत : २, ३७, ८१, ८३, १०४, १०५, १०६, १३५, १३६, १३८, १४१, १५५, १७४, १८०।

(ii) भादों का गीत : ४५।

(iii) फागुन गीत : ४, ३६, ४८, ६२, ७६, ८२, ६१, ११३, ११५ से १२७ तक, १४२, १४३, १६१, १६३।

५. जातियों के गीत : ४६, ५१, ६५, ६६, ६७, १०१, १०३, ११२, १६७, १७३, १८२।

६. सामयिक या विविध गीत : (i) क्रिया गीत : ६६, १११, ११४।

(ii) बालकों का गीत : १७, २३, २६।

(iii) नृत्य गीत : ८७, ८८, ६४, १०६, १५४।

(iv) भजन : १, २६, ३६, ४०, ४२, ७६, ८६, १०८, ११०, १४४, १४५, १५७, १७६।

(v) दादरा : ७२, ८६, १३७, १४६, १४७, १४८, १४६, १५८।

(vi) गारी : ११, १८, २०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३८, ५८, ६०, ७०, ७७, ८०, ८४, ८५, १४०, १५१, १५२, १५३, १५६, १६५, १८१।

ब्रज के लोकगीत

१—ख्याल

लेकें पिता चले गोकुल कूं, आढ़ी आय गई जमुना।
सोच रहे बसुदेव लौटि कें, जाऊं भवना।
कंस बली सुन पावे सुत कौ, दम में दम ना।
मन में हिम्मत बाँधि कियो आगे कूं गम ना।
सेकारी ब्रज नदी नीर, होंठन से कम ना।
देखि पिता कौ भाव, बढ़ाइ दिये हरि ने चरना।
लैकें चरन हटी, जल रह गयौ टकुना-टकुना।
गोकुल के नर-नारि सोइ रहे, सननई, सनना।
सीतल मन्द सुगन्ध बहै, वहाँ तीनों पवना।
खूटे फाटक परे, नन्द बाबा के भवना।
धन्य धन्य बसुदेव, शीश पै राधा रमना।
रोवै अनि-अनि भाँति, परैं कन्या कूं कल ना।
गोदी लै लई सुता, सुवाइ दियौ दानव दलना।
चारि पदारथ मिलैं सुने तै, यामें हलचल ना।
ब्रज में भयौ अनन्द, नन्द घर-जनम्यौ ललना।

२—विविध

अरी मैं बेदन में सुनि आई, अनोखो जायो ललना।
लै बसुदेव चले गोकुल कूं, आढ़ी आ गई जमुना।

नीचे चरन करयौ श्रीकृस्न ने, फिर रेती दै गई जमुना ।
सीधे चले फिर गोकुल को, गोकुल को पग धरना ।

३—जन्म गीत

नन्द जू के घुरत निसान, कृष्ण औतार लियौ ।
जसुदा घर मंगल चार, कृस्न औतार लियौ ।
बोलौ बोलौ रे कृस्न जी कौ दाई कूँ ।
और कृस्न जी कौ नार छिवाइ ।

४—बधाव गीत

रानी देवकी के भये नन्दलाल, बधावा लाई ग्वालिनियाँ ।
वाके बाबा लुटायें सोना धन चाँदी धन, दादी मुतियन के थार ।
बधावा लाई ग्वालिनियाँ ।

५—जन्म गीत

जसोदा ने कारी अंधेरी में जायौ,
अरी वो तौ कारोई कृस्न कहायौ ।
दाई आवें नार छिवावें,
जसोदा ने बाकूँ भी न गहायौ ।

६—रन-झाँझन : बधाव गीत

बधाई बाजी नन्द के ।
बाबा नन्द तो ठाड़े बजाजे में, करि कपड़न को भाव ।
सुई सोसनी लाल दुपट्टा, पीरी देत बुलाय-बुलाय ।
बाबा नन्द तो ठाड़े खिरक में, करि गोअन को दान ।
कारी कामरि धौरी धूमरि, सजन मन भावें सोई लेओ ।

७—सोहिल

भये जसुदा घर लाल, बधाई लाई मालिनियाँ ।
का कछु लाई मालिन, तो का रे तमोलिनियाँ ।
तो कछु लाई है रे, सुघड़ पटवनियाँ ।
बंदनवार लाई मालिन, तो तमोल तमोलनियाँ ।
गदका - पोंची लाई—सुघड़ पटवनियाँ ।
का कछु माँगे मालिन, तो का कछु तमोलनियाँ ।
पियरो माँगे मालिन, तो सुरख तमोलनियाँ ।
दखिनी चीर जु माँगे—सुघड़ पटवनियाँ ।

पहर ओढ़ भईं ठाड़ी, देत तो असीसरियाँ।
जिओ तेरो बाल गुबिन्दा, चले घर आपनियाँ।

८—बधाव गीत

आई-आई नंद जू की पौरि, बधाई लाई मालिनियाँ।
कहा लाई लल्ला की बधाई, सुघड़ पट मालिनियाँ।
फूल लाई मालिन, तो पान तमोलनियाँ।
गदका लाई लल्ला की बधाई, सुघड़ पटमालिनियाँ।
हरे-हरे गोबर अंगन लिपावो कि सुघड़ पटमालिनियाँ।
गज-मोतिन के चौक पुराओ, सुघड़ पटमालिनियाँ।
कूम कलस इमिरितु भरि लाये, चम्पे की डार झकोरी, सुघड़ पटमालिनियाँ।
ऐपनु घोरि पटा गहि मारो, साटी के आखत डारो, सुघड़ पटमालिनियाँ।
जा चौक बैठे रामचन्द्र, संग सजन की जाई, सुघड़ पटमालिनियाँ।
भूआ भैना करें आरती, झगरति अपनो नेगु, सुघड़ पटमालिनियाँ।
मोतिन के गजरे बेटी सुमद्रा ऐ ले पहिराओ, सुघड़ पटमालिनियाँ।
देत असीस चली मधुबन कूँ जियो तेरो कुंअरु कन्हाई, सुघड़ पटमालिनियाँ।

९—बधाव गीत

मैं तो गोकुल नगरिया लाऊँगी, नंद रानी से बधाई लाऊँगी।
बाबा नंद बजाज के ठाड़े, मैं तो सुरख चुंदरिया लाऊँगी।
बाबा नंद सुनार के ठाड़े, मैं तो बजने बिछुआ लाऊँगी।
बाबा नंद हलवाई के ठाड़े, मैं तो लडुन गोद भराऊँगी।
बाबा नंद खिरक में ठाड़े, मैं तो सुरभी गैया लाऊँगी।
बाबा नंद बिसायती के ठाड़े, मैं तो चमकनी बिंदिया लाऊँगी।
बाबा नंद मनियार के ठाड़े, मैं तो चुरियन हाथ भराऊँगी।

१०—पालना : छठी गीत

लये ब्रज के बिहारी अजब पालना,
झूलत कन्हैया अजब पालना।
तेरे बाबा को बधाई अरे ललना,
तेरी अम्मा झुलावे तुझे पालना।
अगरु चंदन को बनो तेरो पालना,
झूलो-झूलो हमारे दुलारे ललना।

११—झुझुना : छठी गीत

नंद लाल झुझुना न लेय, नजर जाने किनकी लगी।
दादी पै खेले लल्ला, दादा पै खेले।

बाहिर कौ कोई न लेइ, नजर जाने किनकी लगी।
ताई पै खेले लल्ला, ताऊ पै खेले।
बाहिर कौ कोई न लेइ, नजर जाने किनकी लगी।

१२—रसिया

जसोदा जायो ललना, मैं जमुना पै सुनि आई।
काहे को तेरौ बनों पालनों, काहे के लागे फूँदना।
चंदन कौ मेरो बनों पालनों, रेशम के लागे फूँदना।
एक सखी मेरे आगे आई, कि नजर लगा गई ललना।
राई-नोन उतार जसोदा, किलक उठै ललना।
नंद बाबा गऊ दान करे हैं, अरी माई झुलावे पलना।
मैं जमुना पै सुनि आई, जसोदा जायो ललना।

१३—दष्ठौन गीत

जनम लियौ मोहन ब्रज में, जनम लियौ।
हरौ-हरौ गोबर मंगायौ जसोदा रानी,
लिपा रहीं अब घर अपना। लिपा रहीं०
मुतियन चौक पुराओ जसोदा रानी,
पुरा रहीं अब घर अपना। पुरा रहीं०
कूम कलस अमिरत भर लायौ,
जला रहीं मानिक दिवला। जल रहीं०
रानी जसोदा पलिगु चढ़ि बैठी,
लुटा रहीं गोकुल नगरी। लुटा रहीं०
मथुरा नगरी से पंडित बुलायौ।
धरा रहीं लाला कौ नाम। धरा रहीं०

१४—विविध

आयौ री एक बाला जोगी, द्वार हमारे आयौ।
अंग भिबूति बगल मृगछाला, शीस नाग लपटायौ।
लै कें नाम गुपाल लला कौ, आइ के अलखु जगायौ।
लै भिच्छा निकली नंदरानी, मोतिन थारु भरायौ।
लै जा रे तू भिच्छा टरि जा, तैंनें मेरो गुपाल डरायो।
ना चहिये मैया धन औ दौलत, ना चहिये री तेरी माया।
अपने गुपाल कौ दरस कराइ दे री, या कारण जोगी आया।

१५—विविध

देखो री एक बाला जोगी, द्वारे नंद जू के आया है री।
बैल चढ़ें ओढ़ें मृगछाला, अंग बिभूति रमाया है री।
माथे वाके तिलक चंद्रमा, जोगी जटा बढ़ाया है री।
कान खजूरे कुंडल पहिरे, शेष नाग लपटाया है री।
कर डौरू तिरशूल बिराजे, सिंघी नाद बजाया है री।
ले भिच्छा निकसी नंद रानी, मोतिन थार भराया है री।
भिच्छा लेउ जोगी जाउ आसन को, मेरा गुपाल डराया है री।

१६—विविध

काहू जोगिया की नजर लगी है, मेरो बारो कन्हैया रोवै री।
घर-घर हाथ दिखावे जसोदा, बार-बार मुख जोवै री।
मेरी गली एक आयौ जोगिया, अलख-अलख कहि बोले री।
राई-नोन उतारें जसोदा, दूध पिवै नहिं सोवै री।
चलिये जोगी नंद भवन में, यसुमति माय बुलावै री।
उनके लाला को नजर लगी है, राई-नोन करवावै री।
लटकत-लटकत शंकर आवैं, मन में मोद बढ़ावैं री।
नंद भवन में आयौ जोगी, राई-नोन कर लीनों री।
बार फेरि लाला के ऊपर, हाथ सीस पर दीनों री।
बिथा गई सब दूरि तुरत ही, किलक हँसे नंदलाला री।
मगन भई नंद जू की रानी, दीनी मोतिन माला री।
रहु रे जोगी नंद भवन में, ब्रज में बासो कीजे री।
जब-जब मेरो लाला रोवै, तब-तब दरसन दीजो री।
तुम तो जोगी परम मनोहर, तुमको बेद बखानें री।
बूढ़ौ बाबू नाम हमारो, सूर स्याम तेरौ जानें री।

१७—पालना—छठी गीत

अनोखौ जायौ ललना, मैं बेदन में सुनि आई।
मथुरा में हरि जनम लियौ है, गोकुल में झूले पलना।
लै बसुदेव चले री गोकुल कूँ, मारग दै गई जमुना।
करि सिंगार पूतना आई, गोदी में लै लियो ललना।
सूरस्याम हरि के गुन गावें, घर-घर में झूले पलना।

१८—द्यौजर

आज द्यौज कौ है द्यौजरो।
द्यौज पूजत मेरे मन सुख भयौ।
भूरी सी हतिनी जरद अंबरी, जो चढ़ि आवें मेरे पंच हजारी,
श्री कृष्ण से बीर।
तुम सोवत हो कि जागत हौ, तुमनि सोवत हम सुख पायौ।

१९—बधाव गीत

चलौ री आज नंद राय जू की पौरी।
घर-घर मालन बाँधे बंदनवार, बिच-बिच आम की मौरी।
घर-घर नाइन देत बुलाये, जिनकी है ऊँची पौरी।
अपने री अपने घर से निकरीं, आइ जुरी इक ठौरी।
कोई गोरी कोई साँवरी, कोई-कोई लरकोरी।
बाजत झाँझ मृदंग मंजीरा, गावत बधाइ मिल जोरी।
भर-भर मोती जसुदा लाई, बाँटत भर-भर झोरी।

२०—विविध

घड़ी है अनप्राशन की एरी बीर,
चटाओ सखी, हाँ-हाँ खिलाओ सखी, कुँवर कन्हैया को खीर।
मंगल चौक पुराओ सखी री,
सजाओ सखी, हाँ-हाँ उड़ाओं सखी, रंग गुलाल अबीर।
धरिये पटा पर चाँदी की थाली,
मंगाओ सखी, हाँ-हाँ पिलाओ सखी, सोने की झारी में नीर।
कहिये गुरूजी से मंत्र सुनायें,
सुनाओ सखी, हाँ-हाँ बजाओ सखी, ढोल मुरज मंजीर।

२१—हिंडोला

सखी आज रच्यौ बृन्दाबन री, घनस्याम हिंडोला झूलें।
काहे कौ तेरौ बनौ री हिंडोला, काहे की लागी डोरी री।
लाल चंदन कौ बनौ री हिंडोला, रेशम की लागी डोरी री।
मथुरा में हरि जनम लियौ है, गोकुल बजत बधाई री।

२२—मल्हार

अरी भैना मोर मुकुट सिर धार, कन्हैया झूले पालना।
झोटा जमुना मैया दे रहीं, अरी भैना लाड़ लड़ा के प्यार।

रेशमडोरी झूला परि रह्यौ, अरी भैना चंदन चौकी पट डार।
फूलन सजि रह्यो भंता पालनों, अरी भैना आवै लपट बयार।
गीत मल्हारें गोपी गा रहीं, अरी भैना ब्रज बनिता सुकुमार।
गंग सुगंध झोटें ले रहीं, अरी भैना झूले कदम की डार।

२३—पालना—छठी गीत

काऐ कौं जाको अलना री पलना, काये की लागी है डोर,
भुलाइ मेरी सजनीं।
अगर चंदन को अलना री पलना, रेशम लागी है डोर। झुलाइ॰
कृस्न जी झूलें जसोदा जी झुलायें, नंद बाबा झोटा देय। झुलाइ॰
हरी दरियाई का फेटा चतुर्भुज, पीताम्बर कछनीय। झुलाइ॰
हातन हरि के कड़ूला सौहे, पाँयन में झझनाय। झुलाइ॰
एक दिना हरि ब्रज रज खाई, तीन लोक रच नाय। झुलाइ॰
आँख न खोले कान्ह भौंह मसकोरे, हुलर-हुलर दूध डारे। झुलाइ॰
वा गोपी ए पकरि बुलाओ, नजर उतारे ललनाय। झुलाइ॰

२४—रसिया

तेरे लाला ने माटी खाई, जसोदा सुन माई।
अद्भुत खेल सखन संग खेल्यौ, थोरो सो माटी को डेलौ,
तुरत स्याम ने मुख में मेल्यौ, यानें गटक-गटक रज खाई।
क्यों लाला तैंनें माटी खाई, माखन को कबहूँ ना नाटी।
धमकावे जसुदा लै साटी, याहि नैंक दया नहिं आई।
उगिलहु बेगि बदन ते माटी, नाहीं तो मारत हूँ साटी।
सब दिन झुठवत हो सब ग्वालन, मोंसौ अब का कहिहो लालन।

२५—विविध

लाला की पेजनियाँ बाजें रे, प्यारे को अलगोजा बाजे रे।
रुमझुम-रुमझुम छनन-छनन।
मात यसोदा चलन सिखावें, उंगरि पकरि द्वै जनियाँ।
पीट झंगुलिया कटि तट सोहै, सिर ऊपर लटकनियाँ।

२६—भजन

अरे नाचें नंद लाल, नचावें हरि की मैया।
अरी रुनक-झुनक पग नूपुर बाजें, अरी ठुमक-ठुमक पग धरत री कन्हैया।
अरी नाचें री कन्हैया पग धरैं री कन्हैया।
अरी शाल न ओढ़ैं, दुशाला न ओढ़ैं, अरी कारी कमरी को बड़ो री औढ़बा।

अरे नाचै नंद लाल, नचावै हरि की मैया।
अरी खेल न खेलै खिलौना न खेलै, अरी चंद खिलौना को बड़ौ री खिलैया।
अरी नाचै री कन्हैया पग धरै री कन्हैया।
अरी दूध नांइ पीवै दहिया नांइ खावै, अरी माखन मिसरी को बड़ौ री खवैया।
अरे सूरस्याम बलि जाइ जसोदा, अरी हंस-हंस कंठ लगावै हरि की मैया।

२७—विविध

काहू दिन लगि आय मेरे हाथ, स्याम तोय ऐसो मारूंगो।
भोर होत नित मेरे घर आवै, ग्वाल बाल कछु संग में लावै,
जब मेरी सूनी बाखरि पावै, खोल किवरिया तू घुसि जावै,
दूध दही ये सब फैलावै, कै तो मानि नंद के छोरा,
राजा कंस पुकारूंगो।

२८—विविध

जसोदा तू जो कहत ही मोसों।
नित प्रति दैन उराहनौं आवत, कहा तुम्हारौ कौसौ।
आज उराहनौ सत्य करन, तेरे गोबिन्द कू गहि लाई।
देखन चली जसोदा सुत को, है गई सुता पराई।
तेरे नैन हिये मति नाहीं, देखि बदन पहिचान।
देखो सखी कहत डोलत है, या कन्या सौं कान।

२९—भजन

माखन की चोरी छोड़ कन्हैया, मैं समझाऊं तोय।
नौ लख धेनु नंद बाबा घर, नित नयौ माखन होय।
चोरी घर-घर करत स्याम क्यो, लाज सरम नहि तोय।
ब्रिज बासी सब हंसी उड़ावें, घर-घर चरचा होय।
मधुर दही के कारन मोहन, हांसी तेरी होय।

३०—होली

माखन की चोरी छोड़ि सांवरे, मैं समझाऊं तोय।
नौ लख धेनु नंद बाबा के, नित नयौ माखन होय।
बड़ो नाम तेरो नंद बाबा को, हंसी हमारी होय।
बरसाने तेरी भई सगाई, नित नई चरचा होय।
बड़े घरन की राजदुलारी, नाम धरेंगी तोय।
जिह चोरी नहि छूटे मैया, होनी होय सो होय।
सूरस्याम जसुदा के आगे, गये नैन भर रोय।

३१—भजन

फिरि-फिरि जाइ सगाई तो लाला तेरी ।
श्री राधे वृषभानु भूप घर, वहाँ तेरी बात चलाई ।
चोरी की बान छोड़ मनमोहन, घर लड़ जाय लुगाई ।
सूरस्याम मोहे मोहन की सों, फिर गये बामन नाई ।

३२—प्रभाती-भजन

जागिये ब्रजराज कुँवर, भोर भयौ अंगना ।
बाट के बटोही चाले, पंछी चाले चुगना ।
घाट की पनिहारी चली, हम चलीं सिरी जमुना ।

३३—ग्यौरता

लै-लै नाम जगावै मैया, जाग रे मेरे कृस्न कन्हैया ।
जमुना जागी गंगा जागी, जागे रे परबी के नहइया ।
सूरज जागे, चंदा जागे, जागे रे धूपन के खिलइया ।
गैया जागी बछड़ा जागे, जागे रे दूधन के पिबइया ।
गोपी जागी गोपाल जागो, जागो रे गोपी के खिलइया ।

३४—प्रभाती

जागो मोहन प्यारे, सूरज उगा हो गई भोर ।
चलीं हवायें, चिड़ियाँ गायें नाँच दिखातें मोर ।
आज बाय जगनो जे मैया, बड़ो आलसी भयो कन्हैया ।
दादा भैया टेर-टेर सब ग्वाल मचायें शोर ।
बार-बार पूछे ग्वालिनियाँ, खुली कि नांय लाल की अँखियाँ ।
द्वारे खड़ो रभांये गउएं, आओ नंद किशोर ।

३५—कलेवा गीत

लाई दूध जसोदा मैया ।
तातो दूध सकल मउअन को, ऊपर सरस मलइया,
मिश्री दूध डलैया ।
दूध पियो मेरे ग्वाल बाल तुम, तुम पै वारी मैया,
मैया लेय बलइया ।

३६—कलेवा गीत

दधि पी जा मेरे स्याम सलौना ।
काहे की तेरी बनी मथनिया, काहे के तेर दौना ।
रूपे की मेरी बनी मथनिया, कदम पात के दौना ।

३७—**चकई**—छठी गीत

मेरौ मचलौ है लाल गोबिन्दा री, खेलन कूँ माँगे चंदा री।
जमुना पार पै चलि मेरे ललना, पानी में दिखाइ लाऊँ चंदा री।
दादी पै माँगे नौलख तारे, दादा पै चंद्र खिलौना री।

३८—**चकई**—छठी गीत

गोकुल में खुली है बजरिया, म्हाँ बिकत चकइया,
लाल मेरौ रोवेगौ।
दादा हजारी चकइया नांइ लाये, अंगना माँ रोवै कन्हैया,
नाँ लेवै बंसुरिया। लाल०

३९—**कार्तिक गीत**

जसोदा मैया मोय चंद्र खिलौना ले दे।
पीछे दही बिलोवन दुंगो, पहले माखन दे दे।
पीछे गउ चरायबे जाऊंगो, पहले रोटी दे दे।
आज गेंद को खेल रचेगो, बलदाऊ के संग भेज दे।
चंदसखी भज बालकृष्ण छवि, हरि चरनन चित दे दे।

४०—भजन

देखे ये यसोदा जी के लाल, खेलैं कुंजन में।
केसरिया बागा पटका ये झालरदार,
नीची-नीची धोबती वो हंस की सी चाल। देखे०
कानों में कुंडल गले में मोती माल,
सिर पर मुकुट धरयौ वो, घूंघर बाले बाल। देखे०
मीरा कहें प्रभु गिरधर नागर, हरि के चरन चित बलिहार।

४१—विवाह गीत

पाँच कुंमर बिरखभान के, और खेलत हैं पट गेंद मनोहर सांमरे।
काहे की तेरी आंकुरी, और काहे की पट गेंद मनोहर सांमरे।
हरे बाँस की आंकुरी, और रेसम की पट गेंद मनोहर सांमरे।
.................................., और खेलत हैं चौवारे मनोहर सांमरे।
लाला कौन की माइल उर धरे, और कौंन बहन के बीर मनोहर सांमरे।
माइ जसोदा ने उर धरे, और बहन सुभद्रा के बीर मनोहर सांमरे।

४२—रसिया

कान्हा आय जइयो बरसानो मेरो गाँम।
नृप वृषभान पिता हैं मेरे, अरे कै लाला राधा ऐ मेरी नाम।

लाल किवरिया ऊंची अटरिया, अरे कै लाला सुन लै धर कैं ध्यान।
ललता बिसाखा सखी ए मेरी, अरे कै लाला चंद्रावल मेरौ नाम।
मन मोहन राधा छबि निरखें, अरे कै लाला ब्रज में मेरौ धाम।

४३—रसिया

जमुना किनारे मेरो गाँव, साँवरे आ जइयो।
जमुना किनारे मेरी ऊँचो हवेली, मैं ब्रज की गोपी अलबेली,
राधा रंगीली मेरौ नाम कि वंशी बजा जइयो। जमुना किनारे०
मलि-मलि कर असनान कराऊं, घिस-घिस चंदन खौर लगाऊं,
पूजा करूंगी सुबह साम कि माखन खाय जइयो। जमुना किनारे०
खस-खस को बंगला बनवाऊं, चुन-चुन कलियां सेज बिछाऊं,
धीरे-धीरे दाबूं तेरे पाँव कि प्रेम रस पिया जइयो। जमुना किनारे०

४४—रसिया

राधा की छवि देखि मचल गयो सामंलिया।
हंस मुसकाय प्रेम रस चाखूं, तोइ नैनन बिच ऐसा राखूं,
यों काजर की रेख परैगी तोते भामरियां। राधा की०
तू गोरी बृषभानु दुलारी, मैं छलिया मेरी चितवन कारी,
कारौ ही मेरौ भेष कि कारी कामरिया। राधा की०
मैं राधा तेरे घर आऊं, अंगना में बाँसुरी बजाऊं,
नृत्य करूं दृग खोल कमल पर पामरिया। राधा की०
अपनी सब सखियां बुलवा लै, हिलमिल के मोय नाच नचालै,
गड़े प्रेम की मेख ठुमक चलै पामरिया। राधा की०
बरसाने की राधा प्यारी, वृन्दावन के बांके बिहारी,
सुख सागर में खेल तू ग्वालिन गामरिया। राधा की०

४५—कार्तिक गीत

निर्मल जमुना जल करिवे कूं प्रभु ने नाथो कालीनाग।
ग्वाल बाल सब सखा बुलाये, नाना भांतिन ख्याल मचाये।
गेंद में मारयौ टोल घुमाय, उछटि जमुन में पहुँचो जाय।
सखा श्रीदामा गयो रिसाय, न्यौ मति जाने बिना गेंद दिये,
घर कूं जाऊं भाग। निर्मल०

४७—कार्तिक गीत

है कोई नाग को नथैया।
काहे की पट गेंद बनाई, काहे के दोऊ बल्ला।

रेशम को पट गेंद बनाई, चंदन के दोऊ बल्ला। है कोई०
मारी टोल गेंद गई दह में, गेंद के संग कन्हैया।
कह तो रे बालक रस्ता भूलो, कह बैरिन तेरी मैया। है कोई०
ना तो री नागिन रस्ता भूलो, ना बैरिन मोरी मैया।
मात यसोदा ठाड़ी रोवै, अब को पार लगैया। है कोई०
नाग नाथ रेती पै लाये, फन-फन नाचे कन्हैया।
हिलमिल सब करें आरती, ग्वाल बाल बल जइया। है कोई०

४८—भजन

अरे मथुरा के बंसी वारे, घरै कब अइयो।
पांव उनको खड़ौ बल सोहै, घरै कब अइयो।
चलति मधुरियन चाल, घरै कब अइयो। मथुरा०
कान उनके कुंडल भल सोहै, चलति न तीरथ नहाय। घरै०
गले उनके माला सोहै, कपोलन चुअत गुलाब। घरै०
माथे उनके तिलक भल सोहै, मोतियन सोहै लिलार। घरै०

४६—रसिया

मन लै गयो नंदकुमार, स्याम मुरली बारो।
मोर मुकुट और पीताम्बर की, छबि लागै अति प्यारी।
बनु-बनु धेनु चरावत डोलै, कांधे कामर कारी।
आके गल फूलन को हार,
चंचल नैन रसीले बंना, चपल चाल मतबारी।
मंद हसन सखि चित की बसन पै, जाऊं मैं बलिहारी।
मेरी है गई जिय के पार, स्याम०

५०—भजन

मोहन बस गयो मेरे मन में।
जहां देखूं तहां मोहन दीखें, घर आंगन कोठे में।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, बाजू बंद भुजन पै।
अंग-अंग प्रतिकाम अंग में, जाकी झांकी बसी मन में।

५१—भजन

कृष्ण बड़े चितचोर मैं वारी-वारी।
अपने कृष्ण के संग ऐसी रहूँगी, जैसे जंगल बिच मोर।
अपने कृष्ण के संग ऐसी रहूँगी, जैसे चंदा के बीच चकोर।
अपने कृष्ण के संग ऐसी रहूँगी, जैसे जल बिच मछली होय।
कृष्ण बड़े चितचोर०

५२—विविध

हो गई साम नहीं आये री कन्हैया, हो गई साम।
कौन दुहै मोरी गैया। हो गई०
मातु यसोदा ढूंढ़न निकसी,
हरि की मैया हरि को देवै री दुहइया। हो गई०
इक ग्वालिन यों उठ बोली,
सुनो यसोदा मैया, चोर-चोर दधि खाय गयो री,
तेरो कन्हैया राम वंशी का बजैया,
गेंद का खिलैया राम, माखन का खवैया। हो गई०
मेरो कान्ह का भूखा नंगा, सौ-सौ गऊ को बधैया।
मेरे घर में कुंवरि राधिके,
तुझ सी ग्वालिन मेरे गोबर पथैया, कूड़े को गिरैया।

५३—कार्तिक गीत

बन से आवत गावत गोरी, बन ते आवत गावत गोरी।
गौवन संग नंद जी को ढोटा, ओढ़े पीत पिछोरी।
सांवरी सूरत पै रज लिपटानी, सुंदर रूप बनो री।
बंसी की टेर सुनी बृज ग्वालिन, हरि दर्शन को दौरी।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि चरनन की चेरी।

५४—विविध

यसुदा मैया खोल किवरिया, लाला आयो गाय चराय।
गाय गोप गोपाल दाऊ संग, बंशी मधुर बजाय।
यसुदा मैया करत आरती, फूली नाय समाय।
हंस-हंस लेत बलैया मैया, बार-बार बलि जाय।
खिरक खोल गैया कर दीनी, बछिरा लिये चुखाय।
सक लौनी तोहे प्रात मिलेगी, लाला पीयो दूध अघाय।
इतने में इक सखी सांवरी, हेरत पहुंची आय।
तो बिन मोकूं दूध न देवै, मेरी गैया रही है रंभाय।
सखी सांवरी को लाला ने, आय दुहाई गाय।

५५—कार्तिक गीत

नेक पठै दे मोहन जी को मैया।
हठ कर बैठी सुघड़ ग्वालिनी, संग लिवाय चलूंगी कन्हैया।
अति बिलखात मिलत नहिं गैया रामा,
जाही के हाथ मिलैगी मेरी गैया।

नंद हँसे जसुदा मुसकाई रामा,
जाओ लाल दुह आओ जाकी गैया।
हँसि मुसकाय कही मोहन ने रामा,
हम ही अनोखे जा ब्रज में दुहैया।
ग्वाल बाल सब पचि-पचि हारे रामा,
पचि हारे बलदाऊ जी से भैया।
छोड़ो बछड़ा लाओ दुहनिया रामा,
झटपट दुहि आऊं राधे जी की गैया।
लेकर दूध गये महलन में रामा,
झटक दई है श्री राधे जी की नैया।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि,
हा-हा करि हरि की लेत बलैया।

५६—कातिक गीत

अब ना दुहाऊं श्याम तोसे गैया।
कछु कारे कछु कामर ओढ़े, तुमहि देख बिचके मोरी गैया।
कित चितवत कित धार चलावत, दूध गिरत सिगरी भुंइ मैया।
वृन्दावन की कुंज गलिन में, चितवत हैं चोरन की नैया।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि चरनन की मैं लेऊं बलैया।

५७—कातिक गीत

स्याम की बंसी बन पाई।
उठो जसोदा मैया, खोलो जी किवाड़ी, मैं बंसी घर देनन कों आई।
बहुत दिनन के उनींदे री मोहन, सोवन दे वृषभान की जाई।
इतनी सुनि के निकसि आये मोहन, बंसी के संग मेरी पोथी चुराई।
कान न सुनी न आंखन देखी, चलो तो देऊँ मैं ठौरहु बताई।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, दोऊ पढ़े एकहि चतुराई।

५८—कातिक गीत

कान्हा बरसाने में आइ जइयो बुलाइ गई राधा प्यारी।
जो कान्हा तोइ गैल न पावै, सिढिन-सिढिन चढ़ि अइयो।
पतरी-पतरी पोई एँ फुलकियां, गरज परै तो जै जइयो।
जो कान्हा तोइ गैल न पावै, 'खौर' में है के आइ जइयो।
सोने के लौटा गंगा जल पानी, गरज परै तो पी जइयो।
जो कान्हा तोइ गैल न पावै, 'भानोखर' है के आइ जइयो।
पान पचासी कौ बीरा लगायो, गरज परै तो चबाइ जइयो।

जो कान्हा तोइ गैल न पावै, राधा बागिन में है कै आइ जइयो।
कोरी सी हंडिया में दही जमायो, गरज परै तो खाइ जइयो। कान्हा०

५९—कार्तिक गीत

कान्हा बरसाने में आइ जइयो, बुलाइ रही राधा प्यारी।
तातौ पानी धर्यो रे ततैरा, अपने ही हाथ नवाइ जइयो।
तातौ जलेबी दूध के लाडू, अपने ही हाथ खवाइ जइयो।
घोरि-घोरि रंग धरे रे केसरिया, नेक होरी खेलन आ जइयो।

६०—लाड़ो—विवाह गीत

पूछत जननी कहाँ गई लाडो, अरी टेरत जननी कहाँ गई लाड़ो।
खेलन गये हम नंद बाबा घर, अरी हंस यसुदा ने गोद खिलाये।
किन तेरी रचपच मांग संवारी, अरी किन नै उढ़ाय दई कुंजल सारी।
उन नेइ रचपच मांग समारी, अरी उन नेइ उढ़ाइ दई कुंजल सारी।
किन तेरी मांग भरी मोतिन से, अरी किन तेरी गोद भरी तिल चामरी।
उतई नेइ मांग भरी मोतिन से, अरी उनई नेइ गोद भरी तिल चामरी।
मेरो नाम पूछो बाबा को नाम पूछो, अरी तेरौ नाम पूछ दई हंस गारी।

६१—विविध

हरि ने पकरी है बहियाँ, गिरी होती जमुना में।
सोने की थरिया में भोजना परोसे, हये जेंवे कृस्न कन्हैया।
सोने के लोटा जमुन जल पानी, हये पीवें कृस्न कन्हैया। गिरी०
पान पचासो के बीड़े लगाये, हये चाबें कृस्न कन्हैया। गिरी०
सोने की सींक बोली का सुरमा, हये सालें कृस्न कन्हैया। गिरी०
चंदा की चांदनी में चौपड़ बिछाई, हये खेलें कृस्न कन्हैया। गिरी०
फूलों की सेजा पै मोती-झालर को तकिया,
हये सोवें कृस्न कन्हैया, गिरी होती जमुना में।

६२—रसिया

कोई लै गयौ चीर हमारे जुलम करि डारे।
अपने-अपने वस्त्र खोलकर पारिन पर हम धर दीने।
सब गोपिन ने जुरमिल कै धसि जमुना में गोता लीने।
उछरत नीर लखत नहि गोपी, जमुना तीर किनारे। जुलम०
देखत चारों तरफ गोपिका कोई नजर नहीं आयौ।
है कै नगिन ठड़ी जमुना में, सोच बहुत मन में छायौ।
नाहैं कोई मानुस नाहैं कोई बंदर, कौने बावर फारे। जुलम०

मंद-मंद मुसक्यात कदम पर बैठे देखि रहे बनवारी।
वाही समय बजाय दई बंसी, चौंक पड़ी सब ब्रज नारी।
देखो सखी कदम पर तोकूं धन्य मोहना प्यारे। जुलम०

६३—कार्तिक गीत

सब हिल-मिलि के चली गोपिका श्री जमुना अस्नान करन।
वस्त्र उतारि घाट पर धरि दिये फिर जल भीतर लगीं धसन।
जसुमत सुत कहुँ चल्यो न आवै मन अपने में लगीं डरन।
इतने में ही आइ गयो छलिया वस्त्र लिये फिर लगा चलन।
लै के चीर कदम पर चढ़ि गयो वाही पै बंशी लगी बजन।
देउ चीर महाराज हमारे हम जल भीतर खड़ी नगन।
बिन जल बाहर चीर न दुंगो चाहे री लाखों करो जतन।
शर्म की घाली बाहर निकरी तन हातन ते लगीं ढकन।
बिन कर जोड़े चीर न दुंगो गोपिन ते कहे मकसूदन।
प्रेम के बस में हात भी जोड़े चीर मिले जब भई मगन।
भाव भक्ति का मंगल गाना सुनों हमारे सबु सज्जन।
जै जै जै मन मोहन प्यारे जै जै जै जसुदा नंदन।

६४—विविध (झूमर ?)

बरसाने से चली गुजरिया रामा, हात गड़ुआ सिर गगरी,
जल कैसे भरूं जमुना गहरी।
ल्होंकि भरूं तो कृस्न जी तकत हैं रामा, बैठि भरूं भीजै चुंदरी,
जल कैसे भरूं जमुना गहरी।
हौलें चलूं घर सासु लड़ैगी रामा, धमकि चलूं फूटै गगरी,
जल कैसे भरूँ जमुना गहरी।

६५—नृत्य गीत

धीरे-धीरे गगरी उठाना सांवरे, मैं ग्वालिन तेरे पनघट की।
रतन जड़ाऊ की इंडुरी हमारी, घड़ा रखा सिर सोने को।
बांये हाथ से गगरी उठा दे, डगर बता दे पनघट की।
श्याम डगर बता दै पनघट की।
पछिम दिसा उड़जा रे कागा, खबर ले अइयो मोरे गिरधर की।
श्याम मैं दासी तेरे चरनन की।
तुम तो कान्हा नंद बबा के, मैं लड़की इक ग्वालिन की।
तुमको लाज है मोर मुकुट की, हमें लाज घूंघट पट की।
श्याम हमें लाज घूंघट पट की।

६६—नृत्य गीत

मोहन नंद लाल गगरी उठाय जइयो मोरी।
कुइयें पर कब की ठाड़ी, मैं कब की ठाड़ी,
ठाड़ी - ठाड़ी देखूं बाट, गगरी उठाय जइयो मोरी।
तालों पर कब की ठाड़ी, मैं कब की ठाड़ी,
ठाड़ी-ठाड़ी देखूं बाट, साड़ी धुलाय जइयो मेरी।
बागों में कब की ठाड़ी, मैं कब की ठाड़ी,
ठाड़ी-ठाड़ी देखूं बाट, कलियाँ बिनाय जइयो मेरी।

६७—नृत्य गीत

मोहन नंदलाल गगरी उचाइ जइयो मेरी।
जसुदा के लाल गगरी उचाय जइयो मेरी।
पनियाँ भरन में जाऊं, भरन में जाऊं,
खूंगी तेरी बाट, गगरी उचाइ जइयो मेरी।
एक तो कमर मेरी पतरी, कमर मेरी पतरी,
दूजे सिर पर भार, गगरी उचाइ जइय मेरी।
जमुना की चिकनी है माटी, चिकनी है माटी,
खिसलैगो मेरौ पाँय, गगरी उचाय जइयो मोरी।
सासु ननद देंगी गारी, ननद देंगी गारी,
कोसैगो मेरौ बीर, गगरी उचाइ जइयो मोरी।

६८—नृत्य गीत

गागरि मेरी स्याम उठाइ जइयो।
जमुना जी की रेत में हो, जमुना जी की रेत में,
अपनौ हाथु लगाइ जैओ। गागरि०
गागरि तिहारी तबई उठावैं, गागरि तिहारी तबई उठावैं,
घूंघट खोलि दिखाइ जैओ। गागरि०
घूंघट में का लेउ सांवरे, घूंघट में का लेउ सांवरे,
बगर हमारे है जैओ। गागरि०
कोरी मलरिया दही जमाओ, कोरी मलरियावही जमाओ,
गोरसु को रसु लै जैओ। गागरि०

६९—नृत्य गीत

अरे मोरे सिर पै गगरी भारी, उतार बनवारी।
तुम तौ कान्हा नंदगाँव के, मैं बरसाने वारी।

कान्हा मैं बरसाने वारी। उतार बनवारी।
तुम तौ कान्हा नंद बबा के, मैं वृषभान दुलारी।
कान्हा मैं वृषभान दुलारी। उतार बनवारी।
तुम तौ कान्हा धेनु चराओ, मैं दधि बेचन हारी।
कान्हा मैं दधि बेचन हारी। उतार बनवारी।
तुम तौ कान्हा ओढ़ौ कमरिया, मोपै रेसम सारी।
कान्हा मोपै रेसम सारी। उतार बनवारी।

७०—नृत्य गीत

मेरे सीस गगरिया भारी, जरा उतार दो गिरधारी।
तुम तो कहिये कान्हा गउएं चरैया, हम हैं हेरन हारी।
तुम तो कहिये कान्हा माखन चुरैया, हम हैं बेचन हारी।
तुम तो कहिये कान्हा बंशी बजैया, हम हैं नाचन हारी।
तुम तो ओढ़ो कान्हा काली कमरिया, हम बसन्ती सारी।
तुम तो कहिये कान्हा कृष्ण कन्हैया, हम हैं राधा प्यारी।

७१—नृत्य गीत

श्याम तोरा पनिया हमसे न भरा जाय रे।
घर तेरा दूर गागर सिर भारी,
ऊँची नीची सिढ़ियाँ हमसे न चढ़ी जाय रे।
श्याम तेरे घर में ये राधा बड़ी नखरो,
रोज-रोज नखरा हमसे न सहा जाइ रे।
ये कुआँ तेरा नीचा, ये डोल तेरी भारी,
पतली कमरिया हमारी बल खाय ।

७२—विविध

कान्हा गागरिया मत फोरै, घर मेरी सास लड़ैगी रे।
सास डुकरिया जनम की खोटी, गारी दे ना देगी रोटी।
कर-कर कै वो भूँठी जुगली, बलम खिसैगी रे। कान्हा०
ननद हमारी है छलछंदी, नाहक भरम धरै मतिमंदी,
पीछे परि बहकाय बलम कूँ, हमें पिटैगी रे। कान्हा०
पास परोसिन विस की घोली, हँसि-हँसि मारै बोली ठोली,
भौजी चूनर चोली लखि कै, हमैं खिजैगी रे। कान्हा०

७३—कार्तिक गीत

बता दे कान्हा इंडुरी कौ चोर।
तू मत जाने कान्हा इकली दुकली, सात सहेली मेरे साथ।

तू मत जाने कान्हा दूर दिसा की, बरसानौ मेरो गाँव।
तू मत जाने कान्हा चुपकी रहूँगी, सहर करूँगी बदनाम।
तू कान्हा मेरौ नाम न जानें, राधा प्यारी मेरौ नाम।
तू मत जाने कान्हा घास-फूस की, हीरा जड़े हैं किरोर।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन मेरी डोर।

७४—विविध

....गागर मोरी फोरी री, ज्या नंद को श्याम अनारी।
नित पनघट पर रार मचावै, मानत नाय गिरधारी।
देखौ री तुम सहेलियाँ, राह चलत मोय देंय गारी।
घर-घर फिरत चुरावत माखन, लाज न लगी मुरारी री।
मात जसोधा मे जाय कहीं यों, हाँसी होय तुम्हारी।
बरमाने ते आई सगाई, गा पै नाम धरें बृज नारी री।

७५—विविध

....यसोदा तेरौ लाल खिलार रे।
पनियाँ भरन को हम गईं जमुना घाट पै,
कान्हा भी वहाँ पै मिल गये, ग्वालों के साथ में,
फोरी-फोरी गगरिया हमारी रे। यसोदा०
स्नान करन को हम गईं जमुना के घाट पै,
कान्हा भी वहाँ पै मिल गये, ग्वालों के साथ में,
एनने चुराई चीर हमारी रे। यसोदा०
दधि बेचन को हम गईं गोकुल की गलिन में,
कान्हा भी वहाँ पै मिल गये, ग्वालों के साथ में,
फोरी-फोरी मटकिया हमारी रे। यसोदा०

७६—सावन गीत

तेरौ नटवर नंद किसोर,
जसोदा हमसे गैल रोक आगे होइ ठाड़ौ,
साड़ी झटकै री।
मेरी चोली पकर के खूब झकझोरी,
भर के जेठ किरकिरी मारै,
गले से अटकै री। तेरौ०

७७—विविध

जि बड़ी ग्वालिन लबरी ऐ, झबरी ऐ ?
इन मोहन सूँ झगरी ऐ।

मेरौ कन्हैया कछू न जानें,
तू ग्वालिन धिंगरी ऐ।
ओसन प्यास बुझै नहि सुन्दरि,
बालक खेल परी ऐ।
चलि मेई मैया बाइ बताइ देउ,
जो हमसूं झगरी।
ओढ़ें खड़ी लील भरि सारी,
कईऔ रंग भरी ऐ।
औरन के दस पांच खिलत ऐ,
जाई कूं रार परी ऐ।
औरन के दस पांच भले ऐ,
जाई पै आगि परी ऐ।

७८—होली

पनीरा कहि का बिधि जाऊँ।
गारी गावै सांवरौ रे, मुरली में लै-लै मेरो नाम।
बाट रोकि ठाड़ौ भयौ रे, मारग में निरखे मेरी चाम।
कूआ पै ठाड़ौ भयौ रे, भरि-भरि के मोय देत उठाय।
गागरिया रस की भरी रे, लै तोरे अंग-अंग लिपटाय।

७९—ख्याल

जमुना नहायवे कैसे जाऊं, मग में मोहन अटकै री।
सैन चलाय करै रस बतियां, सबरोई मटकै री।
घूंघट खोलि प्रेम रस चाखै, बहियां झटकै री।
बिन्द्रावन की कुंज गलिन में, मेरौ दधि सटकै री।
तान लगाय कै सेंठी मारै, धरनी पटकै री।
ऐसौ कोई नांय बिरज में, याकों झटकै री।
देखि बिरानी नारि सांमरौ, सबरौ मटकै री।
सांवरी सूरत मोहनी मूरति, मेरे मन खटकै री।
नंद लाल के दरसन कूं, मेरो मन भटकै री।

८०—कातिक गीत

सखी री नंदगाम अनोखौ नंद कौ, जहां चपल चबाई लोग।
सखी री 'पानसरोवर' हम गई हो, अरे कोई मिल सखियन के झुंड।
निपट अनेड़ौ सांवरौ रे, मोते हंसि के लड़ावै दोऊ नैन।

८४—कार्तिक गीत

गिर न पड़े गोपाल गिरवर, गिर न पड़े गोपाल।
ब्रज सखी सब पूजन निकरी, भर-भर मुतियन थार।
इंदर कोप चढ़ेउ ब्रज ऊपर, बरसत मूसलधार।
सात दिवस मघवा झर लायौ, ब्रज में पड़ी न फुहार।
संख चक्र गदा पद्म बिराजे, नख पर गिरवर धार।
ग्वाल बाल सब गिरवर नीचे, मुरली बजावै नंदलाल।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, निरखत मुख गोपाल।

८४ (अ)—वर्षा गीत

मेघ मालनु ते कह्यौ ललकारि,
ब्रज पै बरसै पनियां ढार।
उमड़ि घुमड़ि ब्रज घेरिकैं, उठी घटा घनघोर।
चमचम चमकै बीजुरी, चौंके ब्रज के मोर।
मुसकधार जलु रेला के संग सुरपति बरसायौ।
धरि नख पै गिर्राज नामु गिरधारी है पायौ।

८५—भजन

भोर भयो पौ फाटी कान्ह बाजी बाँसुरी।
सुनि बंसी की टेर उठीं सब ग्वालिनी।
पहरि लए हार-हमेल ओढ़ लई चूंदरी।
दधि की मटुकिया सीस चलीं दधि बेचन ग्वालिनी।
आगें तें मिलि गये कान्ह, घेरि लई ग्वालिनी।
छोड़ दैरे चंचल कान्ह गैल, कहन लगी ग्वालिनी।
जो सुनि पावै हमारी सासु हमें पिट वाइबै।
कान्ह के है गये कान घेरि लईं ग्वालिनी।
कोई लै गयौ हार-हमेल कोई लै गयौ चूंदरी।
कोई लै गयौ दधि की मटुकिया कोई लै गयौ ईंडुरी।
ग्वाल लै गये हार-हमेल श्रीदामा ले गयौ चूंदरी।
कान्ह लै गये दधि की मटुकिया मनसुखा लै गयौ ईंडुरी।
दै देउ हार-हमेल दै देउ हमारी चूंदरी।
दै देउ दधि की मटुकिया दै देउ हमारी ईंडुरी।
कै लख हार-हमेल कैसी ऐ तिहारी चूंदरी।
केती यऊन की मटुकिया कैसी ऐ तिहारी ईंडुरी।
नौ लख हार-हमेल पंचरंगी चूंदरी।

रोकैं टोकैं गैल में, मोते बोलैं रसीले बोल।
जब देखूँ पनघट पै अड़ौ रहै रे, अरे मोये भर-भर देइ उचाइ।
कांन काहू की ना करे री, अरी याकौ रसिया सगरौ गांम।
संग केरी दिल में बसै हो, यौ मूरति घनस्याम।

८१—विविध

छोड़ो-छोड़ो जसुदा के लाल मेरो मारग छोड़ो।
हूँ विकरी अपनी घर तै, बिल श्याम फिरावत ए चकई।
उरझी ककना चकई की डोरी, हूँ बैठी सुरझावति डोरी।
ठोड़ी पकरि मोसूँ कईए कोरी, पीति के बान लगैं रछमाछी।
टूटै न डोरी, छूटै न गांठ। मेरो मारग०
आवतु ऐ नंदलाल को हाती, टोरत देह मरोरत छाती।
भाजि परी मथुरा नगरी, मथुरा नगरी को छैल चिकनिया,
बांधतु ओ ऐंठा पगरी, हाथ गिलोल फैंट में गिल्ला,
तकि मारी सिर की गगरी, फूटै गगरी भीजै चुंदरी।
छोड़ो-छोड़ो जसुदा के लाल०

८२—रसिया

जान दे रे तेरे पाय परति हौं, रे कन्हैया।
टूटि गये हार, छूटि गयौ अचरा,
भीजि गई अंगिया रे दैया। जान०
या मग मांझ न कर बरजोरी, है गोकुल के लोग चबैया।
नागरिया धनि रीति तिहारी,
यह धनि खेल तुम धनि खिलैया।

८३—भजन

श्री राधा तै मेरी गेंद चुराई।
ग्वाल बाल सब ही जुरि आये, गेंद कौ खेल मचाई।
खेलत गेंद गिरी जमुना में, हमसे कहत चुराई।
बहियाँ पकड़ मोरी अंगियाँ में खोजत, एक गई दो पाई।
पकड़ो री पकड़ो श्याम सुन्दर को, यूँ कह राधा धाई।
छीन लिये मुरली पीताम्बर, सिर से चुनड़ी उढ़ाई।
कहाँ गये तेरे संग के सखा सब, कहाँ गये बलभाई।
कहाँ गई तेरी मात जसोदा, तुमकों लेय छुड़ाई।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, चरन कमल बलि जाई।

सहस गऊन की मटुकिया मोतिन जड़ी ईंढुरी ।
दधि की मचाइ दई लूट कहो लेउ ईंढुरी ।
पहरि लेउ हार-हेमल ओढ़ लेउ चूंदरी ।

८६—सावन गीत

दधि बेचन जाऊं मटुकिया सीस धरे,
मिलौ नंद को लाल गैल में रार करी ।
माखन खायौ और मेरी उंगरी पकरि,
मेरो पोंहचा पकड़ो,
पकरि बांह झकझोरी, दधि की मटुकिया फोरी ।

८७—रसिया

एक चंचल गूजरी रे कै दधि बेचन निकरी ।
बरसाने सै चली गुजरिया कै सोलह सिंगार ।
धेन चरावत पायौ सांमरौ, तोर्यौ नौलख हार,
तोरी वाकी नथ दुलरी ।
दधि तेरो खाय मटुक तेरी फोरूँ,
गोरस को मचाय दऊं कीच,
एक रात वृन्दावन राखूं, 'बंसीवट' के बीच ।
दिखाय दऊं तोय ज्ञान गूदरी ।

८८—विविध

मोहन नंद लाल बरसाने सजि आये ।
बरसाने की गूजरी, दधि बेचन जाय, दधि बेचन जाय ।
बीच मिले कन्हाई, दधि लई छिड़ाइ, दधि लई छिड़ाइ ।
बैठि कदम की छैयां, ग्वाल लयो बुलाय, ग्वाल लयो बुलाय ।
पातु-पातु दौना बाटों, दधि दई लुटाइ, दधि दई लुटाइ ।

८९—विविध

दधि लूट लई दगरे में ।
दधि मेरी खाय मटकिया फोरी ग्वाल बाल सगरे ने ।
उंगरी में की मुंदरी लूटी नौलख हार गरे में ।
बाजूबंद खयेला लूटे नथ राखी झगरे में । दधि०

९०—लांगुरिया (देवी के गीत)

कान्हा तोर ला पतऊआ, तोइ पिआइ दुंगी दही ।
काहे की तेरी मटुकिनी, काहे को दौना लायौ री ।
माटी की मेरी बनी मटुकनी, कदम को दौना लायौ री ।

६१—विविध

अरि तू दैजा दधि कौ दान, गुजरिया बरसाने की।
तू मटकी लेकर आई, भर दौना देय चखाई।
अरी तेरी सूरत पै बलिहार; गुजरिया बरसाने की।
तू रोजइ ब्रज में आवै, पर काम नहीं बतलावै।
अरी तू किसकी सुंदर नार, गुजरिया बरसाने की।

६२—रसिया

करे री इठलइयाँ जोवन कौ दै जा दान।
बहानौ मोइ बतावै रोजु, तेरौ मैंने बहुत लगायौ खोज।
मटुकिया लऊँ ग्वालिनी ओज।
मुसकिल ते मोकूं मिली री, तैंने बहुत करयौ हैरान।
करै मति ग्वालिन जादा देर, करूंगो तंग तोय में फेर,
मटुकिया लऊँ लकुट तै गेर।
कैसे जायगी निकरि कैं री, मैंने लई तोय पहिचान।
करै चौ ठनगन जादा नारि, होसु सब तेरे दऊँ बिगारि,
मंसुखा ठाड़ो देखि अगार।
राजी ते मोइ दानु दे री, कोई कही हमारी मान।

६३—विविध

जसोदा तेरे लाला ने, दई है मटुकिया फोर।
गैल में बैठो रूप बनाय, संग में ग्वालउ लये बुलाय।
मटुकिया सिर ते लई उठाय, अचकइ भरि लये दोंना आइ।
गोरस की झंझा झोरिनु में, बैयां दई मरोड़ि। जसोदा०

६४—रसिया

जशोदा अपने रोक श्याम कूं, मेरी फोर दई मटकी।
बिन्द्रावन मेरो आनों जानों, रोज गैल में अटकै कानों।
पीछो मुसकिल पड़ो छुड़ानों,
नरम कलाई पकरि हमारी इक दम सें झटकी। जसोदा०
बइयाँ झटक हमारी छोड़ी, दधि कूं खाय गगरिया फोरी।
ऐसी चों बेसरमी ओढ़ी,
ऐसो ऊधम कियौ स्याम नें, जे दिल में खटकी। जसोदा०
संग सखन की घूमैं टोली, पहले बोलैं मीठो बोली,
बरजोरी कर मसकै चोली,
जादा कहूं लाज मोय लागै, रे नागर नट की। जसोदा०

रोज कहै मोसें नंद लाला, गोरस देउ हमें ब्रजवाला ।
मैं छलिया गोकुल का ग्वाला ।
बिनती करौं समझाय लैं मैया, हद ना है हट की । जसोदा०

६५—रसिया

जसोवा तेरे लाला ने, मेरी दई मटुकिया फोर ।
दही की मटकी धरे सीस पै, मैं आई बड़े भोर ।
वृन्दावन की कुंज गलिन में, मिल गयौ नंद किसोर ।
दधि मेरो खाय मटुकिया फोरी, ऐसौ भयौ कठोर ।
मटुकी की मटुकी मेरी फोरी, दीनी भुजा मरोरि ।
इत जाऊं तौ सखा स्याम के, घेरि रहे चहुँ ओर ।
उत जाऊं तो बैरिन जमुना, गहरी लेय हिलोर ।
मोते कहै नाचि मेरे आगे, करि बिछूअन की घोर ।
दोनूं कर पकरि दीनि करतारी, ताता थेई सोर ।
अब न रहेंगी तेरे बरज में, लियौ सबन मुख मोर ।
छोटी सी कोई और नगरिया, लिगें अंत टटोर ।

६६—होली

मइया री मैंने कछु न कही, बंशी वारे ने गारी दई ।
इत सथुरा उत गोकुल नगरी, तौ बीच में जमुना वही ।
मैं दधि बेचन जात वृन्दावन, मारग घेरि लई । मइया०

६७—खेल गीत

सासुलि रोकै बहू हठीली, दधि बेचन मत जाइ गूजरी ।
सिर पर घड़ा घड़ा पै गगरी, दधि बेचन निकरी गूजरी ।
गोकुल बेचि 'महावन' बेची, मथुरा बेची सबु नगरी ।
बीच में कान्हा गौएं चरामें, गहि लई बाँह सम्हार कैं जी ।
तोरि लाओ पत्ता बनाइ लेउ दौंना, मीठी दही चखाइ दऊं जी ।
डार डार पै कान्हा डोल्यौ एक पातु नहीं पायौ जी ।
तोरि लायौ पत्ता बनाइ लायौ दौंना, मीठौ दही चखाइ गई जी ।
सांझ भई दिन गयौ मुंदन कूं, कान्हा ने गौवें हाँकि दीनी जी ।
गौऊ हाँकि खिरक में करि दई, कान्हा ने तन मन डार्यौ जी ।
टूटी सी खाट पुराने से बंदन; ओढ़ि लई पीतम सारी जी ।
माइ जसोदा यों उठि बोली, आजु कुमर मेरे कहाँ रहे जी ।
ढूंढ़ति ढूंढ़ति गई खिरक में, खिरकनु कान्हा सोइ रहे जी ।

कै बेटा तोइ जुर ते जाड़ौ, कै तेरी दूखें पींडुरी जी।
अपने कान्हा कूं चारि बिहाइ दऊँ, द्वै गोरीं द्वै कारी जी।
चारिनु काटि कुआ में दै दै, मेरौ मनु लै गई बुही गुजरी जी।
ढूंढ़त ढूंढत कान्हा पहुंचे, गुजरी के जे देसनु जी।
मेरी बहिनते न्यौं जाइ कहियौ, द्वार पै ठाड़ौ तेरौ बेंदुली जी।
नांइ मामा की नांइ फूफी की, बहिन कहां ते आई जी।
चलौ बहिन दोनों हिलसिल लिगे, मिलि लें दोऊ भैंना जी।
कहत सुनत भैना लाज लगति ऐ, रोजु तेरौ मरदानौ जी।
छोटौ सी भैंना पौहे घेरे, रोजु बहिन मेरौ मरदानौ।
चलौ बहिन दोऊ हत मुख धोवें, धौमें दोऊ भैंना जी।
कहत सुनत भैंना लाज लगति ऐ, पांइ तेरे मरदाने जी।
छोटो सी भैंना विधवा है गई, पांय बहिन मेरे मरदाने।
चलौ बहिन दोऊ रोटी जेंमें, जेंमें दोऊ भैंना जी।
कहत सुनत भैंना लाज लगति है, कौरु तेरौ मरदानौ जी।
छोटी सी की मैया मरि गई, सिख न दई काऊ औरन ने।
जीजी की खाट खिरक में लै दें; दोऊ भैंना सोमिंगे।
आधी सी राति पहर कौ तरकौ, कान्हा ने छल बलु खेल्यौ जी।
जो कान्हा तुम छलबलु खेलौ, करि लेउ भोर अंधारयौ जी।
चंदा तौ सिरहने रखि लेउ, सूरज रख लेउ पांयन जी।

९८—विविध

कंसें आयो मेरी बाखर में, कान्हा नेकु बताय दे मोय।
सोई ही मैं अपने महल में, आय जगायो मोय।
बहिया पकरि कै बैठो कर दई, लाज न आवै तोय।
बड़े बरन की बेटी हूँ कान्हाँ, नहिं कायर की जोर।
ओछी जात तुम्हारी लंगर, जानत है सब कोय।
जो सुन पावै ससुर हमारे, पकरि बंधावै तोय।
जो कहीं आ जाय बलम हमारे गुत्थम गुत्था होय।

९९—विविध

जसोदा तेरो लाला अरी बुह ओढ़ै कारी कमरिया।
मैं दधि बेचन जात बिन्द्राबन, कान्हा रोके मेरी डगरिया।
एक दिना जमुना तट पायौ, मेरी फोरन लाग्यौ गागरिया।
फिर मोय 'बंसीबट' पर पायौ, मन मोहन री सुख सागरिया।
एक दिना री बगरी में आयौ, ग्वाल बाल लै सामरिया।

१००—कार्तिक गीत

बनि गयौ वैद आप बनवारी ।
गली गलिन में कान्हा डोलै, निरखत डोलै नारी । बनि०
इत्ते आई कुंमरि राधिका, लै देखौ नवज हमारी । बनि०
सरद गरम भौत भई तिहारें भारी । बनि०
संग की सहेलिन बाहिर काढ़ौ, मूंदौ महल किवारी । बनि०
एक जड़ी तोइ ऐसी री वुंगों, मिट जाइ अजक तिहारी । बनि०
संग की सहेली बाहिर काढ़ौ मूंदौ महल अटारी । बनि०
कानन कुंडल सिर पै मुकट हौ, बंसी की छबि न्यारी ।

१०१—बम्ब का भजन

बनि वैद आप गिरधारी,
वृन्दावन की कुंज गलिन में वेखत डोले नारी ।
एक सखी तो यों उठि बोली, देखौ नबज हमारी ।
और मरज तेरे कछु नाय ग्वालिन, सरदगरम तेरी नारी ।
एक जड़ी तोय ऐसी दूंगो, मिटि जाय कसक तिहारी ।
आज वैद तुम ह्याईं रहयौ, खातर करूँ तिहारी ।
घोवा हरी मूंग की राधूँ, माडूँ फिनक पुरानी ।

१०२—भजन

बनि गये गोपीनाथ वैद बनवारी ।
झाड़ी मंगाय बूटी धरी रे झोली में,
        कुंजन में देत अवाज मधुर बोली में ।
कोई सखी बीमार कै इन गलियन में,
        हम हरें वाकौ दुख एक गोली में ।
ललता ने दई अवाज वैद जी आओ,
        मेरे सास नन्द हूत नांइ दवा दे जाओ ।
राधा ने घूँघट डार नबज दिखलाई,
        जाय रोग धोग नांय ज्वानी छाई ।

१०३—भजन

मोहनी रूप बनायौ हरि नें बानों ।
बांह बरा-बाजूबंद सोहै छल्ला छाप गुस्तानों ।
मुख भर पान, सींक भर सुरमा, लै दरपण कान्हा मुसकानों ।
माय यशोदा यों उठ बोली, तू क्यों बनो जनानों ।

मोय छलि गई वृषभान किशोरी, वा छलिबे को—
बरसाने मोय जानो।
बरसाने की कुंज गलिन में, कान्हा फिरे दिमानों।
भानुराय की पौरि पूंछि के, वाही लाड़िलो सों जाय बतरानों।

१०४—कार्तिक गीत

पधारे जोगिन बन कै गिरधारी बरसाने की ओर।
मोर मुकुट मकराकृति कुंडल, ओढ़ि लियौ कारौ सौ कम्बल।
कछनी रंग मां रंग डारो, गेरू को रंग बोर। पधारे०
बरसाने जबु आयौ पियारे, अलख अलख मुख ते उच्चारे।
पूजन कर रहे सब नर नारी, दोनों कर को जोर। पधारे०
जोगन तें कहि राधे पियारी, कौन गाँव का कुटी तिहारी।
खूब करें तोरी खातिरदारी, चलौ हमारी ओर। पधारे०
पर तू जोगनि लगै न भैना, चारों ओर फिरें तेरे नैना।

१०५—रसिया (प्रस्तुत गीत किसी कारण वश नहीं दिया जा रहा है।)

१०६—कार्तिक गीत

हरे रामा गंगा[1] जी में बांसु गढ्यौ ऐ,
बापरि चढ़ि गयौ कछनी काछि कें।
भाएली मेरो, आयौ री स्याम नट बनि के,
सहेली मेरे आयौ री स्याम नट बनि के।
हरे रामा मथुरा जी में बांसु गढ्यौ ऐ,
वापरि चढ़ि गयौ कछनी काछि कें। भाएली०
हरे रामा नई-नई तोरे तान कन्हैया,
बापरि नाचु दिखावै नबि-नबि कै। भाएली०
हरे रामा नई-नई धुनि ते बंसी बाजें,
बापरि रसिया मारै भरि-भरि कै। भाएली०
हरे रामा सुधि गई सबरी भूलि बदन को,
वापरि डोलूं पगली बनि बनि कै। भाएली०

१०७—कार्तिक गीत

लै ल्यौ बिहारी नंदलाल रे, दहिया मोरी लै ल्यो।
कोरी मटुकिया में दहिया जमायौ, पानी न डारचो एक बूंद रे।
कहां को तुम सुघड़ गुजरिया, कहा तुम्हारो नाम रे।

---

१. गंगा—मानसी गंगा।

बरसाने की सुघड़ गुजरिया, राधा हमारो नाम रे।
तेरे दही को मोल नहीं हैं, तेरी सुरत को मोल रे।
मेरी सुरत को मोल न कीजं, मेरो बलम लठमार रे।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन चित लाय रे।

१०८—कार्तिक गीत

गुजरिया दहिया इधर लेय आव।
एक तो कान्हा तेरा ऊंचा चबुतरा, हमसे चढ़ा न जाये।
कन्हइया हमसे चढ़ा न जाये।
महलन-महलन डोरी पड़ी हैं, डोरी पकड़ चढ़ी आव। गुजरिया०
कहाँ की तुम रहने वाली, क्या है तुम्हारा नाम।
मथुरा की हम रहने वाली, राधा हमारा नाम। कन्हइया०
तुम्हारे दही का मोल नहीं है, कर ले सुरतिया को मोल।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन चित लाय।

१०९—ख्याल

कान्हा बरसाने में आइ जइयो, बुलाइ गई राधा प्यारी।
जो कन्हा मेरौ गाँम न जानो, 'खोर सांकरी' आई जइयो। बुलाइ०
नंदगांव में गाय चरइयो, 'भानोखर' में न्हाय जइयो। बुलाइ०
बरसाने की सखी बुलायके, 'गहबर बन' रास रचाइ जइयो। बुलाइ०

११०—नृत्य गीत

जमना पै आजा रे कन्हैया।
जमना किनारे तुलसी को बिरवा, पूजा करा जा रे कन्हैया।
जमना किनारे गउंए बहुत हैं, गउएं चरा जा रे कन्हैया।
जमना किनारे ग्वाले बहुत हैं, माखन लुटा जा रे कन्हैया।
जमना किनारे सखियाँ बहुत हैं, रास रचा जा रे कन्हैया।

१११—विविध

जरा सी बांसुरी कान्हा कैसे बजाई री।
ओ प्यारे कान्हा कैसे बजाई रे।
मथुरा भी मोहा, बिन्दावन भी मोहा,
जरा सी बांसुरी ने सारे गोकुल को मोह लिया रे।
ललता भी मोही, बिसाखा भी मोही,
जरा सी बांसुरी ने सारे कुंजों को मोह लिया रे।
यसुदा भी मोही, नंदबाबा भी मोहे,
जरा सी बांसुरी ने सारे गोपी को मोह लिया रे।

११२—विविध

सावरिया ने बेन बजाय खाय लई कारे ने ।
बेन सुनत ब्रह्मादिक मोहे, इनपै बेद पढ़्यौ नाय जाव ।
बेन सुनत सब सुर-मुनि मोहे, इनपै ध्यान धर्‌यौ नाय जाव ।
बेन सुनत ब्रज वाले मोहे, इनपै डगर चल्यौ नाय जाय ।
बेन सुनत ब्रज ग्वाले मोहे, इनपै ढोर चरायो न जाय ।

११३—कार्तिक गीत

सामजिया नैं कौन मंत्र पढ़ि, फूक बजाय दई बांसुरिया ।
सुनत बांसुरी सुध-बुधि बिसरी, सूझत नाहि मोहि ब्रज की डागरिया ।
कसकत है जिय निकसत नाहीं, लगी है करेजा सें गासुरिया ।
चंदसखी याकी धुनि सुनि कें, आवत नहि मोहि सासुरिया ।

११४—मल्हार

बंसी बजाई मोहन मोहनी जी,
एजी कोई मोह लई एं ब्रज नारि ।
बंसी ने मेरौ मन हर लियौ जी,
एजी कोई भई है जिगर के पार ।
बिन फन के तन डस गई जी,
एजी कोई जादू सौ दीनौ है डार ।
कच्ची निंदिया जगाई आली स्याम ने जी,
एजी कोई सोवत है भरतार ।
घर वर तजि कें बहना मेरी मैं गई जी,
एजी कोई जमुना जी के पार ।
मनमोहन मन मोहना जी,
एजी कोई गाबत गीत मल्हार ।

११५—रसिया—कृष्ण ख्याल

आली कालिंदी के तीर, बांसुरी बाजी गिरधर की ।
बंशी की टेर करेजा में लागी, उचट परी सोवत ते जागी ।
एक संग मैं उठि घर भागी, मेरे हिरदे में करकी । आली०
ऐसी धुन जामें बीर नेह की, सुधि गई सबरी भूल देह की ।
खूंटी परी किवार गेह की, सबन्योई टरकी । आली०
उलटे सब सिंगार बनाये, कानन में मूंगा लटकाये,
लहंगा तौ मैंने सिर पै ओढ़्यौ, तजि सारी सिर की । आली०

कंधा पै बेंदी धर लीनी, अंगिया पहरि पाँव में लीनी,
छड़े कड़े हाथन में चूरी, पांयन में करकी। आली०

११६—विविध

बंशी बजाई घनश्याम, सुन राधा प्यारी।
बंशी बजाई मेरे मन भाई, जब पड़ी धुन कान।
मैं जमुना जल भरन को आई, उसी समय प्यारी बंशी बजाई,
सुन मुरली की तान, सुन राधा प्यारी। बंशी बजाई०
गंगा जी को प्रभाव न दीखे, पेड़ न दीखे पक्षी न दीखे,
आवत जात कोई न दीखे, न गगरी को ध्यान। सुन०
गले बैजन्ती माल बिराजत, कंठ मणी को डोरा,
सखा संग भैया बलराम, सुन राधा प्यारी। बंशी बजाई०
धेनु चरावत श्याम पधारे, जैसे कि मेरे मन उधारे।
संग धेनु शिशु श्याम, सुन राधा प्यारी। बंशी बजाई०

११७—विविध

भैना कल्लि राति आधी पै, श्याम बजाई बाँसुरी।
सुनि बंशी की घोर, पर्यो मेरे कानन में रसु री।
वा छलिया ने मेरो, हीया लियौ निकासि री।
ऐसी बाजी सौति, गई मेरे हियरा में धसि री।
फरकि उठी एक संग, मेरी सबु नस-नस री।
बाधौ मोकूँ सबरु हियक में, मैं गई फंस री।
बिल बिलात मोइ राति गई सबरी, तौ ढरि री।
तुच्छ बंसुरिया कौ तीनौं, लोकन में जसु री।

११८—सावन गीत

मोइ नागिन बनि के डसि गई, मोहन तेरी बाँसुरिया।
मैं अपने महल में सोय रही, वो बाजी बाँसुरिया।
मेरे लगी करेजा में तीर, जिगर में चुभि गई बाँसुरिया।
रिमझिम रिमझिम मेंहा बरसे, चमके बीजुरिया।
मैं कैसे आऊँ स्याम, हमारी भीजै चूँदरिया।
सासऊ सोवै ससुरऊ सोवै, जागै ननदुलिया।
मैं कैसे आऊँ स्याम, हमारी बाजै पाइलिया।

११९—मल्हार

अरी मेरी बहना पपइया तौ बोलो आधी रात,
बजाई बंसी स्याम ने।

सोवत सो बहना मैं तो जाग पड़ी,
अरी मेरी बहना घर अंगना न सुहात।
कैसे तो जाऊं जोरें स्याम के,
अरी मेरी बहना बरस रही है बरसात।
सास न मोकूं कहूं जान दे,
अरी मेरी बहना, मेरी लागै नाय घात।
ब्रज में अनौखौ छैला नंद कौ,
अरी मेरी बहना रोज करै उतपात।

१२०—कार्तिक गीत

देखि सखीरी मेरौ मन मोह्यो, फिर बाजी वह हरि की मुरलिया।
बाँस कटाऊं वृन्दावन के, उपजै न बाँस, बजै न बाँसुरिया।
एक तो जरावै मोय नंद जी कौ लाला, दूजै जरावै बैरिन सौत कुबरिया।
चंद सखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन मोरी लागी रे सुरतिया।

१२१—मल्हार

स्याम मुरलिया भैंना मेरी बजि रही जी।
एजी कोई कहूं 'मधुबन' की ओर।
जब ते सुनी है मुरली भैंना स्याम की जी,
एजी कोई लियौ है सखी चित चोर।
ऐसी सुरीली मुरली भैंना स्याम की जी,
एजी कोई सुनि कै नाचत वन मोर।

१२२—भजन

श्याम तोरी मुरली नेक बजाऊं।
जोइ जोइ तान भरो मुरली में, सोइ सोइ गाय सुनाऊं।
हमरी बिंदिया तुम्हो लगाओ, मैं सिर मुकुट धराऊं। श्याम०
हमरे भूषण तुम सब पहिरौ, मैं तुम्हारे सब पाऊं।
तुम्हारे सिर माखन की मटुकी, मैं मिलि ग्वाल बुलाऊं। श्याम०
तुम दधि बेचन जाउ बिंद्रावन, मैं मग रोकन आऊं।
सूरस्याम तुम बनो राधिका, मैं नंदलाल कहाऊं।

१२३—रसिया

शरद की पून्यौ पै, बंसी कान्हा ने बजाई आधी रात।
बंसी की टेर सुनी व्रज बालन, घर कों छोड़ चलीं उत जाय।
घर में बालक भूखे रोवें, उनकी सुधि-बुधि दई बिसराय।

१२४—लंगुरिया (देवी के गीत)

रच्यौ रच्यौ है बिन्द्रावन रास लंगुरिया,
चलौ तो दरसन करि आवें।
हाँ हाँ रे लंगुरिया, का तन पै रानी राधिका,
अरु काह पैहरे घनस्याम।
हाँ हाँ रे लंगुरिया, चीर तौ ओढ़े रानी राधिका,
और पीताम्बर घनस्याम। लंगुरिया०

१२५—कार्तिक गीत

सखी री चलौ तौ दरसन करि आँमें,
रोप्यौ रोप्यौ ऐ नंद के ने रासु।
कोंन बरन रानी राधिका, औरु कोंन बरन नंदलाल।
कोई गोर बरन की रानी राधिका, औरु स्याम बरन नंदलाल।
कोंन गाँम की रानी राधिका, औरु कोंन गांम नंदलाल।
कोई बरसाने की रानी राधिका, औरु नंदगांम नंदलाल।
कोंन दुलारी रानी राधिका, औरु कोंन दुलारे घनस्याम।
वृषभानु दुलारी रानी राधिका, औरु नंद दुलारे घनस्याम।

१२६—रास नृत्य गीत

है घनस्याम सुन्दर स्याम हमारौ री।
प्राण पियारौ छल-बल बारौ,
नैनन की सेनन सो चितवा चुराय लियो,
जादू मोपै डारौ री। सुन्दर०
मोर मुकुट पीताम्बर सोहै,
कुंडल चपल हलन मन मोहै,
ब्रज बर गिरधर मुरली अधर धर,
जीवन प्रान हमारौ री। सुन्दर०
नाचत मिल ब्रज बाल लाल संग,
छुमछुम छननन छुमछनन बन,
नाचत सबते न्यारौ री। सुन्दर०

१२७—विविध

कन्हैया फूल गुलाब, राधे रंगा भरी।
पानतें पतरी हरद तै पियरी, भौं पतरी सुत डार,
पैरें तथ दुलरी। कन्हैया०

सालू सरत रेसमी लहंगा, बिंदिया दियैं लिलार,
मौतिन मांग भरी। कन्हैया०

१२८—विविध

मेरी तो जीवन राधा, बिन देखे न आवै चैन।
मोते तौ कछु चूक परी ना, कैसे रूठी सुखदेन।
ये री धीरज होयगौ प्यारी के देखे
लड़ैती के देखे, शीतल होयगें मेरे नैन।
ये री पैंया परूँ मैं तुम्हारे, ललिता जू तुम्हारे,
विशाखा जू तुम्हारे, नैंक जावौ प्यारीयैं लैन।

१२९—स्यौरता

'मानसरोवर' कैसे जाऊं, बीच परै वृन्दावन नगरी,
अरी सुन प्यारी, मान गहे वहाँ बैठी राधिका,
चरण दबा रहे श्री भगवान। मानसरोवर०

१३०—सावन गीत

अरी बहना लै चलौ रेसम डोर,
झूला तौ डारौ बाग में।
नंद भवन पै ह्वै कै सबु चलौ;
अरी बहना मारग में मिल जायं चित चोर।
कुंज गलिन में बैठो होइगौ,
अरी बहना नटवर नंद किशोर। झूला०
नन्हीं नन्हीं बूंदें मैंना बरसतौ,
अरी बहना सीतल पवन झकोर।
वनके तौ फूले आली फूलने,
अरी बहना बागन में फूलौ फुलवार।
व्रज में तौ सोभा बड़ी है रही,
अरी बहना हरियालौ छाई चारों ओर। झूला०

१३१—सावन गीत

झुकि आये कारे-कारे बदरा नदिया किनारे।
कौन झूले कौन झुलावैं, कौन सखी गावे है मलहार।
राधे झूलें कृस्न झुलावें, ललिता सखी गावें है मलहार।
काहे को तेरौ गढ़ौ पालनों, काहे की लागी बलडोर,
चंदन को तो गढ़ौ पालनों, रेसम की लागी बलडोर। झुकि०

१३२—सावन गीत

झुकि जारे बदरा बरसि चौं न जाय, अब तेरी आई है बहार।
कौन की भीजै चम्पा चूनरी, कौन की भीजै पंचरंग पाग। झुकि०
राधा की भीजै चम्पा चूँदरी, स्याम की भीजै पचरंग पाग। झुकि०

१३३—मल्हार

अरी बहना झूला तौ झूलै घनस्याम,
बिन्द्राबन झूला पड़ि गयौ।
शोभा तौ कैसी बहना बनि रही,
एजी कोई देख रही है ब्रजबाम।
कान्हा के सिर पै मोर मुकुट है,
मेरी बहना नूपुर राधा के पाम।

१३४—मल्हार

कृष्ण हिंडोला सो बहना मेरी पर गये जी,
एजी कोई आ रही अजब बहार।
झूला झूलै तो बहना मेरी रानी राधिका जी,
एजी कोई संग में कृष्ण मुरार।
संग की सहेली सो बहना मेरी झोटा दे रही जी,
एजी कोई गावें राग मल्हार।
कारे कारे बदरा सो बहना मेरी उठि रहे जी,
एजी कोई पड़ रहीं नन्हीं-नन्हीं फुहार।
कहा छबि वरणों सो बहना मेरी कृष्ण की जी,
एजी कोई 'गंगा' जी है पार।

१३५—मल्हार

झूला तौ झूलैं राधा प्यारी लाड़ली जी,
एजी कोई सखियां तौ गावै मल्हार।
संग में झूलें नटवर सांवरे जी,
एजी कोई झूलैं तौ नंद कुमार।
बन उपवन की शोभा अति घनी जी,
एजी कोई मोरन की किलकार।
शीतल पवन सुगन्ध चल रही एजी,
एजी कोई नन्हीं नन्हीं परत फुहार।
युगल तौ झूलैं शोभा अति घनी जी,
एजी कोई सखियां तौ गावै मल्हार।

१३६—मल्हार

स्याम सलौने झूला भैना झूलते जी,
एजी कोई राधे रहीं संग झूल।
कहा छबि बरनौं भैना स्याम की जी,
एजी कोई छबि मन के अनुकूल।
निरखत झूला भैना स्याम कौ जी,
एजी कोई सुधि बुधि गये सब भूल।

१३७—हिंडोला

हिंडोलौ कुंज बन डारौ, झूलेंगी राधिका प्यारी।
काहे के खम्भ गढ़वाये, काय की डोर पचरंगी।
केले के खम्भ गढ़वाये, रेशम की डोर पचरंगी।
हौले से झोटा देऔ बनबारी, गिरेगी श्री राधिका प्यारी।
रिमझिम रिमझिम मेहा बरसत है जी, भीजेगी राधिका प्यारी।

१३८—मल्हार

झूला पै रानी राधिका जी, एजी कोई गावत गीत मलार।
नेन्हीं नेन्हीं बुंदियां, देखौ झर लग्यौ जी, एजी कोई बरसत मूसलधार।
पटुली पकरि कर झोटा दै रहे जी, एजी कोई झुकि झुकि कृष्ण कुमार।
पिहू-पिहू पपीहा देखि री करि रह्यौ जी, एजी कोई पग पाइल की झनकार।
कारे-कारे बदरा बहना मेरी चढ़ि रहे जी, एजी कोई डरपी कामिन नार।

१३९—सावन गीत

ऐहो लाल झूलिये नेंक धीरैं धीरैं।
कहे कूँ इतनी रमक बढ़ाबत ब्रूर अरुझत चीरैं चीरैं।
जो तुम झुकि-झुकि झोटन के मिस आवत हौ नीरैं नीरैं।
हम बरजत तुम मानत नाहीं, नागर लेत भुजन भीरैं भीरैं।

१४०—सावन गीत

झूलें कृष्ण राधिका रानी, झूला डर्यो कदम की डार।
रेशम डोरी चंदन पटुली, मोतिन की उजियार।
पीताम्बर की शोभा प्यारी, महिमा अगिम अपार।
फूलन के गजरे कर सोहें, गल फूलन के हार।
दादुर मोर पपहिया बोले, कोयल करे पुकार।
शीतल पवन चले पुरवाई, नन्हीं नन्हीं परे फुहार।
ललता और बिसाखा दोऊ, गीयें गीत मल्हार।

१४१—मल्हार

'बंसीवट' पै झूला झूलते जी, एजी कोई राधा नंद किशोर ।
रतन जड़ाऊ सुभग हिंडोलना जी, एजी कोई अजब रेशमी डोर
बंसी प्रेम की प्रीतम सों लगै जी, एजी कोई जैसे चन्द चकोर।
हिलमिल सखियां झोटा दै रहीं जी, एजी कोई झुकि-झुकि कै चहुँ ओर ।
गहकि-गहकि कै गामें बहुना रागिनी जी, एजी कोई उर न धरत है ठौर ।
बंसी ने बस में करे जी, एजी कोई मन मोहन चितचोर ।

१४२—मल्हार

देखौ री मुकुट झोका लै रह्यौ, एजी लै रह्यौ जमुना के तीर ।
कुंजन झूलें रानी राधिका, एजी बागन झूलें घनश्याम । देखौ०
कौन झुलामें रानी राधिका, एजी कौन झुलामें घनश्याम ।
सखी झुलामें रानी राधिका, एजी सखा झुलामें घनश्याम । देखौ०
कौन बरन हैं रानी राधिका, एजी कौन बरन घनश्याम ।
गौर बरन हैं रानी राधिका, एजी स्याम बरन घनश्याम । देखौ०
कहा तो पहरें रानी राधिका, एजी कहा तो पहरें घनश्याम ।
नीलम फरिया तो रानी राधिका, एजी पीताम्बर घनश्याम। देखौ०
बिजुरी सी चमकें रानी राधिका, एजी बारिध से घनश्याम।
सामन रस सरसावनों, जामें झूलत हैं घनश्याम । देखौ०

१४३—सावन गीत

झूला परयौ है कदम की डार, सखी री चलौ तौ दरसन करि आमें ।
अरे हां री मेरी सखी, एक लंग झूलें रानी राधिका,
औरु इकु लंग झूलें घनश्याम । सखी री०
अरे हां री मेरी सजनी, कौंन गाम की रानी राधिका,
औरु कौंन गाम घनश्याम । सखी री०
अरे हां री मेरी सखी, बरसाने की रानी राधिका,
औरु नंद गांम घनश्याम । सखी री०
अरे हां री मेरी सजनो, काहे की पटुरी बनी,
औरु काहे की बगडोर । सखी री०
अरे हां री मेरी सखी, चन्दन की पटुली बनी,
औरु रेसम की बगडोर । सखी री०

१४४—हिंडोला

चलौ सखि झूलन जांइ, डारयौ बंसीवारे ने हिंडोलनों।
कोया हिंडोले पै झूलती, औरु कोंन झोका देइ।
जा रे हिंडोल पै झूले रानी राधिका, औरु घनश्याम झोका देइ।
कोंन वरन की रानी राधिका, औरु कोंन वरन घनस्याम।
गौर बरन की रानी राधिका, औरु स्याम बरन घनस्याम।
कहा तौ रे जैमें रानी राधिका, औरु कहा तौरे जैमें घनस्याम।
पूड़ी तौ रे जैमें रानी राधिका, औरु टुकड़े जैमें घनस्याम।
कहा तौ रे पीमें रानी राधिका, औरु कहा तौ रे पीमें घनस्याम।
सरबत तौ पीमें रानी राधिका, औरु पानी तौ पीमें घनस्याम।

१४५—विविध

जमुना जी के घाट पै, कान्हा गउएँ चरावै हो राम।
गउएं चरावें लाड़ला, मुख बीन बजावें हो राम।
हाथ लठौतो बांस की, टसरी धोती हो राम।
कांधे काली कामरी, माथे तिलक विराजे हो राम।

१४६—विविध

सोरोंजी[1] के खेत में मेरे कान्हा, गऊ चरावै नंदलाल।
मेरो मन हरि लियौ रे, प्यारे नागर नंद किशोर।
काये की तेरी बांसुरी रे कान्हा, काहे की मोहचंग।
हरे बांस की बांसुरी रे कान्हा, रूपे की मोहचंग।
तोरूँ मरोरूँ तेरी बांसुरी रे कान्हा, धरि पटकूँ मोहचंग।

१४७—भजन

मुरलिया काए गुमान भरी, बंसुरिया काए गुमान भरी।
बनई में काटी बनई में छांटी, बनई में छेद करी। मुरलिया०
सोने की नांए, चांदी की नांए, है बन की लाकड़ी। मुरलिया०
कबहूं हाथ में, कबहूं के मुख में, कबहूं अधर धरी। मुरलिया०

१४८—विविध

कान्हा बैठ्या रे कदम तेह छैंया,
जाको मुरि-मुरि रे—जाको मुरि-मुरि बाजे बैनु,
चरति आवें गैयां। कान्हा०

छैला हो बिन्द्राबन जातो, छैला हो बिन्द्रावन जातो,
मेरे घेरि परे—मेरी घेरि राउर गैल,
पकरि लई बैयां। कान्हा०

---

१. सोरों जी।

छैला बिन्द्रावन की गलियाँ, मेरौ रपट्यौ रे बायों पाँउ,
टूटि गई बैयाँ। कान्हा०

१४९—विविध

अरी मेरौ मारग रोक्यौ, बंशी बजैया ने।
अरी मोय बहुत सताई, दाऊ के भैया ने।
रस्ता में मिल गए नंदलाला, संग में लिबे बहुत से ग्वाला,
अरी मेरो घूँघट खोल्यौ, कृस्न कन्हैया ने।
वो तो ऊधम बहुत मचावै, मेरी एक पेश ना आवै,
अरी मोय बेकल करि दई, रास रचैया ने।
अरी मोय बहुत सताई, दाऊ के भैया ने।

१५०—रसिया

कदम के नीचै आजैयौ, तू गुजरिया बरसाने वारी।
जौं तेरे घर नंद लड़ैगी, तू सींग[1] दिखा कै आजैयो।
जो तेरे घर सास लड़ैगी, वाय सींग दिखाय कै आजैयो।
कदम नीचै आजैयौ, तू सुन बरसाने वाली, कटीलै कजरा वारी।

१५१—होली

राजा बलि के द्वार मढ़ो रे होरी, राजा बलि के।
कोंन के हाथ में झांझ रे मजीरा, तो कोंन के हाथ रतन जोड़ी।
क्रिस्न के हाथ में झांझ रे मजीरा, तो बलदाऊ के हाथ रतन जोड़ी।
कोंन के हाथ रंगीली ढपु सोहै, कोंन के हाथ गुलाल की छड़ी।
क्रिस्न के हाथ रंगीलै ढपु सोहै, दाऊ जी के हाथ गुलाल की छड़ी।

१५२—होली

मची होरी रे मची, होरी, राजा बलि के द्वार मची होरी।
एक ओर खेलें कुंमर कन्हैया, तौ प्यारे एक ओर राधा गोरी।
कौन गांव के कुंमर कन्हैया, तौ प्यारे कौन गांव की राधा गोरी।
नंदगांम के कुंमर कन्हैया, तौ प्यारे बरसाने की राधा गोरी।
कै मन लाल गुलाल घुरयौ ऐ, तो प्यारे कै मन केसरि है घोरी।
नौ मन लाल गुलाल घुरयौ ऐ, तौ प्यारे दस मन केसरि है घोरी।

१५३—होली

को भैया खेलै होरी फाग, को भैया ठाड़ेई डोले।
कृस्न जी खेलें होरी फाग, दाऊ जी ठाड़ेई डोलें।
खेलौ भैया फागु सुहागु, तुमें भाई राम दुहाई।

१. सिंगठा।

खेलत खेलत जांइ बिंदावन की कुंज गलिनु में।
बिंदावन की कुंज गलिनु में, चम्पा मौरि रही ऐ।
चम्पा के नौ दस पेड़, अनार की एक कली ऐ।
दाद़ू जी की गेंद गई ऐ, गेंद गई असमान,
कन्हैया जी ने लाति दई ऐ।

१५४—रसिया

होरी खेल रहे नंदलाल, गोकुल की कुंज गलिन में।
मथुरा की कुंज गलिन में, गोकुल की कुंज गलिन में।
सखियों ने जब ग्वाल पकरि लीये,
कृष्ण पिचकारी भरि कैं लाये।
ऐसी मार दई पिचकारी, गोकुल की कुंब गलिन में। होरी०
सखियों ने जब श्याम पकरि लीये,
ग्वाल मिट्टी लै के आये।
ऐसी सखी लसरे दई महराज, गोकुल की कुंज गलिन में। होरी०
साँझ को जब श्याम घर आये,
माता से ये बचन सुनाये।
हमकों छेड़त है सखी महतार, गोकुल की कुंज गलिन में। होरी०

१५५—रसिया

मोपै जबरन रंग दीनों डार, जसोदा तेरे लाला ने।
गुलाबी पिस्तई और गुलनार, हरौ रंग मोपै दीनों डार।
बिसाखा को दई चुनरी फार, चुनरी दीनी फार के,
नटवर नंद किसोर। मोपै जबरन रंग०
मैं जो पकरन कूँ गई, वाने दीनी बाँह मरोर।
दीनी बाँह मरोर, सखी मेरौ टूटौ गरे कौ हार।
सुनैगी जो न जसोदा माता, कहूँगी कंस रजा सों जाइ।
तुरत ही लैगौ पकरि बुलवाइ, बुलवावैगौ पकरि कैं,
सब मालुम परि जाय। मोपै जबरन रंग०
पिटवावैगौ बाँधि कैं, जाकी सबु सेखी घटि जाय।
सब सेखी घटि जाय, सुनैगौ जो मेरौ भरतार। मोपै०

१५६—(प्रस्तुत गीत किसी कारण वश नहीं दिया जा रहा है।)

१५७—होली

आज बिरज में होरी रे रसिया,
होरी रे रसिया, बरजोरी रे रसिया।

नंदगांव के ग्वाल बाल, बरसाने की सब गोरी रे रसिया।
जो होरी खेलन नाय आवें, उनते चलेगी बरजोरी रे रसिया।

१५८—होली

आज बिरज में होरी रे रसिया,
होरी रे रसिया, बरजोरी रे रसिया।
उड़त गुलाल लाल भये बादर, केसर रंग में बोरी रे रसिया।
बाजत ताल मृदंग झांझ ढफ, और मंजीरन जोरी रे रसिया।
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी, मारत भर-भर झोरी रे रसिया।
इत सों आये कुंवर कन्हैया, उत सों कुंवरि किसोरी रे रसिया।
नंदगांव के जुरे हैं सखा सब, बरसाने की गोरी रे रसिया।
दोउ मिलि फाग परस्पर खेलें, कहि-कहि होरी होरी रे रसिया।

१५९—होली

वृन्दाबन गली झरवाओ, स्याम ब्रजवासी तौ आए होरी खेलन कूं।
लाला कोंन बुहारी दै गयौ, औरु कोंन कर्यौ छिड़काव। स्याम०
लाला पवन बुहारी दै गयौ, औरु इंदुरु कियौ छिड़काव। स्याम०
ऐजी उतते तौ आई रानी राधिका, औरु इतते आये घनस्याम। स्याम०
कोंन बरन रानी राधिका, औरु कोंन बरन घनस्याम। स्याम०
गौर बरन रानी राधिका, औरु स्याम बरन घनस्याम। स्याम०
कोंन चलावे पिचकारी, औरु कोंन उड़ावै गुलाल। स्याम०
कृस्न चलावें पिचकारी, औरु राधा उड़ावें गुलाल। स्याम०

१६०—होली

वृन्दावन के बीच आज ढप बाजें हैं।
बाजें ताल मृदंग झांझ ढप, दौड़त आवें लाल आज हरि नाचें हैं।
उड़त गुलाल लाल भये बादर, रंग की पड़त फुहार आज हरि बरसन लागे हैं।
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी, मैं लायी रंग घोल, आप डर भागन लागे हैं।

१६१—रसिया

रूप दुरै किहि भांति री, तू कहै क्यों न सजनी।
घूंघट में न छिपात सखी, मेरे गोरे बदन की कान्ति री।
बरज रहो बरज्यौ ना मानै, कौन दई संजोग री।
मैं तरुणी और या ब्रज के सब बावरे लोग री।
मोहन गोहन लाग्योई डोलै, प्रकट करत अनुराग री।
अब नागर डफ बाजन लागे, सिर पर आयौ फाग री।

१६२—होली

कुंज बिहारी राधा गोरी, नवल कुंज मिल खेलो होरी ।
अरगज भरि-भरि लई कमोरी, छिरकत झकझोरा झोरी ।
अबीर गुलाल उड़ावत रोरी, ढप दुंदुभि बाजे थोरी थोरी ।
पुहुप पराग जिय भर जोरी, पिय पर डारत हंसमुख गोरी ।
'मीरा' के प्रभु सिघ झकोरी, नवलई गिरधर नवल किसोरी ।

१६३—रसिया

रसिया होरी में मत करो दृगन पै चोट ।
मैं तो लाज भरी बड़ कुल की, तुम तो भरे बड़े खोट ।
अबकी बेर बचाय गई मैं, कर घूंघट की ओट ।
नंद किसोर यहाँ जाय खेलो, जहाँ तुम्हारी जोट ।

१६४—रसिया

सखियाँ आज नहि संग में, कन्हैया ने घेर लई कुंजन में ।
फागु रचौ है मोहन के दुआरे, मोहन ठाड़े बिन्द्रावन में ।
गागर पटकी चूनर झटकी, और भिगोइ डारी रंग में ।
एक चटकत एक पटकत आवै, एक नाचत कर जोरी ।
एक ते एक जोवन मदमाती, कोई रंग में बोरी ।

१६५—होली

रंग में रंग डारी, ऐसे स्याम खिलारी ।
भरि पिचकारी सनमुख मारी, भीजि गई तन सारी । रंग०
काहे कौ पचरंग बनायौ, काहे की पिचकारी । रंग०
केसरि को पचरंग बनायो, रूपे की पिचकारी । रंग०
बिन्द्राबन की कुंज गलिन में, खेलत फाग मुरारी । रंग०

१६६—होली

होरी खेलन मैं तो ब्रज को चलूंगी ।
श्याम सुन्दर जहं फाग खेलत हैं, ले संग राधा प्यारी ।
वृन्दाबन की कुंज गली में, कर में ले पिचकारी ।
रंगीली फाग रचौंगी ।
खूब अबीर उड़ा के रंग से, चारौं दिसा भरौंगी ।
जमुना जल को रंग बासन्ती, बरसा पात करौंगी ।
श्याम के रंग में रंगौंगी ।

१६७—होली

चलि बरसाने खेलें होरी, चलि बरसाने खेलें होरी।
'ऊंचोगांव' नाम बरसानों, अये हाँ महां खेलें होरी।
काहा पहरि आये कुमर कन्हैया, अये हां काहा पहरि राधा गोरी।
मुकुट बांधे आये कुमर कन्हैया, अये हां चीर पहरि राधा गोरी।

१६८—होली

होरी खेलन आये श्याम, नगर में वेति बुलाओ राधिका।
एहो लाला कहाँ लै आई ग्वालिनी, अये अरु कहाँ लै आये ग्वाल।
एहो लाला रंग लै आई ग्वालिनी, अये अरु ढप लै आये ग्वाल। नगर०

१६९—होली

कान्हा धरे रे मुकुट खेलै होरी।
कौन गांम के कुंअर कन्हैया, कौन गांम राधा गोरी।
नंदगांम के कुंअर कन्हैया, बरसाने राधा गोरी। कान्हा०
कैंरे बरस के कुंअर कन्हैया, कैंरे बरस राधा गोरी। कान्हा०
पांच बरस के कुंअर कन्हैया, सात बरस राधा गोरी। कान्हा०
कैसे बरन के कुंअर कन्हैया, कैसे बरन राधा गोरी। कान्हा०
सांम बरन के कुंअर कन्हैया, गौर बरन राधा गोरी। कान्हा०

१७०—होली

बरसाने में सामरे की होरी रे।
लाल गुलाल लाल भये बदरा, मारत भरि-भरि झोरी रे।
कै मन तौ याने रंग घुरायौ, कै मन केसरि घोरी रे।
नौ मन तौ याने रंग घुरायौ, दस मन केसरि घोरी रे।
कौन गांम के कुंमर कन्हैया, कौन गांम राधा गोरी रे।
नंदगांम के कुंमर कन्हैया, बरसाने की राधा गोरी रे।
कहा हाथ में कृष्ण कन्हैया, कहा हाथ में गोरी रे।
ढाल हाथ में कुमर कन्हैया, लठा हाथ में गोरी रे।
कहा कर रहे ग्वाल बाल सब, कहा करैं सब गोरी रे।
ढाल रोपि रहे ग्वाल बाल सब, लठा चलाइ रहीं गोरी रे।

१७१—होली

बरसाने में स्याम आजु होरी।
कौन के हाथ गडूअरा सोहै, कौन के हाथ कमोरी। बरसाने०
कान्हा के हाथ गडूअरा सोहै, राधा के हाथ कमोरी। बरसाने०

कान्हा भरि मारे पिचकारी, चूंदरि रंग में बोरी। बरसाने०
उड़त गुलाल लाल भये बादर, खूब मचौ आज होरी। बरसाने०

१७२—होली

मोहन नंद लाल बरसाने सजि आये।
कै लख आई ग्वालिनी रे, कै लख आये ग्वाल।
एक लख आई ग्वालिनी रे, द्वै लख आये ग्वाल।
कौन के हाथ पिचकारी रे, कौने सोहे गुलाल।
राधे के हाथ पिचकारी रे, कान्हा सोहै गुलाल।
अटि गई अटा अटारी रे, अटि गई चौपारि।
अटि गये कोट कांगरे, अटि गई ब्रजनारि।
जमुना अटि गई सारी रे, बादर भये लाल।
ऐसी होरी खेलें गिरधारी, अपनी ससुराल।

१७३—होली

मोहन नंदलाल बरसाने सजि आये।
होरी तौ खेले सांवरौ, अपनी ससुरारि, अपनी ससुरारि।
हाथ गहै पिचकार, मा उड़ै गुलाल, मा उड़ै गुलाल।
रचि दई अटा अटारी, रचि दई चौपारि, रचि दई चौपारि।
रचि दई सारी सरजैं, भुमि है गई लाल, भुमि है गई लाल।
आधी धार जमुन की, बादर भये लाल, बादर भये लाल।

१७४—होली

मत मारौ हगन की चोट, रसिया होरी खेलें तौ आइजइयो फागुन में।
सीस दूध की मटुकी सोहै, एजी हातन लग्यौ गुलाल। रसिया०
बरसाने की चतुर गोपिका, लाला नन्दगाँव के ग्वाल। रसिया०
ग्वाल बाल सब संग में लइयो लाला, हँस-हँस खेलें फाग। रसिया०
भर-भर कै पिचकारी मारौ लाला, औरु उड़ाऔ गुलाल। रसिया०

१७५—होली

होरी खेलन मोहि जान दै, मेरी अच्छी ननदिया।
हा हा खाय तेरे पंयां परूं हूं, इतनो अरज सुन कान दै।
जो तू मेरी परम हितू, मत बरजै मोहि जान दै।
खेलन दै मोहन नंद नंदन, सो यह मोकू जिय दान दै। होरी०

१७६—होली

अबकी फागुन मोसे खेलो ना होरी।
छोड़ि देओ अबोरा, अंचल छोड़ि मोरी।

काऩ्हा मान जाओ, उमर मोरि थोरी।
तोरो सपथ मैं उमरिया की थोरी। अब को०
अब की बार गम खा जा रे कन्हैया,
जब होरी खेलै जब होय बरजोरी। अब की०
आओ सैंयां मुख देखो पलंग पै,
मुख जैसें चन्दा नयन जैसें तोरी। अब की०

१७७—होली

मैं तो पइयां परूं कर जोरी, स्याम मोसों खेलौ न होरी।
सारी चुंदरिया रंगन भिगोवौ, तौ इतनो अरज सुनो मोरी। स्याम०
छीन झपट मोरे हाथ से गगरी, जोर से बहियां मरोरी।
मैं लपकी छीनन को मोहन, झटपट मटकी पटकी। स्याम०

१७८—रसिया

होरी खेलूंगी स्याम तोते नांइ हारूं, होरी खेलूंगी।
हां होरी खेलूंगी-खेलूंगी, अबु होरी खेलूंगी।
अरे हां, हां वारे रसिया, उड़त गुलाल लाल भये बादर।
भर गडुआ रंग कौ ढारूं, ऐ हां भर गडुआ रंग कौ ढारूं। होरी०
होरी में तोय गोरी बनाऊं लाला,
अरे हां, हां वारे रसिया, होरी मैं तोय गोरी बनाऊं,
पाग झगा तेरौ फारूं, ऐ हां पाग झगा तेरौ फारूं। होरी०
औचक छतियन हाथ चलावै,
अरे हां, हां वारे रसिया, औचक छतियन हाथ चलावै,
तेरो हाथ बांध गुलाल मारूं, ए हां तेरो हाथ बांध गुलाल मारूं। होरी०
आजु करूं तोइ अपनो चेरौ,
अरे हां, हां वारे रसिया, अजु करूं तोय अपनों चेरौ,
तब तौ पै तन-मन ब्वारू, ऐ हां तब तो पै तन-मन ब्वारूं। हो०

१७९—होली

रंग मैं कैसें होली खेलूं री, जा सावरिया के संग।
रंग होरी कैसे खेलूं रें, सावरिया तेरे संग।
कोरे-कोरे कलश मंगाये, तामैं घोरो रंग।
भरि पिचकारी सन्मुख मारी, चोली हो गई तंग। रंग मैं०
तबला बाजे सारंगी बाजे, औ बाजे मृदंग।
ढप ढोलक मृदंग मजीरा, औ सितार मुरचंग।
काना जी की वंशी बाजे, राधा जी के संग। रंग मैं०

१८०—होली

अरी मन मोहन मदन गुपाल, सखियन संग होरी खेलें।
मैं देखि रही थी होरी, मेरे सिर पै धरी कमोरी,
अरी मेरी दई है मटुकिया फोरि। सखियन०
मोते बौहत करी बरजोरी,
अरी मेरे मुख ते मल्यौ गुलाल। सखियन०
मेरी बैयां पकरि मरोरी,
अरी मेरा छीन लिया रूमाल। सखियन०
मेरी दधि की मटुकी फोरी,
अरी मेरे संग में भई अचाल। सखियन०

१८१—रसिया

होरी खेलन आयौ स्याम आज याय रंग मां बोरौ री।
कोरे-कोरे माटन में सखि केसर घोरौ री।
रंग बिरंगौ करौ याय आंगन में घेरौ री।
नकुवा की सी मेल निकारो पकर झंझोरौ री।
पीताम्बर लेऔ छीन याय पहराय देऔ चीरौ री।
हाथ जोर कर करै बीनती तब याय छोरौ री।
हम दधि बेचन जांय बृन्दावन यह दगरौ घेरै री।
ग्वाल बाल इक ठौरे हैके जोर जोरै री।
हरे बांस की बांसुरी जाहे तोर मरोरौ री।
'चंदसखी' यों कहे कैसो बन बैठौ भोरौ री।

१८२—होली

फागुन बड़े भाग ते आयौ, स्याम संग खेलौ री होरी।
केसर मांटन में घुरवाऔ, रंग बिरंगे रंग मंगवाओ।
जीवै सोई खेलै भैना, फिर खेलै कोरी। फागुन०
आज छैल कूं नारि बनाओ, चलो पकरि मनमोहन लाऔ।
बहुत दिना माखन की ब्बाने कीनी चोरी रे। फागुन०
सुनतेई सकल सखी उठि धाईं, घेर लिये नंदलाल कन्हाई।
दधि कौ दान बिसम मनमोहन, कीन्ही बरजोरी रे। फागुन०
बांह पकरि मोहन की लीनी, मनमानो गोपिन ने कीनी।
केसर लै के मोहन के सिख ते नख लौ ढारी रे। फागुन०
बाबा नंद जसोदा बुलाओ, दाऊ की कहा ठमक दिखाऔ।
मनसुख श्रीदामा के गले में, डारी नेह की डोरी रे। फागुन०

१८३—होली

किन्ने मारी पिचकारी री, राधा के बदन पै।
जिन्ने मारी जिन मोह बतैयो, नाता दूंगी गारी। राधा०
जसुदा जी कौ बेटा, नंद जी कौ छौना,
उन्ने मारी पिचकारी राधा के बदन पै। किन्ने०

१८४—होली

राधे रानी हमारी पै रंगु बरसै।
रंगु बरसै रे गुलाल बरसै, राधे रानी हमारी पै रंग बरसै।
सोने की थरिया में भोजना परोसे,
जेयें गोपाल मेरौ जिया तरजै, राधे रानी हमारी पै रंगु बरसै।

१८५—होली

छिटकाइ लेउ केस भमर गोरी।
कौन पै पैरूं हरी पीरी चुरियां, कौन पै पैरूं नथ बुलरी,
रंगीली चुनरी। छिटकाइ लेउ०
स्याम पै पैरू मैं हरी पीरी चुरियां, राधा पै पैरूं नथ बुलरी,
रंगीली चुनरी। छिटकाइ लेउ०
बिन्द्राबन की कुंज गलियन में, राधा संग स्याम खेलें होरी।
छिटकाइ लेउ०

१८६—होली

स्यामा स्याम सौं होरी खेलत आज नई।
उड़त गुलाल लाल भये बादर, रंगन भीर भई।
सखी सखा भये, सखा सखी भये, माधव आप भई।
पलट्यो रूप देखि जसुमति की, सुध बुध बिसरि गई।
नाचत नाच नचावत होरी, जसुमति भवन गई।
फागुवा दियौ है मंगाय मातु ने, कंचन जटित गई।
सूरदास या ब्रज में बसि के, यह मूरत उरगही।

१८७—होली

अब रथ फेरि मुरलिया वारे।
चंदा तड़फैं सूरत तड़फैं, तड़फ रहे अब नौ लख तारे।
गैया तड़फैं, बछड़ा तड़फैं, तड़फ रहे अब ग्वाल विचारे।
गंगा तड़फैं, जमुना तड़फैं, तड़फ रहे सब नदिया नारे।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, कब होंगे प्रभु दरस तिहारे।

१८८—विविध

अब रथ पहुच्यो सावरिया को दूरि ।
जो मोय ऐसी खबरिया होती, मैं रथ के अगाड़ी सोती,
मेरा हो जाता चकना चूर । अब० (अपूर्ण)

१८९—कार्तिक गीत

कूबरी कन्हैया जू के मन बसी ।
बैठी रहत निकट जमुना के, चंदन खौरि दिये खासी ।
अपनो उदर भरन की खातिर, मोहि लियो है ब्रजबासी । कूबरी०
नजर परं हुइ जात उरबसी, जेहि देखत आबत हाँसी ।
मैं तो रोज गलिन में देखत, असुर कंस की है दासी । कूबरी०
हाथ पांय जाके ऐंचक बैंचा, दूबर पीठ गठरिया सी ।
कूब के लात दई कान्हा ने, सीधी हुइ गई तकुआ सी । कूबरी०
सोरह सहस गोपिका छांड़ी, कुब्जा कीन्ही सुख बासी ।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि चरनन की है दासी । कूबरी०

१९०—भजन

जय बोलो जसोदा नंदन की ।
भाल बिसाल माल मोतियन की, खौर बिराजं चंदन की ।
पैठि पताल कालिया नाथ्यो, फन पर निरत करंदन की ।
जमुना के नीरे तीरे धेनु चरावें, हाथ लकुटिया चंदन की ।
इंदर कोपि चढ़्यो ब्रज ऊपर, नख पर गिरवर धारन की ।
केसी मारे कंस पछारे, असुरन के दल भंजन की ।
उग्रसेन को राज तिलक दियो, उनहूँ के बंस बढ़ावन की ।
आप जो जाय द्वारका छाये, पल पल लहर तरंगन की ।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, चरन कमल जग बंदन की ।

१९१—कार्तिक गीत

काना तुम तो बसो मथुरा नगरी, मेरी उमर बीत गई गोकुल में ।
मेरे रस्ता में बाग लगाय जइयो, कलियां तोड़ूं मैं अकेली ।
नेक आइ जइयो गोकुल नगरी ।

१९२—भजन

सुरतिया रे लाग रही हरि सों ।
आवन कहि गये अजहूं न आये, बीत गये बरसों ।
यह जोवन तो चार दिना को, आज काल परसों ।
अंबुआ फूले, केसू फूले, औ फूली है सरसों । सुरतिया०

१९३—होली

होरी के दिन होरी आई रे, कहीं बाजे बांसुरी।
सोने के कलसे में रंग घुराये, भरि भरि पिचकारी चलाई रे। कहीं०
अबीर गुलाल थार भर रक्खे, लै लै गुलाल उड़ाई रे। कहीं०
मेरौ संदेसो उन्हें जा कहियो, होरी में तेरी याद आई रे। कहीं०

१९४—होली (रजपूती)

कोइलिया बागन डोलै, डोलै रे मीठे बोल बोलै रे।
पपीहा ने करि दियौ सोर डाली।
मोइ कल न परति बिंदाबन, बिंदाबन में फरि आइजा।
बोई तान फिर सुनाइजा बंसी बजाने वाले।
गोरी गोरी बईयां जाके लम्बे लम्बे केस,
राधा कूं छाड़ि आयौ कूबरी के देस।
ऐसी कहा भई ऐ करुई, जापै नीम छाई ऐ।

१९५—सावन गीत

घर आओ स्याम बिहारी रे, बादल की कोर कारी रे।
कारे कारे बादल उमड़ उमड़ आवे, बिजुरी चमकै न्यारी।
दादुर मोर पपीहा बोले, कोयल बोले कारी।
नन्हीं नन्हीं बुंदियां बरसन लागीं, मेरी भीजै पचरंग सारी।
इत मथुरा उत गोकुल नगरी, जमुना बह रहीं भारी। घर०

१९६—कार्तिक गीत

आपन जाइ गंगा जी में छाये रामा, सुधि न लई घर आंमन की।
मोते कोई तौ कहौ हरि आंमन की, हरि आंमन की मन भावन की।
आपन जाय गोकुल जी में छाये रामा, सुधि न लई घर आंमन की। मोते०
ए दोऊ नैंन कट्यौ नांइ सानें रामा, घटा उठी ऐ जैसे सामन की।
आप नहिं आये, खरच नहिं भेज्यौ रामा, ए अखियां तौ सामन की। मोते०

१९७—मल्हार

सांमन महीनां मलार गावैं कामनी जी, एजी कोई घटा उठति घनघोर।
पपिहा पी-पी करै 'थेरी बाग' में जी, एजी कोई बन में कोहकत मोर।
आंम की डारन बैठी कुहलिया जी, एजी कोई करति निराले सोर।
राधा अभागिन घर बैठी रोवती जी, एजी कोई आए न नंद किसोर।
को समझावैं व्याकुलता बढ़ि रही जी, एजी कोई रहि-रहि उठत मरोर।

१९८—सावन गीत

खोल अटरिया मैं तो होऊंगी बैरागन ।
बिजली कड़के मोय डर लागे, बरसन लागे वो तो मूसलधार ।
जा चमक बिजली उस 'मधुवन' में, सोवत होंगे कहीं नंदलाल ।
जब से गये मोरी सुधि नहि लीन्हीं, ऐसे कठोर भये ।
गोकुल ढूंढ़ा, वृन्दावन ढूंढ़ा, न पाये वो तो नंद लाल ।

१९९—कार्तिक गीत

राधा—सुन सखि ललिता री, कान्हा को मोरे ढूंढला । हां कान्हा०
ललिता—जब देखूं जब जमुना किनारे, गइया चराय रहा री ।
राधा—वही तो मोरा सांवरा । सुन०
ललिता—जब देखूं जब कदम की छैयां, मुरली बजाय रहा री ।
राधा—वही तो मोरा सांवरा । सुन०
ललिता—जब देखूं जब कुंज गलिन में, रास रचाय रहा री ।
राधा—वही तो मोरा सांवरा । सुन०
ललिता—जब देखूं जब सबके बिचले, सैननि सौं बतराय रहा री ।
राधा—वही सो मोरा सांवरा । सुन०
ललिता—जब देखूं जब बगिया किनारे, नैननि सौं बुलाय रहा री ।
राधा—वही तो मोरा सांवरा । सुन०

२००—होली (साखी)

मोय स्याम बिना कल कहां ते ।
सूखि-सूखि पिंजरा है गई राधा, लगि गई ऐ पलिका ते । मोय०
खन उतरे खन चढ़ें महल पै, मारे मूड़ अटा ते । मोय०

२०१—रसिया

अरी सखियन में आवै लाज, कहूं मन मोहन की बतियां ।
आजु भोर मोइ मिलौ नन्दलाला, कानन कुंडल गले में माला ।
अपने कण्ठ लगाइ, करी मोते हंस-हंस के बतियां । अरी०
राति पलिग पै जबु मैं सोई, मोइ बैरिन बंसी मोही ।
बंसी बैरिन भइ हाय, मोरी धड़कत रही छतियां । अरी०
बा छलिया ने छल मोते कीनों, आंख खुली दरसन नहिं दीनों ।
पल-पल बीते बरस बरोबर, नीर भरी अखियां । अरी०

२०२—मल्हार

स्याम बजाजा मेरे घर बांसुरी जो,
एजी कोई तड़पत है व्रिज नार ।

मथुरा जी की सखियाँ कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई जनम लेउ नंदलाल। स्याम०
गोकुल की सखियाँ कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई लाओ जसोदा सी माय। स्याम०
बृन्दावन के ग्वाले कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई गऊ चराऔ नंदलाल। स्याम०
मधुवन की सखियाँ कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई माखन चुराऔ नंदलाल। स्याम०
बंसीबट जी की सखियाँ कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई चीर चुराऔ नंदलाल। स्याम०
सबरे बिरज की सखियाँ कान्हा यों कहैं जी,
एजी कोई रास रचाऔ नंदलाल। स्याम०

२०३—भजन

आजा आजा रे कन्हैया चितचोर, हमें तो तेरी आस लगी।
ग्वाल बाल सब तुम्हें बुलावें, जल्दी से आजा रे कन्हैया।
आकर धेनु चराओ, हमें तो तेरी आस लगी।
ब्रज की गोपी तुम्हें बुलावें, जल्दी से आजा रे कन्हैया।
आकर रास रचाओ, हमें तो तेरी आस लगी।

२०४—कार्तिक गीत

माधौ जी मैं न भई बन मोर।
मोरा होती, जमुना तट रहती, कुंज में करती किलोल।
मोरा होती जंगल बिच रहती, नांचत ही मुख मोड़।
उड़-उड़ पंख गिरे धरनी पै, बीनैं ब्रज के लोग।
उन पंखन को मुकुट बनावें, पहरेंगे नंद किसोर।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन चितचोर।

२०५—कार्तिक गीत

एरी कुबजा ने जादू डारा, जिन मोह्या स्याम हमारा।
सोलह सहस गोपिका त्यागी, कुबजा संग सिधारा।
हम कुलवंती नार छोड़ के, दासी मनहिं बिचारा।
जादू कीन्हां टोना कीन्हां, पढ़-पढ़ मंतर मारा।
चंदसखी भज बालकृष्ण छवि, आखर स्याम हमारा।

२०६—विवाह गीत (रतजगे का गीत)

ऊंचो रे चौरों चौकड़ी, हींगुर ढोरी ऐ ब्यारि ।
तुलसी कौ बिरुला आदरु ऐ,
जे हर आये पाहुने, कहा लै रे आदरु लेउं ।
चंदन चौकी डारूं बैठना, दूध पखारूंगी पांइ ।
सोरन ब्यार परोसली, दही ऐ कटैमा भूरी भैंसि ।
मोर छलीन कौ बीजना, गढ़ मथुरा कौ थारु ।
जेए ओ जसुदा के लाड़िले, अंचरन ढोरूंगी ब्यारि,
जेंए रे जूठे उठि चले, सोइबे कूं ठौर बताइ,
ऊंची अटरिया ईट की, दिबल बरें छछिआइ ।
सोमत सोए द्वै जनै, धरि गलबइयां हाथ ।
सोमत सोए द्वै जनै, जागि परूं तौ हत नांय ।
जौ हरि ऐसी जानती, अंगना में बमती खजूरि ।
वापै चढ़ि हरि जू ऐ देखती, लगते बसतऐ कै दूरि ।

२०७—कार्तिक गीत

कौन गुन सुरति बिसारी अरे हां रे ऊधो ।
इन गलियन हम हरि संग खेले, अब का फिरे अकेले । अरे०
हमको जोग भोग कुबिजा को, लिख-लिख भेजे पाती । अरे०
इन पटियन हम डारयो फुलेला, अब क्या जटा बढ़ावे । अरे०
सोलह सहस गोपिका छोड़ी, करि कुबिजा घरवारी । अरे०

२०८—रसिया

क्या मेरी तकसीर, कुंजन बन छोड़ी ऐ ऊधो ।
जो मैं होती मानिक मोती, कृष्ण बांधते मुकुट,
मुकुट में जड़ि रहती ऐ ऊधो ।
जो मैं होती मोर की पंखी, कृष्ण धारते सीस,
सीस पर रहती ऐ ऊधो ।
जो मैं होती बांस की बंसी, कृष्ण बजाते दिन रैन,
अधर पर रहती ऐ ऊधो ।
जो मैं होती जल की मछरिया, कृष्ण करते अस्नान,
चरण रज लेती ऐ ऊधो ।

२०९—भजन

ऊधौ सब कारे अजमाये ।
कोयल काग भमर अति काले, उनहूं के रंग सुहाये ।

ये तीनों मतलब के गरजी, बहुरि पास बे आये।
कोयल के सुत कागा पाले, हितकर कण्ठ लगाये।
बड़े भये जब समझन लागे, कुल अपने को धाये।
आप तो जाय मथुरा जी छाये, ब्रजवासी भरमाये।
सूरदास यों कहत राधिका, अब को पार लगाये।

२१०—भजन

ऊधौ कहि सो फेर मत कहिय ।
माधौ कहि सो फेर मत कहियो।
जो हर हमको उबरी चाहे, अनबोला चुप रहियो।
काया को जला भस्म कर देंगी, आन मसान जगइयो।
या हरि हमको आन मिलाओ, या ले चलो साथै।
पूरा वैर करा हरि हमसे, उनसे यौं जा कहियो।
कुब्जा सेती रास रचा है, हमें जोग लिख दीयो।
गोपी प्रान तजें गिरधर बिन, हमें दोष न देइयो।

२११—भजन

ऊधौ पाती कैसे लिखूं, लिखी ना जाय।
पाती लिखत मोरा कर कंपत है, डोबा बहि-बहि जाय।
पाती लिखत दोऊ नयन बहत हैं, नदियाँ बहि-बहि जायँ।
एक-एक बात मेरी ऐसी मरम की, छतियाँ फटि-फटि जाय।
हाड़-माँस सब खून सूखिगो, भस्म टटोलेंगे आय।।

२१२—रसिया

ऊधो जी तुम जाय स्याम को समझाना।
हमको लिख-लिख जोग पठावें, आप तो बैठे मौज उड़ावें,
सौतन लियौ बिरमाय—निठुर बन गयौ कान्हा।
लिखते में कछु शर्म न आई, जियत खसम किन भस्म रमाई,
प्रान रहे घबराय—लिवा उनको लाना।
जमुना जल में स्वाद न आवे, ब्रज मंडल देखो नहिं भावे,
घर अंमना न सुहाय—न कुछ खाना पीना,
प्यारे स्याम बेगि सुधि लीजो, राधा कहे दरश मोय दीजो,
बरसाने में आय—प्रेम रस बरसाना।

२१३—होली

यहाँ ते कित गयौ मथुरा बासी रे ।
भरे खिरक बछरन के छोड़े, गाय छोड़ि गयौ प्यासी रे । यहाँ०
सोलह सहस गोपिका छोड़ी; दरसन हूँ की प्यासी रे । यहाँ०
गोपी ब्रज बन बिलपत डोलें, बिलपत डोलें दासी रे । यहाँ०
रास की आस करि रहीं सखियां, कितकूँ गयौ अविनासी रे । यहाँ०
नित उठि परैं अकाल बिरज में, फिर लै खबर अधनासी रे । यहाँ०

२१४—भजन

श्याम दरसन दीजो, राधा जोगनि जाति भई ।
गहरी नदिया नाँव भंझोरी, अधवर भंवर गई ।
खेई है तो पार लगाय दै, नाहीं तो जात बही । श्याम०
ठाड़ी कदम तर राधा बिलखैं, लट तार्कें चिलक रही ।
अंग भभूति जटा मृगछाला, माला हाथ लई । श्याम०
हमते तोड़ और से जोड़ी, ऐसी कब निबही ।
राधा छोड़ी कुंज गलिन में, कुबजा संग लई । श्याम०
गोकुल ढूंढ़ि विन्दावन ढूंढ़्यौ, मथुराऊ ढूंढ़ि लई ।
चन्दसखी मोहन मिलिवे चों, द्वारका की गैल गही । श्याम०

२१५—भजन

रुक्मनि जी के मन में बसि गये स्याम ।
कारी घटा स्याम कर मानैं, नित उठि करैं प्रनाम ।
स्याम बरन सिंगार बनावैं, पूजैं सालिगराम ।
मन की माला फेरे रुक्मनि, भजन लगी है हरि नाम ।
नाना भाँति बनाये मन्दिर, और तुलसी अस्थान ।
अन्न खाय ना पानी पीवैं, जमीं पै करैं विश्राम ।
तुलसीदल ऊपर गंगा जल, भोजन को का काम ।
चंदसखी भज बालकृष्ण छवि, गावैं सीता राम ।

२१६—विवाह गीत (घोड़ी)

कुंडिनपुर आना रंगीली घोड़ी वारे ।
बाबा ने कृष्ण बुलाये, सिसपाल दल चढ़ि आए ।
रुकिमिन ने पाती भेजी, कृष्ण चले आए ।

२१७—अछूतों का गीत

ब्राह्मण—दूरि देस कढ़ि गये किशन, मेरी कछनी रहि गई द्वारिका,
रथ को देउ बगदाइ, नहिं मेरे प्राण अजायें जाय ।

कैतौ किशन काऊ पै संगाइ दै, कै रथु बगदाइ कें लै चलौ,
बगदाइ रथ अन्तरज्ञानी।

कृष्ण—आवत जात देर है जागी, बहुत झमेला लगि जागौ,
कुंडिनपुर ते बारि रुकमिनी, तीनों असुर ब्याहि लै जागौ।
चलि महाराज नई लै देगों, तिहरी फटी पुरानी,
बगदाइ रथ अन्तरज्ञानी।

ब्राह्मण—ना चहिये तेरे मुहर रुपैया, ना चहिये पीताम्बर की,
सांचौ कोर लगी कछनी में, ना चहिये लम्बे वर की,
मेरी श्याम फटी मंगवाइ दै, पंज मिसुर ने ठानी;
बगदाइ रथ अन्तरज्ञानी।

तीन लोक के अपरम्पारी, लम्बी बाँह किशन ने कीनी,
बाइ ठौर पै सूरति पाई, लाइ माधौ की गहाइ दीनी,
हँसि गये मिसुर बहौतु मुसिकाय, जब ब्राह्मण ने जानी,
बगदाइ रथ अन्तरज्ञानी।

२१८—विवाह गीत (रुक्मिनी मंगल)

सब गांमें सहेलरियाँ कै रुकमिन हो हो कै, रुकमिन लाडलड़ी।
रानी औ राजा बतराये, रुकम लियें बुलवाय,
ब्याहन जोग भई कुंवर, अब रुकमिन कौ करो हो विवाह।
बात एक हरे हरे, बात एक नीकी कही,
राजा ने पंडित बुलवाये, लगुन दई लिखवाय,
लगुन लिखाय द्वारिका भेजो, श्रीकृष्ण कौ रचौ है विवाह।
बात एक हरे हरे, बात एक नीकी कही,
इतनी बात सुनी है रुकम नें, रुकम उठें रिसियाय,
अँखियाँ लाले, भौंएं टेढ़ी, बोलत बचन रिसाय,
तुम मत कौन हरी।
वो हर तौ है ग्वार गवारा, जानत है संसार,
लाज सरम वाकें हत नाय, ऐसौ है कुल,
वो ओढ़त डोलें कारी कमरी।
सुसपाल है राय चंदेरी, जानत है संसार,
लगुन लिखाय सुसपाल कूं भेजो, जग में होय आवाद।
बात एक हरे हरे, बात एक सोच के कही;
लगुन लिखाय सुसपाल के भेजी, नाई पहुँचो द्वार,

लगुन लिखाय हाथ पर रक्खी, कांपन लागे दोऊ हाथ,
सिर से पगड़ी गिरी।
सभी नातेदार बुलाये, आये माई बाप,
कर ज्यौनार बरात कू निकरे, मौहर धारौ है सुसपाल,
खुशी सब नर नारी।
सगरे बराती यों उठ बोले, मती चलौ सुसपाल,
ब्याह तुम्हारो हौन न देगौ, जो सुन पावैं जादौराय,
आवैगौ वो तो वाई घड़ी।
सजी बरात कुन्दनपुर पहुँची, घुरन लगे निसान,
इतनी सुनी द्वारका वारे, छूटन लगे हर कै बान,
देखो जी अब कैसी भई।
रुकमिन तौ देवी ढिग आई, करन लगी उपगार,
प्रान जात देवी नैं देखे, गह कर पकरी है बाँह,
काहे कूं भैना जात मरी।
इतनी सुनी द्वारका वारे, रथ दीयो जुरवाय,
पकर बाँह रथ में बैठारी, लैकैं चलौ है जादौराय,
देखो जी अब कैसी भई।
रुकम भइया सुसपाल पैं आये, करन लगे उपगार,
नाक तुम्हारी औ हमारी काट गयौ है जादौराय,
बात अब हरे हरे, बात दोऊ कुल की बिगरी।

२१९—विवाह गीत (लाड़ी)

मैं तोय पूंछूं रुकमिन लाड़ली, अरी तेरे किस बिध लम्बे-लम्बे केस,
सुहागिन रुकमिन लाड़ली।

माय हमोरी नैं दूध पखारे, अरी मेरे इस गुन लम्बे-लम्बे केस। सु०
मैं तोय पूंछूं रुकमिन लाड़ली, अरी तेरे किस बिध बड़े-बड़े नैन।
माय हमारी नैं काजर गुलाइये, अरी मेरे इस गुन बड़े-बड़े नैन।
मैं तोय पूंछू रुकमिन लाड़ली, अरी तेरी किस बिध सूआ सारी नाक।
माय हमारी नैं सुआ पारियैं, अरी मेरी इस गुन सुआ सारी नाक। सु०
मैं तोय पूंछू रुकमिन लाड़ली, अरी तेरे किस बिधि पतले-पतले ओंठ,
माय हमारी नैं बीड़ा चाबियैं, अरी मेरे इस गुन पतले-पतले ओंठ।
मैं तोय पूंछू रुकमिन लाड़ली, अरी तेरो किस बिध पियरौ सरीर।
माय हमारी नैं उबट न्हावाइयैं, अरी मेरो इस गुन पियरौ सरीर। सु०

मैं तोय पूँछू रुकमिन लाड़ली, अरी तेरो किस बिध लचपचो सरीर।
माय हमारी नै केला सिंचियै, अरी मेरो इस गुन लचपचो सरीर। सु०

२२०—दातौन गीत (विवाह गीत)

ए हरि जू भोर भयौ परभात, माए जसोदा नें दाँतिनि माँगी ऐ।
ए हरि जू हेला तौ दिए दस पाँच, गरब गहीली ने ऊतरऊ ना दियौ।
ए मैया मेरा लाऊँ गंगा जलु नीरु, दाँतिनि लाऊँ चोखे जार की।
बेटा दाँतिनि तुम करि लेउ, हमरी तौ दाँतिनि बिरियाँ टरि गई।
ए मैया कहौ तौ देउ निकारि, कहौ खदे दऊँ धन के बाप के।
ए बेटा काए कूँ देउ निकारि, काए कूँ भेजौ धन के बाप के।
ए बेटा जे तौ जनेगी नंदलाल, नाँउ चलै तिहारे बाप कौ।
ए बेटा जे धन जनेगी धीय, नातौ जुरेगौ काऊ गांम ते।
ए रुकमिनि चों न करौ सौल्है सिंगार, तिहारे लिवैया बीरन अइए।
हरि जू कौन तौ आयौ लेनहार; कौन तौ आयौ छेता धरि गयौ।
ए रुकिमिनि बीर तिहरि लेनहार, नाऊ कौ छेता धरि गयौ।
ए हरि जू ब्याहु नाँ ए सगाई, कहा रे करिगें पीहर जाय कें।
रुकिमिनि तुम पीछे भये नंदलाल, उनको रच्यौ ऐ बिवाहु।
धिमरा के उठि चों न डुलिया पलान, रुकिमिनि तौ जाँगी बाप के।
ए रुकिमिनि पौहोंची ऐ कोस पचास, जाय उतारी उनके बाप के।
ए हरि जू साँझ भई भोरु अंध्यार, क्रिसन हरि मरकि बैठे देहरी।
ए मां मेरी कहा गुनि भोरु अंध्यार, का गुनि लरिका बारे अनमने।
बेटी दीए बिन भोरु अंध्यार, मा बिनु लरिका बारे अनमने।
ए धिमरा के उठि चों न डुलिया पलानि, रुकिमिनि लिवैया हरि जू वे चले।
हरि जू पौहोंचे ऐ कोस पचास, जाइ मढारे हरि जू रुकिमिनि के बाप के।
रुकिमिनि बैठी ऐ ताई-चाची बीच, हरि जू ने डारी पारसी।
रुकिमिनि उठि चों न करौ सिंगार, तिहारे लिवैया हरि जू आइऐ।
ऐ ताई-चाची रुठिबु कैसौ सिंगार, बिड़रीनु कैसो बुलामनों।
ऐ रुकिमिनि मेरो तेरो जियरा एकु, मानु तौ राखौ जसोदा माय कौ।

२२१—जन्म गीत (रोचन गीत)

लाओ रे हरव देउ बहुत चहचहौ, बेगि कुन्दनपुर जाओ,
रुकिमिनि के बाप के।
बैठें बाके पाँचौ भइया, नाऊ नें करौ है जुहार,
रुचन कहाँ पाइयै।

२२२—जन्म गीत

बधैया बधैया म्वां हतिनापुर कूं जाउ, श्रीकृष्ण के बेटा भयौ।
बे कैसे बे कैसे आमें आजु, बिन डोला बिन पालकी।
बधैया-बधैया म्वां रुकम नगर कूं जाउ, बेटी रुकिमिनि के बेटा भयौ।
बे कैसे बे कैसे आमें मडुआ आजु, बिन रे राते बिन पीयरे।

२२३—जन्म गीत (सातिये)

धरहु सुभद्रा सातिये, अपने बिरन दरबार बधाई बाजी नंद के।
गैंहननु में बड़ौ हाँसुला, जो मेरी ननदी ए देउ।
जाऊ ऐ ननदी नां लैति, हठीली हठि परि रही।
भाभी हम तौ बुही लिंगे, बदन बदी ऐ आधी राति।
भाभी खोलौ ककनवा कौ कौल, बदनि बदी ऐ सोई देउ।
लाली जिह ककनां मेरे बाप कौ, तिहारे बिरन गढ़ायौ सोई लेउ।

२२४—जन्म गीत (जगमोहन लुगरा)

राजे ननद भावज दोंनी बैठिए, राजे रुकिमिनि नौ-दस मास गरभ ते।
राजे ननदुलि बात चलाइए;
राजे जौ तिहारें होइ नंदलाल, जगमोहन लुगरा दीजिये।
बीबी जो मेरे होइ नंदलाल, जगमोहन लुगरा लीजिए।
राजे ननद चलीं ऐ अपने सासुरे।
बाके होरिलु सबद सुनाइए, जगमोहन लुगरा मांगिये।
राजे कैसे बचाऊं अपने प्रान, ननदुलि ते छिपाइए।
राजे घुरि गए तबल निसान, गमन लागे सोहिले।
राजे नौआ के ऐ लेउ बुलाय, लुचन लैकें भेजिए।
राजे जाऔ मेरी मांय कहो समझाय, रुकिमिनि ने जाए हीरालाल।
राजे इक बनु नांखि दूजौ बनु नाख्यौ,
तीजे बन पहुँचे ऐ जाय; रुकिमिनि के बाबुल कें।
भरी रे कचहरी बबुल जी की बैठिये।
राजे बिरन जी बैठे उनके पास, राजे नौआ कें ने लुचन दिखाइए।
बाके बाबुल खुसी रही उर छाय, बिरन वाके सुनि रहे।
राजे हाथी बंधे ऐं हतसार, जरद अंबारी दीजिए।
राजे घोड़ो बंधो ऐं घुड़सार, अच्छौ सौ जीनु धराय, झांझन पहिराइए।
नौआ के रे देउ चढ़ाय।
राजे भरी रे कचहरी बाबुल उठि चले,
राजे छोटे बिरन उनके साथ, महलनु जाइ पहुँचिए।

राजे कही ऐ माय समुझाय, भवज उनकी सुनि रहीं।
राजे रुकिमिनि जाए नंदलाल, बधाई लै कें आई ए।
राजे षटरस भोजनु वनाय, तौ सोरन थार लगाइए।
राजे तोडर देउ पहिराय, तौ लाओ पांचौ कापड़े।
धेवते के सोहिले।
करहु भोजनु रुचिमान, बिदा करि दीजिए।
राजे जगमोहन लुगरा ओ लाउ, नाऊ ऐ धरि दीजिए।
राजे लै जाउ बगल दबाइ, काऊ न दिखाइए।
राजे बीच में बसति ऐ सुभद्रा तौ उनें न दिखाइए।
राजे इक बन नांखि दूजौ बन नाखिए।
राजे तीजे बन आइ मंझारे सुभद्रा के महल में।
राजे पूछति पीहरि की बात कहा लै आइए।
राजे बजि रहे तबल निशान, गबत छोड़े सोहिले।
राजे हम तौ लुचन लै कें भेजे रुकिमिनि के बबुल कें।
राजे तुमकूं बधाए लै कें आए, कृस्न लैवे आइए।
राजे सोने के तोडर लाउ नाऊ ऐ पहिराइए।
राजे साल दुसालोओ लाउ, नाऊ ऐ उढ़ाइए।
राजे उठाऊँ भतीजे के सोहिले।
राजे षटरस भौजन बनाय नाऊ ऐ जिमाइए।
नौआ के भोजन करिबे कूं आऊ तौ आसन बिछाइए।
नौआ के जिह कहा बगल तिहारी ? तौ जाइ दिखाइए।
लाली नहन्ना, उस्तरा एं पेटी, तौ जाकौ कहा दिखीइ।
नौआ के हमते दगा मति खेलै गाग कौ ऐ नाऊ।
तेरी बगल जगमोहन लुगरा दबि रहे, तौ हमते छिपाइए।
राजे चौं न दिखाइए।
नौआ के चलूंगी तिहारे ई साथ बदनि पूरी है गई।
लाली तुम तौ बावरी गमारि मेरे संग मति चलौ।
तिहारे बिरन तौ आमें, लैनहार, अदरु करि जाइए।
लाली रे बिना बुलाए मति जाओ आदरु नाएं होय।
राजे रुकिमिनि कौ डोला ऐ साथ, नाऊ के संग चलि दई।
राजे एक बनु नाँखि दुजौ बनु नाखिए।
राजे तीजे बन पहुंचौ ऐ आइ बबुल जी के महल में।
राजे बिरन जो बैठे चटसार, देखि भैना हँसि दए।

भैना देखि भजीजे कौ सोहिलौ भाजति तुम आइए ।
राजे महलन भावज सुन रहीं ।
राजे हथियन में बड़ौ हातो, जरद ऐ अंबरी ।
राजे अरजुन नंन्देऊ, बैठि जाउ ननद सुख पाइए ।
राजे घोड़ियन में बड़ौ घोड़िला,
राजे चन्दा सुरज से मेरे भानजे, जा चढ़ि जाइए, ननद सुख पाइए ।
राजे बकुचिन में बड़ी चूंदरी,
राजे जाइ ननदिया ऐ देउ, ओढ़ि घर जाइए ।
राजे गहनेन में बड़ौ हांसुला,
सो जाइ ननदिया ऐ दीजिए, जाइ पहरि घर जाउ ।
भाभी हथिया बंधे बहु तेरे घुड़िल घुड़सार में ।
भाभी बदनि बदौ ऐ सोई देउ, जगमोहन लुगरा दीजिये ।
लाली जे लुगरा ना देउं कुमर जी के सोहिले ।
लाली भेज्यौ ऐ जनम दिखावनि माय, मजलसिया बाबुल मोल दे ।
लै आयौ री मेरौ तरकसु बेदौ बीर,
राजे अपनी भवज कौ ऐ साहिबा ।
राजे जाइ नांइ दुंगी, ओढूं तौ अपने चौक पै ।
लाली को तिहारे गए लेनहार, को तौ छेता धरि गये ।
भाभी ना कोई गए लेनहार, नाये छेता धरि गए ।
भाभी हमरे बबुल की अथैयां, इनें देखिबे आइए ।
भाभी हमरी माव की रसोइया, इनें देखन आइए ।
भाभी हमरे बिरन घर सोहिलौ, सुनि कै घर आइए ।
लाली लौटि बगदि घर जाउ, तौ फेरि मति आइए ।
राजे नैननु भरि लाई नीर, तौ हिलकिनु रोइए ।
भाभी हमरे बबुल के ऐ देस, जनम भुम्मि मेरी रहीं ।
भाभी तुम न जनम देउ आजु, लौटि घर जाइए ।
लाली बैठी ऐ तनमन मारि, नैननु जल छाइए ।
राजे बाहिर ते आये मां के जाए, बिरन आए महल में ।
राजे हमरी बहिन कैसें अनमनी ?
राजे भीतर ते बोली रुकिमिनी, बहिन तिहारी रूठिए।
राजे लाऔ जगमोहन लुगरा मोल बहिन कूं दीजिए ।
रुक्मिनि जो कहूँ बिकते जे होय मोल तौ हाल जु लाइए ।

चाहें आमे लाख द्वै लाख खरीदि कें लाइए।
बहिन लौं पहिराइए।
रुक्मिनि जुरि रहीं, पटना की पैंठ भी तौ रे हम जाइए।
भैना लाइ दऊं दखिनी सौ चीर, बाइ ओढ़ि घर जाइए।
राजे ब्वाऊ ऐ बहिन नायें लैति हठीली हठि परि रही।
रुकिमिनी जौ तुम बहिन न देउ जांइ हम पैंठ कूं।
गोरी करें दोसरौ ब्याहु सौति तुम पर लाइए।
रुकिमिनी करहु सोलहों सिंगार निकरि पीहर जाइए।
रुकिमिनी धनियां बहुत लाऊं ब्याहि बहिनि नायें पाइए।
रुकिमिनी निकरि बाहर तुम जाओ, डुलिया तौ ठाड़ी द्वार पै।
लाली बगदौ बगदि घर आउ जगमोहन लुगरा पहिरिए।
लाली पहिर ओढ़ि घर जाउ, तौ मुख भरि असीस जु दीजिए।
भाभी अमरु रहें तिहारी चुरियां, अमरु तिहारे बीछिया।
भाभी जीओ तिहारे कुमरु कन्हैया।
कुमरु तिहारे चौक में, खेलें तिहारे आंगन में।

२२५—भजन

सुदामा कहै भामिनी तें, मोहि मत पठवै री हरि के पास।
फाटी पाग और जामा फाटौ, बिन पनहीं के पांय।
बहुत दिनन के बिछुड़े मित्तर, पहिचानेंगे नांय।
मुट्ठी तंदुल लिये मंगाई, उनने लिये गांथ बँधवाय।
हरि से मिलन सुदामा चाले, हरि के द्वार पुकारे जाय।
हरि ने अपने दूत पठाये, भितर लिये बुलाय।
चंदन चौकी डार दई है, बैठे हैं कण्ठ लगाय।
तीन लोक दीने ठाकुर ने, और दियौ पाताल।
मृत्यु लोक की सुरत संभारी, रुक्मनि पकड़ौ है हाथ।
चन्दसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि के चरन बलिहार।

२२६—कार्तिक गीत

कैसे ब्याहू राधे, कन्हैया तेरौ कारौ।
घर घर की वह गऊ चरावै, ओढ़ै कम्बल कारौ।
छीन झपट दधि खात बिरज में,
कैसे चलैगौ राधे कौ गुजारौ।

मेरी राधा अजब सुन्दरी, तेरौ कन्हैया कारौ।
कारौ कारौ मत कह ग्वालिन, है ब्रज को उजियारौ।
नाग नाथ रेती पर डारयौ, मारी फूंक कृष्ण भयौ कारौ।
पीताम्बर की कछनी काछें, मोहन मुरली वारौ।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, कान्हा है तिरलोकी सूं न्यारौ।

२२७—कार्तिक गीत

कैसे ब्याहूँ राधा, कन्हैया तेरो कारौ।
कारौ कारौ मत कर ग्वालिन, मेरो जग उजियारौ।
पैठ पताल कालिया नाथो, मारी फुसकार बदन हुइगौ कारौ। कैसे०
तेरो कन्हैया ऐसौ कारौ, जैसे रैन अंधियारौ।
मेरो राधिका ऐसी गोरी, जैसे तारन में चन्दा को उजियारौ। कैसे०
वृन्दावन की कुंज गलिन में, गौयें चरावन हारौ।
छीन-छीन दधि हममे खाई, कैसे हुइहै मेरी राधा को गुजारौ। कैसे०
सूरदास यों कहत जसोदा, अबहि कन्हैया बारौ।
अपनी राधिका घर बैठारो, रहन देउ मेरो कान्ह कुंवारौ। कैसे०

२२८—कार्तिक गीत

जसोदा री तेरौ लाला कन्हैया कारौ कारौ री।
लोग कहैं याहै कारौ कबरौ, अरी वुतौ मेरौ चन्द उजारौ री।
कारी कोयल जब कूकत है, मोहे लागै अति प्यारी री।
कारे मेघ गगन पर छावें, बर्सा करत सुखारी री।
कारौ काजर डारि नैन में, सुन्दर लागत भारी री।
कारे केश शीश पर राखत, तिनकी शोभा भारी री।
कारे काजर सों प्रीतम को, पतियां लिखती प्यारी री।
लोग कहै याहै कारौ कबरौ, अरी वुतौ मेरौ चंद उजारौ री।

२२९—विवाह गीत (बरना)

नन्द को वुलारो मेरो बन्ना।
सिर सोहै जाली को चीरा, कलगी लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
कान सोहै 'सूरति' को मोती, चुन्नी लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
नन्द को वुलारो मेरो बन्ना।
नैन सोहै 'कश्मीरी' सुरमा, बिरिया लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
गले सोहै सुबेदारी कण्ठा, माला लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
नन्द को वुलारो मेरो बन्ना।

हाथ सोहै हिरउदी अँगूठी, पहुँची लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
अंग सोहै कांसे को जामा, जमघर लहरिया लहरियादार मेरो बन्ना।
नन्द को बुलारो मेरो बन्ना।

२३०—विवाह गीत (गौना गीत)

हरे हरे गोबरु अंगन लिपायौ, रंग महल में।
अरी चूंनन चौक पुराये री माई, रंग महल सें।
अरी आजु तौ बधाई बाजी, रंग महल में।
अरी कूंम करस इमिरत भरि लाये, रंग महल में।
अरी ऐंपन मोरपटा धरि दीये, रंग महल में।
कृस्न पटा पै बैठे री, रंग महल में।
संग सजन की जाई री माई, रंग महल में।
अरी भुआ बैहना करति आरती, रंग महल में।
अरे उनरी झगरति अपनों नेगु, रंग महल में।
देति असीस चले ब्रज बन कूं, रंग महल में।
जियौ तुम्हरे कुंमर कन्हाई री माई, रंग महल में।

२३१—विवाह गीत (गारी)

जब किसन हरि घर सें निकसे, भले भले सगुन बिचारे,
रंग बरसेगो, हाँ हाँ राम रंग बरेसगो।
रंग बरसे और अमरत बरसे, और बरसे कस्तूरी। रंग०
जब ही किसन हरि बागन आये, सूखे पात हरिआये। रंग०
जब ही किसन हरि कूअन आये, सूखे नीर भराये। रंग०
जब ही किसन हरि जनवासे आये, लम्बे लम्बे फर्श बिछाये। रंग०
रंग बरसे और अमरत बरसे; और बरसे कस्तूरी। रंग०
पाँय पखारत लोग सिहाहैं, नारि ने मंगल गाये। रंग०
पाँति बनाइ बराती बैठे, लाल गुलाल उड़ाये। रंग०

२३२—विवाह गीत (गारी)

हो मोहन बृखभान के आए।
जब रें हरि जू घर से सिधारे, मले भले सगुन बिचारे। हो०
जब रे हरि जू बागन आए, मालिन फूल बिखेरे। हो०
जब रे हरि जू गलियन आए, लाल गुलाल उड़ाए। हो०
जब रे हरि जू जनवासे आए, लम्बे लम्बे फरस बिछाए। हो०
जब रे हरि जू द्वारिन आए, कामिनि कलस सजाए। हो०
जब रे हरि जू पौरिन आए, सखियन मंगल गाये। हो०

२३३—विवाह गीत (बरना)

गोबिन्द प्यारे नन्द लला, मोहन मुरारे नन्द लला।
सीस बनेजी सेहरा सजा, लड़ियाँ सम्हालैं ध्वाकी चन्द्रकला। मोहन०
कान बनेजी के मोती सजा, कुण्डल सम्हालैं ध्वाकी चन्द्रकला। मोहन०

२३४—होली

मुकट धर साँवरे रे, लाला हूँ बापन कौ जाँय।
एक अचम्भो मैं सुनौं रे लाला, इनके एक माइ हूँ बाप।
एक बाप मथुरा बसै, कोई दूजौ गोकुल गांम। मुकट०
कौंन माइ नें उर धरे रे, कौंन गरभ रही दस मास।
माइ जसोदा उर धरे रे, रानी देवकी गरभ रही दस मास। मुकट०
कहाँ रे कन्हैया औतरे, कहाँ घुरे ऐ निसान।
मथुरा कन्हैया औतरे रे, गोकुल घुरे ऐ निसान। मुकट०

२३५—विवाह गीत (बरना)

मेरी लागे की बढ़नी बेल, कन्हैया हरे हरे साँवरे छोटे से।
एक सखी तो यों उठ बोली, किस विध काना छोटे?
दूजी सखी तो यों उठ बोली, अम्मा ने खेंच न बढ़ाये। कन्हैया०
एक सखी तो यों उठ बोली, किस विध काना कारे?
दूजी सखी तो यों उठ बोली, अम्मा ने उबटन न न्हवाये। कन्हैया०

२३६—विवाह गीत (गारी)

हाँ हाँ श्याम रंग बरसैगो, हाँ हाँ राम रंग बरसैगो।
सब सारे 'बरसाने' बारे, 'रावल' बारे सारे। श्याम०
बाबा जी 'भानोखर' बारे, 'प्रेमसरोवर' बारे। श्याम०
रामानंदी सबही सारे, सारे श्याम बिरवनी बारे। श्याम०
महल तिबारे सबही सारे, सारे बहत पनारे। श्याम०
बाग बगीचा सब ही सारे, सारे सींचन हारे। श्याम०
पोथी पत्रा सबही सारे, सारे पंडित ससुर हमारे। श्याम०
गवैया बजवैया सब ही सारे, सारे नाचन हारे। श्याम०
पागन बारे सबही सारे, सारे मूड़ उघारे। श्याम०
चूल्हा चौका सबही सारे, सारे पोवन हारे। श्याम०
ठाड़े ठाड़े सबही सारे, सारे बैठन हारे। श्याम०
इन गारिन को बुरा न मानों, कृष्ण चन्द्र के प्यारे। श्याम०
लाला की सगाई ते भई राजी, दै दै राजी। श्याम०
कोई मनसुखा से जुगत लगाई, सखी काजर वारी। श्याम०

२३७—विवाह गीत (बरना)

मोहन बन्ना आयौ बगिया में, बाग की खिल रही कली कली।
कोई कली हरनाम जपत है, कोई जपै सिव हरी हरी।
सीस बन्ना के सेहरा सोहै, लड़ियां समारन राधा ठड़ी। मोहन०

२३८—विवाह गीत (विदाई गीत)

सात बरस की राधिका, समधी जी पाली दूध पिवाइ।
सरन तिहारी वै दई, जाय मन कर लीजो।
दुख मत दीजौ बारी जी। सात०
बासी कूसी टूकड़ा समधी जी, लीने भोग लगाय।
नोरे पोरे चीथरा, जाय मन कर लीजो,
चित कर लीजों बारी जी। सात०

२३९—विवाह गीत (विदाई गीत)

बृषभान की लली, साँवरिया सो नेह लगाय के चली।
तुम आवौ रे अहीर के, तुम हमरी गली,
चंदन छिड़कूंगी तेरी पगड़ी। बृषभान०
हाथन में गजरे गुलाब की छड़ी,
ठाड़े रहियो लाल बिहारी, मैं कब की खड़ी।
छोटी मोटी मटकी दधि सों भरी,
रंगमहल में श्री राधे जी खड़ी। बृषभान०

२४०—होली

अइयो अइयो रे कन्हैया नंदलाल, रंगीली होरी में।
'ऊंचोगाँम' धाम बरसानो, खेलें गोपी ग्वाल।
दुलहन प्यारी राधिका रे, दूलह नंद कुमार। रंगीली०
फेंट गुलाल हाथ पिचकारी, रंग की उड़ै फुहार।
पिचकारी याकी छीन कें, गाल मल्यौ ऐ गुलाल। रंगीली०
जो सुख रंभा तनिक नहि पायौ, जदपि पलोटत पाईं।
श्री बृषभानु सुता पद अंबुज, जिनके सदा सहाय। रंगीली०

२४१—होली

रंग डारूं रे तोपै रंग डारूं, नेकु आगें आ।
नेकु आगे आ स्याम तोपै रंग डारूं, नेकु आगे आ।
रंग डारूं तोरे अंगन सारूं, अरे तेरे गालन पै गुलचा मारूं चार।
एड़ी-टेढी पगिया बांधे, अरे पगिया पै फूल री पारूं यार।
ब्रज दूल्हे यै छैल अनोखौ, अरे तोपै तन-मन-जोबन मेरे वारूं यार।

२४२—भजन

सोवत राधा प्यारी स्याम ने जगाई है।
स्याम ने जगाई है राधा उठ धाई है।
मींड़त आँख राधे लेत जम्हाई है।
बाहें बरा बाजूबंद सोहै, हाथ सोहै कंगना।
गल बीच हार सोहै, गोदी सोहै ललना।
कंधा पर धोती लीनी, हाथन में लोटी लीनी।
ओंघा की दातुन तोड़ी, राधा मुसकाई है।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, होत सबेरा राधे जमना न्हावे जाई है।

२४२ A.—कार्तिक गीत

हंसि हंसि पूछे राधा बात कृष्ण से,
हमने सुनी दूजो ब्याह करो है?
तुम ले आये नारि रुक्मिनी,
रुक्मिन संग तुम डारी भमरिया?
कहत कृष्ण जी सुनो राधा प्यारी,
दूजे ब्याह को चिह्न बताओ।
कहत राधिका सुनो कृष्ण जी,
दूजे ब्याह को चिह्न बताऊं।
जो तुमने दूजो ब्याहु न कीनो,
नैननि काजर कहां तुम लागो?
जो तुमने दूजो ब्याहु न कीनो,
पायन मेंहदी कहां तुम लागी?
जो तुमने दूजो ब्याहु न कीनो,
पीरे से कपड़ा कहां तुम पायो?
ऐसे वचन जिन बोलो राधा प्यारी,
बात हमारी सुनो दिल प्यारी!
पढ़न गए गुरु की चटसारे,
स्याई के छींटा नैन बिच लागे।
संग सखिन के घूमे बाग में,
मेंहदी के पात पायन बिच लागे।
धोबी को धोने दिये सब कपड़े,
सो और से मिलकें रंगे सब कपड़े।

२४३—कृष्ण कलेवा

और दिना तौ हम उठें अबेरी, आजु सिवैसी उठि गये राम ।
अरी हेरी सासुलि देउ न काम बताय, कि सुन्दर स्याम हरी ।
पहले तो तुम देउ बुहारी, पीछे बर्तन मांजौ राम,
अरी राधा भरि लाओ पनिघट कौ पानी । कि सुन्दर०
नन्द दिवर दोऊ बैठे कलेऊ, हमकूँ देउ कलेऊ राम ।
जो माये होती मैं माता, डौरे लेती उठत कलेऊ,
अरी हेरी सासू हुई कलेऊ की देरी । कि सुन्दर०
आगे का गोबर कर आये, पिछवारे कौ पानी,
अरी हेरी सासू करली झारी बुहारी । कि सुन्दर०
हेरी सासू बारह ताने दीनी बुहारी, सोलह दई भइय न की गारी ।
अरे हरजू ठाड़े ते दीनी तौ ढकेल । कि सुन्दर०
खम-खम चढ़ गई राधा अटारी, जा खोली झंझन किवारी,
अरी राधा सोय गई चादर तान । कि सुन्दर०
गायन पेते आये रे कन्हैया, पूछन लागे माता से,
हेरी मइया राधा दै बेगि बताय । कि सुन्दर०
जो बेटा तोय राधा चाहिये, मा मन पगड़ी रक्खो राम ।
अरे हेरे बेटा राखौ ब्या कौ मानु । कि सुन्दर०
खम-खम महलन चढ़ि गये कन्हैया, जाय झरोखा झांके राम ।
अरी हेरी राधा कह दै अपनी बात । कि सुन्दर०
अरे हरजू तेरी माता ने मोय बारह तौ ताने दीनी बुहारी,
सोलह दय गई गारी ।
अरे हरजू ठाड़े ते दीनी मो ढकेल । ·कि सुन्दर०
अरी हेरी राधा ऊतो अपनी माता, तू है मेरी प्यारी । कि सुन्दर०

२४४—दोहा

वृन्दावन बंसी बजी रे प्यारे, मोहे तीन्यो लोक ।
चे तीन्यों मोहे नहीं, सो प्यारे रहे कौन से लोक ॥१॥

वृन्दावन यानिक बन्यौ, भंमर करें गुंजार ।
दुलहिन प्यारो राधिका, दूलहे नन्द कुमार ॥२॥

तू राधा बड़ भागिनी, कौन तपस्या कीन ।
तीन लोक तारन तरन, सो जग तेरे आधीन ॥३॥

२४५—हीर

गोधन पूंजन नीकसी रैयां, सब के हाथ ।
कै तौ पूजूं एकली, कै कान्हां के साथ ॥१॥
नन्दगाँव कौ रे सामरौ और गयौ 'सांकरी खोर' ।
मटुकी रे पटकी सीस ते और भुक्यौ हार कौ रे ओर ॥२॥
बृन्दावन के बिरछ को मर्म न जाने कोय ।
डार-डार और पात-पात पै राधे-इ-राधे होय ॥३॥
नन्द बाबा के रे सामरे, रे मति बरसाने रे जाइ ।
मात जसोदा रे न्यों कहैं, छोरा वहां पै तेरी ससुरारि ॥४॥

२४६—हीरो

अरे दूध रे बिलोवै रानी राधिका और कान्हा मांखनु रे खाइ ।
अरे औरु यें रे खवावै मोरा बांदरा और 'बंशीवट' पै रे जाइ ॥१॥
अरे अरसठि रे तीरथ कौ रे जलु भरयौ और न्हाइ लेउ रे अपने आप ।
अरे कछा रे असुर मारयौ साम रे और कटि जाइ तेरौ रे पापु ॥२॥
अरे गोधन रे कै मांड़ूं रे तू बड़ौ और तोते बड़ौ न रे कोय ।
अरे तू तौ रे पुजवायौ श्रीकृष्ण ने तोय कोंननु जानत रे होय ॥३॥
अरे राधे रे कै ठाड़ी रे महल पै औरु चितवनि चारयौ रे ओर ।
अरे नन्द रे बबा को रे सांमरौ औरु जनि कहूं आमतु रे होइ ॥४॥
अरे राधे रे कै ठाड़ी रे महल पै ओरु ठाड़ी सुखावै रे केश ।
अरे कंसे रे सुनहरी रे खिलि रहे और भमर बासना रे लेय ॥५॥
अरे ब्याहु ए रे रच्यौ ऐ श्रीकृष्ण कौ औरु बिरकभान के रे द्वार ।
अरे दुलहनि रे बनी ऐ रानी राधिका औरु दुलहा नन्द कुमार ॥६॥
अरे राधा के कै जी के हात में औरु एक फूल एक रे सेत ।
अरे राधा रे कै पूछी रे कृष्ण ते और कृष्ण जवाबु न रे देत ॥७॥

बुन्देली लोकगीत

१—भजन

मेरे कौन जन्म के पाप सो बैरी मोकों कंस भयो।
आर देवकी पार यशोदा दोनों पनियाँ जांय।
जाय के पहुँची जमुना पमर पर जसुदा यों बतराय। मेरे०
काहे बहिना अनमनी औ काहे दुर्बल गात।
कौन हाल है तेरो बहिना साँची देउ बताय। मेरे०
इतनी सुन के कहै देवकी सुन बहिना मेरी बात।
छह पुत्र भये मेरी कोख से कंस डारे मरवाय। मेरे०
ऐसे बचन सुने यसुदा ने सूर कहै समझाय।
अब की बालक होय जो तेरे बहिना गोकुल देउ पहुँचाय। मेरे०

२—कजली

भादों की रैन अंधियारी, कन्हैया जायो रे हारी।
छाई चहुँदिसि अंधियारी, आधो रात कोठरी कारी रामा।
हरे रामा उतरि गगन से ज्योति, गोद जसुदा के रे हारी।
बसुदेव देवकी हर्षे, बहु फूल गगन से बर्षे रामा।
हरे रामा खुल गये बजर किवार, भयो भुंसारे रे हारी।
धीरे से लेय हरी को, बसुदेव चले गोकुल को रामा।
हरे रामा मेघ लगे घहरानि, जमुन जल बाढ़ी रे हारी।

३—विविध

गोकुल है उस पारा, कैसे जाऊं नंद के द्वारा।
हातन पावन बेड़ी पड़ गई, पड़े है जजीरन तारा। कैसे०
हातन पावन बेड़ो खुल गईं, खुले हैं जजीरन ताला। कैसे०
भादौं वदी अष्टमी के दिन, जन्म लियो नंद लाला। कैसे०
गहरी नदिया नाव पुरानी, खेवन वाला हारा। कैसे०

४—फाग

ब्रज में प्रगटे कुंवर कन्हैया, अरु बलवाऊ भैया।
देवकी गर्भ जन्म हरि लीनौं, फिर भई जसुधा मैया।
जसुधा जबै नंद गुहरायौ, लागे लैन बेलैया।
बुजन बुलाय दान बहु दीनौं, मन सौं लक्षक गैया।
करी कृपा सूर पै निस दिन, भू के भार हरैया।

५—जन्म गीत

आली ब्रज में महराज भये, सखी ब्रज में गोपाल भये।
जब हरि जनम लये मथुरा में, जगत पहरुवा सोय रहे।
लै बसुदेव चले गोकल सों, झपट कें जमना चरन गहे।
आगूं धसे जमना जल गहरी, पीछूं सिंह गुंजार रहे।
उल्टी रीति भई गोकल में, कन्या दे गोपाल लये।
कौन ने जाये कौन खिलाये, कौना के लाल कहाये।
देवकी ने जाये जसोदा खिलाये, नंद बाबा के लाल कहाये।
काहे के छुरा नरा छीनियो, काहे खपर असनान।
सुन्ने छुरा नरा छीनियो, रूपे खपर असनान।
काहे के सूप संजोइयो, काहे के आखत दये डार।
उरहई के सूप संजोइयो, मुतियन आखत दये डार।

६—जन्म गीत (सोहर)

लये लये कृष्ण अवतार, जसोदा बड़ी भागिनिया।
कौना घरी जनम लये, कौना अवतार। जसोदा०
सुभ घरी में जनम लये हैं, कृष्ण चंद्र अवतार। जसोदा०
काहे के छुरा नरा छीन लये हैं, काहे खपर असनान। जसोदा०
सोने के छुरा नरा छीन लये हैं, रूपे खपर असनान। जसोदा०
काहे के सूप पौड़ाय लये हैं, काहे के आखत डार। जसोदा०
रेशम के सूप पौड़ाय लये हैं, मुतियन आखत डार। जसोदा०

७—जन्म गीत (बधाव)

सुहाये नंद के घर आज, बधाये नंद के घर आज।
टेरो-टेरो सुगर नइनियाँ, नगर बुलऊआ देव।
सब सखियों से ऐसी कहियो, चलत बिलम नईं होय।
पटियाँ पारें माँग संवारे, बेंदो देय लिलार।
बाबा नंद बजारे जईयो, सालू सरद लियईयो।
पैरो-पैरो सब सखियाँ हो, जो जैके अंग सुहाये।
पैर ओढ़ ठाड़ी भई सखियाँ, मुख भर देत असीस।
जुग-जुग जीवे माई तोरे ललना, राखे सबई के मान।

८—विविध

जसुदा के मंदिर बेग चलो री।
बंदनवारे लगे दरवाजन, बिच-बिच आम की बौरी।
हाथ गुलेली पावन माहुर, घर-घर बंदनवार जरौ री।
वारी बैस बनन औ बनिता, कोऊ आहै लरकौरी। जसुदा०

९—जन्म गीत (सोहर)

आज दिन सोने को महराज।
सुहरन गऊ को गोबर मंगाओ, ढिग दै अंगना लिपाओ महराज। आज०
मुतियन चौक पुराओ मोरी सजनी, चंदन पटरी डराओ महराज।
कंचन कलस धराओ मोरी सजनी, चौमुख दियला जगाओ महराज। आज०
रानी जसोदा चौक में आईं, इमरत अरग दुआओ महराज।
हीरा लाल लुटाओ मोरी सजनी; मन मोहन कंठ लगाओ महराज। आज०

१०—जन्म गीत (बधाव)

जसोदा जी के भये नंदलाल, बधाओ ल्याई मालिनियाँ।
मालिन ल्याई हार तमोलिन बिरियाँ;
भला अच्छे नीके वंदनवार ल्याई पटविनियाँ।
मालिन हाँ लाँगा तमोलन खाँ लुगरो,
भला अच्छे दक्खिन चीर पैराये पटविनियाँ।
मालिन वेंहे असीस तमोलिन घरै चलो,
जुग-जुग जीवैं तोरो लाल कहै पटविनियाँ।

११—गारी

जसुदा के भयो नंदलाल, बधाओ लाई ग्वालिनियाँ।
मोहनमाला पाय पैंजनियाँ, सुघड़ करधनी लाय।

झिलमिल कुरता सिर की टोपी, चमकत हीरा लाल,
लटक रही फूंदनियां। जसुदा०
ललता और बिसाखा आई, चंद्रावल सुकमार,
हंस-हंस गोद लेत मोहन को, नाचें भर किलकार,
नंद जू की आंगनियां। जसुदा०
पांव पदम पीताम्बर सोहै, छबि बरनी नहि जाय,
देखत रूप स्याम सुन्दर को, रहे इन्द्र सरमाय,
छिटक रही चांदनियां। जसुदा०
खबर सुनी जब राधा जी ने, रहो आनन्द मनाय,
ब्रज के नरनारी जब गावैं, सुनें देव धर ध्यान,
सत्य की है लेखनियां। जसुदा०

१२—कातिक गीत

दुविधा कब जै है जा मन की, चिंता कब जैहै जा मन की।
इन चरनन परकम्पा देहौं, छाया गोवरधन की।
रुनुक झुनुक आंगन में खेलें, राम-लखन की जोड़ी।
जब मेरो कान्ह झंगुलिया मांगै, रतन-जतन की टोपी।
जब मेरो कान्ह खिलौना मांगै, चंदा-सुरुज की जोड़ी।
जब मेरो कान्ह कलेऊ मांगै, दधि - माखन से रोटी।
जब मेरो कान्ह दुलनियां मांगै, बड़े भूप की बेटी।
सूरदास प्रभु आस चरन की, आज पुरी मेरे मन की।

१३—छठी गीत (झूलना)

झूले नन्दलाल झुलाओ सखी पालना।
काहे को तेरो बनो पालना, काहे की लागी डोर,
काहे के लागे फूंदना। झूले०
अगर चंदन को बनो पालना, रेशम लागी डोर,
रूपे के लागे फूंदना। झूले०
कोहे झूले कोहे झुलावे, कोहे लेत बलईया,
कौन मुख चूमना। झूले०
झूलें नन्दलाल झुलावें सब सखियां, यशोदा लेत बलैयां,
नन्द मुख चूमना। झूले०

१४—छठी गीत (झूलना)

स्याम परे पलना, झुला दे माई स्याम परे पलना।
काहे के रे बने पालना, काहे के डरे झूलना। झुला०

चंदन के रे बने पालना, रेसम के डरे झूलना ।
को जो स्याम को पलना झुलावे, को जो खिलावें अंगना । झुला०
माई यसोदा पलना झुलावें, नन्द बाबा खिलावें अंगना ।
धन्न जसोदा धन नन्द बाबा, तुमरे घर जनम लये ललना । झुला०

१५—छठी गीत (पालना)

झुला दिव माई श्याम परे पलना ।
काऊ गुजरिया की नजर लगी है, खीझ रये ललना ।
राई-नोन उतार जसोदा, खुशी भये ललना । झुला०
काहे को है मैया तोरो पालना, काहे को बनो झुलना ।
रतन जतन को बनो पालना, रेशम को झुलना । झुला०
को जो झूले को जो झुलावे, को जो परे पलना ।
कृष्ण जो झूलें जसोदा जो झुलावें, श्याम परे पलना । झुला०

१६—विविध

देखो सखी इक बाला जोगी, द्वार हमारे आयो है री ।
अंग भभूत बदन मृगछाला, सीस नाग लपटायो है री ।
लै भिच्छा बिकरी नन्दरानी, कंचन थारु भरायो है री ।
भिच्छा ले जोगी जाव आसन खां, मेरो गुपाल डरायो है री ।
ना चहिये मैया धन औ दौलत, ना मोय माल खजानो है री ।
अपने गुपाल कों दरस कराइ दें, जोगी जई कों आयो है री ।

१७—लोरी

मनमोहन उदक न जांय री हमारे, धीरे झुलाव सखि पालने ।
काहे को पलका बनो है, काहे के बुने हैं बुनाव । हमारे०
चन्दन के पलका बने, रेशम के बुने हैं बुनाव । हमारे०
सबरे बिरज की सखियां जुर आयीं, घाल लय री पालने । हमारे०
जो मेरे ललना कों पलका झुला है, दैहों जड़ाऊ ककना । हमारे०

१८—गारी

गोकल से आई नार पूतना, स्याम परे झूल झूलना ।
सारी ओढ़ें धूपी छाई, जामें मोतिन जड़ी किनारी ।
लहंगा कीमफाब को जारी, जम्फर साटन रंग सवारी ।
कछु जेहर लगा लाई पूतना । स्याम०
उत से आई पूतना नारी, खेलत बालक लियो उठाई ।
अपने सतन खां दियो गहाई, हरि ने खींचो जोर लगाई ।

भं कर चीख लगा चिल्लाई, इससे भजी जसोदा माई।
काहू कपटन के पर गये माई पूतना। स्याम०

१९—बाबा के गीत (विवाह गीत)

कहुँ देखे कहुँ देखे कहुँ देखे होय,
छोटे से कन्हैया प्यारे, कहूँ देखे होय।
हम देखे हम देखे हम देखे हो,
कन्हैया प्यारे ललता सखो के पास।

२०—गारी

आज दही माखन की चोरी भई, चलो देखन चलिये।
नंद के लाला ने तोर डारे तारे, मरोर डारे तारे,
ललता सखी ने मोसे मसकंइ कही, चलो देखन चलिये। आज०
ललिता की गोप गई, चंदा को तिदानों गयो,
राधा बिचारी की दुलरी गई, चलो देखन चलिये। आज०

२१—विविध

कैसें कहो किसना ने दहिरा चुराई है।
मेरो छोटो कन्हैया, ऊकी बारी है उमरिया,
कैसे छोटे हाथों से मटकी उठाई है। कैसे०
उठत भोर गउअन के पीछे, ग्वाल बाल संग धाई है। कैसे०
जिसे कहती तुम नंद किसोर, उसे ही कहती माखन चोर,
ऐसे भोले से हरि को, उराहनों लेके आई हो। कैसे०

२२—जन्म गीत (पालना)

झुला दे रघुवर के पालने री, झुलाव मोरे हरि के पालने री।
कै मोरी आली सबरे बिरज की सखियाँ, घेर लये हरि के पालने री।
कै मोरी आली कोरी मटुकिया को दहिया,
जुटार गव तोरो श्याम लो री।
कै मोरी आली तै गुजरी मदमाती,
पलमा मोरे झूलो लाड़लो री।

२३—लोरी

सोजा सोजा बारे बीर, तोरी बलैया लऊँ जमुना के तीर।
चंदन को है बनो पालना, बर पै डारी डोर।
जो नौ राजा भैया सो रओ, ल्याऊँ गगरिया बोर। सो जा०
ताती ताती खीर बनाई, ओई में डारों घी।
लालै मोरे राजा भैया, और जुड़ा ले जी। सो जा०

२४—प्रभाती

मोहन जाग मैं बलि गई।
ग्वाल बाल सब द्वारे ठाढ़े बन की बेरा भई।
कारी कबरी धौरी धूमरि सोऊ बन को गई।
उठो मोहन खाउ माखन फिर मैं डारौं रई।
तुम्हरे कारन श्याम सुन्दर मैं नई मुरली लई।

२५—प्रभाती

उठो उठो मोर कुंवर कन्हाई,
तेरे दरस को तरसे मांई।
खीर खांड़ की भोजन करलो,
बैठ कदम की छैंयां।
बाबा नंद उबेरी गैयां,
छिटक रहीं बृन्दाबन मैयां।
बृन्दावन के पाके बेर, श्रीकृष्ण जहँ करें किलेर।
केल काल निब्बुन को धाये, निब्बू टोर जमुनिया लाये।
कुछ खाये कुछ लरिका दीनों, जियो-जियो मेरे नंदलाला,
तुम पहरे गज मोतिन माला,
थोरक दूध बहुत सी फेनी, बाबा नंद बजाई बैनी।
दोहा—कान बजाई बांसुरी, बलबुद्ध बजाई बीन।
जमुना जी के घाट पर, केल कन्हैया कीन।

२६—कलेवा गीत

चलो लाला ब्यारू खों थार धरे।
टेरत तुम्हारी मैया, सुनो हो कन्हैया। चलो०
खाजा खुरमी सरस जलेबी, फेनी ऊपर करे धरे। चलो०

२७—जन्म गीत (लचारी)

अंगन मोरे खेले कृष्ण कन्हैया।
खाने का मांगे माखन मिसरी, घूटन को मांगे मलइया।
मलइया दइया कहाँ पावों। अंगन०
खेले का मांगे चकई भंवरवा, देखें का मांगे जोंधइया।
जोंधइया दइया कहाँ पावों। अंगन०
ओढ़ें का मांगे साला दुसाला, उपरा से मांगे दुलइया,
दुलइया दइया कहाँ पावों। अंगन०

२८—विविध

दिल में अनंद हुआ जाय रे, गुपाल मेरा खेले अंगना में।
अपने गुपाल खं कुरता सिलाय दूं, नीला में पीला मिलाय के।
अपने गुपाल खं मुकुट बनवाय दूं, तांबे में सोना मिलाय के।
अपने गुपाल खं टोपी सिलाय दूं, रेसम के फुदना लगाय के।
अपने गुपाल खं तोड़ा बनवाय दूं, बढ़िया सी चांदी मंगाय के।

२६—भजन

मैं काहे स्याम भयो री, मैंया मैं काहे……।
दाऊ गोरे बाबा गोरे, तू चंदा सी गोरी।
बहुतक ऊजर-ऊजर माखन, खायो मैं कर चोरी।
तऊ न गयो मेरो रंग सांवरो, बहुतक मिसरी घोरी।
सूर-स्याम सो कहत यसोदा, आंख पूतरी मोरी। मैं०

३०—कार्तिक गीत

अरी ऐरी एक दिन पूने के रोजई माँगे कृष्ण चंद।
बहुतौ मोहन रोंवे, करें बड़े फरफंद।
माय जसोदा परिछित हो गई, दौड़ी बाबा नंद।
सोने के थारों जल भर लाई, जो ले बेटा चंद।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, रोबो हो गव बंद।

३१—गारी

मचल रहो छोना गुइयां, मांगत चंद खिलौवा।
दधि औ दूध मलाई न खावै, माखन मिसरी मनें न भावे,
आपई से वो रुदन मचावें, कैसे करों कहां ले जाओं,
एसो चरित लखो ना। मचल०
मेरो कान्ह प्रान सें प्यारो, जाको दुख नहिं जात निबारो।
खेबी पीबो पुत्र बिसारो, कौन सौत को लगी नजरिया;
कर दओ जादू टोना। मचल०
ललना को पलना में पारो, मैंनें राई नोन उतारो,
गुनियन झारो औ पुचकारो, आधी रैन बीति गई हम खां,
पल भर पलक लगोना। मचल०
सजनी मैं अपने मन हारी, अब तो मानो सीख हमारी।
जो जग में लूटे जस भारी, जाय कहो तुम नंद बबा से,
टेरत स्याम सलोना। मचल०

३२—गारी

तुम सुनों जसोदा मैया री, सिरी क्रिसन हिरा आए गैया।
बन-बन ढूंढ़ी कहूं न पाई, भूखन मरें लवैया। तुम०
ढूंढ़त-ढूंढ़त हम पचि हारे, जाने छुपा लई गइया। तुम०
ओढ़ें फिरत है कालो कमरिया, बिचक जाय मोरी गैया। तुम०
धन्न जसोदा धन नंदबाबा, ऐसो दीठ कन्हैया। तुम०

३३—गारी

तुम सुनों जसोदा मैया री, वे कृष्न हिरा आये गैया।
मथरा ढूंढ़ी, बृन्दाबन ढूंढ़ी, गोकुल मिली न गैया।
नीली न लैहों धौरी न लैहों, लेहों काजर गैया। तुम०

३४—गारी

रसीले तोरे नैयना सुन्दर कौन कहाँ ते आई।
काह नाम है मात पिता को हमकों देउ बताई।
कौन पुरा में महल रावरी पूंछत कुंवर कन्हाई।
हों बृषभान राय की बेटी कीरत मेरी माई।
बरसाने में धवल धाम जहं ऊंचे धज फहराई।
हमसे तुमसे कछु अटकी ना नाहक रार मचाई। रसीले०

३५—कार्तिक गीत

चीनत नइयां बीर तुम्हें हम चीनत नंइयां।
कौन के पुत्र, कौन के सेवक, कौन के रहत हुजूर। तुम्हें०
नंद के पुत्र जसुदा जू के सेवक, भक्तन रहत हुजूर। तुम्हें०

३६—रसिया (ब्रज का)

जमना किनारे मेरो गांव, सांवरे आ जइयो।
जमना किनारे मोरी ऊंचो हवेली, मैं ब्रज की गोपी अलबेली।
राधा रंगीली मोरो नांव। सांवरे०
जल्दी आना कृष्न मुरारी, खूंगो में बाट तुमारी,
मदन मुरारी घनस्याम। सांवरे०
मलमल कर असनान कराऊं, घिस घिस चंदन खोर लगाऊं,
पूजा करूं सुबो-साम, दरस दिखला जइयो।
माखन मिसरी तोहि खवाऊं, ऊंचे आसन तुम्हें बिठाऊं।
दरसन करेगी ब्रजबाम, नेक मुसका जइयो।
खस-खस के बंगला बनवाऊं, चुन-चुन कलियां सेज बिछाऊं।
धीरे से चापू तुमरे पाँव, प्रेम रस पा जइयो।

३७—सावन गीत (सैरा)

कृष्ण जू तुम्हारे द्वारे हमारो खेलत मोती गिर गओ।
मोरो मोती को मोती गिरो, और चम्पक कली को हार।
तुसरो के मासे मोती बनो, कै मासे को हार।
नौ मासे मोती बनो, दस मासे को हार। कृष्ण०

३८—गारी

नइयां जियरा में चैन अली के,
चुभ गये बैन कुसुम कली के।
एक दिना राधे ढिग आई, कछु सरमाई कछु मुसकाई।
छल गये प्रान श्याम छली के, नइयां जियरा में चैन अली के।

३९—भजन

ठाड़ी तौ रहियो राधा प्यारी, तुमने गेंद चुराई।
राधा ठाढ़ी चंदा ठाढ़ी, ललिता गेंद चुराई।
काहे की तोरी बनी गेंदिया, काहे तार गसाई।
सोने की मोरी बनी गेंदिया, रूपे तार गसाई।
जो मोरे अचरा गेंद न कढ़है, देहौ गेंद सवाई?
घाली गेंद गिरी जमुना में, कूद परे रघुराई।
निकारी गेंद पार पै धर दई, खेल रहे जदुराई।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, जसुदा गाय सुनाई।

४०—भजन

गूजरि तुम मेरी गेंद चुराई।
अबं तौ गेंद परी मारग में, तुम गूजरि दुबकाई।
लैके गेंद भाग मत घर लों, मोखौं आज अकेली पाई। गूजरि०
हम ना देखी गेंद तुम्हारी, भूठौ मोहि लगाई।
जाय कहौगी कंस रजा से, दीहौं मैं ब्रज से निकसाई। गूजरि०
चुप्प चाप हुइ रहौ ग्वालिनी, सम्मुख जीभ चलाई।
जो बल राखो कंस रजा को, फिर काहे दधि बेचन आई। गूजरि०
सूरदास भज बालकृष्ण छवि, हरि से ध्यान लगाई।
एक गेंद की दुइ लै लीहौं, कंस की मोहि जो ठसक दिखाई। गूजरि०

४१—विविध

स्याम मोरी कही मान लेव।
नोखे लाल भये जसुदा के, चलते नइयां चाल डराके,
दोरी ग्वालिनियां खिसियाके, अब घर जान देव सासों से कान हेत। स्याम०

४२—भजन

खेलें गेंद नन्द के लाला।
राजा कृष्ण ने टोला मारा, गेंद गई जमुना धारा।
डूबी गेंद गई पाताले, सोच करें पृथ्वी बाला।
काली दौ में कूदे कन्हैया, पाताला के टोरे ताला।
जाय जो पौचो कालिय दोरे, मोर मुकुट मुरली वाला।
कहै नागिनी सुनो बालका, टरजा मेरे दरवाजा।
जो सुन पाहे नाग रजा तो, बड़ा जहर है बृषवाला।
कहै कन्हैया सुनो नागिनी, नहीं भागों तोरे दरवाजा।
देखे तेरा बृषवाला। खेल०
नाग जगाऊन चली नागिनी, रो-रो के आँसू ढारा।
बालक द्वारे धूम मचावै, नई टरै मोरो टारा।
उठो नाग मारी फुसकारी, स्याम बरन करके डारा।
जब मोहन नें बंसी बजाई, नाग नाथ दइओ बृषवाला।

४३—कार्तिक गीत

कन्हैया प्यारे जमुना में कूंद परे।
खेलत गेंद गिरी जमुना में, काली नाग नाथ लये।
हाथ जोर कै कहे है नागनी, पत पै दया करौ।
बार-बार हर बिनती करति है, चरनन सीस धरो।
तीन लोक के अन्तरध्यानी, महिमा न जान परौ।

४४—विविध

जमुना जल आ पाई, जल में कूद परे यदुराई।
आगे - आगे बहती जमुना, तहाँ बिस सिन्धु भरे।
घाटन-घाटन फिरे जसोदा, छेड़ रहे बलभाई।
उचटी गेंद गिरी जमुना में, कूदे कुंवर कन्हाई।

४५—भादौं के गीत

कन्हैया जमना में कूद परे, बिहारी लाल जमना में कूद परे।
घाटन-घाटन फिरत जसोदा, हरे रामा कूदत काहू ने लखे।
काल को कलेवा मोरे लाल को धरो है,
अरे रामा कै कें काये न गये। कन्हैया०

६४—विविध

ओ कारो नाग के रे नथइया, दूरी खेलन जिनि जइयो रे कन्हैया।
तुमखाँ कंस मरइया। ओ०

दूरी खेलन हम जैबे री माता, हम खां कौन मरइया। ओ०
पैंठ पताल नाग नथ नाथे, फन पे निरत कन्हैया। ओ०
कंचन देह बनी सोबरन की, फन फुसकार भये सावरेया। ओ०

४७—विविध

कृष्ण तुमको बुला गई बिरज की गुजरिया।
तुलसां, रुकमिन, पुनियां मुनियां सुनियां और खुमनियां।
वो तो ओढ़े कुसुम रंग चुंनरिया।
....

छूंम छूंम छनां न न नां हम चली आवें,
तुमको गीत मलार सुनावें, नाचे गावें ताल बजावें,
हम तुम हिल-मिल रास रचावें, घर के लोग कुटुम खिसयावें,
सिर से उड़-उड़ जावे चुंनरिया।
कृष्ण प्यारे बंसीवारे, जसुमति वारे नन्द दुलारे,
सबके प्यारे सबसे न्यारे, सबहि के हो तुम रखवारे।
तुमने गिरिवर नख पै धारे, तुम प्रंहलाद भक्त से तारे,
ऐसे दीनदयाल के प्यारे, फिर से ऊसीयई बजा दे मुरलिया।
कृष्ण तुमको बुला गई बिरज की।

४८—फाग (साखी)

कालिन्दी के तीर पै, ठाढ़े हते दोऊ बीर।
कान्ह बजाई बांसुरी, जमुना के थकित भये नीर।
सुने से मोहन जू की बांसुरी।

४९—साखी (अहीरों की)

बाजी बंसुरिया कृष्ण लला केर, कालो जमुना के तीर।
मोह परो है राजा इन्द्र का, एक घरी मोहि जमुन का नीर ॥१॥
बाजी बंसुरिया कृष्ण लला केर, उहै जमुना के ठाव।
मुरली आपन सुर टोरे ना, गोरी राधिका न टारे पाव ॥२॥
बाजी बंसुरिया है मथुरा में, अरु गोकुल में कुहुक रहे मोर।
फिरत राधिका कुंजन-कुंजन, बंसी बजी धों कौन सो ओर ॥३॥

५०—कार्तिक गीत

सुन मुरली की टेर अचक रईं राधा। सुन०
होत भोर राधा पनिया खों निकरी, गऊअन ढ़िरन की बेर।
छोड़ो कन्हैया प्यारे बांह हमारी, हम घर सास कठोर।
कहा करें सास कहा करें ननदी, चलो कदम की ओट।

५१—धुबिया गीत

कीने मचाई लोलैया, घुरैया में कीने मचाई लोलैया।
राधा स्याम संग में कानन, हते चरावत गैया। घुरैया०
माता यसोदा घर में रोवैं, औ बलदाऊ भैया। घुरैया०
बलिये चलो खोल के लावें, उकता रहे लवैया। घुरैया०

५२—कार्तिक गीत

नेक पठाओ गिरधारी जू को मइया री।
और के हांथन नाहीं लागें मोरी गइयां,
सो जब लगि है जब जाहे री कन्हैया। नेक०
नई तो ग्वालिन नाखी तेरी गइयां,
अबही तो बन से आयो री कन्हैया। नेक०
इतनी सुन बेहरी चढ़ आई,
अब जइयौं जब जाहै री कन्हैया। नेक०
नंद हंसे जसुदा मुसकानी,
सो जाओ कन्हैया बुह आओ वाकी गइयां। नेक०

५३—कार्तिक गीत

नेक पठै दो गिरधारी जू को मैया।
बनमाली जू खों मैया। नेक०
सबरे सखा माता दोय-दोय हारे,
सु हार गये बलदाऊ जू से भैया। नेक०
नई तौ गुवालिन अनौखी तेरी गैया,
सु अबई तो आयो मेरो बन से कन्हैया। नेक०
सुगर ग्वालिन हठ कर बैठी,
सु उनई के हाथ लगत मेरी गैया। नेक०
नंद हंसे जसुदा मुसक्यानी,
सो जाओ लाला दो याओ जाकी गैया। नेक०

५४—कार्तिक गीत

नेक पठै दो गिरधारी जू को मैया।
जे गिरधारी मोर हिरवे बसत हैं,
सो उनई के हात लगे मोरी गैया।
इतनी सुनके जसोदा मुसक्यानी,
जाओ जाओ लाल लगा आओ गैया।

कछु कारे कछु ओढ़ें कमरिया,
उनईं को देख बिचक गई मोरी गैया।
कहूँ देखे कहूँ सेंट चलावें,
मुख पै दूध गिरै मोरी मैया।
तू तो गुवालिन मद की माती,
अबै तो हमारो बारो है कन्हैया।

५५—कार्तिक गीत

अब न दुहाऊं मइया गैया स्याम से।
कहूँ दोवे कहूँ सेंट चलावे, दूध गिरे भो मइया।
कबहूँ दोवे सेर सवैया, कबहूँ दोवे अधपैया।
एक कारो दूजे ओढ़ें कमरिया, बिचकावत मोरी गइया।
टटवा टार बगर में बिड़ गए, यही सिखावत तैं री मइया।

५६—कार्तिक गीत

लै गयो चीर मुरारी, मैं कैसी करौं।
लेकर चीर कदम चढ़ि बैठे, मैं जल माँझ उघारी।
हमरी चीर दै राखो मुरारी, पैयां परति मैं हारी।
चीर देव हम तुम्हरो जब ही, जल से हुय हो न्यारी।
जो हम जल से न्यारी हुइबे, हसैं लोग दै तारी।
लोग हंसै तुम हंसती देखौ, हम हैं पुरुष तुम नारी।

५७—कार्तिक गीत

नेक ठाढ़ी रइयो कौन जात पनिहारी।
कौन की बेटी कौन की सहिलिया, सो कोन नांम है तेरी पनिहारी।
वृषभान की बेटी बृजनार सहिलिया, सो टेरत सब कह री दुलारी।

५८—गारी

गागरिया मोरी फोर न डारो, हो लाला बनवारी।
ऊँचो नीचो घाट उतर कै, बीच में मिल गवे नंद के लाला,
बना गिंदुलिया मारी। गागरिया०
जो घर सुनहे सास हमारी, हम खां तुम खां दैहै गारी।
देहरी हम खां चढ़न न दैहै, चलो उराहनो दैये। गागरिया०
कौन नगर की पानी भरत ती, कौन उराहनो ल्याई।
मथुरा नगर की पानी भरत ती, राधा उराहनों ल्याई। गागरिया०

जसोदा हो तोरो वारो सो लाला, गली करी बरजोरी।
झूठी राधा झूठो उरहनों, पलना पड़ो मोरो वारो कन्हैया।
बिन्द्रावन की सुगर गुवालन, बिरथा दोष लगावे।
गागरिया मोरी फोर त डारो, हो लाला बनवारी।

५६—विविध

बिन्द्राबन की कुंज गलिन में, स्याम छली से हारी।
हम जमुना जल भरन जात हैं, हट पर गये गिरधारी।
डग मेरी छेड़ी, गगर मोरी फोरी, धर बहिया झगझोरी।
बाजूबंद बराना टोरो, रेशम चोली के बंदन खोलो।
मेरी सिर की चुनरिया तानी रे। स्याम०

६०—गारी

हार गई बृजनारी कन्हैया तोसे।
ताला पै ठाड़ो कुवल पै ठाड़ो, सो ठाड़ो है जमना किनारी।
शाला में ठाड़ो गौसाला में ठाड़ो, सो ठाड़ो है बाट मझांरी।
तन में ठाड़ो औ मन में ठाड़ो, सो ठाड़ो है नयन अंगारी।
राधा में माधौ औ माधौ में राधा, सो गोपी जाय बलिहारी।

६१—कार्तिक गीत

मोय पनघट पे नंदलाल छेड़ लियो री।
कंकड़ घाल हमें बिष मारी, सिर को गागरिया फूट गयो री।
गागर फूटी चुनर मोरी भींजी, चोली के अंद-बंद छूट गयो री।

६२—फाग

हमका ब्रजनारि सताउति हैं।
गली-गली के कुआं बावली, रेशम डोर डरउती हैं।
सब सोने के बने घैंलना, हमसे पकरि भरउती हैं।
अपने घर को काम खुरधुरे, सब हमसे करउती हैं।
गरुहेले गोबर को भउआ, हमरे मूंड धरउती हैं।
हरा घांघरा सुरख चूनरी, सब गहना पहिरउती हैं।
मरद को भेष जनाना करि कें, अपने साथ पिसौती हैं।
बिन्द्राबन की कुंज गलिन में, बंसी मोरि छिनौती हैं।
सूर-स्याम बलि जाऊं चरन की, मांगे ते गरिऔती हैं।

६३—कार्तिक गीत

गिरधारी मोरो वारौ री, गिर न परं।
एक हात पर्बत लये ठाड़ो, दूजें हात हरि मुकट समारं।

लये लकुटिया फिरें जसोदा, सो तन-तन सब कोउ देउ सहारौ । गिर०
एक हात पर्वत लये ठाड़ो, दूजे हात हरि कुंडल समारें ।
लये लकुटिया फिरें जसोदा, तो तन-तन सब कोउ देउ सहारौ । गिर०
एक हात पर्वत लये ठाड़ो, दूजे हात हरि कंठी समारें ।
लये लकुटिया फिरें जसोदा, सो तन-तन सब कोउ देउ सहारौ । गिर०

६४—कार्तिक गीत

गिर न परै गिरधर है भारौ, मेरो कन्हैया वारो ।
लये लकुटिया जसुदा ठाड़ी, ग्वाल बाल मिल करौ सहारौ । गिर०
पवन चले अरु होय सनाका, बादर हुइ गओ कारो ।
ठाड़ी धार गिरी बृज ऊपर, सूझ न परत भयौ अँधियारो । गिर०
सात दिवस भरि सुरपति बरसे, बरसि-बरसि बल हारो ।
नाहीं पड़ी बूंद बृज भीतर, रंचक हूँ ना चलो पनारो । गिर०
सूरदास भज बालकृष्ण छबि, सुरपति यहै बिचारो ।
त्राहि-त्राहि सरनागत आये, छमहु नाथ अपराध हमारो । गिर०

६५—दिवारी

तड़तड़ात बिजली कौंधत हैं, गाज गिरत है घरी-घरी ।
साजे भाल बे मेघ प्रलय के, बरसा की इनको लगी छड़ी ।
ग्वाल बाल औ गौवें बछिया, उनपे आफत आन पड़ी ।
हर के संगे चली गोपिका, हाथ जोर कै जाय खरी ।
चलन पवन उनचास बिसेखन, थर-थर कांपें नर नारी ।
घेर लियो रिख मंडल ऊपर, करी इंद्र ने तैयारी ।
जा पहुँचे गोकल नगरी में, लिए साथ बादल भारी ।

दोहा : जो तुमको करने हतो, बृज भैया को ऐसो हवाल रे ।
काहे को नख पर धरो, फेर गोवर्धन गोपाल रे ।।

६६—अहीरों की साखी

जल तो जुठारे माछरी, भौरा ने जुठारे बाग ।
कहाँ चढ़ाऊं देबी सारदे, वारे बछला ने जुठारे दूध ।
राधा डगरी निग चली, गई सखियन के दोर ।
आज चलो गढ़ गोकुले, जां मांगे दही बिकाय ।
सखियां बोलें जात है, सुनो राधका बात ।
हम न जैहैं गोकुले, उतै छली नंद को लाल ।
बूढ़ी ठेली चलियो न, न लरकौरी हमारे साथ ।
छैठी छटा के भर चलो, सो का करे नंद को लाल ।

६७—विवारी

खोरि-खोरि फिरे नाऊनियाँ, लये कटोरा तेल।
जेहि-जेहि गोकुल चलै क होय, पटियाँ लेव पराय।
जौनें सखी आगे निकरें, परसे ताला के पार।
सोलह सखी गुजरी, सोलह सखी ढ़िढोर,
लै दहिया गोकुल को निकरीं जाय।
छाया पेड़ महुलिया, सरवर पेड़ खजूर,
मैं तोसों पूछौं कुंअर बरेदी, काहे ललाई छाय।
धों ऊड़ी बन बरइयाँ, धौं बनफूला टेस।
सोलह सखी गुजरी, सोलह सखी ढ़िढोर।
ठाढ़े बोले कुंवर बरेदी, सुन सखियाँ मन बोल।
दहिया दान दहै जाओ सखियाँ, नहीं घरैं न जान देव।
ठाढ़े बोलीं सखियाँ, सुन लो कुवर बरेदी बोल।
अन्न दान से बड़ा गोदान सुन्यो पर,
मैं न सुन्यो लों दहिया दान लेत नंदलाल।
ठाड़े बोलीं सखियाँ, सुन लो कुंअर बरेदी बोल,
लरकौनिन घर लरका रोवैं, मैं घर मारि जाऊं।
इधर-उधर जिन करनो सखियाँ, मैं बिन दान घरैं न जान देव।
टोरो-टोरो पत्ता लेव दही केर दान।
पत्ता रहे सो झाँझर खाइन, अंचला में देव दही केर दान।
अचरा रहै हैं ऊंठन जूठन, लरकन बहाई लार।
टोरो-टोरो पत्ता फुरें लेब दही केर दान।

६८—विविध

तनक दही देजा ओ बेंदा वाली।
तें तो रसीली तोरे नैना रसीले, घूंघट खोल के बताये जा। ओ०
अरी तें तो कटीली तोरे नैना कटीले, मोरो उरझा मन सुरझाये जा। ओ०

६९—कार्तिक गीत

दे दी री दही को दान गुजरिया।
कानन में फनफूल नाक में नथुनिया,
सोने की अंगूठी छबि छाई है सगुनियाँ।

बड़े बड़े नैनन थोड़ी थोड़ी सरमा,
बेंदी रतनारी तोरी साँवली सुरतिया।
सालू सरज कसब को लहंगा,
चोली बूटीदार तोरी सुरंग चुनरिया। दे०

७०—गारी

एक कला नाहक लला कहा चलावत सान।
गैल छांड़बो है भलो नातर भलो दधि दान।
संग बेटी वृसभान की, आज ना पैहो दान, ठान हमने लई।
सेर—लई टेक ठान कान दान सबैं भुलैहों।
वृज बालन पै लालन जो हाथ चलैहो।
भूसन अमोल रतनन के कछू गिरैहो।
हमरे छला के मोलन ही लला विकेहो।
गोरस मंगायबो रस तुम नाहीं पैहो।
मानो ना श्याम गालन में गुलचा खैहो।
तजहो सुगैल मथुरा की फिर ना ऐहो।
छंद—करत पनघट पै रहै तुम नित उधम कान हो।
आज लगे गैल रोकन लेन लागे दान हो।

७१—कार्तिक गीत

आ जाऊंगी बड़े भोर दही लेके, आ जाऊंगी बड़े भोर।
नै मानो मटकी धर राखो, सबरे बिरज को मोल।
नै मानो कुड़री धर राखो, मुतियन जड़े है किड़ोर। आ जाऊंगी०
नै मानो चुनरी धर राखो, लिखे है पपीरा और मोर।
नै मानो गहनो धर राखो, बाजूबंद हमेल। आ जाऊंगी०
नै मानों मोई सों बिलमा ले, जोड़ी बनत अमोल।
चंदसखी रस बस भई राधा, छलिया जुगल किशोर। आ जाऊंगी०

७२—दादरा

दे दे रे स्याम मोरी मिटकी कुड़रिया।
छलक-छलक दधि गिरत भुजन पे,
भीज गई रे लाल सुरंग चुनरिया। दे०
जो तुम लाला मोरी कुड़री न देहो,
अब न रहों रे तोरी बिरज नगरिया।
जब कब लाला हमरी कुंजन आहो,
छीन लेहों रे तोरी मुकुट मुरलिया।

७३—विविध

दधि लुट गयो निरमल घटी को।
कोना नगर की सुगर गुवालन, कोना नगर को ब्रजबासी।
गोकुल नगर की सुगर गुवालन, मथुरा नगर को ब्रजवासी।
कहा ल्यावें सुगर गुवालन, कहा बजावें ब्रजबासी।
दहिरा ल्यावें सुगर गुवालन, मुरली बजावें ब्रजबासी।
को जो छेड़े सुगर गुवालन, को जो छेड़े ब्रजबासी।
कान्हा छेड़े सुगर गुवालन, गोपी छेड़े ब्रजबासी।

७४—विविध

मधुबन सांकरी खोर, राधा लुटी बरसाने की ओर।
लहंगा लुट गये, लुगरे लुट गये, अंगिया लुटी अनमोल।
ककना लुट गये, बुलरी लुट गई, कंगन लुटे अनमोल।
कजरा लुट गये, सिंदुरा लुट गये, बेदीं लुटी अनमोल।
झाझें लुट गई, लच्छा लुट गये, पायल लुटी अनमोल।

७५—विविध

मैं दधि बेचन जात बिन्द्राबन सास ननद की,
बीच में मिल गए नंद के लला, बिंद्रावन जाने ना देवें।
दधि मेरो खायो मटकिया फोरी, नाजुक बहियां झकझोरी।
चलो सखी सब जुर मिल चलिये, जसुदा उराहनो देन।
सुनो री जसोदा मैया तुम्हरो कन्हैया, हमसे करे नित रार।
हमरो कन्हैया ग्वालिन पाँच बरस को, का जाने तकरार।
तुम तो ग्वालिन सोरह बरस की, तुम ही मस्तानी।
सोरह बरस की माता कछुह स जाने, जो पाँच बरस को छली।

७६—फाग

तेरे दहिया के कारन, तेरे दहिया के कारन रे।
भये कन्हैया चोर गूजरी, तेरे दहिया के कारन रे।
बरसाने से चली गूजरी, तेरे दही के कारन रे।
फिरे संग सखिन की टोली, तेरे दहिया के कारन रे।

७७—गारी

धन्य धन्य जसोदा तोरी कोख सों,
लला अनोखो जायो मोरे लाल।
मैं तो सपरं खों जमुना गइती, चुनरी स्याम चुरायो मोरे लाल।

मैं तो पनियाँ खाँ पनघट गइती, कछरा स्याम गिरायो मोरे लाल।
मैं तो दधि बेचन खाँ हटिया गइती, सो गोरस स्याम लुटायो मोरे लाल।

७८—विविध

कैसे जइये मोरी आली गोरस बेचन।
इतै मथुरा उतै गोकल नगरी, बीच बसै बाकै गाँव सखी री। गोरस०
मारग में घूँघट पट खोलैं, श्याम सुंदर बाके नाउँ सखी री। गोरस०
गोरे-गोरे मुख में पान की बिरियाँ, मधुर-मधुर मुसकाँय सखी री। गोरस०
गोर-गोर अँगन पीली-पीली झँगुलिया, अंग-अंग लपटाय सखी री। गोरस०

७९—भजन

छाँड़ो तेरो देश मुझे काशी जी को जाना।
प्रात होत गौअन के पीछे, बन-बन फिरत दिमाना।
साँझ होत जब घर कों आवों, तिस पर मोको मिलत उराना। छाँड़ो०
जे ले अपने कानन कुंडल, जे ले अपना गहना।
एक सखी मेरे मन बस गइ, ताही के संग हमहूं रम जाना। छाँड़ो०
हाथ में मेंहदी पांय महावर, सेंदुर मांग भराना।
भूषन बसन साज सब मोहन, जाय जसोदा से बतराना। छाँड़ो०
माय जसोवा यों उठि बोली, क्यों तू बना जनाना।
सूरदास चंद्रावलि छल गई, ताहि छलन बरसाने लौ जाना। छाँड़ो०

८०—गारी

बृन्दावन की सुगर ग्वालनु, सिर मटकी मुख पान मोरे लाल।
बीच में मिल गये कुंवर कन्हैया, माँगे दही को दान मोरे लाल।
चढ़ जाव कदम पे टोरे लाव पत्ता, चीखो दही को दान मोरे लाल।
झटपट-झटपट चढ़ गये कधइया, ग्वालन पोची बरसाने मोरे लाल।
उनमन-उनमन उतरे कधइया, लीनी है खाट बिछाय मोरे लाल।
इतने में आई माता जसोदा, कैसे बदन मलीन मोरे लाल।
कै तुमरो बेटा मूंड पिराले, कै चढ़ आई सिर ताप मोरे लाल।
न माता मोरे मूंड पिराले, ना चढ़ आई सिर ताप मोरे लाल।
एक गुजरिया हमें छल कर गई, वोई को छलन हम जावें मोरे लाल।
अपने कधइया के चार ब्याह रचबो, दो गोरी दो साम मोरे लाल।
लावो सो माई अपनो गहनों, धरिबे जनानो भेष मोरे लाल।
खोरन खोरन फिरत कधइया, चंद्रावली को घर कोंन मोरे लाल।
ऊंची अटरिया चंदन किबरिया, चंद्रावली को घर आय मोरे लाल।

बहन-बहन कर टेरत कधइया, खोलो तो बहन किबार मोरे लाल।
माई न जाई गोद न खिलाई, बहन कहां से आई मोरे लाल।
हम तुम दोई जने मौसी-मौसी के, बारे में हो गये ब्याव मोरे लाल।
चलो तो बहन पनियां खां चलिये, पनियां तो लइये भराय मोरे लाल।
पनियां भरत में पिंडरी पहिचानी, जे तो कधइया जू आये मोरे लाल।
माई बाप की अधिक लाड़ली, पिंडरी न दीनी गुवाय मोरे लाल।
चलो तो बहन रोटी खां चलिये, रोटी तो लइये बनाइ मोरे लाल।
रोटी बनावत की कौचा पहिचानी, जे तो कधइया जू आये मोरे लाल।
माई बाप की अधिक लाड़ली, कौचा न दीनी गुदाय मोरे लाल।
चलो तो बहन सेजा खां चलिये, सेजा तो लइये लगाय मोरे लाल।
सेजा लगावत में छतियां पहिचानी, जे तो कधइया जू आये मोरे लाल।
बहुत दिनन से तुम छल कीनी, आजहि हाथ परी मोरे लाल।
कर जोरे बिनवे चंद्रावल, होवे छं महीना की रात मोरे लाल।

८१—सावन गीत (कजली)

हरी रामा रे हां, हां रे संवलिया,
आज बिरज में श्याम बनो मनहारी रे हारी।
बृन्दाबन की कुंज गलिन में, फिर रये चुगल किसोर।
है कोई बिरज में चुड़ियें पहिनन बारी रे हारी।

८२—फाग

नवल नार मतवारी, मोहन बन आए मनिहारी।
श्री राधा के धाम जायके, दीन दुकान पसारी।
छूटा चंपकली अरु दुलरी, मोतिन की लर न्यारी।
बेंदा लगा मुकर में शोभा, देखी राजदुलारी।
'सूरस्याम' ब्रजधाम मुदित मन, लख राधे गिरधारी।

८३—सावन गीत (कजली)

धरे हरि रूप मनिहारी के।
कोन नगर की सुगर कचेरन, कहां मायके प्यारी के।
मथरा नगर की सुगर कचेरन, बरसाने मायके प्यारी के।
हरे बांस की दोरिया, जे में लाख नई चुरियां रे।
ऊंचे अटा से राधा बुलावें, इते ल्याव लाख नई चुरियां रे।
कर मसके पिहरावें चुरियां, निरख रये रूप ब्रजनारी के।
चंबसखी भज बालकृष्ण छवि, पकर लय छोड़ गुलसारी के।

८४—गारी

गुदनारी को भेष धरे लिए कन्हाई, कोई लइयो गुदाई।
धरके गुदनारी को भेष, मोहन गोकल से चल देत।
राधा दौर दई है टेर,
सुनत टेर राधा दरवाजे लौ आई, कोई लइयो गुदाई।
राधा भीतर गई लिवाके, जे छल हटको आज बताके,
मोहन तुरत गये मुस्काके,
नैनन से नैन मिले रै गये सकुचाई। कोई०
माथे लिखियो मदन मुरारी, गालन पै गंगा बनवारी।
भुज पै मोर पपीरा धारी,
छाती पै चंदा चकोर रहो सुहाई। कोई०
बसियत जमना देवे पार, हमने नये करे रुजगार,
जो पै आये तेरे द्वार,
नैनन से नैन मिले, रै गये सकुचाई। कोई०

८५—गारी

बन गये गोपीनाथ बैद बनवारी।
जंगल की बूटी भरे फिरे झोली में,
कुंजन में करें पुकार मधुर बोली में।
सुन-सुन आई निकर बिरज की नारी,
ललता ने पास बुलाई बजा कर तारी।
मैं बौत पड़ी बीमार दवा कर मेरी,
सास नंद घर नांहीं दवा कर मेरी।
भीतर गये गोपाल करी ना देरी,
झोली से गोली दई, तुरत गई बीमारी।
ललता ने घूंघट खोल नबज दिखलाई,
सर्दी गर्मी से लागो चित्त घबराई।
तन-मन ने बांधो जोर जवानी आई,
बन गयें गोपीनाथ बैद बनवारी।

८६—भजन

मोहनि रूप कियो हरि बाना।
बांह बरा बाजूबंद सोहै, छाप छला अंगुठाना।
नाक बीच नकबेसर सोहै, बेसर में लटकन लटकाना।

पैर महावर हाथ में मेंहदी, लंहगा घूम घुमाना।
मुख में पान नयन में सुरमा, लै दरपन मन मुस्काना।
भली भंस की दही जमायो, सिर मटुकी धर काना।
मालदही की चादर ओढ़, चाल चले मंगल मस्ताना।
वृन्दावन की कुंज गलिन में, काहू ना पहिचाना।
सूरदास यों कहत राधिका, जान परत मोहन मस्ताना।

८७—नृत्य गीत

लै लो बिहारी नंदलाल रे, दहिया मोरा लै लो।
कोरी मटकिया में दहिया जमाऊं, पानी न डारो एक बूंद रे। दहिया०
कौन सहर की सुघर ग्वालिनी, क्या है तुम्हारो नाम रे। दहिया०
बिन्द्रावन की सुघर ग्वालिनी, राधा हमारो नाम रे। दहिया०
एक टका मोरा दहिया बिकाये, लाख टका मोरा मोल रे। दहिया०

८८—नृत्य गीत

दही ले लो सलोने स्याम, नई आई ग्वालिनिया रे।
नई-नई मटकी नई ग्वालिनी, भई कलोरी के दूध लइ आई रे।
कोने सहर की नई ग्वालिनी, कहाँ दधि बेचन जाय रे?
मथुरा सहर की नई ग्वालिनी, गोकल दधि बेचन जाय।
कहा तुमारो नाम रे, राधा हमारो नाम। दही०
कौन बबा दानी भये रे, कौन चुकाये दही दाम?
नंद बबा दानी भये, उन्ने चुका दये दही दाम।

८९—दादरा

अरी ग्वालिन दहिया इतै लिये आव।
तोरे महल की ऊंची-नीची छिड़ियाँ, अरे कान्धा मोपै चढ़ी न जाय रे।
छिड्डी बंधा दैव डोरी डरा दैव, अरी ग्वालिन ओई पकर चली आव रे।
कांकत-कांकत चढ़ आई ग्वालिन, अरे कान्धा कर दहिया को मोल।
दूधा दही को मोलऊं नई है, अरी ग्वालिन तेरी सुरतिया को मोल।
जो सुन पाहे मोरो सजनवा, अरे कान्धा तोको लेय पकराय रे।

९०—कार्तिक गीत

लागी तुमसे आरी किसन मुरारी।
लागे है नैन जार से उरझे, सुरझन नइयां जतन कै हारी।
जब से देखी अरी सामली सुरतिया, हिरदै से टरत नइयां टारी।
चंदसखी भज बालकृष्ण छबि, जीते मुरारी मैं हारी मुरारी।

९१—फाग

अरे हां रे हमें कोऊ गलयां बताऊ बरसाने की।
वृन्दावन भूली जांव मोहन गलयां बताऊ बरसाने की।
अरे अरे हां रे, कौना नगर की तैं री गुवालनि,
कहना दधि बेचन जाय। मोहन०
अरे हां रे मोहन मैं बरसाने की सुगर गुवालनि,
गोकल दधि बेचन जाऊं। मोहन०।

९२—विविध

वृषभान की लली, कोरी-कोरी मटकी है दूध की भरी।
मुख में पान नैंन में सुरमा, कजरा की कोर मोरे मन में बसी।
लंहगा पंरे साड़ी पेहरे, पतरी कमर मोरे मन में बसी।
गहनो पंरे गुरियो पेहरे, जेहर पेहरे छमक चली। वृषभान०

९३—विविध

बजत गुमान भरी मुरलिया, बजत गुमान भरी।
काहे की जा बनी मुरलिया, काहे तार गसी। मुरलिया०
हरे बांस की बनी मुरलिया, सोने तार गसी। मुरलिया०
काना से जा बजी मुरलिया, काना तान सुनी। मुरलिया०
मथुरा से जा बजी मुरलिया, गोकुल तान सुनी। मुरलिया०

९४—राई (नृत्य गीत)

बजरई आधी रात, बैरन मुरलिया आ सौत भई।
बन से तू काटी गई, छेदी तोय लुहार,
हरे बांस की बांसुरी, मनो निकरो नैं सार। बैरन०
पोर-पोर सब तन काटे, हटे न औगुन तोर।
हरे बांस की बांसुरी, ले गई चित्त बटोर। बैरन०

९५—कातिक गीत

फिर बाजी फिर बाजी हरि की मुरलिया,
सो जाऊंगी वृन्दाबन कटा डारों बंसा,
सो फिर न बाजे लाला हरि की मुरलिया। फिर०
जा बंसी वाले ने हंस के कई तो,
कि मेरी तेरी प्रीत कुंजन में भई तो,
सो जा बंसी वाले ने मन हर लीनों। फिर०

९६—क्रिया गीत (निराई गीत)

सासो तुमारे लम्बे वेसरा, उपजं हरियल बांस।
असुवा तोरे कन्हैया, काटे हरियल बांस।
काट कपट भी धर दये, मुरली लई बनाय।
कांना बाजी मुरलिया, कांना परी झंनकार।
मथुरा बाजी मुरलिया, गोकुल परी झंनकार।
सोवत उतरी राधिका, लयें मथनिया हाथ।
जरें बरें वाकी मुख मुरलिया, मरें बजावनहार।
कचे से दहिरा बिलुर गये, मक्खन न आये मोरे हाथ।
मर जाय भौजी तोर बीरनवा, मक्खन डारे नसाय।
ठंडे से पनिया गरम धर लेओ, मक्खन लेओ उठाय।
अपना बीदी और छैल से, दहिरा को दोस न देय।
ढीली कड़रिया नेत कर लो, मलो चित्त लगाय।

९७—विविध

आधी रात निखंद पं, मुरगा दीन्हीं बांग।
सोवत राधा उदक परी, परी मथनियां हाथ।
कहां धरी वई वेड़िया, कहां मथानी फूल,
कहां धरें दोई नेतना, गोकुल खां होत अबेर।
सोंकं धरी वई वेड़िया, घुल्लन मथानी फूल,
भावते धरें दोई नेतना, सो लेओ दहो तुम मोय।
भावत-भावत री पग थके, नैनूं न आवे हाथ,
भौजी के मर जाय बीरना, सो ओछे डार देत नाम।
ना भौजी के मरें बीरना, न मरें मतारी बाप,
छली कन्हैया नंद को, कर बओ समासम भोर।

९८—विविध

मेरी आली होत बृन्दाबन रास, सु मेरी०
सो देखन में न गई।
सु मेरी आली तट जमुना के तीर,
सु मेरी आली जुरी सब सखियां। सु मेरी०
सु मेरी आली गोपिन करे हैं सिंगार,
सु मेरी आली एक से एक बनी। सु मेरी०
सु मेरी आली नाच रहे गोपी ग्वाल,
सु मेरी आली सोभा अधिक बनी। सु मेरी०

सु मेरी आली देखन आये सुरराज,
सु मेरी आली सोभा अधिक बनी। सुमेरी०
सु मेरी आली छिटक चाँदनी रैन,
सु मेरी आली फूली कुसुम कली। सु मेरी०

९९—विविध

लगतीं राधिका प्यारी, सखियन में लगतीं राधिका प्यारी।
माथे बीच हरउबी सोहे, बेंदा की छबि न्यारी। सखियन०
कान रवारे तरकुला सोहे, झुमकन की छबि न्यारी। सखियन०
नाक चुर्नी नकबेसर सोहे, नथुनी की छवि न्यारी। सखियन०
कंठ मनी गले बुलरी सोहे, मुहरम की छबि न्यारी। सखियन०
बाँह बरा बाजूबंद सोहे, कंकन की छबि न्यारी। सखियन०
हाथ रवारे गजरा सोहे, बंगलिन की छबि न्यारी। सखियन०
पाउम जेर घुंगरिया सोहे, पायल की छबि न्यारी। सखियन०
दस उँगरिन दस मुहरी सोहे, बिछियन की छबि न्यारी। सखियन०

१००—विविध

ओरी आओ कन्हैया री।
लुकिये झिपिये भागिये, आओ बनैया री।
छाती छुवत है कर पकरत है, बाँको जनैया री।
छैल छुवन में गागर फोरे, ऐसो लरैया री। ओरी०

१०१—धुबिया गीत

कन्हैया जू ने कैसी मचाई लौलैया।
संग में ल्याय खेलाय जमुन में, उबवा लई कुन्हैया। कन्हैया०
तलफत दाऊ धरे फिरें बाबा, रोवत जसोदा मैया। कन्हैया०
बछला छूटे कच्छन चर रहे, चर रईं गउवें भैया। कन्हैया०

१०२—विविध

सखी री ऐसो मान राधका ठानो।
हमंहा स्याम लिवाय संग में, कौनो मान विवानो। सखी री०
एकहु बात न मानी उननें, ना बोलें हरसानों। सखी री०
स्याम मनाय बैठाय हंसत हैं, चीर प्रेम से तानो। सखी री०
कर दई टेक मान गई केकी, सौतन कछू बखानो। सखी री०
कछुक देर में मिली प्रेम सों, दोनों जिय हुलसानों। सखी री०

१०३—कहरों का गीत (कहरवा)

लाल चुनरिया की ढिग कारी, बचन हारी
ताती जलेबी दूध के लडुआ, जेंवत नइंया राधा प्यारी। बचन०
ठंडे से पानी गरम धर आई, सपरत नइंया राधा प्यारी। बचन०
पान-सुपारी की बिरियाँ लगाई, चाबत नइंया राधा प्यारी। बचन०
चुन-चुन कलियाँ सेजा लगाई, पौड़त नइंया राधा प्यारी। बचन०

१०४—कजली (सावन गीत)

सखियो चलो चलो विख अइबे, झूला झूलत नंद किसोर।
काहे को तेरो बनो पालनो, काहे की डारी डोर ? सखियो०
अगर चंदन को बनो पालनो, रेशम डारी डोर। सखियो०
कौना झूले कौना झुलावे, कौना खींचे डोर ? सखियो०
राधा झूलत कृष्ण झुलावत, सखियाँ खींचे डोर। सखियो०
राधा कहें प्रभु धीरे-धीरे झूलो, डरपत है जिय मोर। सखियो०

१०५—सावन गीत

हिंडोरना कुंजबन डाला, झूले हो राधका प्यारी।
काहे के खंम दो गाड़े, काहे की पाटली डारी ?
काहे की डोरियाँ डारी, झूलेगी राधका प्यारी।
अगर के खंम दो गाड़े, चंदन की पाटली डारी।
रेशम की डोरियाँ डारी, झूलेगी राधका प्यारी।
धीरे से झूलो गिरधारी, डरेगी राधका प्यारी।
डरो मत राधका प्यारी, रहो तुम प्रान से प्यारी।

१० —सावन गीत

आओ राधे झूलें तनक धीरे-धीरे।
तुम मनमोहन झूलन के मिस, आवत हो नीरे-नीरे।
काहे को इतनी रुनुक बढ़ावत, धुर उरजे चीरे-चीरे।
नोखो छैल भयो जसुदा को, लेत भुजन धीरे-धीरे।

१०७—‹ तिक गीत

आजं कृस्न लीजं मेरी मुरली।
गोकल बाजी बृन्दावन बाजी, मथुरा परी झनकार,
मुरलिया अजक रही जमुना जी तीर।
गोकल ढूंढ़ी बृन्दावन ढूंढ़ी, बरसाने की ओर,
कन्हैया प्यारे सुन मुरली की टेर।

ग्वाल-बाल संग गौवें चरावे, ग्वालन के संग हरि खेल मचावें,
जमुना जी के तीर ।। मुरलिया०

१०८—भजन

बजा दो स्याम बांस की बसुरिया ।
बरम्हा मोह गये, बिसनू मोह गये,
मोह गये रिख मुनिया । बजा०
नगर निवासी ऐसे ही मोहे,
जैसे चंदा की चंदनियां । बजा०
राधे भी मोह गई, रुकमिन भी मोह गई,
कि मोहि गई सब दुनिया । बजा०

१०९—राई (नृत्य गीत)

टेरें घनश्याम बांसुरी में नाम लै-लै टेरें ।
सोवत ती मैं रंग महल में, मोहन मारी सैन ।
लागी नींद उचट गई सजनी, अब नैं लगें दोई नैन । बांसुरी०
जब-जब बाजो मोहन बंसी, तब-तब भई बेचैन ।
अपनो दुख अब एरी सजनी, कासों जैये कैन । बांसुरी०

११०—भजन

जो मुरली हरि की मैं पाऊं ।
जो मुरली हरि के मुख बाजे, सो मैं आप बजाऊं ।
तुम्हरी तान तुम्हारे संग गाऊं, ओ सुर नेक मधुर कर पाऊं ।
जो-जो नृत्य करो कुंजन में, सो-सो करि के तुम्हहिं दिखाऊं ।
तुम्हरो मुकुट अपने सिर पहिरौं, तुम्हरी चोटी मांग गुहाऊं ।
अपनो चीर तुम्हहिं पहिराऊं, तुमको नर से नारि बनाऊं ।
तुम बैठो वृषभानु सुता हुइ, में बृज में नंदलाल कहाऊं ।
तुम बस करी सकल बृज बनिता, मैं बस करके तुमहिं रिझाऊं ।

१११—क्रिया गीत (कटाई गीत)

मुरली में सुनाय-सुनाय, तुम्हें कोऊ टेरत है राधा कैह कैं ।
राधा हेरे झकोरन बाट, हम्हें कोऊ टेरत है राधा कैह कैं ।
काहे की मुरलिया बनी सखी, काहे के लगे मुरचंग ।
सोने की मुरलिया बनी सखी, रूपे के लगे मुरचंग ।
राधे जू पनियां को जांय सखी, श्री कृष्ण उबेरी गाय ।
रोको कन्हैया अपनी गाय खों, मोरी बेंदी गरद भर जाय ।

बेंदिया छिपाओ घूंघट ओट, मोरी गउएं चरै खों जाय।
जैसेई प्यारी तोहे माथे की बेंदी, तैसेई प्यारी मोहे गाय।

१११२—दिवारी

घरी दिने नंद बाबा खरके जांय।
गाईं देखिय उबरी दुबरी, भौरिहरे सांड।
कै सोंकी बन भांजुरी, कै टूटी जमुन की धार।
में तोसों पूछों बबा नंद के, तोरी कैसी दुबरी गाय।
ना सूकी बन भांजुरी, ना टूटी जमुन की धार।
माती बेटी वृष्भानु की, मोरी चरत बिड़ारे गाय।
एक बिड़ारे बड़े सबेरे, दूसर साझी ज्वार।
तीसर बिड़ारे पानी पीतन, दिन भर झिझकें मोरी गाय।
हाथ छड़ी मुख मुरली, कृष्ण उरहने जांय।
बरजो-बरजो अपनी बेटी का, मोरी चरत बिड़ारे गाय।
झूठी मूठी न कहो लाला, मोहि झूठो न सुहाय।
मोरी है राजन की बेटी, पलकन पान चबाय।
जैसे प्यारी तोहि बेटी लोलारी, तैसेई मोहि का गाय।
जो पाँऊ मथुरा जी माँ, लैयो भाँवरे पार।
बार-बार बरज्यों तोहि बेटी, गोकुल वहाँ न लै जाय।
ना जाये बेटी अब गोकुल का, होवन लाग वहाँ अन्याय।
ना जइबे माता बूढ़ी बगरिन, नहि लरकोनिन साथ।
दूध पोखी देही मोरी, चाहे टूक-टूक होई जाय।

११३—फाग

कुंजन में होरी होय, अरे हां रे हां, नगर में दै देव बुलौवा राधा हां।
अरे अरे हां, बिरज में कै मन केसर गारिये, कै मन उड़त गुलाल।
अरे हां रे हां, बिरज में नौ मन केसर गारिये, दस मन उड़ै गुलाल।
अरे अरे हां, नगर में कोना की भीजे सुरंग चुनरिया, कोना की पचरंग पाग।
अरे हां रे, नगर में राधा की भीजी सुरंग चुनरिया, मोहन की पचरंग पाग।
नगर में दै देव बुलौवा राधा हां। कुंजन०

११४—बिलवारी (चक्की गीत)

फागुन की उड़त गुलाल, राधका चल्यो री स्याम हां लै अइए।
अरी हां री राधका, बड़े री भाग फागुन अइए।
फागुन में मिले री घनस्याम, राधका बड़े री भाग फागुन अइए।

११५—फाग

अरे हां रे नंद के लाला से, खेलन आई फाग मदन गुपाला से।
कहना से गोपी आई, कहना भई भारी भीर। अरे०
मथुरा से गोपी आई, गोकल भई भारी भीर। अरे०
कोना ने जेरी लई, कोना हो हरीरे बांस ? अरे०
मोहन ने जेरी लई, राधे हो हरीरे बांस। अरे०

११६—फाग

राधा के संगै सहेलो हो, मन मोहन पै आई मोरे रसिया।
जुर मिल के इक ठौरी हो, पहुँचो जितै गुपाल मोरे रसिया।
लाल गुलाल लगावें हो, बरसाने की खोर मोरे रसिया। राधा०

११७—होली

नाहीं पटै गिरधारी हमारी तोरी, नाहीं पटै गिरधारी।
मैं जमुना जल भरन जाति हौं, छेड़त गैल हमारी।
नहिं जान्यो अहीर की लड़की, मैं बृषभानु दुलारी।
अपन तो जाय कदम चढ़ि बैठे, भरि मारत पिचकारी।
भरि पिचकारी सन्मुख मारैं, बिगरि गई तन सारी।
जो सुन पइहैं पिता जी हमारे, का गति करें तुम्हारी।
सारी के बदले में सारी देहूँ, लाख टका गुन गारी।

११८—होली

ऊंचो सो गोकुल गाँव, जहां हरि खेलत होरी।
राधा चली रिसाय, ढीठ सों खेलै को री।
खेलत में कस मान, सुनहु वृषभानु किसोरी।
रचो बिरज में फाग, चलो सब सांवर गोरी। ऊंचे०

११९—फाग

व्रज को बसैया कन्हैया।
खेलन लागो सरस फाग, व्रज को बसैया कन्हैया।
संग बने ग्वाल वाल, गोविन्द भर-भर गुलाल,
ललित डफ बजावत बलभद्र भैया। खेलन०
इतते बनि ठनि अपार, आई बरसाने की नारि,
तामें मधुर नायिका श्री राधिका दुल्हैया। खेलन०
खेल मच्यो नंद द्वार, परन लगी रंग की धार,
हरषि निरख कान्हा, बलि जात मैया। खेलन०

१२०—फाग

राधा खेलें होरी हो, मन मोहन के साथ मोरे रसिया।
कै मन केसर गारी हो, कै मन उड़त गुलाल मोरे रसिया।
नौ मन केसर गारी हो, दस मन उड़त गुलाल मोरे रसिया।
कोना की चूनर भीजी हो, कोना की पचरंग पाग मोरे रसिया।
राधा की चूनर भीजी हो, कृष्ण की पचरंग पाग मोरे रसिया।
कैसे कै सूखे चूनर हो, कैसे कै पचरंग पाग मोरे रसिया।
लहरन सूखे चूनर हो, झुकवन पचरंग पाग मोरे रसिया।

१२१—होली

जमुना तट स्याम खेलें होरी, जमुना तट।
जमुना तीर भीर सखियन की, कोऊ सांवर कोऊ गोरी। जमुना०
उड़त अबीर गुलाल कुमकुमा, टेसू केसर रंग घोरी। जमुना०
ग्वाल बाल सब हिल मिल गावत, नाचत कृष्ण-राधा जोरी। जमुना०

१२२—फाग

कहूँ राधे जी संग, ऊधौ नच । कन्हैया गोपिन में।
ताथा थेई नाचत ग्वालिन संग नचैं गोविन्द। ऊधौ०
ढप बाजें मिरदंग खंजड़ा, मन मोहन मौचंग।
बेद पढ़त ते ब्रह्मा आये, इन्द्रासन ते इंद्र। ऊधौ०
छत्तिस कुरी छत्तीसऊ देवता, संग राजा हरिचन्द।
चंदसखी भज बालकृष्ण छवि, उठे छत्तीसउ रंग। ऊधौ०

१२३—फाग

होरी खेलन मत जाहु लाल, कुंजन में राधा मिल जैहैं।
बृज की नारि सबै मदमाती, तुमको स्याम पकड़ लैहैं।
छीन लिहे पट-भाल मुरलिया, सिर से चुनरी उढ़ा दैहैं।
बेंदी भाल, नयन बिच काजर, नकबेसर पहिरा दैहैं।
कसर निकार लेय सब दिन की, केसर रंग डारि दैहैं।
कृष्ण कही तुम मानों हमरी, कोई सखा न संग दैहैं।

१२४—होली

मोपे रंगा डारो न सांवरिया, मैं तो ऊसई अतर में डूबी लला।
केसर डार रस रंगा बनाई, हरे बांस पिचकारी लला।
भर पिचकारी मोरे सन्मुख मारी, भींज गई तन सारी लला।
जो सुन पाहें ससुरा हमरे, आउन न देहें बखरियों लला।

जो सुन पाहें जेठा हमरे, छीयन न देहें रसोइयों लला।
जो सुन पाहें सइयां हमरे, आऊन न देहें सिर्जारियों लला।

१२५—रसिया—प्रस्तुत गीत किसी कारण वश नहीं दिया जा सका है।

१२६—होली

जो रंग सामलिया पै डारौं, कर केसर को गारो।
ब्रज की सखियां सब जुर आईं, इनहां बांसन मारो।
एक नैन में कज्जल आंजो, एक नैन रसनारो।
भागो जात भगन ना पावै, भलो मिलो फगुवारो।

१२७—होली

अपनी बार चंदा हिलमिल खेलें,
हमरि बार चंदा छिप जइयो री।
आओ श्याम मिल खेलेंगे होरी, शीशी में रंग भर लाइयो री।
ऊवां-ऊवी साड़ी जरद किनारी, घूंघट में समुझाइयो री।
शीशी में रंग भर लाइयो, भर के छिड़क जाइयो री।
बहियाँ पकड़ समुझाइयो, शीशी में रंग भर लाइयो री।

१२८—विविध

सखी री सुनो कृष्ण हं कंस बुलाओ।
मानी बात दूत जा बन गये, लैन अक्रूर सिधाओ।
बलदाऊ के संग आप गए, उनको चरित सुहाओ।
पील पछाड़ दूर ये दीन्हें, मल्हन मार गिराओ।
कंस भूप की चोटी गहिकें, छत पर कचर गिराओ।

१२९—कातिक गीत

हमें छोड़ कां जाव ब्रजबासी।
जो तुम हमें छोड़ हरि जैहौ,
तज डारौं प्रान गरे डारों फांसी।
मौर मुकुट हरि के अधिक विराजै,
सो कलियन बीच बिहारी जू की झांकी।
नैनन सुरभा हरि के अधिक विराजै,
सो भौंयन बीच बिहारी जू की झांकी।
कानन कुंडल हरि के अधिक विराजै,
सो नातियन बीच बिहारी जू की झांकी।
मुख भर बिरियां हरि के अधिक विराजै,
सो ओठन बीच बिहारी जू की झांकी।

१३०—कार्तिक गीत

मेरा कृष्ण नाचे अँखियन में, मोहे नींद न आवे रतियन में।
सींके टोर मटकिया फोरे, वो तो दहिरा खावे गलियन में।
वृन्दावन की कुंज गलिन में, वो तो रहस रचावे सखियन में।

१३१—कार्तिक गीत

सखि नन्द दुलारो ढूढ़े न मिले, जसुदा को पियारो ढूढ़े न मिले।
घाट बाट सबरे हम ढूढ़े, ढूढ़ फिरे जग सारा। ढूढ़े०
मधुवन ढूढ़े, महावन ढूढ़े, ढूढ़ फिरे बृन्दावन सारा। ढूढ़े०

१३२—कार्तिक गीत

कब मिलहो गोपाल लाल अब, कब मिलहो गोपाल।
गोकल ढूढ़े, गोवर्धन ढूढ़े, ढूढ़ फिरी नन्दगांव।
बागा ढूढ़े, बगीचा ढूढ़े, ढूढ़ फिरी फुलवारि।
महला ढूढ़े, दोमहला ढूढ़े, ढूढ़ फिरे रनवास।

१३३—कार्तिक गीत

तुम बिन स्याम मैं भई रन बन की।
तालों पै गई ती खबर नइयां तन की,
सो फिर सुध आई मोहे चीर उड़न की।
बागा में गई ती खबर नइयां तन की,
सो फिर सुध आई मोहे कलियां बिनन की।
सेजो पै गई ती खबर नइयां तन की,
सो फिर सुध आई मोहे पियरा मिलन की।

१३४—कार्तिक गीत

हिल-मिल के बिछुर जिन जाव, कन्हैया प्यारे,
हिल-मिल काल सुहावनों।
हरि के मोर मुकुट माथे सोहे,
उनकी कलंगी है रतन जड़ाव। कन्हैया०
काहे को लगाई ऐसी प्रीत कन्हैया प्यारे,
काहे को बजाई ऐसी बांसुरी। कन्हैया०

१३५—हिंडोला (सावन गीत)

घर नइयां स्याम मुरक आये बदरा।
बृन्दावन की कुंज गलिन में, मिल गए स्याम मेरे से हुआ झगड़ा।

वृन्दावन की सुघर मलिनियाँ, गुह लाई हार सजनवा लों गजरा।
आज सखी स्याम सपनन देखे, भर आये नैन बिगर गये कजरा।

१३६—मल्हार (सावन गीत)

जात नगरिया में भूली रे डगरिया, अब सुध आ लेओ मोरी राम रे।
सावन मास की रैन अंधेरी, दूजें पड़त फुहार रे।
तीजे सीस पै गगरी है भारी, सो अब सुध आ लेओ घनस्याम रे।
झांझर नविया नाव पुरानी, पवन चले झकझोर रे।
बीच भंवर मोरी नाव पड़ी है, तुम ही लगाओ पार रे।

१३७—दादरा

तेरे दरस की प्यासी रे किसना।
चलो किसन कूओं पै चलिये, तुम महेरा हम महरी बनेंगे।
हिल-मिल के पनियाँ भर लायेंगे, तुम को पनियाँ पिलायेंगे।
चलो किसन बागों में चलिये, तुम माली हम मालिन बनेंगे।
हिल-मिल के गजरा बनायेंगे, तुमको गले में पेहरायेंगे।
चलो किसन महलों में चलिये, तुम राजा हम रानी बनेंगे।
हिल-मिल के सेजा लगायेंगे, तुमको हृदय में बिठायेंगे।

१३८—बारहमासा

चैत चितै चहुँ ओर चितै मैं हारी,
बैसाख न लागी आँख बिना गिरधारी।
जेठ जलै अति पवन अगिन अधिकाई,
असढ़ा में बोले मोर सोर भओ भारी।
सावन में बरसै मेउ जिमी हरयानी,
भादौं की रात डर लागै झिकी अँधियारी।
क्वार में करे करार अधिक गिरधारी,
कातिक में आये ना स्याम सोच भओ भारी।
अगना में भओ अंदेश मोय दुख भारी,
पूष में परत तुसार भीज गई सारी।
माघ मिले नन्दलाल देख छवि हारी,
फागुन में पूरन काम भये सुख भारी।

१३९—कार्तिक गीत

भई न बिरज की मोर सखी री मैं तो, भई०
काँहाँ रहती काहा चुनती, काना करती किलोर।

मथरा रहती, बृन्दावन चुनती, गोकुल करती किलोर।
उड़-उड़ पंख गिरे धरती में, बीनें जुगल किसोर।
उन पंखों को मुकुट बनाओ, बाँधे कृष्ण किसोर।
चंदसखी भज बालकृष्ण छवि, छलिया नंद किसोर।

१४०—गारी

कि एजू मन की मन में दिल की दिल में, जिय में झांझ रही।
कि एजू एक समय हरि मोरे घर आये, मैं दधि मथत रही।
कि एजू मैं गरबीली मुखउ न बोली, उन हरि गैल गही।
कि एजू जोलों हरि से खेल करत ती, बिगरे जात दही।
कि एजू ठंडे से पानी गरम धर कइयो, उठा जो लेव दही।
कि एजू भाप बहै गंगा भाप बहै जमुना, बीच रे एरज रही।
कि एजू पकरत हो तो पकरो मोरे स्वामी, नइ अब जात बही।
कि एजू खबर करों राधा वा दिन की, जब दधि मथत रही।
कि एजू वा दिन की सुध बिसरी मोरे स्वामी, जा दिन भांवर परो।
कि एजू वा दिन की सुध राखे रइयो, मथती रहो दही।
कि एजू सूरदास चरनन की चेरी, बहियाँ पकर लई।

१४१—बारहमासा

कन्हैया बिन कौन हरे मोरी पीरा।
असाढ़ मास घन गरजन लागे, साहुन गगन गंभीरा।
भादों मास नभ बिजली चमके, थो तन धरत न धीरा।
कुवार मास की छुटक चाँदनी, कातिक निर्मल नीरा।
अघन मास में बोनी हुइए, जो मन होत अधीरा।
पूस मास में ठंड जो व्यापे, माघ में हलत सरीरा।
फागुन मास हरि होरी खेलें, कौन पै छिटकें नीरा।
चैत मास बन टेसू फूले, बैसाखे गरम समीरा।
जेठ मास की खरी दुपरिया, ब्याकुल होत सरीरा।

१४२—फाग

इतनी कोई कहियो हमारी, मनमोहन
ब्रजराज सांवरे सो ए हो नारी।
फागुन आयो झांझ डफ बाजें, भीर भई अति भारी।
मोहे तो आस तिहारे मिलन की, भूल गई सुध सारी,
पिय तलफत हूँ न्यारी।

मोहे गुपाल लाल बिन ते, भई है रैन अंधियारी।
अंसुअन को अब रंग बनो है, नयन बने पिचकारी,
पिया छोरत हूँ हारी।
बृन्दावन की कुंज गलिन में, ढूंढ़त ढूंढ़त कै हारी।
देउ दरस मोहि अपनी मौज से, एहो कृष्ण मुरारी,
पिया मोहि आस तिहारी।

१४३—होली

को खेलै ऐसी होरी, स्याम घर आये न गोरी।
आप तो चैन करें कुब्जा संग, हमसो रहैं मुख मोरी।
मैं होरी सी जरत बरत हौं, काह उपाय करों री ?
नहीं बस मेरो चलो री। को०
सब सखियन मिल होरी खेलत, रंग रहस्य मचो री।
निठुर स्याम अजहूँ नहिं आवत, लाखन पाती लिखो री।
लला जिया तरसत मोरी। को०
रात-दिना मोहि तलफत बीते, तन-मन आग लगोरी।
ऐसो जिय में आवे सखी री, अब बिष खाय मरों री।
गुइयाँ ! यह बात भलो री। को०

१४४—भजन

राधा जोगिन जात भई, श्याम दरशन दीजो।
बैठी कदम तर केश सुखावौं, आशा लागि रही।
आशा छोड़ निराशा हुइ गई, माला हाथ यही।
गहरी नदिया नाव झांझरी, अधबिच भमर गही।
खेई है तो पार लगावो, नाहित जात बही।
हमसे तोड़ी और से जोड़ी, कहो कैस निबही।
राधा छोड़ी कुंज मलिन में, कुबिजा संग रही।
सूरदास प्रभु तुम्हरे दरश को, आशा लागि रही।
पूरन आस करो मन मोहन, बिरहा शोक दही।

१४५—भजन

जीवन तो बीता जाये री, नहि आये कन्हैया।
जब से गये हरि, हमरी सुधउ न लीनी,
पाती न एकउ पठाये री। नहीं०
दिन नहि चैन रैन नहिं निदिया,
जिया मेरो घबड़ाये री। नहि०

सब सखियाँ बिरहा की अगनि में,
रो-रो नीर बहायें री । नहिं०
सूरदास कहैं कर जोरी,
आहें कुंवर कन्हाई री । नहिं०

१४६—दादरा

ऊधो फेर ले जाओ या पाती ।
पाती लिखत मोरे आँसू चलत है, बांचत फाटे छाती ।
ना हम उनखां वे न हमारे, भये कुब्जा के साथी ।
हमरे होते हमरी सुध लेते, काहे खां जरावें मोरी छाती ।

१४७—दादरा

ऊधो कारे रंग अजमाये ।
कारो कोयल भौर अंधियारी, तीनों रंग सुहाये ।
ये तीनों मतलब के साथी, फिर वापस ना आये ।
कारे नाग रहैं बाबिन माँ, उनहुन दूध पियाये ।
बीजक में जब काटन लागे, फेर लहर न आये ।
कोयली के सुत कागा पाले, भर-भर अंग लगाये ।
बड़े भये जब बोलन लागे, कुल अपने को धाये ।
वसुधा के लाल नंद जो के बेटा, जाइ द्वारका छाये ।
सूरदास बल जाव चरनन को, अब को पार लगाये ।

१४८—दादरा

ऊधो स्याम सनेहिरा कहां को ।
आठ मास नौ गोद में राखे, भये न अपनी मांके ।
जब रथ हांक दये मधुवन खां, सखियन बांधे नाके ।
खा-खा दूध-दही गोकुल की, फिर ना ब्रज में झांके ।
जो में जनती प्रीत न करती, करें कुबजा से नाते ।

१४९—दादरा

ऊधो स्याम सनेही कहा को ।
प्रथमैं लीला ब्रज माँ टाँको, फैल रहे जस बाँको ।
दूध-दही गोकुल में खाइन, फेर न ब्रज में झांको ।
अब रथ हांक चले मधुवन को, सखियन नाका ताको ।
लाल दुहाई तोरी नन्द बाबा की, जो जमुना जल नाको ।

जो मैं जनतिऊँ प्रीत न करती, ह्वै अपने दिल वा को।
लोक कुटुम क्रिया पर डालिन, परगे कुल मां टाँको।
दसुधा जी के लाल नन्द जी के बेटा, भयौ न अपने मां को।
सूरदास बल जाव चरनम की, दसुमत दूध पियायो।

१५०—कार्तिक गीत

कहा करों तकसीर, कुंजन बन छोड़ गए ए ऊधो।
जो मं होती जल की मछरिया, कृष्ण करते असनान,
चरन गहि लेती ए ऊधो।
जो मैं होती बन की हिरनियां, कृष्ण चलाते बान,
प्राण तज देती ए ऊधो।
जो मैं होती सुरहिन गैया, कृष्ण दुहाते गाय,
गगर भर देती ए ऊधो।
जो मैं होती बांस की बंसुरिया, कृष्ण बजाते बीन,
अधर रस लेती ए ऊधो।
जो मैं होती सीप की मोती, कृष्ण गुहावते हार,
गले बिच रहती ए ऊधो।

१५१—गारी

श्यामल कली राधेश्याम गये अन्त, रसबारी के भौंरा रे।
ऊधौ तुम जइयो और माधो से कइयो, तुम कहत न डरइयो,
वे राधे हो गई सन्त, रसवारी के भौंरा रे।
भूली सोलहू सिंगार, टूटो गजमोतिन हार, जिया भओ छार-छार,
कैसे निर्मोही कंत, रसबारी के भौंरा रे।
कछु बोलत न बात, खान-पान ना सुहात, भयो तातो सब गात,
परो दुःख के अनन्त; रसवारी के भौंरा रे।
सखी हारी समुझाय, बात कौनऊ न भाय, हाथ मीजें पछताय,
लगं आ गओ बसअंत, रसवारी के भौंरा रे।

१५२—गारी

ऊधौ कहियो संवलिया से जाय, खबरिया काहे भूले मोरे लाल।
रोय-रोय के कहै राधिका, सुन ऊधौ चित लाय मोरे लाल।
कहियो मोर सन्देश स्याम कों, कुबरी बिलग बुलाय मोरे लाल।
जा दिन से हरि संग छोड़ के, मथुरा मये सिधाय मोरे लाल।
तब सो मन चंचल निस-बासर, दर्शन को ललचाय मोरे लाल।

परसों के आवन को कहि गये, बरसों दिये बिताय मोरे लाल।
बात लाज की स्याम बिन राधा, कोसे कहै सुनाय मोरे लाल।
ऊधौ स्याम बियोग राधिका, जनमी करम लिखाय मोरे लाल।
जो कछु लिखो बिधान बिधी का, सो मिटने को नाय मोरे लाल।
मैं ऊधो हरि नाम को लइके, मरि जइहौं बिष खाय मोरे लाल।
खुशी रहै वह सौति कुबरिया, चिरजीवी यदुराय मोरे लाल।

१५३—गारी

ऊधौ हरी को समझाय दीजै मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें दधि-माखन को,
ऊधौ गोरस वहीं लुटाय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें गोपी-ग्वालन को,
ऊधौ रहस वहीं रचवाय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होंवे गइया-बछनन को,
ऊधौ लकुटी उन्हें गहाय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें नन्द-जसुदा को,
ऊधौ माखन-मिसरी धराय दीजौ मथुरा जाय कै।
मोहन भूले जो होवें बृज-गोकुल को,
ऊधौ हाल-चाल बताय दीजौ मथुरा जाय कै।

१५४—राई (नृत्य गीत)

दुर लगे असाढ़ खबर नें लई, हरि मोरी।
दादुर बोले पपीरा, मधुबन बोली मोर,
श्याम श्याम कह टेरियो, चित है मोरी ओर। खबर०
ऊधौ जाइयो मथुरा, हरि सों कहियो समझाय,
खाकें जहर बिष मरहों, पीछूं परे पछताय। खबर०

१५५—सावन गीत

पाती ले जाय के, ऊधौ कहो प्रेम कुशलात।
हंस-हंस पूछे सांवला, वह ब्रज भौन की बात।
कैसे बाबा नन्द, कैसी यशोदा माई,
कैसी हमरी गऊ, कैसे हलधर भाई।
कैसी दुनियां ब्रज की, अरु कदम्ब वृक्ष की छांह।
कैसी तो 'वह गोपी' कहिये, बसै कौन की बांह।
अच्छे बाबा नन्द, अच्छी यशोदा माई,
अच्छी तुम्हरी गऊ, अच्छे हलधर भाई।

अच्छी दुनियां ब्रज की, अरु कदम्ब बृक्ष की छाँह ।
गोपी तो वह भटकत डोलें, बसें कृष्ण की बाँह ।

१५६—कातिक गीत

न जैयो द्वारके गिरधारी ।
बृन्दाबन के घने है बगैचा; पेड़-पेड़ है रखवारी ।
तुम बिन स्याम तुम्हारे ब्रज की, कौन करैगो रखवारी ।
बस्ती उजा दई, उजड़ी बसा दई, कुबजा के मन जा भाई ।
सब सखियन मिल ऐसी कंहती, आवें घर कुंवर कन्हाई ।
राधा मन में ऐसे बिसूरे, जैसे बिन बछुला की गाई ।

१५७—भजन

अब रथ छेड़ो द्वारका वाले ।
चन्दा तरफे सूरज तरफे, तरफे नौलख तारे ।
गौवें तलफे बछुला तलफे, तलफे ग्वाल बिचारे ।
जसुदा तरसे नन्द बाबा तरसे, तरसें बृज के सारे ।
माई जसोदा रोती बिसूरें, कैसे जीहें प्रान हमारे ।
बृज की सखियां ठाड़ी बिसूरें, कबं मिलो श्री स्याम हमारे ।
सब के हिरदय धीर बंधाओ, फिर कब दरस देहो नन्द दुलारे ।

१५८—दादरा

सुनेरी हम रुकमिन ल्याए कन्हैया ।
साज-बाज गजराज संग में, औ बलदाऊ भैया ।
सब भूपन को मान घटाओ, कैसे सस्त्र चलैया ।
देवता सर्व पूज खेरे के, बन रही अनद बधैया ।

१५९—गारी

रथ लइआये स्याम रुक्मिनी प्यारी ।
माथे में हरि के मुकुटा सोहे, कुंडल की छबि प्यारी लगे ।
अंग में सोहे जरी को जामा, केसर की छबि न्यारी लगे ।
संग में सोहै रुक्मिनि रानी, जोड़ी की छबि प्यारी लगे ।

१६०—कातिक गीत

सुदामा जो खां द्वारका में किसन जो मिले ।
इतै हतो मोरी माटी की मढैया, कंचन महल खड़े ।
इतै हतो मोरी तुलसी को बिरवा, चन्दन रूख खड़े ।
पहली पौर गजराज बिराजे, दूजी में तुरग खड़े ।

तीजी पौर बिश्करमा बैठो, रतन जड़ाव जरे।
छिन में बिपत हरी करुनागत, वारिद दूर करे।

१६१—होली

बालम तुम बिन कैसे खेलौं होरी।
बीती जात रितु फागुन, अजहुँ न लीन्हीं सुध मोरी।
जैसे मीन जल बिन तरफत, सो गति भई है मोरी।
सुन रे पथिक तुम जाय कहो उन हरि सौं,
लोगन की कहा चोरी।
कृपा करो आवो लालन अब, बहुत भई रई थोरी।

१६२—कार्तिक गीत

एक बेर तुम हो जाइयो मुरारी, दरशन खों तरसे ब्रज की नारी।
बारे की खबर नइया तुमखों, नन्द पिता जसुदा महतारी।
सोरा साठ आठ पटरानी, जिनमें की मैं हों गुबरारी।
गिरि गोबरधन नख पै धरकें, आन करौ ब्रज की रखवारी।

१६३—होली

खेल ले कुब्जा पिय संग होरी, पूरी भई मन इच्छा तोरी।
श्याम के नयन लगे हैं तो सों, सनमुख आव न कर चित चोरी।
बहियां पकर झट छीन ले कामर, बोर दे रंग में पीत पिछौरी।
कैसे मोहन खों बस में किए तैं, हाथ मलत है राधा गोरी।

१६४—कार्तिक गीत

रुक्मिनि मोय ब्रिज बिसरत नैयां।
सोने सरूपे की बनी द्वारका, गोकुल कैसी छबि नैयां।
उज्जल जल जमुना की धारा, बाकी भाँत जल नैयां।
जो सुख कहिये माय जसोदा, सो सुख सपनेऊँ नैयां।

१६५—गारी

ब्रिज हमें बिसरत नइयां री रुकमिन, ब्रिज हमें बिसरत नइयां मोरे लाल।
छोटी सी घंटी हिलोरा के पानी, सपरे की सुध-बुध नइयां मोरे लाल।
पीरी अंगौछी पीतम रंग धोती, पहरे की सुध-बुध नइयां मोरे लाल।
मोहन भोग मगज के लडुआ, जेंवे की सुध-बुध नइयां मोरे लाल।
सोने के गडुआ गंगाजल पानी, पीवे की सुध-बुध नइयां मोरे लाल।
फूलन सेज इतर से छिड़की, पौढ़े की सुध-बुध नइयां मोरे लाल।

मैं तो जानौ माया बन कै लकरिया, चुलें दियौ लगाई जी।
ऐसो ना जान्यो धना बन कै लकरिया, नंद बबा पहुनाई जी।
ऐसो ना जान्यो स्वामी लाखे की लखौटी, नौलखा हीरे जड़ाये जी।
दूध-दही की बेचनो राधिका, कबै-कबै तिलरी गढ़ाई जी।
गौवन के चरवैया कन्धैया, कबै-कबै मुरली बजाई जी।

१७२—गारी (विवाह गीत)

इतकी तरइयां उते निकस गईं, स्वामी घरै नहीं आये मोरे लाल।
रंग महल से उतरी राधिका, ठाढ़ी बदन मलीन मोरे लाल।
हंस-हंस पूछे उनकी सास यशोदा, कैसे बहू बदन मलीन मोरे लाल।
आज की बात कहा कहों सासो, हमसे कही न जाय मोरे लाल।
लाज सरम सब छोड़ मोरी बहुआ, दिल को दरद बताओ मोरे लाल।
सोवत ती मैं रंग सहल में, दुलरी कौनन चुराई मोरे लाल।
जिनने बहू तुमरी दुलरी चुराई, मुरली लेओ चुराय मोरे लाल।
सासो हमरी पाहिली बाजे, बिछुअन की झनकार मोरे लाल।
पाहिल उतार बहू डबा में धर देओ, बिछुअन के सुर मूदों मोरे लाल।
माँथ सें आ गये कृसन कन्हैया, ठाढ़े बदन मलीन मोरे लाल।
हंस-हंस पूछे उनकी माय यसोदा, कैसे बेटा बदन मलीन मोरे लाल।
आज की बात कहा कहों माता, हमसे कहो न जाय मोरे लाल।
खेलत तो मैं जमुना किनारे, मुरली गई है चुराय मोरे लाल।
जिनकी कन्हैया तुमने दुलरी चुराई, मुरली वे गई चुराई मोरे लाल।
कब-कब राधिका ने दुलरी हो पैरी, गोबर को टारन हार मोरे लाल।
कब-कब कन्हैया ने मुरली बजाई, ढोरन को घेरनहार मोरे लाल।
कब-कब राधा ने दुलरी हो पैरी, गोरस की बेंचनहार मोरे लाल।
कब-कब कन्हैया ने मुरली बजाई, कमरी को ओढनहार मोरे लाल।

१७३—दिवारी

बारा दुआरी का है बंगला, चौसठ खंभा लाग।
जागत पहरुआ सोय गये, माता दुलरी लैइगे चोर।
कहो तो माता कुअना गिरौं, कहो तो जहर खाय मर जाँय।
काहे का बहू तैं कुअना गिरन कहै, काहे जहर खाय मर जाय।
जो कोऊ तोरी दुलरी लैंगे, ओखी मुरली लाव छुड़ाय।
एक तो बैरिन पांय पैंजनियां, ऊपर घूंघरू झहराय।
पांय की पंजनियां, भुअना धरायले, न्यूरन पियाय ले सीस।

पांच पान का बीरा मुख ले, मुरली लाव चुराय।
चोरी करत चोरे धरि पकरतिऊं, बड़ी देउती मार।
घिव के बीरे पुआ देवतिऊँ, ऊपर बिराऊती खांड।
परे-परे ओ चोरे समझउत्यू, दईकें उसीसे हाथ।

१७४—कजली (सावन गीत)

एजी सखी आई बसन्त बहार, कौंपन-कौंपन अमवा बौरियो जू।
उड़त सुरभि घुलमिल के बाग सें जू, एजी कोऊ सोरभमय संसार। कौं०
रंग महल से उतरी राधिका जू, एजी कोई कर सोलह सिंगार। कौं०
अखपुतरी लख जसुदा यों कहे जू, एजी कोई कहा गड़ायो माई बाप। कौं०
गानों गुरियो सासो न चाहों जू, एजी मोरो गहनों सब परिवार। कौं०

१७५—बाबा के गीत (विवाह गीत)

दाख सी बात, बादाम से मोहन, मिसरी सी राधा से भई है लड़ाई।
राधा रिसै हैं, मायके खों जैहें, श्रीकृसन बन फिरहैं लाल।
राधा रैहें दिना चार, किसना तो बरसें बितैहें लाल।

१७६—गारी (विवाह गीत)

सपर खोर राधा चढ़ गई अटरिया, तपती राम रसोई मोरे लाल।
जब सुध आई उन्हें पिया मिलन की, रोई धुआं की ओट मोरे लाल।
ओ मोरे लाला ओ मोरे देउरा, भइया की खबर लताओ मोरे लाल।
ना हम देउरा मा हम लाला, ना हम खबर लगायें मोरे लाल।
भइया के पाले हैं परबत सुअना, उनई से खबर मंगाओ मोरे लाल।
काहे को लाला कागद बनाऊं, काहे की करें मस दौत मोरे लाल।
अंचल फार भौजी कागद बना लेओ, नैन करो मस दौत मोर लाल।
पैंती चीर भौजी कलमें बनाओ, लिख दो दो-दस बोल मोरे लाल।
चिठियां लिख के सुअना को दे दो, सुअना जाय परदेस मोरे लाल।
अंचल फार राधा कागद बनायो, नैनन की करी मस दौत मोरे लाल।
पैंती चीर राधा कलमें बनाई, लिख दिये दो-दस बोल मोरे लाल।
चिठियां लिख के सुअना खों दे दई, सुअना गओ परदेस मोरे लाल।
स्वामी के आंगन लौंगन बिरछा, सुअना बेठौ जाय मोरे लाल।
मांय से आये जो कृसन कन्हैया, चिठियां दई है छुटकाय मोरे लाल।
चिठियां देखत स्वामी मगन भये हैं, भर आये नैनन नीर मोरे लाल।
कैसे मारे बाप मतारी, कैसे कुटुम परिवार मोरे लाल।
नीके तुमारे बाप मतारी, भले कुटुम परिवार मोरे लाल।

कैसी हमारी नोनीसी धनियाँ, जिन्ने पाती पठाई मोरे लाल।
रोवत छोड़ी तुमरी नोनीसी धनियाँ, जिन्ने पाती पठाई मोरे लाल।

१७७—दातून गीत (विवाह गीत)

एक समय पिया हम जग जीती, सिया राधो से दतुइन मांग रही ॥टेक॥
एक बेर मांगी, दूसर बेर मांगी, हम बोलत, सिय बोलत नाहीं,
सिय, मैं कब की दतुइन मांग रही।
द्वार से आये एक सांवल मूरत, सीने कों गडुआ, आम की दतुइन,
तुम करो जसौदा, मांय मेरी दतुइन।
जा दतुइन हम तबहीं करहैं, जब राधे को नैहर कर अइहो।
कौन घुन लागो सो नैहर पठै दें, कौन घुन लागो सो देस निकारैं।
हम घुन लागो सो नैहर पठै देव, हम घुन लागो सो देस निकारो।

× × ×

डुलिया सजाय हर लयँ चले हैं, मात जसोदा मुखो नहिं बोलीं।
जुर मिल आई सब ब्रज की सखियाँ, राधो की नैन नीर भर आये।
हंस मुख बूझें ब्रज की सखियां, हमें जिवाउन कभै हर अयहौ।
कृष्ण—जेठै राधो विन जो कटिऔ,
असढ़ा में मंडल छबैंहौं, मेरी राधो।
सावन राधो झूलें हिंडोला,
भादों में रैन अंधेरी, मेरी राधो।
क्वाँर में राधो पितरन पानी,
कातिक सुरही जो खेलैं, मोरी राधो।
अगहन राधो अगर सनेहों,
(अरे) पूस में जाड़ा लगे, मोरी राधो।
माघ में राधो बसंत जो हुइहै,
फागुन होरी जो खेलैं, मोरी राधो।
चैत मास बन टेसू जो फूले,
(अरे) भर बैसाख नींद भर सोईं।
बीत गए सखि बारो महीना, श्री किसन लिवाउन अजहों नहिं आये।
राधो मरिहैं और हुइ जैहैं, मात जसोदा कहाँ हम पैहैं ?
धरती जोत उरिन हुइ जैहैं, मात जसोदा उरिन नहिं हुइहैं।

१७८—कार्तिक गीत (तुलसा गीत)

भोर होत तुलसा पौर दुआरे, मगरन कागा बोलियो ।
हाथन घड़िलना मूंड घड़िलना, तुलसा पनियाँ को निकसीं ।
रोज-रोज तुलसा भरती झुकर कें, आज घड़िलना न डूबियो ।
बन के बरेदिया, ग्वाल बरेदिया, तुम मेरो घड़िला उठाइयो ।
जो हम तुलसा घड़िलना उठाहैं, आजई से मोरी त्रिया भईं ।
नाम न जानूं ग्राम न जानूं, कहा कहि के हम टेरिहौं ।
नाम नारायन ग्राम बृन्दावन, हरि हरि कहि के टेरियो ।
हलत कंपत तुलसा घरनो आई, माई भाभी घड़िला उतारियो ।
बन के बरेदिया ने, ग्वाल बरेदिया ने, बोली इक मोसो बोलियो ।
चलो प्यारी तुलसा ओई बने चलिये, जहाँ वह ग्वाल बरेदिया ।
कै प्यारी तुलसा कांस फूलो, कै बनजारो इक मेलियो ।
ना मोरी माता कांस फूलो, न बनजारो मेंलियो ।
उन हरि को धोती हो सूखे, वे हरि आयें तेरे पाहुने ।
मारों रे थापर मो फिर जैहै, तैं मोरी तुलसा सताइयो ।
काहे खों मोरी माता थापर मारो, काहे खों मो तुम फेरियो ।
बारह बरस हमने गौवें चराईं, इन तुलसा जी के ही कारने ।
को तेरे आगे को तेरें पीछें, को तेरी सजिहैं बरात हो ।
चन्दा मोरे आगे, सुरज मोरे पीछें, देवता सजिहैं बरात हो ।
अब तुलसा की परती हैं भावरें, ब्रह्मा वेद सुनाइयो ।

१७९—भजन

तुलसा को ब्याहन आये श्री घनश्याम ।
बाजे मधुर-मधुर धुनि बाजे, अरे हां रे नारद नंगे पांव जो नाचे ।
इन्दर कोटि बराती आये, अरे हां रें दूलह श्री घनश्याम ।
चन्दसखी भज बालकृष्ण छबि, हरि चरनन को गुलाम ।

१८०—सावन गीत (तुलसा गीत)

तनक मनक राधे पूछैं है बतियां, सबरी रैन कहां गमाई महराज ।
हम तो री राधे जूठी ना बोलैं, हम तुलसा परनाई महराज ।
जो जानूं तुलसा हरि परनावें, बिरया गंगा में गेरूं महराज ।
जो राधे बिरवा गंगा जो में गेरो, बनतो गंगाजल भारी महराज ।
श्री कृष्ण जी स्नान करें महराज । तनक०
जो जानूं तुलसा हरि परनावें, बिरवा जंगल में गेरूं महराज ।

जो राधे बिरवा जंगल में गेरो, बनती चंदन रूख महराज।
श्रीकृष्ण तिलक लगावें महराज ॥तनक०॥
एक लंग तो रानी रुकमन सोवें, एक लंग सोबें राधे,
सिरहाने तुलसा सोवें महराज ॥तनक०॥
ऐसे क्या रानी जप-तप कीन्हें,
श्रीकृष्ण जी के सिर चढ़ सोईं महराज।
बहुतक री राधे जप तप गाले, तो श्रीकृष्ण बर पाये महराज।

१८१—गारी (तुलसा गीत)

आगू-आगू सूरज पीछू रानी तुलसा, ठाड़ी जमुना जी के तीर मोरे लाल।
ठाड़ी रानी तुलसा मन पछता रही, कोनें विधि पार उतरिये मोरे लाल।
नइया के धोके एक मुरदा बहत है, वोई विधि पार उतरिये मोरे लाल।
जमुना किनारे एक वियना जरत है, बई की ओट पार उतरिये मोरे लाल।
रंगा महल में सोवे रे कन्हैया, कोने विधि कृष्ण जगइये मोरे लाल।
ठाड़ी रानी तुलसा मन पछता रहीं, कोने विधि पार उतरिये मोरे लाल।
दाहिने हाथ की छिगरी पकर लई, एई विधि कृष्ण जगइये मोरे लाल।
झटपट राधा यह कह बोली, तुलसा सौत हमारी मोरे लाल।
मांय से आ गये कृष्ण कन्हैया, कैसी तुलसा बदन मलिन मोरे लाल।
झटपट बोलीए रानी राधा, तुलसा हमारी सौत मोरे लाल।
के तुम तुलसा अंगना लगावई, के तुम छिऊलन बीच मोरे लाल।
अंगना के राखे रुच खुब जैबी, छिऊलन से मय बन जाये मोरे लाल।
छतिया लगाहो कृष्ण, छतिया जुड़े है, हिरवे की मिट जैहे दाह मोरे लाल।

१८२—देवारी

राधा कहे कृष्ण से महूँ चलूँ आप के साथ।
गाइन साथ निबइहै ना धावा चढ़ँ पहार ॥१॥
जसुदा बरजो अपने लाल का बंसी न टेरे रात बिरात।
बंशी बाजे सुरीली तौ ग्वाहै तीनौ लोक ॥२॥
मना कइले बेटी तू आपन जमुनै पानी न ज ।
मैं घूमौं बन गंल मां गघरी लेऊं उतार ॥३॥
मैं बरजो तोहि बेटी रे जमुनै पानी न जाय।
हठी कन्हैया नंद को तोर पानी लेय उतार ॥४॥
जौने घाट मा कृष्ण कन्हैया वही पहुँच गै राधिका जाय।
वही दान तैं दै-दै राधिका फेरि उतरि जा घाट ॥५॥

तनक सा दहिया खायेस रे मटकी डारेस फोर ।
अब स आउब मथुरे जहाँ होबै लाग अनीत ।।६।।
लंका गरजै रावन अवधपुरी मा राम ।
कंस रजा के महल मा गरजैं कृष्ण बलराम ।।७।।
हुल हुल हुल हुल नदी बहत है कुब्जा पैठे नहाय ।
नदी पैसुनी तोहि बोकरा चढ़इहौं कुब्जा लै जा बहाय ।।८।।
जहाँ-जहाँ स्याम गौदोहन कीन्हीं फिरैं दुखारी गाय ।
बछवा रांभै रहूनी-रहूनी कहना कान्ह चले तुम जाय ।।९।।

परिशिष्ट

सहायक ग्रन्थों की सूची

१—अवतार रहस्य	अनु० श्री शान्तिप्रिय आत्माराम जी
२—आर्यभटीयम्	अनु० डा० उदयनारायण सिंह
३—अवधी, ब्रज और भोजपुरी लोक-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन	डा० गंगाचरन त्रिपाठी (अप्रकाशित)
४—अष्टछाप काव्य का सांस्कृतिक मूल्यांकन	डा० मायारानी टंडन
५—उत्तर प्रदेश के लोकगीत	श्री विद्यानिवास मिश्र
६—कित गयौ मथुरावासी	श्री रामनारायण अग्रवाल
७—कीर्तन संग्रह (भाग १, २, ३)	श्री लल्लूभाई छगनभाई देसाई
८—गाँव के गीत (भाग १, २)	श्री रमेश वर्मा
९—गुजराती और ब्रजभाषा कृष्ण-काव्य	डा० जगदीश गुप्त
१०—चंदसखी के भजन और लोक-गीत	श्री प्रभुदयाल मीतल
११—जातक (भाग ५, ६)	अनु० श्री भदंत आनंद कौशल्यायन
१२—जीवन के तत्त्व और काव्य के सिद्धान्त	श्री लक्ष्मीनारायण सुधांशु
१३—धरती गाती है	श्री देवेन्द्र सत्यार्थी

१४—धूलि धूसरित मणियाँ — श्रीमती दमयन्ती, सीता देवी तथा अन्य
१५—पोद्दार अभिनन्दन ग्रन्थ — सम्पा० डा० वासुदेव शरण अग्रवाल
१६—प्रकृति और हिन्दी काव्य — डा० रघुवंश सहाय वर्मा
१७—पृथ्वीराज रासो में कथानक रूढ़ियाँ — श्री ब्रजविलास श्रीवास्तव
१८—प्रेमी अभिनन्दन ग्रन्थ — सम्पा० श्री बनारसीदास चतुर्वेदी
१९—ब्रज का इतिहास (भाग २) — श्री कृष्णदत्त वाजपेयी
२०—ब्रज के लोकगीत — मक्तबा जामिया, दिल्ली
२१—ब्रज लोक-साहित्य का अध्ययन — डा० सत्येन्द्र
२२—बुन्देलखंड के लोकगीत — श्री उमाशंकर शुक्ल
२३—बुन्देलखंड के लोकगीत — श्री हरप्रसाद शर्मा
२४—बुन्देलखंड के लोकगीत — श्री वृन्दावन लाल वर्मा
२५—बुन्देलखंड के लोकगीत — श्री शिवसहाय चतुर्वेदी
२६—बुन्देलखंडी फाग साहित्य — श्री श्यामसुन्दर बादल (अप्रकाशित)
२७—बुन्देलखंडी लोकगीत — श्रीमती हीरादेवी चतुर्वेदी
२८—बुन्देल वैभव (भाग १) — श्री गौरीशंकर द्विवेदी
२९—बेला फूले आधी रात — श्री देवेन्द्र सत्यार्थी
३०—भारतीय लोक साहित्य — श्री श्याम परमार
३१—मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य का लोक-तात्त्विक अध्ययन — डा० सत्येन्द्र
३२—लोकगीतों की सामाजिक व्याख्या — श्री श्रीकृष्ण दास
३३—लोक रागिनी — श्री सत्यव्रत अवस्थी
३४—लोक-साहित्य की भूमिका — डा० कृष्णदेव उपाध्याय
३५—लोक-साहित्य की भूमिका — श्री सत्यव्रत अवस्थी
३६—वैष्णव धर्म — श्री परशुराम चतुर्वेदी
३७—सूर की काव्य-कला — डा० मनमोहन लाल गौतम
३८—सूरसागर (भाग १, २) — नागरी प्रचारिणी सभा, काशी
३९—सूरदास : जीवन और काव्य का अध्ययन — डा० व्रजेश्वर वर्मा
४०—हिन्दी साहित्य (भाग २) — डा० धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य
४१—हिन्दी साहित्य का आदिकाल — डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी

४२—हिन्दी साहित्य का वृहत् इतिहास (भाग १६) — म० पं० राहुल सांकृत्यायन और डा० कृष्णदेव उपाध्याय
४३—हिन्दी साहित्य कोष — डा० धीरेन्द्र वर्मा तथा अन्य
४४—हिन्दू धार्मिक कथाओं के भौतिक अर्थ — श्री त्रिवेणी प्रसाद सिंह
४५—श्रीमद्भागवत्, स्कंद पुराण और देवी भागवत पुराण — कल्याण, गीताप्रेस, गोरखपुर

ब्रज और बुन्देली लोकगीत-साहित्य सम्बन्धी लेखों की सूची

(१६३१ से १९६१)

१. धरती के आँसू—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी	आजकल	अगस्त ४५
२. बुन्देलखंडी लोकगीत—श्री लक्ष्मी प्रसाद मिश्र	,,	अप्रैल ४६
३. लोकगीत—श्री कृष्णचन्द्र वर्मा	,,	दिसम्बर ४६
४. बुन्देलखंड में वर्षा—	,,	नवम्बर ५३
५. बुन्देलखंडी लोकगीतों में फागों की बहार—स्व० शिवसहाय चतुर्वेदी	,,	मार्च ५५
६. बुन्देलखंडी वैवाहिक गीत—स्व० शिवसहाय चतुर्वेदी	,,	मई ५८
७. भारतीय लोक-साहित्य की मनोभूमि—श्री रामइकबाल सिंह	,,	मई ५६
८. भारतीय लोक-नृत्य और नृत्य-गीत—श्री रामइकबाल सिंह	,,	जनवरी ६०
९. लोक-साहित्य की यथार्थवादी परम्परा—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी	आलोचना	अप्रैल ५२
१०. हिन्दी साहित्य का लोक-साहित्य पर प्रभाव—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी	,,	जनवरी ५३
११. ब्रजलोक संस्कृति में पुत्र जन्म—श्री महेश चन्द्र गर्ग	इ०यू०हिन्दी मैगज़ीन (भाग १५)	

१२. हमारा लोक-साहित्य : लोक-विश्वास—डा० श्यामाचरण दुबे	कल्पना	जून ५०
१३. लोकमानस की त्रिधाभिव्यक्ति—श्री श्याम परमार	,,	दिसम्बर ५२
१४. हिन्दी साहित्य के इतिहास में लोक-साहित्य की भूमिका—श्री नामवर सिंह	जनपद	माघ २००६
१५. समाज और लोकगीत—श्री राजकिशोर	जनवाणी	सितम्बर ५०
१६. दिन आ गए चकई भौंरा के—श्री हरगोविन्द गुप्त	त्रिपथगा	नवम्बर ६०
१७. ब्रज के क्रीडांगन में—श्री मोहनस्वरूप भाटिया	,,	नवम्बर ६०
१८. लोक-भाषा और लोक-साहित्य—श्री राहुल जी	नयापथ	अगस्त ५३
१९. प्रगतिशील साहित्य पर लोक-साहित्य का प्रभाव—श्री मुरली मनोहर प्रसाद	,,	अगस्त ५६
२०. ब्रज लोक-साहित्य की सरस धारा—श्री कृष्ण विहारी श्रीवास्तव	,,	दि०-जनवरी ५७
२१. लोक-नृत्य और गीत—श्री रामइकबाल सिंह	नया समाज	नवम्बर ४६
२२. लोकगीतों की सामाजिक पृष्ठ-भूमि—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी	,,	अक्टूबर ५०
२३. बुन्देलखंड के लोकगीत—डा० वासुदेव शरण अग्रवाल	नया समाज	अगस्त ५६
२४. १८५७ के लोकगीत—श्री देवेन्द्र सत्यार्थी	,,	सितम्बर ५७
२५. १८५७ के लोकगीत—श्री रामइकबाल सिंह	,,	अक्टूबर ५७
२६. शक्ति-साधना के भण्डार : हमारे लोकगीत—श्री गौरीशंकर द्विवेदी	प्रतिभा	अप्रैल ५४

२७. तीर्थयात्रा सम्बन्धी लोकगीत—
श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, जुलाई ५४
२८. बुन्देलखण्ड की होली—
श्री प्रेमनारायण दुबे प्रवाह मार्च ५३
२९. स्नेह-संचित हमारे लोकगीत—
श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, जुलाई ५२
३०. लोकगीतों में बिदा की बेला—
श्री महेन्द्र और मोहिनी शर्मा ,, नवम्बर ५३
३१. हमारे लोकगीत—
सुश्री उर्मिला वार्ष्णेय ,, अगस्त ५४
३२. सावन के गीत—
सुश्री मंजुलता सेनानी प्रेरणा अगस्त ५८
३३. लोकगीतों में हास-परिहास—
श्री दीनदयाल ओझा ,, मार्च ६१
३४. बुन्देली लोकगीत (संकलन)— बुन्देल भूमि (वर्ष १, अङ्क १), १९५६
३५. चिरन्तन रसधारा का स्रोत—
हमारा लोक-साहित्य—
श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, ,, ,,
३६. बुन्देली लोकगीतों में शक्ति-
उपासना—श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, (वर्ष २, अंक १), १९५६
३७. सावन के गीत (संकलित) ,, ,, ,,
३८. बुन्देली लोकगीत—
सुश्री उषा चतुर्वेदी ,, ,, ,,
३९. सोहर (संकलित)— ,, ,, ,,
४०. ब्रज के तीन कथागीत
श्री सत्येन्द्र ब्रजभारती (वर्ष १, अंक, २)
४१. पनिहारी : ब्रज का एक ग्रामगीत
एक ग्रामगीत प्रेमी ,, (वर्ष २, अंक ४)
४२. ब्रज में बसन्तोत्सव—
श्री जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी ,, (वर्ष ३, अंक ४)
४३. ब्रज का एक ग्रामगीत—
श्री रसिकेन्दु ,, (वर्ष ३, अंक ६)

४४. बुन्देली लोकगीतों में नेत्र वर्णन—
श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, अश्विन २००८
४५. लांगुर कौन ?—डा० सत्येन्द्र ,, भाद्रपद २००६
४६. ब्रजभाषा का लोक-साहित्य—
श्री चन्द्रभान रावे-राभे ,, वर्ष ११, अङ्क ३
४७. ब्रज की होली—
श्री बालमुकन्द गुप्त ,, ,, १२, ,, ८
४८. ब्रज लोकगीतों में बालक राम—
श्री कृष्णदत्त वाजपेयी ,, ,, १३, ,, ३
४९. ब्रज के लोकगीत—
श्री कृष्णदत्त वाजपेयी ,, ,, १३, ,, ४
५०. ब्रज के सावन गीत—
श्री सतीशचन्द्र शर्मा ,, ,, १४, ,, २
५१. ब्रज का लोकगीत 'हीरो'—
श्री बालमुकन्द शर्मा ,, ,, १४ ,, ३
५२. लोक-साहित्य की गंगा—
श्री कन्हैयालाल 'चंचरीक' ,, ,, १६, ,, १
५३. ब्रज में लोकोत्सव के लोकचार और नेगचार—
डा० अम्बाप्रसाद 'सुमन' ,, ,, १६, ,, २-३-४
५४. सावन के तीन गीत—
सुश्री उर्मिला अग्रवाल ,, ,, १७, ,, ४-५-६
५५. मदरा बजत मेरों सोहरो—
श्री शान्तिचन्द्र जैन भारती (ग्वालियर) मार्च ५५
५६. ठाढ़ी जरै मथुरावली—
श्री शान्तिचन्द्र जैन भारती (ग्वालियर) जुलाई ५५
५७. ब्रज के झूला गीत—
श्री अनवर आगेवन ,, (बम्बई) ११ अगस्त ५७
५८. आई बरखा की बहार—
श्री अनवर आगेवन ,, ३ अगस्त ५८
५९. बुन्देलखण्ड के लोकगीतों में नारी प्रवृत्ति—श्री बाबूलाल गर्ग ,, अप्रैल ५९

६०. बैरिन बदरिया—
श्री प्रभुदयाल गोस्वामी ,, अक्टूबर ५६

६१. आज बिरज में होरी रे रसिया—
श्री मोहन स्वरूप भाटिया ,, मार्च ६१

६२. ब्रजलोक साहित्य में राम-कथा—
डा० सत्येन्द्र भारतीय साहित्य जुलाई ५७

६३. बुन्देलखण्ड की रसिकता—
श्री बनारसीदास चतुर्वेदी मधुकर १६ नवम्बर ४०

६४. बुन्देलखण्डी ग्रामगीत (संकलित)— ,, १६ अक्टूबर ४१

६५. नौरता—श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा ,, १६ दिसम्बर ४१

६६. बाबा के गीत— ,, ,, ,,

६७. बुन्देलखण्ड मूक नहीं—
श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ,, १६ मई ४२

६८. वैवाहिक ग्रामगीत—
श्री रामभरोसे पाठक ,, १ जून ४२

६९. बुन्देलखण्ड के ग्रामगीत—
श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ,, १ सितम्बर ४२

७०. कातिक के गीत—
श्री मोहनलाल मिश्र ,, १ नवम्बर ४२

७१. बुन्देलखण्डी ग्रामगीत—
श्री गौरीशंकर द्विवेदी ,, १६ नवम्बर ४२

७२. लड़कियों के दो खेल—
श्री रामभरोसे पाठक ,, १ दिसम्बर ४२

७३. हमारे ग्रामगीत जिन्दाबाद—
श्री शम्भुनाथ सक्सेना ,, जून ४३

७४. बुन्देलखण्ड के वैवाहिक ग्रामगीत— मधुकर फरवरी, सितम्बर, नवम्बर
श्री चन्द्रभानु 'विशारद' दिसम्बर ४४, और जनवरी ४५

७५. मध्यप्रदेशीय लोक-साहित्य—
श्री त्रिलोचन मध्य प्रदेश सन्देश २८ मार्च ५९

७६. संस्कृति के परिचायक बुन्देलखंडी
लोकगीत—श्री मोहनजी मेहरोत्रा ,, ४ अप्रैल ५९

७७. मध्यप्रदेशीय लोकगीतों में होली
का उल्लास—श्री तेजकुमार बम्ब ,, ४ मार्च ६१

७८. सी० पी० के ग्रामगीत—
श्री महादेवलाल बरगाह — माधुरी — वर्ष २० खंड २

७९. लोक-साहित्य की भूमिका—
श्री विद्यानिवास मिश्र — युग चेतना — अप्रैल ५५

८०. बुन्देलखंडी लोकगीतों में शृंगार सुषमा—
श्री कालिका प्रसाद दीक्षित — राष्ट्र भारती — जनवरी ५४

८१. गीत गंगा (फागुन गीत)—
श्री प्रेमकपूर 'कंचक' — ,, — अप्रैल ५५

८२. प्राचीन साहित्य और लोक-वाङ्मय—डा० श्याम परमार — राष्ट्रवाणी — सितम्बर ५६

८३. एक लोकगीत—
श्री चन्द्रभानु 'विशारद' — लोक वार्ता — (वर्ष १, अङ्क १)

८४. मथुरावली—श्री मधुसूदन द्विवेदी — ,, — ,, २ ,, १

८५. ग्रामगीत—श्री श्रीराम शर्मा — विशाल भारत — जुलाई, दिम्बर ३१

८६. बालिकाओं के भूलने के गीत—
श्री श्रीराम शर्मा — ,, — सितम्बर ३६

८७. बुन्देलखंड के कुछ गामग्रीत—
श्री लक्ष्मी प्रसाद मिश्र — ,, — अगस्त ३६

८८. फिर बुन्देल खंड में—
श्री देवेन्द्र सत्यार्थी — ,, — जनवरी ४०

८९. बुन्देलखंड के ग्रामगीत—
श्री देवेन्द्र सत्यार्थी — ,, — मई ४०

९०. बुन्देलखंडी लोकगीत—
श्री चन्द्रशेखर पुखार — विशाल भारत — अक्टूबर ४०

९१. भूले के गीत—श्री शान्ति वर्मा — ,, — अक्टू० ५१

९२. जनमन गन में बसने वाले लोक-गीत—श्री रामनंदन प्रसाद सिंह — ,, — नव० दि० ५३

९३. भारतीय लोक साहित्य की भाव-भूमि—श्री कृष्णवल्लभ जोशी — वीणा — दि० ५४, नव० ५५

९४. ब्रज के उत्सवों और त्यौहारों के लोकगीत—श्री प्रभूदयाल मीतल — सम्मेलन पत्रिका — (भाग ३९), २०१०

९५. ब्रज के गीत—ठाकुर देशराज सिंह	साधना	जून, जुलाई ४०
९६. बुन्देली लोकगीतों में काव्य-सुषमा—श्री शिवसहाय चतुर्वेदी	सारथी	नवम्बर ५४
९७. हमारे लोकगीत—श्री गौरीशंकर द्विवेदी	,,	जुलाई ५६
९८. ब्रज के ग्रामगीत और ग्राम कहानियाँ—श्री सत्येन्द्र	साहित्य संदेश	........३७
९९. ब्रज साहित्य और लोक जीवन—श्री गोपाल प्रसाद व्यास	,,	अगस्त ३९
१००. सन्नारी सीता—श्री कृष्ण कुमार रावत	साप्ता० हिन्दुस्तान	२ मई ५४
१०१. बाबा के गीत—श्री हरिश्चन्द्र पुष्प	,,	,,
१०२. लोकगीतों में पथराये आँसू—श्री केसनी प्रसाद चौरसिया	,,	,,
१०३. लोकगीतों का सिरमौर रसिया—श्री चतुर्भुज	,,	,,
१०४. बुन्देली लोकगीतों में वीरत्व की परम्परा—श्री ईश्वर प्रसाद परिहार	,,	,,
१०५. लोकगीत में पावस कुहार—श्री कन्हैया लाल चंचरीक	,,	१ अगस्त ५४
१०६. मैं कैसे आओं बैंदुली तेरी नदिया चढ़ी अढ़ार—श्री रामजी दास	साप्ता० हिंदुस्तान	१४ सितम्बर ५८
१०७. लोकगीतों में टेसू और झाँझी—श्री गोपाल बाबू शर्मा	,,	१९ अक्टूबर ५८
१०८. लोकगीतों में मातृत्व की व्यंजना—श्री रामजी दास	,,	२६ जुलाई ५९
१०९. होरी पिया बिन मोंहि न सुहाए—श्री राधेश्याम गुप्त	,,	१३ मार्च ६०

११०. लोकगीतों में राम-कथा— श्री कालिका प्रसाद दीक्षित	,,	२५ सितम्बर ६०
१११. मारो पिचकारी फागुन आया है– श्री ब्रह्मदेव	,,	५ मार्च ६७
११२. पोपुलर साँग्स आव द हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट इन बुन्देलखंड— श्री वी० ए० स्मिथ	ज० ऑव रा० ए० सो० ऑव बंगाल,	संख्या ४, १८७५
११३. पोपुलर साँग्स आव द हमीरपुर डिस्ट्रिक्ट इन बुन्देलखंड— श्री वी० ए० स्मिथ	,,	संख्या ३, १८७६

शुद्धि-पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
भूमिका-३	१८	दुन्देली	बुन्देली
विषय सूची-क	८	—ऋतु	४—ऋतु
,,	ख १६-२०	सहायक ग्रन्थों लोकगीत साहित्य सम्बन्धी की सूची	सहायक ग्रन्थों एवं लोकगीत साहित्य सम्बन्धी लेखों की सूची
३	१५	अंर	और
४	१०	रन्त	तुरन्त
६	२७	घरहू	घरहु
६	२०	गुण होते	गुण लिए होते
१३	२३	निकले	निकसे
१५	१०	नौरात्रि	नवरात्र (अन्यत्र भी 'नौरात्रि' की जगह 'नवरात्र' ही पढ़ें।)
,,	१५	लेकिन बुन्देलखंड में	बुन्देलखंड में
,,	२६	स्त्रयों	स्त्रियों
१८	४	गना	अंगना
,,	६	चले	चलीं
२०	२	पटली	पटुली
,,	८	जाता है।	गया है।
२२	२२	चहिये	चाहिये
,,	२७	इसी	इस
२३	३२	पड़िवा	पडिवा
२६	१२	हमको	हमका
२८	३	अंगना में	अंगन मोरे
२६	१०	घोरैया	घुरैया

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
३१	७	किर्स	किसी
,,	११	म्हें	हम्हें
३३	५	इस सामान्य	इन सामान्य
३६	५	बजाजे	बजाजा
,,	१४	झागरने	झगरने
३७	४	भभूति	भभूत
,,	६	हने	पहने
४०	२६	ग्वाल बालकृष्ण	ग्वाल-बाल कृष्ण
४१	७	फंक	फेंक
,,	२७	वहाँ	यहाँ
४३	७	विदेरम्ब	विलम्ब
४६	१२	ग्लालिन	ग्वालिन
,,	१३	ईंडुरी	ईंडरी (अन्यत्र भी 'ईंडुरी' की जगह 'ईंडरी' ही पढ़ें।)
,,	१७	भाई	भाभी
४८	४	उन्होंने मेरी साड़ी	साड़ी
,,	१६	कुंज	कुएँ
५२	२	पिंडुरी	पिंडरी
,,	३०	बाखर	बाखरि
५६	२२	दुाखित	दुःखित
५८	२७	लगे ओं—	लगे—ओ
६१	४	समस्त घर	समस्त नर
६३	३	चिड़ाने	चिढ़ाने
६७	६	होतीतो	होती तो
६६	१७	चेदिरी	चेदि
७३	३३	उपलब्ध	उपलक्ष
७७	७	पा दूध	पाली दूध
,,	८	कर ीजो	कर लीजो
,,	११	कर लीजी	कर लीजो
,,	१२	बारी ज	बारी जी
,,	२३	फाग का	फाग को
७८	५	गल गई	लग गई

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८५	२४	इनका	उनका
८७	१६	वायदा	वाइदा
८८	१५	फुस्कार	फुसकार
९४	२७	संभीत	सभीत
१०३	३१	खदेड़ने	खदेरने
११४	३१	फुत्कार	फूत्कार
१२७	२०	आलौकिकता, आध्यात्मिकता	अलौकिकता, अध्यात्मिकता
,,	३०	ययुना	यमुना
१२८	५	वर्षित	वर्णित
१३१	२४	दोहिन	दोहनी:
,,	२६	दोहिनी	दोहनी
१३६	२६	देखने आने	देखने के लिये आने
१३९	१	कृष्ण सांदीपनि	कृष्ण ने सांदीपनि
,,	२	किये थे	की थी ।
१४९	१७	पहिराह	पहिराइ
१५०	१	भाक्त	भक्ति
,,	२७	परकम्पा	परकम्मा
१५२	१	मंन्दिर	मंदिर
१५३	२४	श्रद्धा	श्राद्ध
१५५	२८	संवरी	संवारी
१५९	१०	अनुभावन	अनुभव
१६०	३०	नन्द	नंद
१६४	१५	सम्बद्धित	संवर्द्धित
१६६	२६	ग्राहस्थ	गार्हस्थ्य
,,	२८	ग्रहस्थी	गृहस्थी
१६७	२३	मौलक	मौलिक
१६९	१६	लठ मार	लठमार
१७४	२५	लेशमा भत्री	लेशमात्र भी
१७८	८	मारत साटी	मारत हूँ साटी
१८१	५	जै हीं	जै हो
,,	१४	खीभती	रीभती

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१८६	२५	कथन के	कथन को
१८८	११	सन्निहित	समाहित
,,	२५	मांये	मांय
१८९	१	वे	वो
,,	२	वा	
,,	३१	बुआई-जुताई	जुताई-बुआई
१९५	५	लोक, धर्म	लोक-धर्म
,,	१८	कि जिसमें	जिसमें कि
,,	२२	भजन, गीत	भजन गीत
१९६	१९	ल्लेख	उल्लेख
१९७	२२	नहीं	नाहीं
१९८	८	प्रकट करता है।	करता है।
,,	१५	इन गीतों के द्वारा किया गया है।	किया गया है।
,,	३२	न ईश्वरत्व	न इनसे ईश्वरत्व
१९९	१४	कूंगरे	कंगूरे
२००	६	बस्तु	वस्त्र
,,	१३	क्यों कि ब्रज	ब्रज
,,	१४	और इसी	फलतः इसी
,,	२१	डाले रहती	डाले रखती
२०१	२	उनक	उनकी
,,	४	लोकगीतों में	लोकगीतों के अंतर्गत
,,	५	बालक	बालकों
,,	११	झुमकन	नथनी
,,	१२	सिर	गले
२०२	७	आश्वाशन	आश्वासन
२०५	२३	यहीं नहीं	यही नहीं
२०६	८	साटी	साठी
,,	१३	'जगमोहन लुगरा'	'जगमोहन लुगरा'
,,	३१	विष्येन्द्र	विजयेन्द्र
२०७	९	वरीक्षा	वर-रक्षा

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२११	६	के ही प्रदान किये हुए हैं।	का ही प्रदान किया हुआ है।
२१४	१५	रूपह में	रूप हमें
२२२	२१	पृष्ठ ४८०	पृष्ठ ४८८
२२३	१६	अंतर्गत	प्रसंग में
२२७	१४	प्रिय अथवा प्रिया की	प्रिय की
२२८	१३	चला देता	चल देता
,,	१६	उसे अपहरण	अपहरण
२३१	१३	कृष्णान्तुलसा	कृष्ण-तुलसा
२३५	२३	सायायिक	सामयिक
२३७	६	गम मा	गमना
,,	२१	३३७	२३७
२४३	१२	रच नाय	रचनाय
२४८	१०	खड़ो बल	खड़ोबल
,,	२६	बाजू बंद	बाजूबंद
२४६	२५	सक लौनी	सकलौनी
,,	३२	मिलत	लगत
,,	३३	मिलैगी	लगैगी
२५३	१३	खूंगी	दखूंगी
२५६	७	लील भरि	लीलभरि
२६१	१८	सथुरा	मथुरा
,,	३०	सारी	सारी
२६२	५	बहिनते	बहिन ते
,,	२२	हो	थी
२७२	२२	कहे कूं—	काहे कौं
,,	२२	द्रुर अरुझत	द्रुम उरझत
,,	२३	जो	क्यों
२८१	६	रंगन	रंग न
२८२	२५	कोरी	को री
२८३	२६	उरगही	उर गही
२८६	२७	बरनि	बैरिन
२६३	१२	अइए	आइए

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२६५	२३	गाग	गाम
,,	२६	तिहारे ई	तिहारेई
२६६	२७	दैठी	बैठी
२६८	१३	हमम	हम से
३०३	११	भइय न	भइयन
३०४	१	हीर	हीरो
,,	१४	कछा	बछा
३०८	२६	रुपे	रूपे
३१७	३	संग में कानन	संग कानन में
,,	५	खोल	खोज
,,	१०	नाखी	नोखी
३२२	१	सरमा	सुरमा
३३०	१७	भिपिये	छिपिये
३४०	१	ते	तेरे
३४६	१७	कम्हैया	कन्हैया
३४७	८	धर्म सिला	धर्म-सिला
,,	२५	का	की
,,	३२	हिहीं	दिहौं
३४८	१२	ऽहल	महल
,,	१६	मांथ	मांय
३५०	७	सीने	सोने
,,	१६	कटिऔ	कटिहौ
३६१	१३	लीकगीतों	लोकगीतों
३६५	२२	कुहार	फुहार
३६६	४	५ मार्च ६७	५ मार्च ६१

21404 / 31/3/2kp

SANGEET NATAK AKADEMI
NEW DELHI
110001
LIBRARY